CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

5,1

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विज्ञान और वेदान्त

मान्धाता सिंह

ज्ञानविज्ञान प्रकाशन, बक्सर (बिहार)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

- प्रकाशक : ज्ञानविज्ञान प्रकाशन
  ट्रक सिन्डिकेट, बक्सर (बिहार)

- कापीराइट : मान्धाता सिंह

- प्रथम संस्करण : जनवरी, १९८१ ई०
- मूल्य : तीस रुपये
- वितरक : विश्वविद्यालय प्रकाशन
  विशालाक्षी भवन, चौक, वाराणसी
- मुद्रक : बाबूलाल जैन फागुल्ल
  महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी–२२१००१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

VIGYAN AUR VEDANTA

[Science and Vedanta]

A critical analysis of science in the pure light of Sankhya, Vedanta and Yogi Philosophy

by

Mandhata Singh

GYAN VIGYAN PRAKASHN

Truck Syndicate, Buxar (Bihar)

1981

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समर्पण

उस परमपिता परमेश्वर को जो धर्म की स्थापना के लिए युग-युग में प्रकट होता है

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकाशकीय

- 'विज्ञान और वेदान्त' अध्ययन और चिन्तन के क्षेत्र में नयी चुनौती के रूप में प्रस्तुत हो रही है। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक के गीताभाष्य के बाद यह दूसरी पुस्तक है जिसमें एक विद्वान ने आधुनिक ज्ञान-विज्ञान को मथकर बुद्धि और तपस्या का सुन्दर समन्वय किया है।

- चिन्तक मान्धातासिंह का विश्वास है कि सापेक्ष सृष्टि-रहस्य की पहली महत्वपूर्ण व्याख्या सांख्यशास्त्र के प्रणेता महर्षि कपिल ने की थी। आधुनिक युग में आइन्स्टीन ने इसी सांख्यतत्व को सापेक्षवाद (Relativity) के रूप में वैज्ञानिक ढंग से प्रतिष्ठित किया। यह सारा जगत अहं (Ego) की प्रतिपत्ति है। इसे अहं से जाना-समझा जाता है। लेकिन अहं का परिष्करण इन्द्रियातीत स्तर पर ही होता है। मनुष्य की सारी ज्ञानात्मक उपलब्धियाँ उसी चरम विज्ञान में सम्पन्न होंगी।

- यह पुस्तक तिलक, अरविंद, रजनीश जैसे विचारकों की परम्परा में एक नया नाम जोड़ती है। रामकृष्ण और विवेकानन्द का आशीर्वाद ही इस शताब्दी के उत्तरचरण में उनकी एक मानसी संतति को विज्ञान और वेदान्त के स्रष्टा के रूप में प्रत्यक्ष कर रहा है।

- यह पुस्तक एक संगठित चिन्तन का मध्यान्तर है। 'गीता और विज्ञान' नामक ग्रन्थ में इस ज्ञान का प्रथम प्रकाश दिखाई पड़ा था और 'योगरहस्य' में इस चिन्तन का चरम प्रकाश दिखाई पड़ेगा।

- हम गर्व के साथ प्रबुद्ध चिन्तकों का अभिमत आमन्त्रित करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्ति-रहस्य

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥

हे अर्जुन—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार इसप्रकार यह मुझ परमेश्वर की मायारूप प्रकृति आठ प्रकार में विभक्त है ।

गीता (७–४)

जीव में अहंज्ञान (Ego) एक ऐसी प्राकृतिक शक्ति है जो उसे अकर्त्ता से कर्त्ता और अकर्म से कर्म की ओर मोड़ देती है । यही शक्ति उस जीव को 'नियतिवाद' (Determinism) से 'स्वाधीनतावाद' (Free will) तथा आदर्श-वाद से यथार्थवाद की ओर ले जाती है । इसके विपरीत यही शक्ति जीव को सत्य से असत्य की ओर भटका देती है, 'कारण और कार्य' (cause and effect) की शृंखला से बाँध देती है तथा सापेक्ष प्रकृति के अन्तर्गत द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद को जन्म देकर वस्तुजगत में सुख और दुख की अनुभूति प्राप्त करने के लिए बाध्य करती है । यही दर्शन और विज्ञान का रहस्य है, क्योंकि एक में स्वचेतना का उत्कर्ष (unfoldment of consciousness) होता है, जबकि दूसरे में मन एवं बुद्धि का विकास होता है । एक अदृश्य एवं अज्ञात (आत्मा) को ही सत्य मानता है, जबकि दूसरा दृश्य एवं ज्ञात (वस्तुजगत) को ही सत्य मानता है । अपने अनुसन्धान में एक 'अतीन्द्रिय ज्ञान' (Extra sensory perception) का प्रयोग कर आत्मा या परमात्मा को अपना लक्ष्य मानता है, जबकि दूसरा 'इन्द्रिय ज्ञान' का प्रयोग कर साकार प्रकृति को अपना लक्ष्य मानता है । सत्य की खोज में दर्शन अहंज्ञान के विनाश को आवश्यक मानता है, जबकि विज्ञान अहंज्ञान को ही अपना अस्तित्व समझता है और इसप्रकार आदर्श एवं यथार्थ दो परस्पर विरोधी विचारधाराओं का जन्म होता है । इसी आधार पर भारतीय दर्शन को भी दो भागों में विभक्त किया गया है—आस्तिक दर्शनधारा और नास्तिक दर्शनधारा । पहली दर्शनधारा में न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, मीमांसा, सांख्य और योगदर्शन शास्त्रों का समावेश होता है और दूसरी दर्शनधारा में चार्वाक, जैन, माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक तथा वैभासिक दर्शनशास्त्रों को शामिल किया गया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भौतिकवाद और परा-भौतिकवाद अथवा यथार्थवाद और आदर्शवाद का यह वैंचारिक संघर्ष अतिप्राचीन काल से लेकर आजतक निरन्तर चला आ रहा है, लेकिन आज मैक्सप्लैंक के 'क्वान्टमवाद' तथा आइन्स्टीन के 'सापेक्षवाद' द्वारा यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि प्रत्यक्षज्ञान (इन्द्रियज्ञान) द्वारा सत्य का दर्शन नहीं हो सकता।

भौतिकवादी वैज्ञानिक विचारधारा का जन्मदाता प्राचीन योरप में यूनान का एक ऐसा महान बुद्धिवादी दार्शनिक हुआ है जिसके सिद्धान्तों को पाश्चात्य जगत में लगभग दो हजार वर्षों तक ब्रह्मवाक्य की तरह अकाट्य माना जाता रहा है तथा जिसकी विलक्षण प्रतिभा एवं बुद्धिवादी कौशल को स्वयं अपने में एक विश्वकोश (Encyclopaedia) समझा जाता रहा है। वह महापुरुष समस्त संसार में अरस्तू (३८४-३२२ ई० पू०) के नाम से विख्यात है। प्राचीन यूनान के उस स्वर्णयुग में अरस्तू अकेला महारथी नहीं था, बल्कि अनेक ऐसे महारथी थे जिन्होंने अपने अनुसन्धान द्वारा आधुनिक विज्ञान की नींव रखी जो प्रत्यक्षज्ञान (इन्द्रिय ज्ञान) पर आधारित था। उन्हीं महारथियों में थेल्स, एनीक्सीमेन्डर, एनीक्सीमेनीज, जेनोफेनीज, हेरेक्लीट्स, एम्पीडोक्लीज, यूक्लिड तथा आर्केमेडीज आदि प्रमुख थे जिन्होंने अपने सिद्धान्तों द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दर्शन और विज्ञान को पृथक करने का प्रयास किया। इन सभी दार्शनिकों ने चार तत्वों (पृथ्वी, अग्नि, जल तथा धुन्ध या कुहास) को प्रधानता दी, लेकिन विख्यात दार्शनिक एवं प्रकृति-विज्ञानशास्त्री एम्पीडोक्लीज (४५०ई०पू०) ने धुन्ध के स्थान पर हवा को मान्यता प्रदान की। उसका यह सिद्धान्त कि पदार्थ का आस्तित्व सूक्ष्म रूप में भी विद्यमान होता है और प्रकृति में कोई अदृश्य शक्ति कार्यरत है भविष्य में अनुसन्धान के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

कहा जाता है कि सुकरात ने मानव समाज को दर्शन दिया और अरस्तू ने विज्ञान। वास्तव में अरस्तू का महत्व इस बात में है कि उसने विज्ञान को अध्यात्म के रहस्यवाद एवं नियतिवाद से कुशलतापूर्वक निकाल कर भौतिकवाद, स्वाधीन इच्छा तथा कर्मवाद का लौकिक आधार प्रदान किया। इसीलिए उसे आधुनिक विज्ञान का मार्गदर्शक कहा जाता है। यद्यपि उस युग में स्वयं विज्ञान का जन्म दर्शन से ही हुआ, लेकिन आगे चलकर आधुनिक युग में विज्ञानरूपी पुत्र ने दर्शनरूपी पिता से अपने को सर्वथा पृथक कर लिया। अगर हम इस कृत्रिम विभाजन के मूल में जांय तो पायेंगे कि इसका आध्यात्मिक कारण अहंज्ञान (Ego) और वैज्ञानिक कारण यूक्लिड (Euclid–330–275 B.c.) की स्वतन्त्र या निरपेक्ष रेखागणित थी। इस रेखागणित में प्रकृति तथा उसकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असंख्य शक्तियाँ (नक्षत्र-पिण्ड, प्रकाश किरणें आदि) निरपेक्ष बन जाती हैं। दो विन्दुओं के बीच सीधी रेखा ही सबसे संक्षिप्त दूरी है तथा दो समानान्तर रेखाएँ कभी नहीं मिलतीं (Two parallel lines never meet) यह स्वतन्त्र (Arbitrary) सिद्धान्त ही यूक्लिड की रेखागणित का मूलाधार है।

यद्यपि अपने इस सिद्धान्त को वह कभी सिद्ध नहीं कर पाया, तो भी यही स्वतन्त्र एवं निरपेक्ष रेखागणित आज भी आधुनिक विज्ञान का आधार बना हुआ है। इसी रेखागणित पर महान वैज्ञानिक सर आइजक न्यूटन (१६४२–१७२७) ने अपने 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' (Mechanistic theory of universe) की रचना की जो आजभी वैज्ञानिक पुस्तकों में पढ़ाया जाता है। इस रेखागणित में अपनी इन्द्रियों द्वारा इस ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी प्रत्यक्ष दिखाई देता है वह सभी कुछ अनन्त बन जाता है, निरपेक्ष हो जाता है, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड का अपरिमित विस्तार हमारी कल्पना से परे है। इस रेखागणित में ध्यान देने की बात यह है कि प्रकृति ही सर्वशक्तिमान एवं अनन्त बन जाती है, जबकि आत्मा या परमात्मा इस रेखागणित से बाहर हो जाता है। इसके विपरीत सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन की सापेक्षवादी (Relativistic) रेखागणित के अनुसार आत्मा या परमात्मा ही निरपेक्ष एवं अनन्त शक्ति है, जबकि प्रकृति एक सीमित और सापेक्ष अस्तित्व है। इसीलिए अद्वैत वेदान्त प्रकृति को मायारूप मानता है। इस सापेक्षवादी रेखागणित (Relativistic geometry) के जन्मदाता अतिप्राचीन काल में वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल हुए हैं और इसी रेखागणित पर हमारा अतिप्राचीन वेदान्त एवं योगदर्शन आधारित हैं। इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह हैं कि इसी सापेक्षवादी रेखागणित के जन्मदाता बीसवीं सदी में महावैज्ञानिक डा० अलबर्ट आइन्स्टीन (१८७९-१९५५) हुए हैं जो अपने 'सापेक्षवाद के सिद्धान्त' (Theory of Relativity) द्वारा यूक्लिड की रेखागणित तथा न्यूटन के 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' को ध्वस्त कर दिया तथा यह सिद्ध कर दिया कि इस ब्रह्माण्ड का अस्तित्व सीमित और सापेक्ष है।

अतः अरस्तू ने अपने सिद्धान्तों के विवेचन में वस्तुतः यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित का ही प्रयोग किया, क्योंकि वह एक यथार्थवादी दार्शनिक था जो प्रत्यक्ष ज्ञान को ही सभी कुछ मानता था। यद्यपि अरस्तू ईश्वरवादी था, तो भी अपने गुरु प्लेटो (४२७-३४७ ई० पू०) के इस विचार से सहमत नहीं हुआ कि सत्य मनुष्य के प्रत्यक्ष ज्ञान अथवा इन्द्रियजनित ज्ञान से परे है और वह वस्तुजगत में स्वयं सत्य को न देखकर केवल छायाचित्रों को ही देखता है और भ्रमवश उसी को यथार्थ मान लेता है। अरस्तू के अनुसार सत्य वह है जिसे हम प्रत्यक्ष देखते हैं और दैनिक जीवन में जिसका अनुभव करते हैं। उसके अनुसार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य का कर्त्तव्य यह नहीं है कि वह सत्य को स्वप्नलोक में खोजता हुआ इधर-उधर भटकता फिरे। उसका कहना था कि जगत की सभी वस्तुएँ किसी अदृश्य मौलिक पदार्थ के विभिन्न तत्वों के रूप में क्रमबद्ध होकर उत्पन्न हुई हैं जो अपने अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निरन्तर अग्रसर हैं। अरस्तू का कहना है कि संसार की सभी वस्तुएँ अपने निर्माण के क्रमविकास (Evolution) में सापेक्ष रूप से किसी दूसरे पदार्थ पर निर्भर हैं और यह क्रम-विस्तार एक ऐसे स्तर तक पहुंच गया है जहाँ वस्तुएँ शून्य में परिवर्तित हो गई हैं। अरस्तू का यह शून्यवाद ही उसके पदार्थवाद का द्योतक है। उसके अनुसार अगर मनुष्य कार्य है तो बालक कारण, यदि बालक कार्य है तो भ्रूण कारण और यदि भ्रूण कार्य है तो शुक्राणु एवं अण्डाणु कारणस्वरूप पदार्थ। यद्यपि बाह्यरूप से देखने पर अरस्तू का यह सिद्धान्त सापेक्षवाद (Relativity) प्रतीत होता है, लेकिन वस्तुतः यह सिद्धान्त यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित एक निरपेक्षतावादी सिद्धान्त है, क्योंकि अरस्तू का सापेक्षवाद शून्य में परिवर्त्तित होता है, जबकि आइन्स्टीन का प्रमाणित सापेक्षवाद (Relativity) चेतना में परिवर्त्तित होता है। अरस्तू का सिद्धान्त एक बुद्धिवादी सिद्धान्त है जो विज्ञान पर आधारित न होकर केवल तर्कशास्त्र पर आधारित है।

आज से सैकड़ों वर्ष पहले अरस्तू को क्या पता था कि इन्द्रियों द्वारा प्राप्त उसका भौतिक ज्ञान तथा बुद्धिवादी कौशल द्वारा रचित उसका यह निरपेक्षतावादी सिद्धान्त आगे चलकर बीसवीं सदी में स्वयं महान वैज्ञानिक मैक्सप्लैंक के 'क्वान्टमवाद' तथा आइन्स्टीन के 'सापेक्षवाद' द्वारा ध्वस्त हो जायेगा। उसे क्या पता था कि बीसवीं सदी के विख्यात भौतिकशास्त्री एवं वैज्ञानिक सापेक्ष-वाद के श्रेष्ठ समीक्षक सर आर्थर एडिगंटन अपनी अनेक पुस्तकों में सांख्य, वेदान्त, योगदर्शन तथा प्लेटो, कान्ट और हीगल के इन परा-भौतिक विचारों को ही व्यक्त करेंगे कि दृश्यजगत में हम सत्य को न देख कर केवल प्रतीकस्वरूप छायाचित्रों को ही देखते हैं तथा इस ब्रह्माण्ड का रहस्य मानसिक शक्ति में ही निहित है। अरस्तू भला यह कैसे जान सकता था कि बीसवीं सदी के ही एक विश्वविख्यात अंग्रेज भौतिकशास्त्री एवं सापेक्षवाद के उत्कृष्ट समीक्षक सर जेम्स जीन्स अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The mysterious universe) में वेदान्त और योगदर्शन का यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त घोषित करने जा रहे हैं कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ईश्वर का ही एक विचार-प्रवाह (Thought-form) है और बीसवीं सदी की सबसे बड़ी विशेषता न तो 'क्वान्टमवाद' में है और न 'सापेक्षवाद' में, बल्कि वह इस तथ्य में निहित है कि हम अभी सत्य से बहुत दूर हैं।" दूसरे शब्दों में इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान सत्य नहीं है और बिना किसी चेतनशक्ति के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पदार्थ एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि 'कारण और कार्य' (Cause and effect) की शृंखला स्वचेतना (Self consciousness) द्वारा जुड़ी हुई है।

अरस्तू की यही बुद्धिवादी परम्परा आगे भी उसी प्रकार बढ़ती गई। तत्कालीन वैज्ञानिक अनुसन्धानों से प्रभावित होकर अंग्रेज दार्शनिक थामस हाब्स (१५८८–१६७९) ने कहा कि सभी ज्ञान इन्द्रियों द्वारा ही प्राप्त होते हैं। उसने यहाँ तक घोषित किया कि राजसत्ता (Sovereign) का निर्णय ही ईश्वर और प्रकृति का नियम है। इन विचारों को हाब्स ने अपनी पुस्तक (The Leviathan) में व्यक्त किया है। इससे स्पष्ट है कि हाब्स का विचार घोर भौतिकवादी है। लगभग एक शताब्दी बाद उपयोगितावादी दार्शनिक बेन्थम, मिल, तथा जान आस्टिन ने अपने राजनैतिक सिद्धान्तों का आधार हाब्स के इन विचारों को ही बनाया। सुप्रसिद्ध विचारक रूसो (१७१२–१७७८) ने अपनी पुस्तक (The social contract) में कहा, "मनुष्य स्वाधीन पैदा होता है, लेकिन चारों ओर जंजीरों में जकड़ दिया जाता है (Man is born free, and everywhere he is in chains)। यह कैसे सम्भव है कि कारणस्वरूप गुण-विकारों (सत्व, रज, तम) के बिना मनुष्य इस जगत में स्वतन्त्र पैदा हो सकता है।

इसके विपरीत आदर्शवादी दार्शनिकों का वर्ग इस तथ्य पर बल देता था कि सत्य का ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता और दृश्यजगत में हम जो कुछ देखते हैं वह पदार्थ एवं माया का आवरणमात्र है। दूसरे शब्दों में इस ब्रह्माण्ड का केन्द्रबिन्दु पदार्थ नहीं, बल्कि आत्मा है। योरप में इस मायावाद का जन्मदाता विश्वविख्यात जर्मन दार्शनिक इमेनुअल काण्ट (१७२४–१८०४) था जिसकी अमर कृति (Critique of Pure Reason) १७८१ ई० में प्रकाशित हुई। उसने लाक, बर्कले तथा अन्य दार्शनिकों के इस विचार को चुनौती दी कि सभी ज्ञान इन्द्रियों द्वारा ही प्राप्त होते हैं। काण्ट ने आइन्स्टीन से बहुत पहले यह घोषित कर दिया था कि समय और दूरी (Time and Space) का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है, बल्कि घटनाचित्रों एवं वस्तुओं का क्रममात्र हैं। यद्यपि डार्विन के 'क्रमविकासवादी सिद्धान्त' (Origin of species–1859) ने सभी सिद्धान्तों को उखाड़ कर रख दिया, लेकिन काण्ट के आदर्शवाद तथा उसके गूढ़ दार्शनिक सिद्धान्तों का महत्त्व अभी तक उसी प्रकार बना हुआ है। प्रसिद्ध दार्शनिक नीत्से काण्ट के सिद्धान्तों को वेदवाक्य समझ कर उसीप्रकार मान लिया करता था। शापेनहावर का कहना था कि काण्ट की रचना जर्मन साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है और बिना इसे समझे कोई भी मनुष्य एक बालक के समान है। उसके अनुसार हरबर्ट स्पेन्सर काण्ट को नहीं समझ पाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और सम्भवतः इसीलिए वह पूर्ण दार्शनिक का दर्जा अपने लिए सुरक्षित नहीं कर सका। विख्यात जर्मन दार्शनिक हीगल का कहना था कि दार्शनिक बनने के लिए पहले काण्टवाद का समर्थक होना पड़ेगा।

परन्तु योरप में ऐसे प्रमुख दार्शनिक भी हुए जिन्होंने आदर्शवाद के सिद्धान्त को कल्पना की उड़ान बतलाया, क्योंकि उनके तार्किक विवेचनों के लिए उस समय विज्ञान का प्रामाणिक आधार भी प्राप्त हो जाता था। इन्हीं विचारकों में फ्रांसीसी दार्शनिक आगस्ट काम्टे (१७९८—१८५७) का कहना था कि दर्शन-शास्त्र विज्ञान से पृथक नहीं है, बल्कि वह मानव जीवन के उत्कर्ष के लिए विज्ञान की सभी शाखाओं का संगम है। इसी क्रम में हरबर्ट स्पेन्सर (१८२०—१९०३) के रूप में तत्कालीन योरोपीय समाज में एक ऐसे भौतिकवादी दार्शनिक का उदय हुआ जिसने वैज्ञानिक 'क्रमविकासवाद' (Theory of Evolution) की नींव रखी और इसी नींव को चार्ल्स डार्विन (१८०९-१८८२) ने सुदृढ़ आधार प्रदान किया। उसने ज्ञान के सभी क्षेत्रों में क्रमविकासवादी नियमों का प्रयोग किया। अपने दार्शनिक विवेचनों द्वारा अगर सत्रहवीं सदी के योरप में डेस्कार्टीज, हाब्स तथा स्पीनोजा जैसे विद्वानों ने गणित पर जोर दिया और अठारहवीं सदी में यदि वर्कले, ह्यूम तथा कान्ट जैसे विचारकों ने अपना दार्शनिक विवेचन मनोवैज्ञानिक आधार पर किया, तो वहीं उन्नीसवीं सदी में शेलिगं, शापेनहावर, स्पेन्सर, नीत्से तथा वर्गसां जैसे दार्शनिकों ने जीवशास्त्र के नियमों को अपना प्रमुख आधार बनाया।

स्पेन्सर का कहना था कि न केवल बुरी वस्तुओं में ही एक अच्छी आत्मा होती है, बल्कि गलत तथ्यों में भी प्रायः सच्चाई छिपी होती है। एक तरफ निरीश्वरवादी यह कहते हैं कि वस्तुजगत का कोई कारण नहीं है, बल्कि वह अनादि, स्वतन्त्र और अपने में पूर्ण है, जबकि दूसरी ओर ईश्वरवादी कहते हैं कि इस जगत का निर्माण ईश्वर द्वारा हुआ है। स्पेन्सर का विचार है कि ये दोनों सिद्धान्त अकल्पनीय हैं, यथार्थ से दूर हैं। इसका कारण यह है कि कोई भी ऐसी वस्तु नहीं हो सकती जिसका आदि और अन्त न हो और दूसरी तरफ कोई भी ऐसा जगत नहीं हो सकता जिसे जादू की छड़ी से बनाया जा सके। प्रश्न होता है कि फिर ईश्वर को किसने बनाया? इसीप्रकार प्रश्न होता है पदार्थ क्या है, परमाणु क्या है तथा इन तत्वों का अन्तिम स्वरूप क्या है? जब हम पदार्थ की व्याख्या करते हैं तो उसे शक्ति के रूप में पाते हैं और उसका ज्ञान हमारी इन्द्रियों द्वारा होता है। इसप्रकार जब हम भौतिकशास्त्र से मनोविज्ञान की ओर बढ़ते हैं तो मन और चेतना को पाते हैं जिनका कोई तार्किक विवेचन नहीं हो सकता! जब हम सभी ओर आगे बढ़ते हैं तो रहस्य और गहरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हो जाता है। अतः स्पेन्सर के अनुसार सभी उच्चतम धार्मिक और वैज्ञानिक विचार तर्कशास्त्र एवं विवेक-बुद्धि से परे होते हैं। इसका कारण यह है कि सभी ज्ञान सापेक्ष हैं और किसी भी विचार का सम्बन्ध किसी वस्तु से होता हैं। स्पेन्सर कहता है कि सत्य इन दोनों परस्पर विरोधी विचारों के सामंजस्य में ही निहित है।

विज्ञान को यह तथ्य स्वीकार कर लेना चाहिए कि उसके नियम सापेक्ष जगत तक ही सीमित हैं और उससे परे अज्ञात हैं। दूसरी ओर धर्म को भी यह हठ छोड़ देना चाहिए कि निरपेक्ष शक्ति कोई अतिमानव है जो डण्डे के जोर से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को चला रहा है, क्योंकि उसके सिद्धान्त तार्किक कसौटी पर खरे नहीं उतरते। अतः स्पेन्सर के अनुसार एक अज्ञात और दुर्ज्ञेय शक्ति ही हमारे दर्शन का मूलाधार है। विज्ञान और धर्म के सामंजस्य से ही वास्तविक ज्ञान प्राप्त हो सकता है। स्पेन्सर के अनुसार प्रकृति की गतिशीलता लयात्मक (Rhythmical) है। इस ब्रह्माण्ड में जो हलचल दिखाई दे रही है, वस्तुजगत में जो कर्म-व्यापार चल रहा है, जीव-जन्तुओं में जो स्पन्दन हो रहा है स्पेन्सर के अनुसार वह सब कुछ एक लय और सुर में हो रहा है। प्रकृति की यह ताल-बद्ध गतिशीलता एक परमाणु से लेकर विशाल नक्षत्र-पिण्डों तथा सभी जीव, जन्तु, वनस्पति में भी समान रूप से व्याप्त है। उसका प्रसिद्ध 'क्रमविकासवादी सिद्धान्त' (Theory of Evolution) दो नियमों पर आधारित हैं—पहला पदार्थ का 'क्रमगठन' (Integration) और दूसरा 'क्रमविघटन' (Dissipation)। स्पेन्सर के इस सिद्धान्त के अनुसार क्रमविकास पदार्थ के क्रमगठन तथा गति (Motion) के क्रमविघटन का समयोग है। दूसरे शब्दों में अगर गति का क्रमविघटन नहीं होगा तो पदार्थ का क्रमगठन भी नहीं हो सकता। स्पेन्सर कहता है कि इस प्रकिया में पदार्थ अपने अनिश्चित एवं अमिश्रित अवस्था से एक निश्चित और मिश्रित स्वरूप प्राप्त कर लेता है तथा इसी प्रक्रिया में पदार्थ में निहित गति का भी समानान्तर ढ़ंग से रूपान्तरण हो जाता है। दूसरे शब्दों में निराकार और निर्गुण पदार्थ साकार और सगुण रूप धारण कर लेता है। इस प्रक्रिया का दृष्टान्त प्रस्तुत करते हुए स्पेन्सर कहता है कि आकाश के नक्षत्र-पिण्ड एवं आकाश-गंगाएँ, पृथ्वी पर बहती हुई नदियाँ तथा समुद्र, विशाल हिम-खण्ड एवं पहाड़, जीव-जन्तुओं के शरीर तथा विभिन्न अंग, शारीरिक-संवेदनायें, विचार एवं ज्ञान का संयोग, व्यक्ति और समाज का गठन इत्यादि स्वाभाविक क्रियाएँ गठन और विघटन का ही प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। प्रकृति की इस प्रक्रिया में असंख्य कणों के योग से कोई वस्तु बनती है, उन वस्तुओं के योग से एक समूह बनता है और उन समूहों के योग से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का निर्माण होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यद्यपि इस क्रमगठन में पृथक-पृथक वस्तुओं की गति एवं स्वतन्त्रता में क्रमिक ह्रास होता है, लेकिन दूसरी ओर उन वस्तुओं की सामूहिक शक्ति में वृद्धि होती है। परन्तु स्पेन्सर के अनुसार यह क्रमगठन एक अवस्था पर आकर क्रमविघटन में परिवर्तित हो जाता है, निर्माण अन्ततः विनाश में बदलने लगता है। इसप्रकार गठन और विघटन का वह वृत्त (Cycle) पूर्ण हो जाता है। अतः स्पेन्सर के अनुसार इसीप्रकार गठन और विघटन अथवा निर्माण और विनाश के असंख्य वृत्त बनते-बिगड़ते रहते हैं।

अपने जैविक सिद्धान्तों में स्पेन्सर का कहना है कि जीवन आन्तरिक और बाह्य सम्बन्धों एवं परिस्थितियों के बीच एक अनवरत व्यवस्था (Adjustment) है और यह जीवन तभी पूर्ण हो सकता है जबकि यह व्यवस्था भी पूर्णावस्था को पहुँच जाय। लेकिन स्पेन्सर यह भी स्वीकार करता है कि वह जीवन की प्रकृति को स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं कर सकता, क्योंकि जीवन का सत्त्व स्वयं वैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा बोधगम्य नहीं है। स्पेन्सर के विचार से अन्तःप्रेरणा (Instinct) और विवेक-बुद्धि (Reason) तथा जीवन और मन मूलरूप से एक ही हैं। आधुनिक 'क्रमविकासवाद' का महावाक्य—'योग्यतम की अभिव्यक्ति' (Survival of the fittest) सर्वप्रथम स्पेन्सर द्वारा ही प्रयुक्त हुआ था जिसे डार्विन ने अपने 'क्रमविकासवादी' सिद्धान्त का प्रमुख आधार बनाया। स्पेन्सर और डार्विन के सिद्धान्तों के आधार पर ही भौतिकवादी दार्शनिक हेकेल ने अपनी पुस्तक (The Riddle of the universe) मे यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि सभी सजीव और निर्जीव पदार्थों का मूल कारण जड़ प्रकृति है और यहाँ तक कि मन, बुद्धि एवं आत्मा आदि अमूर्त्त शक्तियाँ भी जड़ पदार्थ द्वारा क्रमविकसित हुई हैं। इसीप्रकार अनेक भौतिकवादी दार्शनिकों ने भी आगे चलकर स्पेन्सर और डार्विन की इसी परम्परा का निर्वाह किया, क्योंकि उन्हें दार्शनिक तथ्यों के विश्लेषण में विज्ञान द्वारा प्रस्तुत प्रामाणिक आधार प्राप्त हो जाता था।

इसी भौतिकवादी विचारधारा का विश्वविख्यात दार्शनिक कार्लमार्क्स (१८१८–१८८३) ने भी अनुसरण किया तथा उस सिद्धान्त में हीगल का द्वन्द्ववाद और जुड़ गया जिसे उसने 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' (Dialectical materialism) नाम दिया। मार्क्स ने अपने आर्थिक एवं राजनैतिक सिद्धान्तों का विस्तृत विवेचन अपनी प्रसिद्ध पुस्तकों (Manifesto and Das Kapital) में किया है। तत्कालीन योरप में इन भौतिकवादी दार्शनिक सिद्धान्तों का आधार भी यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित तथा न्यूटन का मशीनी ब्रह्माण्डवाद था, क्योंकि उस समय के दार्शनिक एवं राजनैतिक सिद्धान्त भी भौतिकविज्ञान एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवशास्त्र की नई-नई खोजों के आधार पर ही चल रहे थे। इस भौतिकवादी विचारधारा की रेखागणित जड़ पदार्थ के केन्द्रविन्दु से ही चलती थी और सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) का अनुसरण करती हुई फिर जड़ पदार्थ में ही विलीन हो जाती थी। अतः 'क्वाण्टमवाद' और सापेक्षवाद के प्रकाश में यह भौतिकवादी सिद्धान्त भी स्वतः ध्वस्त हो जाता है। यह सिद्धान्त परमाणुवाद पर आधारित है जो परमाणु एवं पदार्थ को निर-पेक्ष रूप से प्रस्तुत करता है, जबकि क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद का सिद्धान्त स्वचेतना (Self consciousness) पर आधारित है और उसी को एक निरपेक्ष शक्ति प्रमाणित करता है। इस सिद्धान्त का आधार यह है कि आइन्स्टीन के सापेक्षवाद (Theory of Relativity) के अनुसार प्रकाश की गति (प्रतिसेकण्ड १८६,००० मील) पर समय की गति भी बन्द हो जाती है, तो भी स्वचेतना (Self Consciousness) का अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है। प्रकाश की गति पर जब समय की गति बन्द हो जायेगी तो पदार्थ का क्रमगठन एवं क्रम-विघटन तथा परमाणु-जीन-कोष आदि जैविक कणों का क्रमविकास भी रुक जायेगा जिसके फलस्वरूप उस जीव की आयु वहीं स्थिर (Constant) हो जायेगी। दूसरे शब्दों में जीव पदार्थ एवं रासायनिक प्रक्रियाओं का केवल योग नहीं है, बल्कि पदार्थ के गुण-विकारों (सत्व, रज, तम) से युक्त चेतना (Conscious-ness) का ही एक विशिष्ट स्तर है। अतः इसप्रकार आइन्स्टीन का वैज्ञानिक सापेक्षवाद सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के सिद्धान्तों से जुड़ जाता है। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि प्रकृति या पदार्थ का केन्द्रविन्दु स्वचेतना अथवा आत्मा (Soul) है।

परन्तु योरप में भौतिकवादी दर्शन-धारा का यह प्रवाह अबाध गति से नहीं चल सका, क्योंकि प्रकृति का यह नियम है कि वस्तुजगत में जब कोई क्रिया होती है तो देर-सवेर उसकी एक प्रतिक्रिया भी होती है, विचारों के योग से जब कोई वाद (Thesis) बनता है तो उसके प्रतिकूल एक प्रतिवाद (Anti-thesis) भी बन जाता है और फिर दोनों के संयोग से एक 'संवाद' (Synthe-sis) तैयार हो जाता है। सुप्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक हीगल (१७७०–१८३१) के शब्दों में यह 'संवाद' भी आगे चलकर फिर 'वाद' (Thesis) बन जाता है। यह द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद हमें प्रकृति में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। बीसवीं सदी के आरम्भ में 'क्वाण्टमवाद' तथा 'सापेक्षवाद' ने उस भौतिकवादी दर्शन-धारा का मुँह अब उस महासमुद्र की ओर फेर दिया है जिसका थाह लगाना आज विज्ञान के वश की बात नहीं रह गई है। विज्ञान की इस नवीन धारा ने परमाणु-जगत को उप-परमाणु जगत में बदल दिया है और उप-परमाणु जगत अब 'प्रतिपदार्थ'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Anti–matter) में बदल रहा है, पदार्थ-विज्ञान अब चेतना-विज्ञान की ओर जा रहा है, तर्क-बुद्धि और इन्द्रियज्ञान अब आत्मज्ञान एवं अतीन्द्रियज्ञान (Transcendental knowledge) में समाहित हो रहा है। संक्षेप में अब वैज्ञानिक दर्शन और आध्यात्मिकदर्शन (Spiritual knowledge) दोनों बिलकुल आमने-सामने खड़े हो गये हैं। योरोपीय बुद्धिजीवी वर्ग भी अब इस तूफानी लहर से अछूता नहीं बचा है। अत्याधुनिक दर्शनशास्त्र एवं विज्ञान अब किसी देश या समाजविशेष की वस्तु नहीं रह गया है, बल्कि उसका स्वरूप सार्वभौमिक बन चुका है और वह भूतकालीन सभी सीमाओं को तोड़ चुका है। ऐसा प्रतीत होता है कि नवीन वैज्ञानिक दर्शन-धारा से अतिप्राचीन सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन का निकट भविष्य में पुनर्जीवन (Revival) होने वाला है।

योरोपीय समाज में इस नई धारा की अस्पष्ट झलक हमें फ्रांसीसी दार्शनिक हेनरी लुई बर्गसां (१८५९-१९४१) के विचारों में भी दिखाई देती है। यद्यपि उसके सिद्धान्तों में बुद्धिवाद की प्रधानता है, तो भी भौतिकवादी सिद्धान्तों के विरुद्ध उसने स्वचेतना (Self consciousness) को ही इस ब्रह्माण्ड का केन्द्रविन्दु स्वीकार किया। इस सन्दर्भ में उसका दर्शन वेदान्त और योगदर्शन के निकट आ जाता है। यद्यपि प्रकृति एवं पदार्थ का उसका विश्लेषण दोषपूर्ण है, किन्तु उसकी रेखागणित सापेक्षवाद के अनुकूल है, क्योंकि उसका केन्द्रविन्दु पदार्थ नहीं, बल्कि आत्मा है। अपनी अनेक रचनाओं के अतिरिक्त उसने १९०७ ई० में एक प्रसिद्ध पुस्तक (creative Evolution) प्रकाशित की जिससे उसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिली। उसे १९२७ ई० में नोवेल पुरस्कार प्रदान किया गया। बर्गसां सर जगदीशचन्द्र बोस के आविष्कार से भी अत्यन्त प्रभावित हुआ था और पेरिस में उन दोनों की भेंट भी हुई थी। आधुनिक योरप में इस नई धारा के प्रवर्त्तकों में सर्वप्रथम आर्थर शापेनहावर (१७८८-१८६०) ही वह दार्शनिक था जिसने जड़ पदार्थ या भौतिकशक्ति के स्थान पर चैतन्य को ही मूलभूत तत्व स्वीकार किया और वर्त्तमान सदी में बर्गसां ने उस सिद्धान्त को और सुदृढ़ आधार प्रदान किया। बर्गसां ने दर्शनशास्त्र के अतिरिक्त गणित और भौतिकशास्त्र में भी विशेष ज्ञान अर्जित किया था।

बर्गसां के अनुसार हमारा झुकाव भौतिकवाद की ओर इसलिए होता है, क्योंकि हमारा विचार 'देश-काल' (Space-time) के अन्तर्गत होता है और वस्तुजगत का अस्तित्व समय पर ही निर्भर है। समय वस्तुओं का ढ़ेर (Accum ulation) है, एक विस्तार एवं निरन्तरता (Duration) है जो भूत और भविष्य को अपने में समेटे हुए है। समय के प्रवाह में प्रत्येक क्षण एक नया ढ़ेर बनता जा रहा है। बर्गसां की दृष्टि में मानव-स्मृति का सम्बन्ध समय के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निरन्तरता से ही है जिससे भूत का सारतत्व वर्त्तमान में प्रस्तुत होता है। इस प्रक्रिया में बुद्धि का विकास होता है तथा चेतना का उत्कर्ष होता है। मनुष्य में विद्यमान चेतना एक ऐसा पर्दा है जिसपर विविध घटनाचित्र तरंगित होते हैं तथा उस पर्दे पर दृश्यजगत का परीक्षण होता है। स्वाधीनता का अर्थ है अपने उद्देश्य और कर्त्तव्य का ज्ञान। बर्गसां की दृष्टि में मस्तिष्क और मन दो भिन्न-भिन्न तत्व हैं तथा चेतना और जीवन दोनों का सहविस्तार है। बीसवं सदी में अमेरिका के प्रमुख दार्शनिक विलियम जेम्स, जान डीवे तथा ह्वाइटहेड का कहना है कि बर्गसां उन्नीसवीं और बीसवीं सदी का वह सर्वप्रथम विचारक है जिसने दार्शनिक सिद्धान्तों की व्याख्या वर्त्तमान वैज्ञानिक तथ्यों के सन्दर्भ में उपयुक्त ढ़ंग से की है।

वास्तव में योरोपीय दर्शन-धारा सर्वदा से एक बुद्धिवादी दर्शन-धारा रही है, चाहे वह कान्ट का आदर्शवाद हो अथवा स्पेन्सर, डार्विन तथा मार्क्स का यथार्थवाद। यही कारण है कि यह दर्शन-धारा सदैव प्रकृति एवं पदार्थ तथा मन और बुद्धि से संयुक्त रही है जो जगत में कर्मवाद का आधार है। इसका मूल कारण यह है कि इस विशिष्ट दर्शन पर यूक्लिड की रेखागणित तथा न्यूटन का 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' की स्पष्ट छाप है जो इसे भारतीय अध्यात्म (Spiritualism) से सर्वथा भिन्न बना देती है। वेदान्त और योगदर्शन कर्मवाद पर आधारित न होकर कर्मों के त्याग (Renunciation) तथा मन, बुद्धि एवं अहंकार (Ego) के विनाश पर आधारित हैं, क्योंकि इसी प्रक्रिया द्वारा चेतना का उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) हो सकता है और यही सांख्यदर्शन का सापेक्षवाद (Relativity) तथा उसकी वृत्तात्मक रेखा-गणित (आवागमन का चक्र) है जिसपर वेदान्त और योगदर्शन दोनों आधारित हैं। इसी मूल सिद्धान्त पर अद्वैत वेदान्त का मायावाद निहित है। यही कारण है कि पाश्चात्य दार्शनिक एवं वैज्ञानिक कभी भी अद्वैत वेदान्त को भलीभाँति नहीं समझ पाये, क्योंकि वे यूक्लिड की रेखागणित तथा न्यूटन के मशीनी ब्रह्माण्डवाद को नहीं समझ पाये। यही कारण है कि क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के उदय से भी अभी तक योरोपीय दर्शन और विज्ञान पर यूक्लिड और न्यूटन का प्रभुत्व छाया हुआ है। इसका मूल कारण है कि पाश्चात्य दर्शन और विज्ञान प्रकृति या पदार्थ को ही वास्तविक समझता है, जबकि वेदान्त और योगदर्शन परम चेतनशक्ति (परमात्मा) को ही वास्तविक या सत्य समझते हैं। इसीलिए वेदान्त और योगदर्शन में त्याग (Renunciation) और आत्मसमर्पण (Self Surrender) पर इतना बल दिया गया है, क्योंकि अहंज्ञान द्वारा हम आत्मा या परमात्मा को कभी नहीं प्राप्त कर सकते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस आधार पर हम कह सकते हैं कि योरोपीय दर्शन और विज्ञान बुद्धिवाद पर आधारित एक 'अहंवादी' विचारधारा है और मैक्सप्लैंक का 'क्वान्टमवाद' तथा आइन्स्टीन का सापेक्षवाद उसी अहंवाद पर एक प्रत्यक्ष प्रहार है। इस रहस्य का ज्ञान हमें सांख्यदर्शन द्वारा ही प्राप्त हो सकता है।

अतिप्राचीन सांख्यदर्शन भारतीय दर्शन-धारा का मूलाधार है। इस दर्शन का प्रकृति विवेचन अथवा क्रमविकास (Evolution) अद्वितीय माना जाता है और इस विवेचन पर ही वेदान्त, योगदर्शन तथा बौद्धदर्शन आदि सभी आधारित हैं। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत शान्तिपर्व में कहा है कि इस जगत का सभी ज्ञान सांख्य दर्शन से ही प्राप्त हुआ है (ज्ञानं च लोके यदहास्ति किंचित सांख्यागतं तच्च महन्महात्मन्)। भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में उनकी महत्ता को स्वीकार किया है (सिद्धानां कपिलो मुनिः १०-२६)।

गौतम बुद्ध भी इस दर्शन से अत्यधिक प्रभावित हुए थे, क्योंकि यह दर्शन जगत में कर्मवाद की प्रतिष्ठा करता है, कारण और कार्य की श्रृंखला तथा द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद की व्याख्या करता है। अश्वघोष रचित 'बुद्ध चरित' महाकाव्य के अनुसार बुद्ध के गुरु को सांख्यदर्शन का ज्ञाता माना गया है और कपिल को गौतम से भी प्राचीन बतलाया गया है। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार गौतम बुद्ध ने वैशाली में सांख्यदर्शन के ज्ञाता आलार कालाम से इस दर्शन का ज्ञान प्राप्त किया था। यही कारण है कि बौद्धदर्शन में 'निर्वाण' तथा 'आवागमन के चक्र' (पुनर्जन्म) को स्वीकार किया गया है जो 'कारण-कार्य श्रृंखला' (Cause and effect chain) द्वारा सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में ही सम्भव है। महर्षि कपिल की तरह गौतमबुद्ध भी एक यथार्थवादी द्रष्टा थे और इसीलिए वे आत्मा और परमात्मा के अगोचर विश्लेषण में न पड़कर लौकिक कर्मवाद को ही अपने उपदेशों का आधार बनाया तथा मन के शुद्धिकरण एवं विवेक-बुद्धि पर ही विशेष बल दिया। अपने दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रतिपादन में उन्होंने वेद अथवा किसी अन्य धार्मिक ग्रन्थ को ब्रह्मवाक्य मानने से इन्कार कर दिया, क्योंकि उनका विश्वास था कि स्वचेतना का उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) ही निर्वाण है। उन्हें गीता (२।४८-५३) का समत्वबुद्धियोग प्राप्त हो चुका था तथा उनकी चेतना ज्ञान के सर्वोच्च स्तर पर स्थित थी। वे दर्शनशास्त्रों के खण्डन-मंडन में विश्वास नहीं करते थे, क्योंकि इससे मन की शक्ति क्षीण होती है, साधक पथभ्रष्ट हो जाता है तथा इच्छाशक्ति एवं संकल्प शक्ति दुर्बल हो जाती है। यही कारण है कि भगवान ने सत्कर्म एवं शुद्ध आचरण (अष्टमार्ग) पर विशेष बल दिया तथा सत्य और अहिंसा का मार्गदर्शन किया। शुभ कर्मों का संचय (सत्वगुण) और अशुभ कर्मों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का त्याग यही बौद्धदर्शन का सारतत्व है। भगवान बुद्ध का 'शुभकर्मवाद' ही उनका आत्मा या परमात्मा है अथवा निर्वाण है। बौद्ध दर्शन की यह विलक्षणता ही उसे परम्परागत दर्शनशास्त्रों से भिन्न बना देती है, क्योंकि इसे न तो ईश्वरवादी कहा जा सकता है और न अनीश्वरवादी और ठीक यही स्थिति सांख्यदर्शन की भी है, क्योंकि उस दर्शन में भी वेदान्त और योगदर्शन की भाँति आत्मा या परमात्मा के विवेचन की चेष्टा नहीं की गई है। यद्यपि असंख्य लोकों (Astral planes) तथा देवता, किन्नर आदि का अस्तित्व स्वीकार किया गया है, लेकिन उन्हें भी उत्कृष्ट पुरुषों (आत्मा) के अर्थ में ही लिया गया है। इसके अतिरिक्त सांख्य दर्शन में पुरुष (आत्मा) को भी सामान्य जीव के अर्थ में ही लिया गया है जो द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा अन्ततः प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो जाता है। इसीलिए सांख्य दर्शन को एक वैज्ञानिक दर्शन माना जाता है और जन्मसिद्ध ज्ञानी महामुनि कपिल को वैज्ञानिकों का वैज्ञानिक कहा जाता है।

अतः सांख्यदर्शन की तरह बौद्धदर्शन भी यूक्लिड की रेखागणित पर आधारित नहीं है जो प्रकृति को एक निरपेक्ष शक्ति मानता है, बल्कि वह महामुनि कपिल के सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) पर आधारित है जो द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद में विश्वास रखता है। दूसरे शब्दों में दोनों सिद्धान्त प्रकृति को एक सापेक्ष शक्ति (Relative power) मानते हैं जो पुरुष (आत्मा) के संयोग से ही क्रमविकसित हो सकती है। यही कारण है कि बौद्धदर्शन में आवागमन का चक्र (कारण और कार्य श्रृंखला) तथा निर्वाण (मुक्ति) दोनों मूल सिद्धान्तों को स्वीकार किया गया है। अतः बौद्धदर्शन एक आत्मवादी दर्शन है जो बन्धन और मुक्ति के सिद्धान्त में विश्वास रखता है और जगद्गुरु शंकराचार्य ने भी इसकी ऐसी ही व्याख्या की है। यद्यपि इस प्रश्न पर विद्वानों में गम्भीर मतभेद है कि बुद्ध आत्मवादी थे अथवा अनात्मवादी, लेकिन क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के प्रकाश में वह निश्चय ही आत्मवादी थे, क्योंकि प्रकाश की गति पर जब समय की गति बन्द हो जाती है तो स्वचेतना ही अपने गुण-विकारों के साथ विद्यमान रहती है और मृत्यु के बाद उस गुण-विकार युक्त चेतना का ही पुनर्जन्म हो सकता है, क्योंकि पदार्थ के परमाणु भौतिक जगत तक ही सीमित रह जाते हैं। डा० रीस डेविस का कहना है कि बुद्ध अनात्मवादी थे, जबकि डा० एनीबेसेन्ट के अनुसार बुद्ध आत्मवादी थे। इसीप्रकार डा० भीमराव आम्बेडकर ने अपनी पुस्तक (भगवान बुद्ध और उनका धर्म) में यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि वह पदार्थवादी थे और पुनर्जन्म पदार्थ का ही होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन पर यूक्लिड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और न्यूटन का ही प्रभाव था जिसके फलस्वरूप उन्होंने बुद्ध को पदार्थवादी मान लिया। लेकिन उनका यह सिद्धान्त क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के प्रकाश में एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाता। अतः महर्षि कपिल ने श्रेष्ट तथा अति-प्राचीन सांख्य दर्शन के सूत्रों को अपने शिष्य आसुरि को प्रदान किया, आसुरि ने अपने प्रधान एवं परमप्रिय शिष्य पंञ्चशिख को दीक्षित किया और इस प्रकार गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा प्रदत्त इस अद्भुत ज्ञानयोग को प्राचीन काल में ईश्वरकृष्ण ने सूत्रबद्ध किया, जो समस्त संसार में 'सांख्य कारिका' के नाम से प्रसिद्ध है।

सांख्यकारिका के अनुसार जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष इन दो परस्पर विरोधी शक्तियों (पत्नी और पति) के संयोग से ही सृष्टि का क्रमविकास आरम्भ होता है और अव्यक्त प्रकृति व्यक्त होने लगती है। दूसरे शब्दों में इस संयोग (पत्नी और पति का संयोग) द्वारा ही प्रकृति साम्यावस्था (समता) से वैषम्यावस्था (विषमता या हलचल) की ओर बढ़ने लगती है जिसके फल-स्वरूप बुद्धितत्त्व (महत्तत्त्व), मन, अहंकार, सूक्ष्म पदार्थों एवं स्थूल पदार्थों की उत्पत्ति क्रमशः होने लगती है। प्रकृति और पुरुष के संयोग पर प्रकाश डालते हुए ईश्वरकृष्ण सांख्यकारिका (२०-२१) में कहते हैं कि चेतन पुरुष के स्व-प्रकाश से जड़ प्रकृति भी चैतन्य होकर उसीप्रकार प्रतिभासित (Reflected) होने लगती है जिसप्रकार स्फटिक मणि के ऊपर से नानाप्रकार की रंग-रूपवाली वस्तुओं के चलने से प्रतीत होता है। दूसरे शब्दों में यह संयोग वैसा ही होता है जैसे प्रोजेक्टर के कार्बन प्रकाश से रील का संयोग होने से चित्रपट पर तरह-तरह के छायाचित्र उभरते हैं और उन छायाचित्रों को देखकर अज्ञानवश हम मोहित हो जाते हैं। लेकिन इस प्रक्रिया में शुद्ध आतमा (निर्गुण और निराकार) उसीप्रकार शुद्ध बना रहता हैं, क्योंकि उसका शुद्ध प्रकाश ही प्रकृतिरूपी रील से छन कर वस्तुजगत के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रकृतिरूपी रील में कुछ ऐसा मूलतत्व होता है जो इस संयोग द्वारा कारण-स्वरूप बन कर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के रूप में क्रमविकसित हो जाता है और उस मूलद्रव्य कारणस्वरूप तत्व को ही सांख्यदर्शन में प्रकृति का त्रिविध गुण-विकार (सत्व, रज, तम) कहा गया है। इन त्रिविध गुणों के सामंजस्य से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना होती है और इन त्रिविध गुण-विकारों के सामंजस्य अथवा समिश्रण को ही आधुनिक विज्ञान में भौतिक और रासायनिक परिवर्त्तन (Physical and chemical changes) कहा गया है। इस सूत्र में प्रकृति और पुरुष के संयोग को अन्धे और लंगड़े की जोड़ी बताया गया है, क्योंकि इससे परस्पर दोनों का हित साधन होता है। इसीलिए इस सूत्र में प्रकृति को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कामिनी के रूप में चित्रित किया गया है जिसे पुरुष के संयोग की अपेक्षा होती है। दूसरे शब्दों में इन दोनों महाशक्तियों के संयोग से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड तथा नानाप्रकार की वस्तुएँ सन्तानों (Procreation) के रूप में ही उत्पन्न हुई हैं। सांख्यकारिका (११-१२-१३) में कहा गया है कि कारणस्वरूप इन त्रिविध गुणों (सत्व, रज, तम) द्वारा ही समस्त सृष्टि की रचना होती है तथा इन्हीं गुण-विकारों से कारण और कार्य (Cause and effect) की शृंखला, द्वन्द्वात्मक संघर्ष एवं सापेक्ष भाव-विचारों की उत्पत्ति होती है। इन सूत्रों के अनुसार सत्वगुण ज्ञान और प्रकाश की ओर ले जाता है, रजोगुण कर्म-व्यापार एवं हलचल उत्पन्न करता है तथा तमोगुण प्रमाद एवं जड़ता का संचार करता है। यही कारण है कि हमें प्रकृति में जड़ और चेतन, स्थूल और सूक्ष्म, सुख और दुख, प्रेम और घृणा, हिंसा और अहिंसा, जीवन और मृत्यु, आकर्षण और विकर्षण, ऋण (Negative) और धन (Positive) आदि असंख्य सापेक्ष तत्व दृष्टिगोचर होते हैं, क्योंकि दो परस्पर विरोधी (निर्गुण और निराकार तथा सगुण और साकार) तत्वों के संयोग का यही स्वाभाविक परिणाम है। इन दो परस्पर विरोधी शक्तियों के संयोग से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा कार्य-कारण की शृंखला चल सकती है। इसप्रकार यह द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया, विषमता, हलचल अथवा कर्म-व्यापार उसी समय से प्रारम्भ हो जाता है, जबकि सृष्टि के आदि में दोनों परस्पर विरोधी शक्तियों का संयोग होता है और यही क्रम हमें एक परमाणु से लेकर विशाल नक्षत्र-पिण्ड तथा एक वाइरस या बैक्टीरिया से लेकर मनुष्य तक दिखाई देता है।

वास्तव में प्रकृति और पुरुष (आत्मा) का यह अभिन्न संयोग पति और पत्नी की भाँति ही होता है। इस तथ्य की पुष्टि परम पवित्र ग्रन्थ गीता द्वारा भी होती है। इस रहस्य पर से पर्दा उठाते हुए भगवान श्रीकृष्ण गीता (१४। ३-४) में कहते हैं, "हे अर्जुन! मेरी त्रिगुणमयी प्रकृति (अर्द्धाङ्गिनी) सभी पदार्थों की उत्पत्तिरूप योनि है और मैं उस योनि में चेतनस्वरूप बीज को स्थापित करता हूँ। इसप्रकार उस जड़ और चेतन के संयोग से ही सभी पदार्थों की उत्पत्ति होती है तथा जगत में जो नानाप्रकार के जीव-जन्तु उत्पन्न होते हैं उनकी यह त्रिगुणमयी प्रकृति (महत् ब्रह्म योनिः) तो गर्भ को धारण करने वाली माता है और मैं बीज को स्थापित करने वाला पिता हूँ।"

गीता (७।४-५) में अपरा और परा अथवा जड़ और चेतन के दृष्टान्त द्वारा भी यह भेद स्पष्ट कर दिया गया है। इसी भाव को क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ की उपमा देते हुए गीता (१३-२६) में कहा गया है कि जो कुछ भी चल और अचल वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं वे सभी इस संयोग (प्रकृति और पुरुष) द्वारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही उत्पन्न होती हैं। इसीप्रकार गीता (९-७) में फिर कहा गया है कि कल्प के अन्त में सभी पदार्थ मेरी (पत्नी) प्रकृति में लय हो जाते हैं और कल्प के आदि में मैं उनको फिर (बीज प्रदान कर) रचता हूं। इस श्लोक में यह नहीं कहा गया हैं कि वे सभी पदार्थ मुझमें लय हो जाते हैं, क्योंकि वे सभी पदार्थ त्रिविध गुण-विकारों से युक्त होते हैं और स्वभावतः उनका लय प्रकृति में ही होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रकृति उसीप्रकार जड़ बनी रहती है और बीजस्वरूप चेतन अंश (आत्मा) परब्रह्म परमेश्वर में ही समाहित हो जाता है और इसप्रकार ब्रह्म उसीप्रकार निर्गुण और निराकार बना रहता है, जबकि प्रकृति साम्यावस्था में पहुँच कर अव्यक्त हो जाती है। भगवान का यह भाव गीता के इन श्लोकों (९।४-५) द्वारा स्पष्ट हो जाता है, "मैं अपने अव्यक्त स्वरूप से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का विस्तार करता हूँ और मुझमें सभी पदार्थ हैं, किन्तु मैं उनमें नहीं हूँ अर्थात् मेरा निर्गुण और निराकार स्वरूप उनमें नहीं है। और मुझमें सब पदार्थ भी नहीं हैं (निर्लिप्त)। देखो, मेरी यह ईश्वरी लीला कि सभी पदार्थों को उत्पन्न करने वाला मेरा आत्मा सभी पदार्थों को धारण कर भी उन पदार्थों में नहीं है।" प्रकृति और पुरुष के सापेक्ष विवेचन में सांख्यदर्शन की इस अधूरी कड़ी को अद्वैत वेदान्त यह कह कर जोड़ देता है कि प्रकृति और पुरुष एक सिक्के के दो पहलू हैं—पहला निर्गुण और निराकार तथा दूसरा सगुण और साकार तथा एक निष्क्रिय और दूसरा सक्रिय। इसी आधार पर अद्वैत वेदान्त प्रकृति को मायारूप मानता है। इसीलिए सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन में चेतन पुरुष को द्रष्टा एवं साक्षी कहा गया है, क्योंकि शुद्ध आत्मा एक निर्गुण और निराकार तत्व है।

यह रहस्य गीता (४-६) द्वारा स्पष्ट हो जाता है—"मैं वस्तुतः अजन्मा और अविनाशीस्वरूप होता हुआ भी तथा सभी पदार्थों का ईश्वर होकर भी अपनी प्रकृति को अपने आधीन कर अपनी योगमाया से प्रकट होता हूँ।

इसका अर्थ यह हुआ कि सांख्यकारिका (३) के अनुसार स्वयं त्रिगुणमयी प्रकृति तो सभी पदार्थों के लिए कारणस्वरूप है, लेकिन अद्वैतवाद के अनुसार जिस निर्गुण और निराकार ब्रह्म द्वारा उसका क्रमविकास होता है उस ब्रह्म के लिए वह न कारण है और न कार्य। लेकिन सांख्यदर्शन में यह भी कहा गया हैं कि स्वयं प्रकृति भी किसी का कार्य नहीं है। इस प्रश्न का उत्तर यह हैं कि जब स्वयं सर्वशक्तिमान परमेश्वर अपनी योगमाया द्वारा निर्गुण और निराकार से सगुण और साकार बन गया है तो कार्य का कोई प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि एक ही ब्रह्म स्वयं अपने को ही असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित कर रहा है और यही योगमाया का रहस्य हैं। इस तथ्य को गीता के अन्य श्लोकों में स्पष्ट कर दिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया है, "मेरी अध्यक्षता में प्रकृति सम्पूर्ण सृष्टि को रचती है, हे अर्जुन ! इसीलिए जगत का निर्माण और विनाश हुआ करता है" (९-१०)। दूसरे शब्दों में यह प्रक्रिया इसलिए होती है, क्योंकि प्रकृति सापेक्ष और द्वन्द्वात्मक है तथा कारण और कार्य श्रृंखला द्वारा जुड़ी हुई है। यही कारण है कि सांख्य पर आधारित योगदर्शन प्रकृति को ब्रह्म का ही एक विचार-प्रवाह (Thought-form) मानता है, क्योंकि संयोग शब्द से प्रकृतिरूपी अतृप्त कामिनी की इच्छा-वासना परिलक्षित होती है और इसी इच्छा-वासना का संचार द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया द्वारा जीवजगत में भी हो जाता है जो गुण-विकारों के रूप में दृष्टिगोचर होता है। परन्तु जड़ प्रकृति के क्रमविकास में ब्रह्म का चेतनअंश भी स्वचेतना (जीवात्मा) के रूप में उसीप्रकार चलता रहता है। इसीलिए गीता (१०।४१-४२) में कहा गया है, "इस जगत में जो कुछ भी ऐश्वर्ययुक्त, कन्तियुक्त और प्रभायुक्त वस्तुएँ हैं उन सबको तूँ मेरे तेज के अंश से ही उत्पन्न हुई जान अथवा हे अर्जुन ! विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इतना ही जानना पर्याप्त है कि मैं इस सम्पूर्ण जगत को अपने एक अंशमात्र से धारणा करके स्थित हूं।" यहाँ तेज, कान्ति एवं प्रभा आदि शब्दों का तात्पर्य सांख्य के उसी चेतन पुरुष से है जो पदार्थ के संयोग से असंख्य नाम-रूपों में प्रकट होता है। इसी भाव को दूसरे सन्दर्भों में इसप्रकार व्यक्त किया गया है—"वह (चेतन अंश) अविभक्त होकर भी सभी पदार्थों में मानो विभक्त (असंख्य नाम-रूप) हो रहा है" (१३-१६), "हे अर्जुन ! जिसप्रकार एक सूर्य सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित करता है उसीप्रकार एक ही आत्मा (क्षेत्री) सभी जीव-जन्तुओं (क्षेत्रम्) को प्रकाशित करता है" (१३-३३)। प्रकृति और पुरुष का रहस्य तथा कारण और कार्य की इस अटूट श्रृंखला को अपूर्व ढंग से व्यक्त कर दिया गया है— "हे अर्जुन ! मुझे छोड़कर किंचितमात्र भी दूसरी वस्तु नहीं है, बल्कि यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सूत्र में मणियों के समान मेरे में ही गुँथा हुआ है" (७-७)। और हे अर्जुन ! अन्तर्यामी (चेतन अंश) परमेश्वर अपनी माया से यन्त्र पर चढ़ी हुई कठपुतलियों के समान सम्पूर्ण पदार्थों को भ्रमित करता हुआ सम्पूर्ण पदार्थों (निर्जीव और सजीव) के अन्तस्थल में ही विराजमान है" (१८-६१)।

इसीलिए तुलसी ने कहा है—

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा।
अकथ अगाध अनादि अनूपा।।

कबीर ने भी उसकी अपार महिमा को इन शब्दों में गाया है—

सात समुंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ।
धरती सब कागद करौं, तऊ हरि गुन लिखा न जाइ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब त्रिगुणमयी प्रकृति का चेतनपुरुष (आत्मा) से संयोग होता है तो एक असीम हलचल उत्पन्न होती और उस हलचल से अनेक प्रकार की सक्रिय शक्तियों का उदय होता है। इसप्रकार क्रमविकास की यह प्रक्रिया एक मशीनी प्रक्रिया (Mechanistic process) बन जाती है। इस मशीनी प्रक्रिया में जिन प्रबल शक्तियों का जन्म होता है उनके दो स्तर होते हैं—सार्वभौमिक (universal) तथा व्यक्तिगत (Individual) और प्रत्येक वस्तुओं के स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूप होते हैं, क्योंकि सापेक्ष प्रक्रिया के अन्तर्गत सूक्ष्म तत्वों के बिना स्थूल वस्तुओं का निर्माण नहीं हो सकता तथा कारण और कार्य (cause and effect) की प्रक्रिया आगे नहीं बढ़ सकती। इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि पदार्थ एवं ऊर्जा की भाँति इन शक्तियों का भी परस्पर रूपान्तरण होता है, क्योंकि अगर ऐसा न हो तो कोई शक्ति स्वतन्त्र अवस्था प्राप्त कर सकती है जो सापेक्षवाद की रेखागणित के प्रतिकूल है। जिसप्रकार आधुनिक विज्ञान पदार्थ में अनेक तत्वों (Elements) का वर्गीकरण करता है। उसीप्रकार सांख्यदर्शन भी प्रकृति में अनेक तत्वों का वर्गीकरण करता है। इस क्रम में प्रकृति (अव्यक्त) और पुरुष (आत्मा) के अतिरिक्त सर्वप्रथम आता है सार्वभौमिक बुद्धितत्व (universal mind) अथवा महत्तत्व। इसके पश्चात् अहंकार जो सूक्ष्म एवं व्यक्त है। इस प्रक्रिया में फिर आती हैं पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ (श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना, घ्राण, वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा) तथा मन। इसके पश्चात् आती हैं—पंच तन्मात्राएँ अथवा सूक्ष्म पदार्थ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) जो इन्द्रियों का विषय होती हैं तथा चेतन पुरुष के भोग-विलास का साधन भी। अन्त में आते हैं पंच महाभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी) और इन पंच महाभूतों से ही नानाप्रकार की वस्तुओं का निर्माण होता है और मन इन्हीं तत्वों के पीछे भागा-भागा फिरता है। सांख्यदर्शन और आधुनिक विज्ञान में एक प्रमुख अन्तर यह है कि सांख्य त्रिविध गुण-विकारों को ही कारणस्वरूप मानता है जो भौतिक प्रक्रिया द्वारा साकार होते हैं, जबकि यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित आधुनिक विज्ञान स्वतन्त्र इलेक्ट्रान या परमाणु कणों को ही वस्तुजगत का कारण मानता है। वास्तव में कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकारों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध सूक्ष्म जगत (Astral world) से है जो क्रमविकसित होकर स्थूल जगत में आते हैं तथा गुणात्मक तरंगें या विचार तरंगें (Thought waves) परमाणुओं से भी अधिक सूक्ष्म होती हैं।

इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रकृति और पुरुष के संयोग से जिन उत्कृष्ट प्राकृतिक शक्तियों (मन, बुद्धि, अहंकार) का जन्म होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है वे शक्तियाँ ही कर्त्ता बन जाती हैं, जबकि निर्गुण और निराकार आत्मा उसी-प्रकार अकर्त्ता और साक्षी बना रहता है। इसका कारण सांख्यकारिका (२०) में यह दिया गया है कि आत्मा के शुद्ध प्रकाश से जड़ शक्ति भी चैतन्य के समान होकर प्रतिभासित (Reflected) होने लगती है। उदाहरण के लिए जिसप्रकार चित्रपट के दृश्य भी सजीव एवं सक्रिय जान पड़ते हैं उसीप्रकार ये तत्व भी सक्रिय एवं सजीव हो जाते हैं। इस प्रक्रिया में जड़ प्रकृति एक नकली आत्मा (counterfeit soul) का निर्माण कर लेती है और उसी शक्ति को अहंकार (Ego) कहते हैं जो कर्त्ता बन बैठता है। इसीलिए गीता (३-२७) में कहा गया है कि सम्पूर्ण कर्म प्रकृति के गुणों द्वारा होते हैं, तो भी अहंकार से मोहित हुए अन्तःकरण वाला पुरुष मैं कर्त्ता हूँ इसप्रकार मान लेता है। यह मैं-पन (I-sense) का बोध ही अज्ञान एवं भ्रम का कारण होता है, लेकिन यही जगत में कर्म का आधार भी होता है। इस अहंज्ञान का नाश ही सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन का मूलाधार है। रामकृष्ण परमहंस का कहना है (रामकृष्ण वचनामृत) कि अहंकार ही माया है। महर्षि रमण भी कहते हैं The talks with Sri Raman Maharshi) कि अहंज्ञान द्वारा ही कारण और कार्य की श्रृंखला आगे बढ़ती है। अतः प्रकृति के बन्धन से जो मुक्त होता है वह वस्तुतः अहंकार (Ego) होता है, क्योंकि निर्गुण और निराकार आत्मा की मुक्ति का कोई प्रश्न नहीं है। सांख्यकारिका (५८ से ६८) के सूत्रों से स्पष्ट हो जाता है कि प्रकृति स्वयं अपने को बन्धन में डालती है और उसी का एक अंश (Ego) ज्ञान प्राप्त हो जाने पर मुक्त हो जाता है, क्योंकि मन, बुद्धि एवं अहंकार वास्तविक शक्तियाँ नहीं होती हैं, बल्कि वास्तविक शक्ति का प्रतिरूप होती हैं। ये शक्तियाँ उसीप्रकार बन सकती हैं जिसप्रकार आज-कल यन्त्रमानव (Robot) अथवा कम्प्यूटर आदि बनाये जाते हैं। अन्तर इतना है कि उन शक्तियों का आभास होता है, जब कि इलेक्ट्रानिक यन्त्रों को हम देखते हैं।

इसके विपरीत आधुनिक विज्ञान केवल जड़ प्रकृति को ही मानता है और आत्मा या परमात्मा उसकी रेखागणित से पृथक् हो जाते हैं जो क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के प्रकाश में सही नहीं है। जब तक दो परस्पर विरोधी तत्व अथवा शक्तियाँ न हों तब तक सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद एवं कारण और कार्य श्रृंखला की भी उत्पत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि निरपेक्ष शक्ति जब स्वतन्त्र और मुक्त होगी तो सृष्टि का भी कोई प्रश्न नहीं है। इसप्रकार यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित विज्ञान के सभी सिद्धान्त आधारहीन हो जाते हैं और 'क्वान्टमवाद' एवं सापेक्षवाद द्वारा भी यही सिद्ध होता है। अतः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथ्यों के प्रकाश में यह दावापूर्वक कहा जा सकता है कि सापेक्षवाद तथा द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद के मूल सिद्धान्त का आविष्कार सर्वप्रथम महर्षि कपिल द्वारा भारतवर्ष में किया गया जिसे बीसवीं सदी में आइन्स्टीन ने पुनर्जीवित किया तथा उस पर वैज्ञानिक ढ़ंग से प्रकाश डाला। इस सन्दर्भ में हम आइन्स्टीन को महामुनि कपिल का अवतार कह सकते हैं जिन्होंने आज के विज्ञान को एक क्रान्तिकारी मोड़ दिया। तुलसी ने भी कहा है—

जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार॥

यद्यपि सांख्यदर्शन के अनुसार शक्ति का मूल श्रोत प्रकृति और पुरुष के संयोग में निहित है, लेकिन अद्वैत वेदान्त के अनुसार शक्ति एक ही है—"ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या—विवेक चूडामणि। जगद्गुरु शंकराचार्य के इस कथन पर विचारकों ने बड़ा मतभेद है, किन्तु इसका दार्शनिक अर्थ यह है कि जहाँ ब्रह्म है वहाँ माया नहीं है और जहाँ माया है वहाँ ब्रह्म नहीं है। दूसरे शब्दों में चेतन पुरुष की एक अवस्था में शक्ति एक ही है। जब तक अहंकार (Ego) का अस्तित्व है तब तक सगुण और साकार प्रकृति ही शक्ति है, लेकिन समाधि अवस्था में जब अहंकार लुप्त हो जाता हैं तो आत्मा या परमात्मा ही एकमात्र सत्य है। इसकी व्याख्या करते हुए महर्षि रमण का कहना है कि ब्रह्म से पृथक् जगत का कोई अस्तित्व नहीं है। आत्मा या परमात्मा चित्रपट की भाँति है और जगत छायाचित्रों के समान। जब पुरुष मुक्त होकर सच्चिदानन्दस्वरूप हो जाता है तो उसके लिए प्रकृति का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। सांख्यदर्शन भी इस तथ्य को स्वीकार करता है कि जब चेतन पुरुष मुक्त हो जाता है तो फिर कभी प्रकृति उसे बन्धन में नहीं ले पाती। वास्तव में स्वयं प्रकृति स्वप्रकाशमान नहीं है, बल्कि ब्रह्म के प्रकाश से ही प्रकाशित होती है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति-श्वेता:)। अतः हम कह सकते हैं कि मूलशक्ति के दो रूप हैं—एक निर्गुण और निराकार तथा दूसरा सगुण और साकार। इसप्रकार सत्य का अनुसन्धान भी दो मार्गों द्वारा किया जाता है—पहला बहिर्गत मार्ग Objective process)तथा दूसरा आभ्यन्तरिक मार्ग (Subjective process)। पहली प्रक्रिया का प्रयोग विज्ञान द्वारा किया जाता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया का प्रयोग योगसाधना द्वारा होता है। अपने अनुसन्धान द्वारा विज्ञान कह सकता है कि वह जो देखता है वही सत्य है, लेकिन अब आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान सत्य नहीं हो सकता और यही कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का रहस्य है।

अतः दूसरी प्रक्रिया का अनुसरण कर (Subjective Process) हमारे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राचीन ऋषि-मुनियों ने जो 'परा-इन्द्रिय ज्ञान' (Transcendental knowledge) प्राप्त किया है वह शुद्ध ज्ञान ही वेदान्त और योगदर्शन में मन्त्रों अथवा सूत्रों के रूप में संचित है। हम उन सूत्रों की अपने-अपने ढंग से केवल व्याख्या करते हैं, किसी नये सत्य का आविष्कार नहीं, क्योंकि सम्पूर्ण प्रकृति एक ही शक्ति के रूप में स्वयं अपना क्रमविकास कर रही है और उस क्रमविकास का हम (Ego) केवल एक कणमात्र हैं। अगर एक कण अहंकारवश यह समझता है कि वह सम्पूर्ण प्रकृति को अपनी मुट्ठी में ले सकता है तो यह उसका भ्रम है। यह तभी सम्भव है जब वह कण स्वयं अपने अहंकार का नाश कर दे और यह चेतना के उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) द्वारा ही सम्भव है जो मुख्यतः एक आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) है। प्राचीन भारत में सत्य का वह अनुसन्धान गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा आगे बढ़ता रहा है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता (४/१-२) में कहा है, "हे अर्जुन! मैंने इस अविनाशी योग (परा-इन्द्रियज्ञान) को सूर्य के प्रति कहा था, सूर्य ने मनु के प्रति कहा था और मनु ने इक्ष्वाकु के प्रति कहा। इसप्रकार परम्परा से प्राप्त होकर इस योग अथवा ज्ञानसूत्र को राजर्षियों ने जाना।" अद्वैतवादी संत कबीर ने भी गुरु की इस महत्ता को इन शब्दों में व्यक्त किया है—

'सतगुरु हमसे रीझ करि, एक कह्या परसंग।
बरसा बादल प्रेम का, भीजि गया सब अंग॥

महान संत गोस्वामी तुलसीदास ने भी गुरु की महिमा को इन शब्दों में गाया है—

बदउँ गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा॥
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव रुज परिवारू॥

हमारे प्राचीन मनीषियों ने अपने अनुसन्धान द्वारा जो अन्तिम निष्कर्ष निकाला उस आधार पर ही सार्वजनिक रूप से यह घोषित करने का साहस दिखलाया—'अहम् ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ); तत्त्वमसि (वह तुम हो); इदं सर्वं ब्रह्म (यह सब ब्रह्म है); सर्वं खल्विदं ब्रह्म (यह सब निश्चय ही ब्रह्म है); एकं ब्रह्म द्वितीयो नास्ति (एक ब्रह्म है दूसरा नहीं है); ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या (ब्रह्म सत्य है जगत मिथ्या अथवा मायारूप है)। इस निष्कर्ष को जानकर बहुत से लोग चौंक उठते हैं। लेकिन इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है, क्योंकि इस तथ्य में ही सापेक्ष और निरपेक्ष, जड़ और चेतन, सत्य और असत्य तथा ज्ञान और अज्ञान का रहस्य छिपा हुआ है।

वास्तव में हमारे अज्ञान और भ्रम का कारण यह है कि हम प्रकृति को एक स्वतन्त्र और निरपेक्ष शक्ति मान लेते हैं जो यूक्लिड और न्यूटन की निरपेक्ष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रेखागणित का प्रत्यक्ष परिणाम है जिसके फलस्वरूप हमारा दृष्टिकोण भी स्वंतन्त्र और निरपेक्ष हो जाता है। ऐसा इसलिए हो जाता है, क्योंकि चेतन पुरुष सदैव द्रष्टा बना रहता है और इसी अवस्था में अहंज्ञान, मन एवं बुद्धि आदि प्रबल प्राकृतिक शक्तियों का उदय हो जाता है जो स्वयं अपने में निरपेक्ष शक्ति सी प्रतीत होती हैं। इसके प्रतिकूल सत्य यह है कि ये सभी शक्तियाँ, जड़, सीमित एवं सापेक्ष हैं और यही सांख्य, वेदान्त एवं योगदर्शन का रहस्य है। हमारा अहंकार जितना ही बढ़ता जाता है प्रकृति का स्वरूप उतना ही असीम एवं रहस्यपूर्ण होता जाता है, हम सत्य के रास्ते से दूर हटते जाते हैं। यही कारण है कि जब तक अहंकार रहता है तब तक स्वचेतना का उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) नहीं हो पाता और हम बुद्धिवादी कौशल द्वारा तरह-तरह के सिद्धान्तों की रचना कर डालते हैं, परस्पर विरोधी विचारों द्वारा भ्रमित हो जाते हैं, क्योंकि सापेक्ष प्रकृति तथा उसकी शक्तियों का यही स्वभाव है। इसीलिए भारतीय दर्शनधारा में 'आत्म समर्पण' (Self surrender) मूल सिद्धान्त है। यह सत्य है कि हम मन एवं बुद्धि द्वारा निरपेक्ष शक्ति को कभी नहीं माप सकते। अतः मनुष्य के समक्ष आत्मसमर्पण ही सत्य को जानने का एकमात्र रास्ता है, क्योंकि अन्तःकरण में इस धारण से ही चेतना का उत्कर्ष होने लगता है। मनुष्य का यह भ्रम कि हम स्वाधीन हैं अथवा पराधीन हैं केवल अहंज्ञान द्वारा उत्पन्न होता है और जब यह दृढ़ विश्वास हो जाता है कि हम सर्वदा से ही स्वाधीन हैं (अहम ब्रह्मास्मि) तो जड़ प्रकृति उस चेतन पुरुष का रास्ता कभी नहीं रोक सकती। यही बन्धन और मुक्ति अथवा निर्वाण का रहस्य है। यह एक तथ्य है कि आधुनिक विज्ञान भी अपने अहंज्ञान एवं बुद्धिवादी कौशल द्वारा उस परम सत्य अथवा निरपेक्ष शक्ति को मापना चाहता है और जैसे-जैसे वह आगे बढ़ता जाता है वैसे-वैसे रहस्य भी और गहरा होता जाता है। यही 'क्वान्टमवाद' और 'सापेक्षवाद' का अब तक का अन्तिम निष्कर्ष है।

अतः सत्य का सम्बन्ध प्रत्यक्षानुभूति (आत्म साक्षात्कार) से है, बुद्धिवादी कौशल द्वारा एकत्र सिद्धान्तों के अम्बार से नहीं और हम देखते हैं कि वे अम्बार भी हिम-खण्डों की तरह एक-एक कर गल जाते हैं। हीगल के शब्दों में इसी-प्रकार वैज्ञानिक तथ्यों के अम्बार कभी वाद (Thesis) बनते हैं और कभी प्रतिवाद (Anti-thesis) तथा वे ही तथ्य फिर संवाद (Synthesis) बन जाते हैं और यह सिलसिला कहाँ तक चला गया है इसकी कोई कल्पना नहीं हो सकती। यही आज के 'क्वान्टमवाद' और 'सापेक्षवाद' का एक कटु सत्य है।

यह हमारी भूल है कि हम किसी वाद अथवा प्रतिवाद या संवाद को एक अन्तिम सत्य मान लेते हैं जो सीमित और सापेक्ष प्रकृति के अन्तर्गत सम्भव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। यही भूल यूक्लिड और अरस्तू द्वारा हुई तथा यही गलती न्यूटन, डार्विन तथा मार्क्स द्वारा भी दुहराई गई और वस्तुतः यही कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का अन्तिम वैज्ञानिक निष्कर्ष है। इसीलिए महान् अंग्रेज भौतिकशास्त्री एवं सापेक्षवाद के उत्कृष्ट समीक्षक सर जेम्स जीन्स को अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The Mysterious Universe) में बाध्य होकर यह लिखना पड़ा, "बीसवीं सदी की सबसे बड़ी विशेषता न तो 'क्वान्टमवाद' में है और न 'सापेक्षवाद' में बल्कि वह इस तथ्य में निहित है कि अभी हम सत्य से बहुत दूर हैं।"

सापेक्षवाद के अनुसार अगर प्रकृति स्वतन्त्र और निरपेक्ष नहीं है तो यह ब्रह्माण्ड तथा उसका ढ़ाँचा, रेखागणित तथा आयाम भी स्वतन्त्र और निरपेक्ष नहीं हो सकता। दूसरे शब्दों में जब स्वचेतना के स्तर में परिवर्त्तन होगा तो मानसिक स्तर में भी परिवर्त्तन हो जायेगा जिसके फलस्वरूप ब्रह्माण्ड के ढ़ाँचे तथा उसकी रेखागणित और आयाम में भी तदनुकूल परिवर्त्तन हो जायेगा। इस वैज्ञानिक तथ्य का प्रत्यक्ष सम्बन्ध गति (Velocity) और समय (Time) से है और यह सिद्धान्त 'लोरेन्टज रूपान्तरण' (Lorentz transformation) द्वारा वैज्ञानिक ढ़ंग से सिद्ध है। इस विषय पर हम आगे बहुत कुछ देखेंगे।

जगत का द्वन्द्वात्मक संघर्ष इसीप्रकार चलता रहता है, तरह-तरह के सिद्धान्त बनते और बिगड़ते रहते हैं, अहंवाद और आत्मसमर्पण के सिद्धान्त परस्पर टकराते रहते हैं, कभी हम एक को सही मान लेते हैं और कभी उसी को गलत कह देते हैं, लेकिन सत्य सर्वदा सत्य ही रहता है, उसमें कभी कोई परिवर्त्तन नहीं होता। परम सत्य का दर्शन युग-युग में विरले मनुष्यों को ही हो पाता है और उन्हीं महात्माओं में हम कपिल, राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसामसीह, मुहम्मद, शंकराचार्य, रामकृष्ण, विवेकानन्द तथा रमण आदि की गिनती करते हैं। समय के प्रवाह में दर्शन और विज्ञान की यह दूरी क्रमशः बढ़ती गई और सत्रहवीं सदी के आरम्भ में गैलीलियो (१५६४–१६४२) नामक एक ऐसे महान् वैज्ञानिक का उदय हुआ जिसे यह पूर्ण विश्वास था कि वह अपने अहंज्ञान तथा बुद्धिवादी कौशल द्वारा निरपेक्ष सत्य को माप सकता है। लेकिन सत्रहवीं सदी का वह बुद्धिवादी कौशल बीसवीं सदी में पूर्णतया ध्वस्त हो गया। गैलीलियो ही वह सर्वप्रथम वैज्ञानिक था जिसने दर्शन और विज्ञान के बीच एक लक्ष्मण रेखा खींच दी।

उसने प्रकृति के रहस्यों की व्याख्या के लिए किसी पूर्वनिश्चित वैज्ञानिक अथवा दार्शनिक सिद्धान्त को अपने अनुसन्धान का आधार नहीं बनाया, बल्कि उसने रोजर बेकन (१२१४–१२९२) की तरह एक नई प्रणाली 'नियन्त्रित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रयोग' (controlled experiment) को जन्म दिया जिसके द्वारा तथ्यों को प्रामाणिक ढंग से सिद्ध किया जाता है। यही वह लक्ष्मण रेखा थी जो आधुनिक विज्ञान में अन्तर्निहित अहंवाद की ओर संकेत करती है, क्योंकि हम सम्पूर्ण प्रकृति के एक खण्ड को ही सत्य मानकर नहीं चल सकते, चेतनशक्ति को जड़ पदार्थ से पृथक् नहीं कर सकते और यही कपिल तथा आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का रहस्य है। इसका मूल कारण यह है कि परमपुरुष परमेश्वर तथा परम स्त्री प्रकृति का संयोग अनादि काल से चला आ रहा है और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उन्हीं दोनों की सन्तान है। हम बुद्धिवादी कौशल द्वारा यह कृत्रिम विभाजन करके कभी सफल नहीं हो सकते और यही क्वान्टमवाद तथा सापेक्षवाद का अन्तिम निष्कर्ष है कि हमें कार्यजगत को समझने के लिए पहले कारणजगत (Astral world) को समझना पड़ेगा। इसप्रकार गैलीलियो युग में विज्ञान का मानदण्ड 'क्यों' से 'कैसे' में बदल गया।

आधुनिक विज्ञान में पदार्थ वह जड़ शक्ति है जो इन्द्रियों (आँख, कान, नाक, स्पर्श, स्वाद) के माध्यम से मस्तिष्क में संश्लेषित (synthetized) होकर दृश्यजगत की नानाप्रकार की वस्तुओं के रूप में प्रतिबिम्बित होती है। वह शक्ति या वस्तु ठोस या द्रव के रूप में हो सकती है अथवा ऊर्जा, प्रकाश, विकिरण, चुम्बकत्व, गैस, स्वाद, गंध आदि किसी भी सूक्ष्म रूप में हो सकती है तथा वह शक्ति निर्जीव या सजीव कोई रूप ग्रहण कर सकती है। आजकल वैज्ञानिक पदार्थ की एक चौथी अवस्था को भी मानते हैं जिसे प्लाज्मा (plasma) कहते हैं। यह अवस्था तब आती है जब उस पदार्थ का तापमान १०,००० डिग्री सेन्टीग्रेड से ऊपर जाने लगता है और लाखों-करोड़ों डिग्री तक (सूर्य एवं तारे) पहुँच जाता है जो स्पष्टतः गैस की अवस्था को भी पार कर जाता है। इसी असीम शक्ति का प्रसारण सूर्य एवं ताराओं से निरन्तर होता रहता है। पूर्ववर्त्ती भौतिकशास्त्र के अनुसार पदार्थ वह शक्ति है जिसमें द्रव्यमान (Mass) होता है तथा उस शक्ति का विस्तार 'देश-काल' (space-time) में होता है। परन्तु विज्ञान मे नवीनतम खोजों के आधार पर अब पदार्थ एवं शक्ति की धारणा भी पूर्णतया बदल गई। अब क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के अनुसार यह माना जाता है कि स्वचेतना (Self consciousness) से पृथक पदार्थ एवं ऊर्जा का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है और इसी आधार पर यह कहा जा सकता है कि चेतना से पृथक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का भी कोई अस्तित्व नहीं है।

इसी आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि स्वचेतना से पृथक देश-काल (Space-time), कारण और कार्य (Cause and effect), गुरुत्वाकर्षण,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चुम्बकत्व, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, एवं अहंकार आदि प्राकृतिक शक्तियों का भी कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है, क्योंकि स्वयं विज्ञान के अनुसार ही इन शक्तियों का जन्म भी जड़ पदार्थ द्वारा ही होता है। क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद का यह निष्कर्ष इतना क्रान्तिकारी है कि सम्पूर्ण विज्ञान के ढांचे को ही अस्त-व्यस्त कर देता है, क्योंकि इस निष्कर्ष से अब यूक्लिड और न्यूटन की रेखागणित के स्थान पर कपिल और आइन्स्टीन की रेखागणित लागू हो जाती है जिससे आधुनिक विज्ञान अध्यात्म (Spiritualism) में समाहित हो जाता है। इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि प्रकृति और पुरुष के अभिन्न संयोग के सम्बन्ध में जन्मसिद्ध ज्ञानी महामुनि कपिल का सिद्धान्त पूर्णतया सही है और इस आधार पर उन्हें यदि वैज्ञानिकों का वैज्ञानिक कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अद्वैतवादी दृष्टिकोण से इसका दार्शनिक अर्थ यह होगा कि एक ही परम चेतनशक्ति स्वयं अपने को ही विभिन्न नाम-रूपों में प्रकट कर रही है, क्योंकि वही शक्ति अन्ततः पदार्थ की सभी शक्तियों को स्वयं अपने में समेटती हुई सी प्रतीत होती है। यह दूसरी बात है कि विज्ञान इस तथ्य को जानते हुए भी अपना अहंज्ञान आज भी बनाये रखना चाहता है, क्योंकि इसी भाव पर जगत में कर्मवाद टिका हुआ है। यद्यपि हम यह नहीं कह सकते कि विज्ञान इन्द्रियों द्वारा जो ज्ञान प्राप्त कर रहा है वह गलत है, लेकिन यह भी सही है कि जब तक हमारा चेतन-स्तर 'देश-काल-निमित्त' (Space time-causation) की प्रक्रिया से परे नहीं हो जाता तब तक हमें परम सत्य का दर्शन नहीं हो सकता। दूसरे शब्दों में हम कदम-कदम पर प्रकृति द्वारा सीमावद्ध हैं और जब तक हम उस बन्धन से परे नहीं हो जाते तब तक हमें भ्रमवश वस्तुजगत के सापेक्ष नाम-रूपों को ही यथार्थ मानकर आगे बढ़ना होगा, क्योंकि स्वयं हम (Ego) तथा हमारा भौतिक ज्ञान प्रकृति की सम्पूर्ण प्रक्रिया अथवा क्रमविकास (Evolution) का ही एक क्षुद्र अंश है और हम लाख प्रयत्न करें बुद्धिवादी कौशल द्वारा अपने को उस प्रक्रिया से पृथक नहीं कर सकते, जैसाकि अरस्तू, यूक्लिड, गैलीलियो, न्यूटन, डार्विन तथा मार्क्स आदि विचारकों ने करने का प्रयास किया था। अधुनातन विज्ञान का यह निष्कर्ष स्वयं पूर्ववर्त्ती विज्ञान पर ही एक ऐसा प्रबल आघात है जिसके फलस्वरूप यूक्लिड की रेखागणित पर आधारित पदार्थवाद, परमाणुवाद, उप-परमाणुवाद तथा जीवशास्त्र का निरपेक्षतावादी सिद्धान्त स्वतः छिन्न-भिन्न हो जाता है। इसी आधार पर कला, संस्कृति, साहित्य, दर्शन, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र आदि रचनात्मक कार्यों में प्रयुक्त 'यथार्थवादी सिद्धान्त भी ध्वस्त हो जाता है, क्योंकि जो पदार्थ एवं उसके सभी नाम-रूप सतत् परिवर्त्तनशील हैं, नित्यप्रति जिनका गठन और विघटन हो रहा है वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कभी यथार्थ कैसे हो सकता है तथा स्वचेतना से पृथक उसका स्वतन्त्र अस्तित्व कैसे हो सकता है ?

इस जगत में एक ही तत्त्व अथवा शक्ति 'देश-काल-निमित्त' (Space-time-causation) की प्रक्रिया से गुजर कर किसी विशेष अवस्था में कुछ होती है और वही शक्ति किसी दूसरी अवस्था में कुछ और हो जाती है, कभी सूक्ष्म होती हैं और कभी स्थूल बन जाती है, कभी जड़ दिखाई देती है और कभी चेतन हो जाती है, कभी कारण बनकर आती है और कभी कार्य हो जाती है, कभी देश-काल के रूप में होती है और कभी लुप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए एक ही तत्त्व कहीं बर्फ है, कहीं जल है, कहीं भाप है और वही तत्त्व कहीं आक्सीजन तथा हाइड्रोजन तत्त्वों (Elements) का योग है। सापेक्षवाद के अनुसार ये सभी प्रक्रियायें केवल स्वचेतना में घटनाचित्रों का क्रममात्र हैं जिनके क्रमगठन से समय का अस्तित्व बना रहता है और उनके क्रमविघटन (Disintegraticn) से समय का अस्तित्व भी लुप्त हो जाता है। हिन्दी साहित्य के छायावादी कवि स्वर्गीय जयशंकर प्रसाद ने ठीक ही कहा है—

नीचे जल था, ऊपर हिम था
एक तरल था, एक सघन;
एक तत्त्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

यद्यपि जयशंकर प्रसाद ने यहाँ 'तत्त्व' शब्द का प्रयोग किया है, लेकिन वैज्ञानिक भाषा में हम उसे 'शक्ति' भी कह सकते हैं। अब 'देश-काल' के अन्तर्गत यह निर्णय करना बड़ा कठिन है कि वह यथार्थ जल में है या हिम-खण्डों में, भाप में है या आक्सीजन और हाइड्रोजन के अणुओं (Molecules) में। यह मानसिक भ्रम यूक्लिड और न्यूटन की स्वतन्त्र रेखागणित का प्रत्यक्ष परिणाम है जिसके फलस्वरूप हम परिवर्त्तनशील सापेक्ष जगत को ही स्वतन्त्र, निरपेक्ष और अनन्त मान लेते हैं।

"आधुनिक विज्ञान में एक सिद्धान्त है जिसे 'ऊर्जा के संरक्षण का नियम' (The law cf conservation of energy) कहते हैं। यह नियम इतना महत्त्वपूर्ण है कि यदि इसे भौतिक विज्ञान का मेरुदण्ड कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

जगत का कर्म-व्यापार ऊर्जा से चलता है। इसी से समुद्र का जल भाप बन कर वर्षा के रूप में आता है, सूर्य एवं ताराओं से प्रकाश एवं विकिरण उत्पन्न होता है, जीव-जन्तु एवं वनस्पति का क्रमविकास होता है, कोयला, तेल एवं ईंधन द्वारा कल-कारखानें चलते हैं, प्रकाश एवं विद्युत् से नगरों की जगमगाहट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बनी रहती है। लेकिन यह ऊर्जा केवल सूक्ष्म रूप में ही नहीं रहती, बल्कि ठोस एवं द्रव्य पदार्थों में भी सुप्त पड़ी रहती है जिसका प्रयोग कर नानाप्रकार के कार्य होते हैं। पदार्थ में विद्यमान इस सुप्त शक्ति को ही 'संचित ऊर्जा' (Conservation of energy) कहते हैं। उदाहरण के लिए हिमालय केवल सौन्दर्य एवं कलाकारों की वस्तु नहीं है, बल्कि सुप्त ऊर्जा का अपार भण्डार है, क्योंकि हिमखण्ड पिघलकर नदियों के रूप में बदलते हैं और नदियाँ तूफान एवं बाढ़ के रूप में प्रलय उपस्थित कर देती हैं। पदार्थ में विद्यमान इसी सुप्त शक्ति को एक अँग्रेज डाक्टर थामस यंग ने १८०७ ई० में 'ऊर्जा' नाम दिया। इस नियम द्वारा यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक वस्तु जो गतिशील है उसमें ऊर्जा विद्यमान है, क्योंकि उस वस्तु के परमाणु अस्थिर होकर अथवा विषमता प्राप्त कर तरंगों (Waves) का रूप ग्रहण कर लेते हैं और उन तरंगों से दूसरी स्थिर वस्तुएँ भी उसीप्रकार गतिशील बन जाती हैं। अतः विज्ञान में जिस ऊर्जा का सम्बन्ध गति (Motion) से है उसे 'गतिज ऊर्जा' (Kinetic energy) कहते हैं और इस सिद्धान्त का आविष्कार अंग्रेज भौतिकशास्त्री लार्ड केल्विन या विलियम थामसन (१८२४–१९०७) द्वारा किया गया।

"प्रकृति में व्याप्त विषमता ही ऊर्जा अथवा कर्म की जननी है और इसी विषमता से समता अथवा समाजवाद भी स्थापित होता है। अगर विषमता न हो तो ऊर्जा भी नहीं हो सकती। इसी सिद्धान्त के अनुसार किसी निश्चित प्रक्रिया (Isolated system) के अन्तर्गत 'गतिज ऊर्जा' और सम्पन्न कर्म दोनों का कुल योग स्थिर (Constant) होगा। यद्यपि दृश्यजगत में कभी ऐसा प्रतीत होगा कि 'गतिज ऊर्जा' (Kinetic energy) लुप्त हो गई, लेकिन वस्तुतः वह लुप्त न होकर उसी अवस्था में सुप्त हो गई अथवा किसी दूसरे नाम-रूप में परिवर्त्तित हो गई। उदाहरण के लिएअगर एक पत्थर को आकाश में ऊपर की ओर उछाला जाय तो पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के फलस्वरूप उस वस्तु की 'गतिज ऊर्जा'(Kinetic energy) क्रमशः क्षीण होती जायेगी और एक विन्दु पर पहुँच कर वह लुप्त सी हो जायेगी। परन्तु विज्ञान कहता है कि वास्तव में वह अवस्था ऊर्जा का लोप नहीं है, बल्कि अवस्था में परिवर्त्तन मात्र है, क्योंकि अगर उस पत्थर को फिर उस स्थिर अवस्था से पृथ्वी की ओर गतिशील बना दिया जाय तो गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से वह पत्थर तीव्र गति से ऊर्जा का रूप ग्रहण कर पृथ्वी की ओर ही वापस आयेगा। यही कारण है कि अमेरिकी स्काईलैब से संसार में आतंक छा गया था। विज्ञान के अनुसार इस परिवर्त्तन का कारण यह है कि उस 'गतिजऊर्जा' का उस विन्दु पर संरक्षण (conservation) हो गया था और पृथ्वी की ओर आने में वह सुप्त ऊर्जा फिर 'गतिज ऊर्जा' (Kinetic

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

energy) में परिर्वात्तित हो गई। यह रहस्य उस वस्तु की अवस्था विशेष (Position of state) में निहित है जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध पृथ्वीं के गुरुत्वाकर्षण से है।

एक स्काटिश इन्जीनियर विलियम जे० एम० रैनकाइन (१८२०-१८७२) ने १८५३ ई० में उस शक्ति को 'विभव ऊर्जा' (potential energy) के नाम से सम्बोधित किया जो आज भी उसीप्रकार मान्य है। सामान्यत: 'गतिज ऊर्जा' और 'विभव ऊर्जा' को यान्त्रिक ऊर्जा (mechanical energy) के अर्थ में लिया जाता है जो मशीन, रेलइन्जन तथा कल-कारखानें आदि के रूप में प्रयुक्त होती है। इस नियम का सिद्धान्त यह है कि घर्षण (friction) आदि के फलस्वरूप 'यान्त्रिक ऊर्जा' (mechanical energy) के किसी भी ह्रास (loss) के लिए जब तक किसी दूसरी ओर से ऊर्जा की पूर्त्ति नहीं होती तब तक वह मशीन भी निरन्तर नहीं चल सकती। अत: सापेक्षवाद का यह नियम कि जब तक प्रकृति में विषमता नहीं होगी, वस्तुओं में असमानता नहीं होगी तब तक समता या समानता भी नहीं स्थापित हो सकती। ऊर्जा सिद्धान्त के प्रतिपादन में जिन प्रमुख वैज्ञानिकों का योगदान है उनमें अंग्रेज वैज्ञानिक जेम्स प्रेसकाट जूल (१८१८-१८८९) तथा जर्मन भौतिकशास्त्री जुलियस राबर्ट वान मेंयर (१८१४-१८७८) आदि भी हैं। लेकिन इस सिद्धान्त के संस्थैापकों में जर्मन भौतिकशास्त्री एवं जीवशास्त्री हरमन वान हेल्महोल्ट्ज (१८२१-१८९४) का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार ऊर्जा का नियम एक 'सार्वभौमिक नियम' (universal law) है जो स्थूल और सूक्ष्म तथा निर्जीव और सजीव सभी वस्तुओं पर समान रूप से लागू होता है। आइन्स्टीन की खोज ($E = mc^2$) द्वारा जब 'आणविक ऊर्जा' (Atomic energy) का पता चला तो यह सिद्धान्त भी और व्यापक हो गया। इस सिद्धान्त की प्रमुख बात यह है कि सभी ऊर्जा शक्तियाँ परस्पर परिवर्त्तनीय हैं।

वास्तव में विज्ञान के अन्य सिद्धान्तों की भाँति 'ऊर्जा सिद्धान्त' भी यूक्लिड की रेखागणित पर आधारित है जो उसे एक स्वतन्त्र और निरपेक्ष शक्ति बना देता है। मैक्सप्लैंक के क्वान्टमवाद से ज्ञात होता है कि ऊर्जा का प्रसारण अटूट प्रवाह (unbroken stream) के रूप में नहीं होता, बल्कि पृथक-पृथक सूक्ष्म कणों (discontinuous bits) के रूप में होता है जिन्हें 'क्वान्टा' (Quanta) कहते हैं। विज्ञान के इस मूलभूत सिद्धान्त को और व्यापक रूप देते हुए आइन्स्टीन ने अपने सिद्धान्त (photo electric effect) द्वारा यह सिद्ध किया कि पदार्थ के अन्य नाम-रूप (रंग, रूप, स्वाद, गंध आदि) भी पृथक-पृथक स्वतन्त्र ईकाइयों के रूप में चलते हैं जिन्हें उन्होंने 'फोटोन' नाम दिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसका अर्थ यह हुआ कि ऊर्जा का श्रोत स्वयं भौतिक जगत में नहीं है, बल्कि वह सूक्ष्मजगत या कारणजगत (Astral world) से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, क्योंकि सापेक्षवाद के नियमों के अनुसार हम कार्यजगत (physical-world) को कारणजगत (Astral world) से पृथक नहीं कर सकते। सांख्यदर्शन, योगदर्शन तथा वेदान्त से भी यही प्रमाणित होता है।

सांख्यकारिका में कहा गया है कि प्रकृति और पुरुष के संयोग से स्वयं जड़ प्रकृति तथा उसकी शक्तियाँ चैतन्य हो उठती हैं, प्रकाश एवं आभा बिखेरने लगती हैं। श्वेताश्वतरो उपनिषद के अनुसार भी आत्मा के प्रकाश से ही सब कुछ प्रकाशित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। गीता (७।४—१२) के सूत्रों से भी यह प्रमाणित होता है कि चेतनशक्ति के शुद्ध प्रकाश (pure light) से ही प्रकृति प्रतिभासित होती है। दूसरे शब्दों में प्रकृति निरपेक्ष न होकर एक सीमित और सापेक्ष शक्ति है। भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी दिव्य विभूतियों का चित्रण (अध्याय १०) अर्जुन के समक्ष प्रस्तुत किया है। आइन्स्टीन ने अपने सापेक्षवाद (Relativity) के सिद्धान्त में यह प्रमाणित कर दिया है कि प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) किसी भी भौतिक पदार्थ के लिए अन्तिम गति है और इस गति से परे भी चेतना का अस्तित्व है। इससे स्पष्ट है कि चेतना की उत्पत्ति पदार्थ द्वारा नहीं हो सकती और उस भौतिक परिधि (प्रकाश की गति) से परे भी किसी अन्य लोक का अस्तित्व है जो भौतिक जगत से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। यह तथ्य मैक्सप्लैंक के क्वान्टमवाद द्वारा भी प्रमाणित होता है कि चेतना से पृथक स्वयं पदार्थ का भी कोई स्वतन्त्र आस्तित्व नहीं है। इसी आधार पर अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर जेराल्ड फेनबर्ग ने 'प्रतिपदार्थ के सिद्धान्त (Anti-matter) का प्रतिपादन किया है जिसमें कहा गया है कि हमारे भौतिकजगत के प्रतिकूल एक महाशक्तिशाली सूक्ष्मजगत या कारणजगत (Astral world) का भी अस्तित्व है जिसकी निम्नतम गति प्रकाश की गति तथा अधिकतम गति अरबों मील प्रति सेकन्ड है। गणित द्वारा प्रमाणित प्रतिपदार्थ के इस सिद्धान्त से स्पष्ट होता है कि प्रकाश की गति से परे जो चेतना का अस्तित्व बना रहता है उसका सम्बन्ध इसी सूक्ष्मजगत से है जिसे सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन में सूक्ष्मलोक या वासनालोक (Astral plane) कहा गया है। इसका कारण यह है कि आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार प्रकाश की गति पर समय की गति वन्द हो जाती है, ऊर्जा का क्रमगठन और क्रमविघटन रुक जाता है, हृदय की धड़कन, खून का दौरा तथा कोष–क्रियाएँ भी रुक जाती हैं जिससे जीव का क्रमविकास अवरुद्ध हो जाता है, तो भी स्वचेतना (Self

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

consciousness) का अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है। भौतिक सन्दर्भ में इसका अर्थ यह हुआ कि वही मनुष्य कीं मृत्यु-अवस्था है, क्योंकि समय के अस्तित्व से ही मनुष्यका जीवन अथवा भौतिक अवस्था बनी रहती है।

इसीलिए योगदर्शन में मृत्यु को महासमाधि कहा गया है, क्योंकि इस अवस्था में समय का अस्तित्व समाप्त हो जाता है जिसके फलस्वरूप भौतिकजगत का ढ़ांचा, उसकी रेखागणित तथा आयाम सूक्ष्मजगत (Astral world) में परिवर्त्तित हो जाता है और इसी क्रिया द्वारा योगी समय को लुप्त कर समाधि अवस्था में पहुँच जाते हैं जहाँ सूक्ष्मशरीर (Astral body) स्थूल शरीर (Physical body) से पृथक हो जाता है जिससे चेतनपुरुष (आत्मा) सूक्ष्मलोक का दर्शन करने लगता है। यही तथ्य आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा भी प्रमाणित होता है, क्योंकि प्रकाश की गति प्राप्त होने पर अथवा समय की गति बन्द हो जाने पर(मृत्यु-अवस्था)द्रष्टास्वरूप उस चेतन पुरुष का क्या हो जाता है ? सांख्य वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार निश्चय ही वह चेतन पुरुष सूक्ष्मशरीर(Astral body) के वाहन में सूक्ष्मलोक पहुँच जाता है जिसपर जेराल्ड फेनबर्ग आजकल अमेरिका में अनुसन्धान कर रहे हैं। यहाँ पर आइन्स्टीन का सापेक्षवाद चुप हो जाता है, क्योंकि वह विज्ञान की सीमाओं के अन्तर्गत भौतिक जगत से बाहर नहीं जा सकते थे। इसीलिए केवल भौतिकजगत की व्याख्या करने के लिए ही उन्होंने प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) को एक निरपेक्ष शक्ति मान लिया जिससे भौतिक-विज्ञान के सभी सिद्धान्तों (यूक्लिड और न्यूटन की रेखागणित पर आधारित) की प्रतिष्ठा बनी रहे, अन्यथा बुद्धिवादी कौशल द्वारा तैयार किया हुआ विज्ञान का महल ध्वस्त होकर वेदान्त में समाहित हो जायेगा। यह विज्ञान के लिए जीवन और मरण का प्रश्न था और यही तथाकथित यथार्थवाद के लिए भी, अरस्तू, न्यूटन, डार्विन और मार्क्स के लिए भी। लेकिन सत्य सर्वदा सत्य ही रहता है। उसपर डाला हुआ पर्दा एक न एक दिन स्वतः हट जाता है, सत्य के सामने असत्य कभी टिक नहीं सकता और आज का विज्ञान उसी भंवरजाल में पड़ा हुआ है। वह बाहर निकलने का रास्ता खोज रहा है, लेकिन यह निश्चित है कि वह रास्ता बुद्धिवाद और अहंज्ञान द्वारा नहीं प्राप्त किया जा सकता, ऐसा हमारे वेदान्त में बहुत पहले ही कह दिया गया था और हम देखते भी हैं कि रावण और दुर्योधन का भी अहंवाद नहीं चल सका। आज विज्ञान का सबसे बड़ा संकट यही है कि वह आत्मसमर्पण (Self surrender) नहीं करना चाहता, कारण और कार्य की अटूट शृंखला को फिर से नही जोड़ना चाहता और उसीप्रकार निरपेक्षताबाद एवं भौतिकवाद चलाना चाहता हैं।

आइन्स्टीन का वैज्ञानिक सापेक्षवाद इस भौतिक सीमा पर हीं अपना दम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तोड़ देता है, लेकिन यहीं पर कपिल का अद्भुत सापेक्षवाद उसमें प्राणों का संचार कर पुनर्जीवित कर देता है। कपिल कहते हैं कि सापेक्षवाद का यह सिलसिला कारण और कार्य (Cause & effect)की अटूट शृंखला द्वारा जुड़ा हुआ है जो अनादि काल से प्रकृति और पुरुष (आत्मा) के संयोग से शुरू होता है और भौतिकजगत के क्रम-विकास तक असंख्य सूक्ष्म लोकों में बंटा हुआ है जिसकी कल्पना मानव बुद्धि द्वारा नहीं की जा सकती। यही कारण है कि कपिल का अदभुत् सापेक्षवाद एवं प्रकृति विवेचन वेदान्त और योगदर्शन द्वारा उसीप्रकार स्वीकार कर लिया गया है। इसीलिए गौतम बुद्ध ने भी सांख्यदर्शन के 'आवागमन-चक्र' को स्वीकार कर लिया है। इसीलिए महाभारत में महर्षि वेदव्यास ने कहा है कि जगत का सभी ज्ञान सांख्यदर्शन से ही प्राप्त हुआ है। अगर आज विज्ञान वेदान्त के इस तथ्य को नहीं स्वीकार करना चाहता है तो इससे सत्य पर कोई आँच आने वाली नहीं है, क्योंकि प्रकृति का क्रम-विकास (Evolution) स्वयं विज्ञान द्वारा नहीं हो रहा है, बल्कि एक महाशक्तिशाली सार्वभौमिक मन (Universal mind) द्वारा हो रहा है। मानसिक शक्ति के इस सिद्धान्त को तो विश्वविख्यात वैज्ञानिक सर जेम्स जीन्स तथा सर आर्थर एडिंगटन ने भी अपनी अनेक पुस्तकों में स्वीकार किया है। स्वयं भौतिकवादी विचारक डार्विन तथा जूलियन हक्सले ने भी 'प्राकृतिक चुनाव'(Natural selection) के सिद्धान्त की वकालत की है। अगर प्रकृति के साथ कोई चेतनशक्ति नहीं है तो यह प्राकृतिक चुनाव कैसे सम्भव है ? अगर द्रष्टास्वरूप कोई चेतनशक्ति नहीं है तो प्रकृति की यह लीला एवं असंख्य दिव्य लोकों का दर्शन कौन कर रहा है ? जड़ पदार्थ तो पदार्थ-ऊर्जा प्रक्रिया ($E=mc^2$) में प्रकाश की गति पर ही समाप्त हो जाता है तो फिर उसमें चैतन्य कहाँ से उत्पन्न हो जाता है ? महान् वैज्ञानिक मैक्सवेल ने भी एक ऐसी ही सूक्ष्म चेतनशक्ति का सुझाव दिया था जो विज्ञान में 'मैक्सवेल का शैतान' (Maxwell's demon) के नाम से प्रसिद्ध है। परन्तु क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के पश्चात् अब वैज्ञानिक उस सुझाव को गम्भीरतापूर्वक ले रहे हैं और अब यह अनुभव किया जा रहा है कि चेतना को पदार्थ से भिन्न तत्व स्वीकार किये बिना विज्ञान की गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती।

पहले सर जेम्स जीन्स जैसे वैज्ञानिक भी इस पहेली का कारण समय(Time) को ही समझते थे, लेकिन आज विश्वविख्यात रूसी वैज्ञानिक डॉ० कोजीरेव के 'नियन्त्रित प्रयोगों' द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि समय ऊर्जा का ही एक नाम-रूप है। समय का सम्बन्ध आन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) से है, जबकि ऊर्जा का सम्बन्ध बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) से है। पहली प्रक्रिया का उपयोग योगविज्ञान द्वारा होता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया का प्रयोग भौतिकविज्ञान द्वारा होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वास्तव में भौतिकजगत की प्रक्रिया इलेक्ट्रान और फोटोन कणों के टक्कर से ही शुरू होती है, क्योंकि इलेक्ट्रान कण भौतिकजगत की ईकाई होते हैं, जबकि गुण-विकार युक्त फोटोनकण सूक्ष्मजगत या कारणजगत की ईकाई होते हैं और इस प्रक्रिया द्वारा कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत कार्यस्वरूप स्थूलजगत में परिवर्त्तित हो जाता है, क्योंकि उसी टक्कर से इलेक्ट्रान कण भी गुण-विकार युक्त हो जाते हैं जिससे परमाणुओं का सन्तुलन बिगड़ जाता है, चुम्बकीय तरंगों (Magnetic-waves) का उदय होता है और वहीं से भौतिकजगत की प्रक्रिया शुरू हो जाती है तथा द्वन्द्वात्मक संघर्ष भी उसीप्रकार चलता रहता है एवं कारण और कार्य की अटूट श्रृंखला भी उसीप्रकार बनी रहती है। यह प्रक्रिया भी आकर्षण (Attraction) और विकर्षण (Repulsion) नियमों द्वारा होती है तथा ऋण-आवेश (Negative charge) और धन आवेश (Positive charge) के योग से ही होती है जिसका ज्ञान हमें सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन द्वारा प्राप्त होता है। इलेक्ट्रान और फोटोन कणों का संयोग वैसा ही है जैसा सांख्यदर्शन में प्रकृति और पुरुष का संयोग होता है और वहीं से कारण और कार्य की शृंखला भी शुरू हो जाती है। कपिल के सापेक्षवाद का यही सारतत्व है कि हम कारण और कार्य, सूक्ष्म और स्थूल, प्रकाश और अंधकार, हिंसा और अहिंसा, सत्य और असत्य, जीवन और मृत्यु, सुख और दुख तथा आकर्षण और विकर्षण आदि सापेक्ष तत्वों एवं शक्तियों को एक दूसरे से पृथक नहीं कर सकते, एक के बिना दूसरे की धारणा नहीं कर सकते, क्योंकि ये तत्व एवं शक्तियाँ प्रकृति और पुरुष के अभिन्न संयोग द्वारा उत्पन्न हुई हैं जो अनादि काल से आज तक उसीप्रकार चला आ रहा है।

ऊर्जा सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ के अन्तस्थल में असीम ऊर्जा शक्ति सुप्तावस्था में पड़ी हुई है जिसे अनेक वैज्ञानिक प्रक्रियाओं द्वारा जागृत कर जगत का कर्म-व्यापार चलाया जाता है। चूँकि मनुष्य का निर्माण भी चेतना और पदार्थ के संयोग द्वारा हुआ है, इसलिए मनुष्य में भी वैसी ही असीम शक्ति होनी चाहिये। योगी उसी शक्ति को 'कुंडलिनी' के नाम से सम्बोधित करते हैं जिसे जाग्रत कर वे ब्रह्मस्वरूप हो जाते हैं। यद्यपि अनेक पाश्चात्य देशों में उस महाशक्ति पर बुद्धिवादी प्रयोग हो रहे हैं, उसे वैज्ञानिक नियमों के अन्तर्गत समझने का प्रयास हो रहा है, लेकिन उसका वास्तविक ज्ञान विज्ञान की पुस्तकों में नहीं है, बल्कि गीता और पतंजलि-योगसूत्र में है। उस महाशक्ति को वैज्ञानिक अथवा बहिर्गत प्रक्रिया (Objective process) द्वारा नहीं जगाया जा सकता, बल्कि उसे यौगिक विधि अथवा आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा ही जगा कर आत्मसाक्षात्कार किया जा सकता है। इस वैज्ञानिक प्रयोग में भी अहंवादी दृष्टिकोण दिखाई दे रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों ने उसी भ्रामक और स्वतन्त्र रेखागणित का प्रयोग किया है जिसका प्रयोग यूक्लिड और न्यूटन ने किया था। इससे स्पष्ट है कि उस सिद्धान्त की भी वही दशा है जो अन्य वैज्ञानिक सिद्धान्तों की है। लेकिन उसकी एक झलक ले लेने मे कोई हर्ज नहीं है।

प्राचीन ग्रीक युग (७०० ई०पू० से २००० ई०पू०) में अनेक विचारकों ने एक उत्कृष्ट रेखागणित का विकास कर आधुनिक खगोलशास्त्र (Modern astronomy) की नींव डाली थी। थेल्स (६४० ई०पू०) का विश्वास था कि ब्रह्माण्ड गोलाकार (Spherical) है। अरस्तू (३८४–३२२ ई०पू०) ने ताराओं की गतिशीलता तथा ग्रहण (Eclipse) आदि का अध्ययन कर यह विचार व्यक्त किया कि पृथ्वी चपटी (Flat) न होकर गोलाकार है। उसका कहना था कि सभी वस्तुओं का एक समुचित स्थान होता है जहाँ वे विलीन हो जाती हैं। अपने अनुसन्धान द्वारा हिप्पारवकस (१९०–१२० ई०पू०) ने एक विशेष रेखागणित (Trigonometry) की खोज की तथा ताराओं और पृथ्वी की अवस्थाओं में जो परिवर्त्तन होता है उस पर प्रकाश डाला। उसी के सिद्धान्त पर आगे चलकर दूसरी सदी में टाल्मी (Ptolemy) ने खगोलशास्त्र पर एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक (Almagest) की रचना की। ग्रीक युग के ये सिद्धान्त सदियों तक विचारकों का मार्गदर्शन करते रहे।

लेकिन पन्द्रहवीं सदी के मध्य में आधुनिक योरप का जन्म हो चुका था और उसी प्रक्रिया के अन्तर्गत १४७३ ई० में निकोलस कोपरनिकस द्वारा आधुनिक खगोलशास्त्र का प्रादुर्भाव हुआ। उसने सूर्यमण्डल के ग्रहों का सूक्ष्म अध्ययन किया और अनेक प्राचीन सिद्धान्तों का खण्डन कर यह मत प्रतिपादित किया कि सूर्य ब्रह्माण्ड के केन्द्र में है तथा पृथ्वी सहित सभी ग्रह उसका चक्कर लगाते हैं। यह क्रान्तिकारी सिद्धान्त चर्च तथा ईसाई समाज की धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध था जिसके अनुसार सूर्य नहीं, बल्कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्रविन्दु है। इसके पश्चात् यद्यपि डेनिश खगोलशास्त्री टाइको ब्राहे ने 'कोपरनिकस के सूर्य-सम्बन्धी सिद्धान्त (केन्द्र) का प्रतिवाद किया, लेकिन उसका शिष्य केपलर ने कोपरनिकस के मूल सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए यह मत व्यक्त किया कि सूर्य केन्द्रविन्दु है और विभिन्न ग्रह उसका चक्कर लगाते हैं, किन्तु वह चक्कर वृत्ताकार (Circular) न होकर अण्डाकार (Elliptical) होता है। दूसरे शब्दों में यात्रा मार्ग (Orbit) में सूर्य से उन ग्रहों की दूरी समय-समय पर एक विन्दु से दूसरे विन्दुओं पर भिन्न-भिन्न होती है।

परन्तु सत्रहवीं सदी के आरम्भ (१६०९ ई०) में गैलीलियो ही वह सर्वप्रथम वैज्ञानिक था जिसने नक्षत्रों के अध्ययन के लिये टेलीस्कोप का विधिवत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रयोग किया। यद्यपि उसका यन्त्र अधिक शक्तिशाली नहीं था, किन्तु चन्द्रमा पर स्थित पहाड़ों, गह्वरों (Craters) सूर्य के धब्बों (Sun spots) तथा वृहस्पति (Jupiter) के उपग्रहों को देखने में समर्थ था। इसके पश्चात् महान वैज्ञानिक न्यूटन ने पुराने टेलीस्कोप के स्थान पर एक पूर्णतया नये टेलीस्कोप (Reflector) का निर्माण किया जिसके शीशे का व्यास (Diameter) एक इञ्च था। केपलर ने यह प्रदर्शित किया था कि नक्षत्र-पिण्ड कैसे घूमते हैं? न्यूटनने यह प्रदर्शित किया कि वे क्यों घूमते हैं? इस सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ईश्वरवादी होते हुए भी अपने अनुसन्धान में न्यूटन ने बुद्धिवाद का प्रयोग किया और उसने यूक्लिड की उसी रेखागणित का प्रयोग किया जिसकी वजह से आज विज्ञान की यह दुर्दशा हो रही है! लगभग दो सौ वर्षों तक कोई दूसरा न्यूटन पैदा नहीं हुआ जो उसके महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को काटने की हिम्मत कर सकता।

लेकिन बीसवीं सदी के आरम्भ में आइन्स्टीन नामक एक ऐसे महावैज्ञानिक का उदय हुआ। जिसने न सिर्फ न्यूटन के सिद्धान्तों को ध्वस्त कर दिया, बल्कि एक नये युग का सूत्रपात भी किया। यह आश्चर्य की बात है कि बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भी अभी तक विज्ञान पर से यूक्लिड और न्यूटन का भूत उतर नहीं सका। न्यूटन ने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण खोज की जिसे 'गुरुत्वाकर्षण का सार्वभौमिक नियम' (Universal law of gravitation) कहते हैं। इस नियम के अनुसार उसने यह प्रमाणित किया कि अपने द्रव्यमान (Mass) के अनुपात में प्रत्येक वस्तु किसी दूसरी वस्तु को अपनी ओर आकर्षित करती है जिसका एक निश्चित मापदण्ड होता है। यह शक्ति इतनी सूक्ष्म होती है कि दैनिक जीवन में इसका आभास तक नहीं होता। न्यूटन का कहना था कि नक्षत्र-पिण्डों की तीव्र गतिशीलता इसी शक्ति द्वारा नियन्त्रित होती है, क्योंकि यही शक्ति सभी पिण्डों को एक नियत कक्ष (Orbit) पर चलने से लिये बाध्य करती है। ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में न्यूटन की यह कल्पना उसीप्रकार थी जिसप्रकार असंख्य चेतनाविहीन चुम्बकीय पिण्ड परस्पर एक दूसरे को खींचते हुए तीव्र गति से भाग रहे हैं! इसप्रकार उसने एक ऐसे 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद (Mechanistic theory of universe) की नींव रखी जो क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद के तूफान से डगमगा कर भी अभी तक उखड़ नहीं सकी।

न्यूटन की बहुमुखी खोजों तथा अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों के फलस्वरूप वैज्ञानिक प्रगति तीव्र गति से हुई। उसके नियमों को परवर्त्ती वैज्ञानिकों ने ब्रह्म-सूत्र मान लिया और उसी के आधार पर अनेक प्रकार के आविष्कार हुए। दूरदर्शी यन्त्रों (Telescopes) का जैसे-जैसे विकास होता गया नक्षत्र-विज्ञान और सुदूर अन्तरिक्ष के ज्ञान में वैसे-वैसे वृद्धि होती गई। अपने स्वनिर्मित दूरदर्शी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यन्त्रों द्वारा प्रसिद्ध खगोलशास्त्री सर विलियम हर्सेल ने १७८१ ई० में एक नये ग्रह (Uranus) की खोज की। इसीप्रकार १८३८ ई० में बीसेल ने नई विधि द्वारा सर्वप्रथम एक तारा (Cygni) की दूरी का पता लगाया तथा १८४६ ई० में एक नये ग्रह (Neptune) की खोज की गई। जब १९१७ ई० में केलीफोर्निया की विल्सन पहाड़ी (Mount wilson) पर १०० इंच व्यास का रिफ्लेक्टिंग टेलीस्कोप (100-inch reflector) स्थापित किया गया तो अन्तरिक्ष में अनेक प्रकार की नई खोजें हुईं। इसीप्रकार १९४८ ई० में अमेरिका में ही पालोमर पहाड़ी पर २०० इञ्च व्यास का टेलीस्कोप लगाया गया जिससे अन्तरिक्ष ज्ञान में अत्यन्त वृद्धि हुई।

इसी तरह रूस के क्रीमिया प्रदेश में १०२-इञ्च व्यास का टेलीस्कोप है और पिछले वर्षों रूस ने ही दुनियाँ का सबसे बड़ा टेलीस्कोप (२३८-इञ्च) बनाने में सफलता प्राप्त कर ली है। लेकिन पृथ्वी पर इससे अधिक बड़े टेलीस्कोपों के निर्माण में सबसे बड़ी बाधा वायुमण्डल और उसमें व्याप्त पदार्थ के सूक्ष्म कण हैं।

अमेरिकी भौतिकशास्त्री कार्ल जेन्स्की ने १९३१ ई० ऐसी रेडियो तरगों (Radio Waves) की खोज की जो हमारी आकाशगंगा के मध्य से आ रही थीं। इसीप्रकार की अनेक खोजों द्वारा पिछले लगभग ३० वर्षों में ही 'रेडियो खगोलशास्त्र' (Radio Astronomy) नामक एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विज्ञान का विकास हुआ है। प्रकाश तरंगों की भाँति रेडियो तरंगें भी एक प्रकार का 'विद्युत चुम्बकीय विकिरण' (Electro magnetic radiation) होती हैं और अपने विशिष्ट तरंगदैर्घ्य (Wavelength) के कारण ही प्रकाश तरंगों से भिन्न होती हैं। इंगलैंड के 'जाड्रेल बैंक' में स्थापित रेडियो टेलीस्कोप विश्व के सर्वोत्तम रेडियो टेलीस्कोपों में एक माना जाता है। रेडियो खगोलशास्त्र द्वारा उपलब्ध ज्ञान के आधार पर उच्चकोटि के वैज्ञानिकों की एक गुप्त बैठक १९६१ई० में ग्रीन बैंक (पश्चिमी वर्जिनिया) में हुई थी। इसका उद्देश्य दूसरे ग्रहों पर मानव सभ्यता के अस्तित्व के सम्बन्ध में परस्पर विचार करना था।

अन्तरिक्ष के सूक्ष्म ज्ञान हेतु पृथ्वी का वातावरण उपयुक्त नहीं माना जाता, क्योंकि वायुमण्डल तथा धूल आदि के सूक्ष्म कण उसमें बाधा उत्पन्न करते हैं और यही कारण है कि आज वैज्ञानिक चन्द्रमा पर प्रयोगशाला (observatory) स्थापित करने के लिए अत्यधिक उत्सुक हैं, क्योंकि वहाँ वायुमण्डल नहीं है। इस ब्रह्माण्ड में असंख्य तारे विद्यमान हैं और जैसे-जैसे दूरदर्शी यन्त्रों के आकार-प्रकार में वृद्धि होती है वैसे-वैसे इन ताराओं की संख्या में भी वृद्धि दिखाई देती है। अधिकांश तारे हमारे सूर्य से भी सैकड़ों-हजारों गुना बड़े हैं, जबकि कुछ उससे छोटे भी हैं। लेकिन आज विज्ञान की सीमा यह है कि पृथ्वी पर उपलब्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्तिशाली टेलीस्कोपों द्वारा भी उन तारों के असंख्य ग्रहों एवं उपग्रहों को नहीं देखा जा सकता, क्योंकि उनकी दूरी हजारों-लाखों प्रकाश-वर्षों में हैं।

विख्यात खगोलशास्त्री हर्लोशेपले का कहना है कि हमारे टेलीस्कोपों की सीमा में १००००००००००००००००००००० ($१०^{२०}$) तारे आते हैं और लगभग एक हजार तारों में एक तारा ऐसा होना चाहिये जहाँ पृथ्वी के समान जीवन के लिए उपयुक्त वायुमण्डल हो। हमारी पृथ्वी से सबसे निकट तारे की दूरी २६,०००,०००,०००,००० मील है और इस लम्बी दूरी की गणना के लिए विज्ञान में 'प्रकाशवर्ष' (Light year) का प्रयोग किया जाता है। प्रकाश-वर्ष उस दूरी को कहते हैं जिसमें प्रकाश प्रतिसेकण्ड १,८६,००० मील की गति से चलकर एक वर्ष में जितनी दूरी (६,०००,०००,०००,००० मील) तय करता है और इसप्रकार आधुनिक विज्ञान के अनुसार इन असंख्य तारों की परस्पर दूरी हजारों-लाखों-करोड़ों प्रकाशवर्ष मानी जाती है। यद्यपि आज अमेरिका और रूस के पास ऐसे शक्तिशाली टेलीस्कोप (२००"-२३८") हैं जो आकाश में हमारी दृष्टि को ५ से ७ हजार प्रकाशवर्षों तक बढ़ा देते हैं, किन्तु इनके द्वारा भी तारासमूहों के एक बहुत छोटे अंश की ही गणना हो पाती है। यही कारण है कि सुप्रसिद्ध भौतिकशास्त्री एवं खगोल वैज्ञानिक सर जेम्स जीन्स को यह कहना पड़ा (The Mysterious universe) कि आकाश में इन तारों की संख्या उसीप्रकार है जिसप्रकार संसार के सारे समुद्रों के किनारे पड़े हुए बालू के छोटे-छोटे कण। इसीसे हम कल्पना कर सकते हैं कि प्रकृति का विस्तार कहाँ तक है ! जब इस विशाल ब्रह्माण्ड के सन्दर्भ में हम अपनी तुच्छ पृथ्वी की ओर दृष्टिपात करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता हैं कि उसका अस्तित्व महासमुद्र में एक बूंद के बराबर भी नहीं है। लेकिन यह एक आश्चर्यजनक बात है कि इस तुच्छ पृथ्वी का निवासी मनुष्य के अन्तस्थल में एक ऐसी चेतन-शक्ति विद्यमान हैं जिसमें यह अकल्पनीय ब्रह्माण्ड समाहित हो गया है और क्रमशः वही अनन्तज्ञान भौतिकविज्ञान के माध्यम से प्रकट होता जा रहा है। इससे स्पष्ट है कि पदार्थ में विद्यमान चेतनशक्ति ही वास्तविक शक्ति है जो एक परमाणु से लेकर असंख्य तारामण्डलों तक व्याप्त है।

अपनी उसी पुस्तक में जेम्स जीन्स आगे कहते हैं कि इस ब्रह्माण्ड के परीक्षण द्वारा जो हमारे ऊपर पहला प्रभाव पड़ता है उसे आतंक (Terror) कहना चाहिये, क्योंकि इसकी अपरिमित दूरी निरर्थक सी प्रतीत होती है और उस दूरी में समय का प्रवाह इतना असीम हैं कि उसके समक्ष मानवजीवन बौना बन जाता है। इसके अतिरिक्त अन्तरिक्ष में हमारा एकाकीपन (Loneliness) तथा क्षुद्र अस्तित्व हमें और भी आतंकित कर देता है। लेकिन जीन्स के अनु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सार इस ब्रह्माण्ड के आतंकपूर्ण स्वरूप का जो सबसे बड़ा कारण है वह पृथ्वी जैसे जीवन के प्रति उसकी उदासीनता तथा मानवीय संवेदना, महत्वाकांक्षा, कला-संस्कृति और धर्म के प्रति उसकी योजनाविहीन विमुखता हैं। एक तरफ तो अन्तरिक्ष का अधिकांश भाग इतना ठंडा है कि उसमें सभी प्रकार के जीव-जन्तु वर्फ की तरह जम जायेंगे और दूसरी ओर अधिकांश नक्षत्र-पिण्ड इतना गर्म हैं कि उन पर जीवन असम्भव हो जायेगा। इसके अतिरिक्त अन्तरिक्ष में अनेक प्रकार के विकिरण (Radiation) प्रवाहित होते रहते हैं जो जीवन के लिए घातक हैं। परन्तु जेम्सजीन्स जैसे अनेक वैज्ञानिकों का अनुमान है कि लगभग एक लाख तारा समूहों में कम से कम एक तारा हमारे सूर्य की तरह ऐसा होना चाहिये कि जहाँ हमारे सूर्यमण्डल की तरह अनेक ग्रह तथा उपग्रहों और उन पर पृथ्वी की तरह जीवजगत विद्यमान हों।

इस सन्दर्भ में एक अन्य प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री फ्रेड ह्वायल ने अपनी एक पुस्तक (The nature of the universe) में उपलब्ध तकनीक के आधार पर पहले अनुमान लगाया था कि आकाशगंगा के तारापुञ्जों में हमारे सूर्यमण्ड़ल की भाँति लगभग १० लाख ग्रह-प्रणालियाँ (Planetary System) विद्यमान हैं। लेकिन आगे चलकर विज्ञान में जब नई तकनीकों का विकास हुआ तो फ्रेडह्वायल को अपने पहले के विचारों में संशोधन करना पड़ा जिसके फलस्वरूप अपनी एक दूसरी पुस्तक (Frontiers of Astronomy) में ग्रहप्रणालियों की उस पूर्व संख्या को १० लाख से बढ़ाकर एक खरब स्वीकार करना पड़ा है। इससे स्पष्ट होता है कि मानसिक विकास द्वारा जब वैज्ञानिक विकास होता है तो उसके साथ वैज्ञानिकों को भी अपनी पूर्वनिश्चित धारणाएँ बदलनी पड़ती हैं, अनेक नियमों तथा सिद्धान्तों में तदनुकूल संशोधन करना पड़ता है, अपने विचारों में परिवर्त्तन करना पड़ता है। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि समय के प्रवाह में प्रकृति कीं कोई भी अवस्था स्वयं अपने में पूर्ण और निश्चित नहीं है। इसका प्रमाण यह है कि अपने अरबों वर्षों के इतिहास में समय के प्रभाव से स्वयं तारामण्डलों अथवा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वरूप में अनेक प्रकार के परिवर्त्तन होते आये हैं। ऐसी स्थिति में प्रकृति की किसी भी अवस्था को स्थिर, पूर्ण और सत्य कैसे माना जा सकता है ? इसीप्रकार एक दूसरे प्रसिद्ध वैज्ञानिक लेखक डा० विली ली के अनुसार यह अनुमान किया जाता है कि केवल हमारी आकाशगंगा में ही ३० खरब तारे हैं और आज खगोलशास्त्री यह अनुमान लगाते हैं कि लगभग १८ खरब ग्रह प्रणालियाँ (Planetary System) हमारी आकाशगंगा में विद्यमान हैं। इसीतरह अपने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण द्वारा वैज्ञानिकों ने भिन्न-भिन्न अनुमान लगाये हैं। जहाँ मानवीय कल्पना नहीं पहुँच पाती वहाँ अनुमान के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिवाय और कोई चारा नहीं है। यह उल्लेखनीय है कि पृथ्वी के अतिरिक्त अन्यग्रहों पर जीव-जन्तुओं का पता लगाने के लिए अनेक प्रकार के अनुसन्धान किये गये, अपोलो और वाइकिंग अभियानों द्वारा चन्द्रमा और मंगल ग्रह की सतहों का अध्ययन किया गया, शुक्र और वृहस्पति जैसे बड़े आकाश-पिण्डों के चित्र लिए गये, अन्तरिक्ष में रेडियों संकेत आदि भी भेजे गये, किन्तु अभी तक कोई प्रामाणिक विवरण नहीं प्राप्त हो सका। इस सम्बन्ध में सुदूर ताराओं पर कोई खोज करना तो अभी बहुत दूर की बात है, लेकिन कुछ ऐसे विशिष्ट संकेत प्राप्त हुए हैं जिनसे वैज्ञानिक इस दिशा की ओर अत्यधिक उत्साहित हुए हैं।

हमारे सौरमण्डल का राजा सूर्य भी एक तारा है जो हमारी तुच्छ पृथ्वी से लगभग १३ लाख गुना बड़ा है, किन्तु अपने प्रज्वलित रूप के कारण उसका द्रव्यमान (Mass) हमारी पृथ्वी से लगभग ३ लाख ३० हजार गुना ही बड़ा है। एक ओर जबकि उसकी सतह जा तापमान ६०००° सेन्टीग्रेड है तो दूसरी ओर उसका आन्तरिक तापमान २०,०००,००० सेन्टीग्रेड है। जिस सूर्य के प्रचण्ड ताप से हम पीड़ित हो उठते हैं और दूसरी ओर वही हमारे जीवन का मूल श्रोत है, उसकी सामान्य दूरी पृथ्वी से ९ करोड़ २७ लाख मील है। अन्तरिक्ष में सूर्य अपनी यात्रा के दौरान केवल नौ ग्रहों (पृथ्वी, मंगल, बुध, वृहस्पति शुक्र, शनि, वरुण, यूरेनस, प्लूटो) के साथ ही नहीं चलता, बल्कि अपने साथ अनेक उपग्रहों, धूमकेतु तथा उल्कापिपडों को भी लेकर चलता है। मंगल और वृहस्पति ग्रहों के बीच हजारों छोटे-छोटे उपग्रह हैं, जिनकी उत्पत्ति अभी भी एक रहस्य है। पृथ्वी का उपग्रह धवल चन्द्रमा जो सदियों से कलाकारों का आकर्षण रहा है एक निर्जन और वीरान प्रदेश है और पृथ्वी से उसकी सामान्य दूरी २४०,००० मील है।

सूर्यमण्डल के ग्रहों तथा अन्य पिण्डों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक सिद्धान्त हैं। इस सम्बन्ध में फ्रान्सीसी गणितज्ञ लेपलेस (१७४९-१८२७) ने एक वैज्ञानिक सिद्धान्त (Nebular Hypothesis) प्रस्तुत किया। इस सिद्धान्त के अनुसार सूर्य की उत्पत्ति एक विशाल गैस के गोले द्वारा हुई जो क्रमशः छिटक कर अन्य ग्रहों एवं उपग्रहों के रूप में बदल गया। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में सर जेम्स जीन्स ने एक नया सिद्धान्त प्रस्तुत किया। इसके अनुसार सूर्य के जन्म की प्रक्रिया में एक विशाल तारा उसके निकट से गुजरा और गुरुत्वाकर्षण के फलस्वरूप सिगार की शक्ल का लम्बा पदार्थ सूर्य से अलग हो गया, इसी प्रक्रिया में जब दूसरा तारा उससे दूर हो गया तो वह पदार्थ गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से सूर्य का चक्कर लगाने लगा। जीन्स के अनुसार इसप्रकार वह गर्म पदार्थ धीरे-धीरे अन्य ग्रहों से रूप में परिवर्तित हो गया। लेकिन यह सिद्धान्त गणित द्वारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उतना पुष्ट नहीं माना जाता और इसीलिए इधर वैज्ञानिक लेपलेस के सिद्धान्त की ओर विशेष रूप से उन्मुख हुए हैं ।

अपने जीवनदाता सूर्य को भी जब हम सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सन्दर्भ में देखते हैं तो वह भी बौना सा प्रतीत होता हैं, क्योंकि हमारी आकाशगंगा के अरबों-खरबों विशाल तारों में वह भी एक लघु तारा है, उसी जटिल प्रणाली का अभिन अंग हैं । यह उस जटिल प्रणाली का ही चमत्कार है कि जिस पृथ्वी पर हम निवास करते हैं, उसी को अपनी सीमा मान बैठते हैं, स्वयं वह पृथ्वी ७० हजार मील प्रति घन्टे की रफ्तार से निरन्तर सूर्य का चक्कर लगा रही है, तो भी हमें उस तीव्र गति का आभास तक नहीं होता, जगत में हमारा सभी कुछ उसीप्रकार दिखाई देता है, क्योंकि उसके साथ समस्त वातावरण, सारा चराचरजगत तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उस एक ही लय एवं सुर (Rythmical order) में चक्कर लगा रहे हैं । अगर सूर्य के ताप-संचारण अथवा विकिरण में थोड़ा सा भी परिवर्त्तन हो जाय तो इस पृथ्वी पर जीवजगत का अस्तित्व असम्भव हो जायेगा, क्योंकि इस आकस्मिक क्रिया के फलस्वरूप या तो हम वर्फ से गल जायेंगे या स्थूलजगत ऊर्जा में परिवर्तित हो जायेगा । लेकिन यह हमारा सौभाग्य है कि ब्रह्माण्ड के अन्य अस्थिर ताराओं (Pulsating or exploding stars) के विपरीत हमारा सूर्य एक बहुत स्थिर तारा है और यही कारण है कि उसके स्थिर विकिरण के फलस्वरूप इस पृथ्वी पर हमारा जीवन भी सामान्य रूप से चल रहा है ।

एक ओर जब हमारी पृथ्वी का व्यास केवल ७९०० मील है, वहीं दूसरी ओर सूर्य का व्यास ८६४,००० मील है । इसीप्रकार जबकि हमारी पृथ्वी एक ठोस पिण्ड है, वहीं सूर्य पूर्णतया एक गैस-पुंज है जो केन्द्र में अत्यधिक घना तथा सतह पर पतला है । घनघोर गैसों से युक्त सूर्य एक ठोस पिण्ड की तरह नहीं घूमता, बल्कि उन गैसों के विभिन्न क्षेत्र विभिन्न गति से घूमते हैं । सूर्य की ऊपरी सतह को 'प्रकाशक्षेत्र' (Photosphere) कहा जाता है और इसी क्षेत्र में सूर्य के धब्बे (Sunspots) दिखाई देते हैं । वैज्ञानिक सूर्य के इन धब्बों को ही शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्रों (Magnetic fields) का श्रोत मानते हैं, किन्तु उनका कारण अभी निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है । इन धब्बों की संख्या में समयानुकूल परिवर्त्तन होता रहता है जिसे 'सूर्य धब्बावृत्त' (Sunspot cycle) कहते हैं और वह वृत्त लगभग ११ वर्षों का होता है । इन विशाल धब्बों का समूह जब १९४७ ई० में दिखाई दिया था तो वह दो अरब वर्गमील क्षेत्र में फैला हुआ था । वैज्ञानिक कहते हैं कि सूर्य में जो सबसे नाटकीय प्रदर्शन होता है वह विशाल लपटों (Flames) के रूप में उठता हुआ गैस का अम्बार है जो कभी-कभी लाखों मील ऊपर तक झपट्टा मारता है । सम्पूर्ण सूर्य को हम कई सतहों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Layers) में बाँट सकते हैं—सर्वप्रथम केन्द्र में सूर्य का हृदयस्थल (core) है, जहाँ से सम्पूर्ण ऊर्जा ताप के रूप में उत्पन्न होती है और इसका बाह्य विस्तृत भाग ताप के रूप में उस विकिरण को सतह तक पहुँचाने का कार्य करता है। 'प्रकाश क्षेत्र' (Photosphere) के अतिरिक्त एक दूसरी सतह होती है जिसे 'क्रोमोस्फीयर' (chromosphere) कहते हैं जो लगभग ३,००० मील मोटी है। इससे परे जो क्षेत्र है उसे 'प्रभामण्डल' (corona) कहते हैं और वह पूर्णग्रहण पर ही दिखाई देता है। इस क्षेत्र का तापमान लगभग दस लाख डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। सूर्य के जाज्वल्यमान स्वरूप तथा उसके ऊर्जा-प्रवाह (Spectrum) के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उसमें प्रमुख रूप से हाइड्रोजन गैस का ही प्रसारण हो रहा है और सूर्य का द्रव्यमान अधिकांश रूप से (लगभग ८०%) उसी तत्व का बना है। इसके अतिरिक्त हीलियम तथा अन्य गैसों का भी अस्तित्व है। सूर्य में जिस प्रक्रिया द्वारा असीम ताप एवं ऊर्जा का उत्पादन हो रहा है उस प्रक्रिया को 'परमाणु-शृंखला-प्रतिक्रिया' (Atomic chain reaction) कहते हैं। इस अक्षुण्ण प्रक्रिया द्वारा ही सूर्य अरबों वर्षों से अन्तरिक्ष में अबतक टिका हुआ है। अन्य ताराओं में भी यही क्रिया होती है और इस रहस्य का ज्ञान हमें आइन्स्टीन के अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त (Relativity of mass) द्वारा सर्वप्रथम प्राप्त हुआ। इस क्रिया में सूर्य के लगभग एक करोड़ चालीस लाख डिग्री सेन्टीग्रेड के तापमान पर हाइड्रोजन के असंख्य परमाणु स्वचालित प्रक्रिया द्वारा स्वतः विखंडित (Fusion) होते रहते हैं और इसके परिणामस्वरूप हीलियम (Helium) के रूप में अपार ऊर्जा उत्पन्न होती है। इस आधार पर वैज्ञानिक लेखक लेन निकोल्सन अपनी पुस्तक (Astronomy) में कहते हैं कि पृथ्वी पर कृत्रिम ढंग से निर्मित हाइड्रोजन बम में भी इसी सिद्धान्त का प्रयोग होता है और हम सूर्य को भी एक नियन्त्रित विशाल हाइड्रोजन बम मान सकते हैं।

सूर्य के अन्दर यह क्रिया तीन स्तरों में होती है—सर्वप्रथम दो हाइड्रोजन परमाणु-केन्द्रक (Nuclei) परस्पर संयुक्त होकर एक 'भारी हाइड्रोजन केन्द्रक' (Heavy hydrogen nucleus) अथवा एक ड्यूटेरोन नामक कण (Deuteron) बनाते हैं और इस क्रिया के फलस्वरूप इलेक्ट्रान कण की भाँति 'पोजीट्रोन' (Positron) नामक धनात्मक विद्युत कण (Positive charge) उत्पन्न होता है इसके पश्चात् ड्यूटेरोन कण एक दूसरे हाइड्रोजन केन्द्रक अथवा प्रोटोन से संयुक्त होकर हीलियम का एक 'आइसोटोप' (Isotope) निर्मित करता है जिसका आणविक भार ३ होता है और इसके साथ ही ऊर्जा के रूप में 'संक्षिप्त तरंग दैर्घ्य' (Short wavelength) युक्त 'गामा विकिरण' (Gamma radiation) फूट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ता है। अन्त में दो हीलियम ३ आइसोटोप्स संयुक्त होकर एक साधारण हीलियम (आणविक भार ४) केन्द्रक का निर्माण करते हैं और इस क्रिया द्वारा दो 'प्रोटोन' नामक धनात्मक विद्युत कण उत्पन्न होते हैं। इसप्रकार वे प्रोटोन कण इस प्रक्रिया को वृत्त के रूप में और आगे बढ़ाते रहते हैं। सूर्य के हृदय-स्थल (Core) में हीलियम की यह संश्लेषित प्रक्रिया विज्ञान में 'प्रोटोन-प्रोटोन प्रतिक्रिया' (Proton-Proton reaction) के नाम से जानी जाती है। वैज्ञानिक कहते हैं कि अन्तरिक्ष के असंख्य ताराओं में भी यही स्वचालित प्रक्रिया होती है जिसके फलस्वरूप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में असीम ताप एवं ऊर्जा का उत्पादन निरन्तर होता रहता है। सूर्य द्वारा एक्स-रे से लेकर रेडियो तरंगों तक सभीप्रकार के विकिरण प्रसारित होते रहते हैं और इन प्रसारणों की एकरूपता एवं स्थिरता (Solar constant) के फलस्वरूप ही इस पृथ्वी पर हमारा सामान्य जीवन बना रहता है। अगर ऐसा न हो तो इस पृथ्वी का सभी कुछ एक क्षण में लुप्त हो जायेगा। सूर्य की इस विलक्षण प्रक्रिया में जिन असंख्य परमाणुओं का मंथन होता है, परस्पर टक्कर होती है उसी क्रिया को 'सौर-वायुप्रवाह' (Solar wind) कहते हैं।

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध भौतिकशास्त्री फ्रेड ह्वायल अपनी पुस्तक (Frontiers of Astronomy) में कहते हैं कि पिछले कुछ वर्षों में ही सूर्य की अपार ऊर्जा का एक बड़ा रहस्य ज्ञात हो सका है। ह्वायल के अनुसार एक सेकन्ड में सूर्य जितनी ऊर्जा उत्पन्न करता है वह मानव इतिहास के सम्पूर्ण ऊर्जा उपभोग से कहीं अधिक है। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि अगर मनुष्य को इस आणविक रहस्य का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया तो इस पृथ्वी के सम्पूर्ण पदार्थ को सूर्य की भाँति नियन्त्रित ढंग से उर्जा में परिवर्तित किया जा जा सकता है जो करोड़ों वर्षों तक हमारी आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए पर्याप्त होगा। वैज्ञानिक कहते हैं कि जब सूर्य का आणविक इंधन समाप्त हो जायेगा तो उसमें विस्फोट होकर वह ध्वस्त हो जायेगा, लेकिन इस विस्फोट से हमें चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह समय लगभग पाँच अरब वर्षों के बाद आयेगा।

हमारा सौरमण्डल एक परिवार के समान है और उस परिवार में सूर्य तथा अन्य ग्रहों की वही स्थिति है जो एक मुखिया तथा अन्य सदस्यों के बीच होती है। आज वैज्ञानिक नई तकनीकों तथा विविध उपकरणों की सहायता से विभिन्न ग्रहों का पता लगाने में व्यस्त हैं, किन्तु अभी तक जो जानकारी प्राप्त हुई है उससे ज्ञात होता है कि वे निर्जन और वीरान हैं। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में चन्द्रमा तथा मंगल ग्रहों पर अनेक अन्तरिक्षयान भेजे गये, लेकिन उनसे जीव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जगत के अस्तित्व का कोई ठोस प्रमाण नहीं प्राप्त हो सका है। कुछ वैज्ञानिक यह मानते हैं कि मंगल ग्रह पर कभी उत्कृष्ट सभ्यता विद्यमान थी, किन्तु प्रामाणिक रूप से अभी इसका विश्लेषण नहीं हो पाया है। १९७२ ई० में चार अमरीकी तथा दो रूसी अन्तरिक्ष यानों द्वारा मंगल ग्रह के जो चित्र लिए गये उनसे प्रकट होता है कि वहाँ भी चन्द्रमा की तरह क्रेटर विद्यमान हैं। वृहस्पति ग्रह के सम्बन्ध में रूसी वैज्ञानिक डा० कोजीरेव का कहना है कि उसका आन्तरिक तापमान १९६,००० डिग्री सेन्टीग्रेड है, क्योंकि- उसके हृदयस्थल (Core) में भी आणविक प्रक्रिया (Chain reaction) हो रही है। अमेरिकी स्वचालित यान पायनियर-१० और पायनियर-११ द्वारा प्राप्त सूचनाओं से भी यही संकेत मिलता है। इस आधार पर अनेक वैज्ञानिक यह मानते हैं कि वृहस्पति एक ग्रह नहीं, वल्कि स्वप्रकाशमान नक्षत्र है जो या तो नष्ट हो रहा है अथवा अभी अपने निर्माण की प्रक्रिया में है। इसीप्रकार अभी पिछले दिनों अन्तरिक्ष यानों द्वारा शुक्र ग्रह के विषय में जो जानकारी प्राप्त हो सकी है उसमें कहा गया है कि इसका वायुमण्डल इनना सघन है कि ऊपर से धरातल की स्थिति का वास्तविक ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। शुक्र ग्रह की सतह का तापमान ५०० डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक है और वहाँ अधिकांश धातुएँ पिघली हुई अवस्था में दिखाई देंगी। कुछ चित्रों द्वारा ज्ञात हुआ है कि शुक्रग्रह का धरातल ऊबड़-खाबड़ तथा ज्वालामुखियों से भरा हुआ है, वहाँ लगभग दो सौ मील प्रति घन्टे की रफ्तारसे रासायनिक धुआँ और भयंकर तूफान उठा करते हैं, प्रति घन्टे सैकड़ों बार बिजली कौंधती हैं; उसका धरातल एक धधकता हुआ ज्वालामुखी है। शुक्र ग्रह का वायुमण्डल अत्यधिक घना होने के कारण ही सूर्य की किरणें उसे भेद नहीं पातीं और पृथ्वी की भाँति वहाँ किसी वस्तु की छाया नहीं दिखाई देती। उस ग्रह पर प्रचण्ड ताप के फलस्वरूप इतनी दीप्ति एवं आभा निकलती है कि वायुमण्डल के अणु भी प्रकाशमान हो उठते हैं।

नक्षत्रविद्या (Astronomy) के त्वरित विकास तथा चुम्बकीय विकिरण के निरीक्षण के लिए यह आवश्यक है कि विश्व के विभिन्न केन्द्रों में 'रिफ्लेक्टिगं टेलीस्कोप' तथा 'रेडियो टेलीस्कोप' अधिकाधिक संख्या में स्थापित किये जाँय। इसप्रकार के अध्ययन के लिए पृथ्वी की अपेक्षा चन्द्रमा अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि वहाँ वायुमण्डल नहीं है। सैकड़ों कृत्रिम उपग्रहों (Artificial satellites) द्वारा भी इस दिशा में महत्वपूर्ण अनुसन्धान हो रहे हैं; लेकिन इस क्षेत्र में चमत्कार तो तब होगा जब आणविक शक्ति द्वारा संचालित अन्तरिक्ष यान लगभग प्रकाश की गति से सुदूर ग्रहों की ओर अग्रसर होंगे।

हम पीछे देख चुके हैं कि आकाश में ताराओं की संख्या उसीप्रकार है जिसप्रकार संसार के सारे समुद्रों के किनारे पड़े हुए बालू के छोटे-छोटे कण। लेकिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमारी वर्त्तमान सीमा यह है कि इन ताराओं के असंख्य ग्रहों एवं उपग्रहों के विषय में हम कुछ भी नहीं जानते हैं, क्योंकि पृथ्वी से इनकी दूरी अरबों-खरबों मील है। इन ताराओं की अनेक श्रेणियाँ हैं और उनका स्वरूप भी भिन्न-भिन्न है। उदारहण के लिए कुछ ताराओं का रंग लाल है तो कुछ का पीला, सफेद, बैंगनी तथा नीला, कुछ अत्यधिक गर्म हैं जिनका तापमान सतह पर ३,००० डिग्री से लेकर ३०,००० डिग्री सेन्टीग्रेड तक हैं, कुछ पृथ्वी के समान छोटे हैं तो कुछ सूर्य से भी सैंकड़ों-हजारों-गुना बड़े हैं, कुछ हमसे इतनी दूर हैं कि शक्तिशाली टेलीस्कोपों द्वारा भी प्रकाश विन्दुओं के समान प्रतीत होते हैं। इसीप्रकार कुछ ताराओं का द्रव्यमान सूर्य के समान है तो कुछ पृथ्वी के समान बौना ताराओं White dwarfs) का द्रव्यमान इतना अधिक है कि वहाँ एक वर्गइन्च (Cubic inch) पदार्थ के टुकड़े का वजन हजारों टन होगा और उस क्षेत्र से कोई भी प्रकाश किरण आकर्षित होकर उसी में समाहित हो जायेगी। अन्तरिक्ष में सभी तारे एक दूसरे के सन्दर्भ में ही गतिमान दिखाई देते हैं। दूसरे शब्दों में तारामण्डलों की गतिशीलता भी ब्रह्माण्ड की अन्य वस्तुओं के समान सापेक्ष है। हमारा सूर्य भी एक तारा है जो अन्तरिक्ष में 'हरक्यूलिस' तारामण्डल (Constellation) की ओर लगभग १२ मील प्रति सेकेन्ड की रफ्तार से गतिमान है। टेलीस्कोप द्वारा देखने पर ताराओं के अनेक जोड़े (Double stars) भी दिखाई देते हैं जो अपने सामूहिक गुरूत्वाकर्षण केन्द्र के चारों ओर परस्पर एक दूसरे का चक्कर लगाते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक तारे ऐसे भी हैं जो सूर्य के समान स्थिर प्रकाश (Constant Light) न विखेरकर अनिश्चित तथा विभिन्न स्तरों में प्रकाश विखेरते हैं। इन ताराओं में कुछ ऐसे भी तारे हैं जो हृदय की धड़कनों (Pulsating stars) की तरह स्पन्दित होते हैं और नियमानुसार कभी फैल जाते हैं तथा कभी संकुचित हो जाते हैं। अनेक आकाशगंगाओं में कुछ इसप्रकार के भी तारे (Novae) हैं जो अचानक तेज चमक उत्पन्न कर देते हैं और फिर क्रमशः क्षीण होकर लुप्त हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त अत्यधिक प्रभा से युक्त तारे (Supernovae) भी हैं जो सम्भवतः विस्फोटक रूप ग्रहण कर लाखों ताराओं के सम्मिलित प्रकाश की भाँति प्रचण्ड ज्योति उत्पन्न करते हैं। अत्यधिक गर्म ताराओं का रंग नीला और ठंडे ताराओं का रंग लाल होता है, जबकि हमारा सूर्य मध्यम स्तर पर है जिसकी आभापीले रंग पर है।

विज्ञान में ऐसा विश्वास किया जाता है कि ताराओं का निर्माण गैस तथा धूल के बादलों द्वारा होती है। चूंकि वे बादल टुकड़ों में विभक्त होते हैं और टुकड़े गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से विकिरण उत्पन्न करने लगते हैं तथा जब तापमान अत्यधिक बढ़ जाता है तो उनमें 'परमाणु-श्रृंखला प्रतिक्रिया' (chain rea-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ction) आरम्भ हो जाती है। इसप्रकार उन पिण्डों में द्रव्यमान उत्पन्न हो जाता है जो क्रमशः स्थिर होकर अन्तरिक्ष में एक निश्चित मार्ग का अनुसरण करने लगते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा उनमें ताप और ऊर्जा का संचारण होने लगता है, हाइड्रोजन गैस हीलियम में बदलने लगती है और जब पारमाणविक ईंधन समाप्त हो जाता है तो उनकी आभा लुप्त हो जाती है। इसी प्रक्रिया द्वारा उनमें विस्फोट होता है और वे तारे नोवा या सुपरनोवा की तरह विनष्ट हो जाते हैं।

आकाश में असंख्य तारे समूहों (clusters) में विभक्त होते हैं और उन समूहों को आकाशगंगा (Galaxy) कहते हैं। इन आकाशगंगाओं के आकार-प्रकार में भिन्नता होती है। हमारी आकाशगंगा का स्वरूप आमलेट (Fried egg) की तरह है अथवा उसे तवा (Disc) कह सकते हैं जो बीच में कुछ फूला हुआ हो। हमारी आकाशगंगा का कुल व्यास (Diametre) १००,००० प्रकाशवर्ष है और समस्त आकाशगंगा २२ करोड़ वर्षों में एक चक्कर लगा लेती है, लेकिन यह गतिशीलता भी सापेक्ष है। इस परिभ्रमण में हमारा सूर्य तथा अनेक ग्रह उस आकाश केन्द्र में प्रति सेकन्ड १८० मील की रफ्तार से घूम रहे हैं। इस आकाशगंगा के द्रव्यमान का ४।५ भाग उसके केन्द्र भाग में ही स्थित है। पृथ्वी पर जैसे-जैसे टेलीस्कोपों के आकार-प्रकार में वृद्धि होती हैं वैसे-वैसे नई-नई आकाशगंगाएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। अमेरिका के पालोमर पहाड़ी पर २००-इन्च टेलीस्कोप से लगभग एक अरब आकाशगंगाएँ दिखाई देती हैं और रूस के २३८-इन्च टेलीस्कोप से इनकी संख्या में उसी अनुपात में वृद्धि हो जाती है। आकाश में इन शक्तिशाली टेलीस्कोपों की सीमा केवल पाँच से सात हजार प्रकाशवर्ष तक ही सीमित है। दूसरे शब्दों में इन टेलीस्कोपों द्वारा हम पाँच से सात हजार प्रकाशवर्ष दूर तक की आकाशगंगाओं को ही देख सकते हैं, जबकि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का व्यास अरबों-खरबों प्रकाशवर्ष दूर तक विस्तृत है। इसका अर्थ यह हुआ कि टेलीस्कोप जितना ही शक्तिशाली होगा यह विशाल ब्रह्माण्ड और उसकी अपरिमित दूरी सापेक्षवाद के अनुसार उतनी ही सिकुड़ती जायेगी, अर्थात् हमारी दृष्टि और इन्द्रियज्ञान उसी अनुपात में बढ़ता जायेगा, उसी अनुपात में हमारे और उनके बीच की दूरी कम होती जायेगी। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि उसी अनुपात में हमारी गति में भी वृद्धि होती जायेगी और उसके साथ समय का व्यवधान भी कम होता जायेगा। इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सन्दर्भ में हमारा अस्तित्व कितना बौना है।

खगोल वैज्ञानिक कहते हैं कि ताराओं की तरह आकाशगंगाएँ भी समूहों (clusters) में स्थित हैं। स्लीफर तथा डाप्लर आदि वैज्ञानिकों ने यह पता लगाया है कि ये आकाशगंगाएँ तेजी से हमसे दूर भागती जा रही हैं और इनकी दूरी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जितनी ही अधिक है उनकी गति भी उतनी ही तीव्र है। कुछ सुदूर आकाश-गंगाओं की गति ९०,००० मील प्रति सेकन्ड है जो प्रकाश की गति से आधी है। ब्रह्माण्ड की इस प्रक्रिया को 'हबुल का नियम' (Hubble's constant) कहते हैं और इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सुदूर भूतकाल में सभी आकाशगंगाएँ एक समूह में ही स्थित थीं जो बाद में विस्फोटक प्रक्रिया [Explosive process) द्वारा छिटक कर अलग हो गईं। अतः इस नियम के अनुसार १०,०००,०००,००० वर्ष पूर्व इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई और तभी से इसका क्रमशः विस्तार (Expansion) होता जा रहा है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सभी आकाशगंगाएँ अपने असंख्य ताराओं तथा ग्रह-पिण्डों के साथ एक दूसरे से दूर भागती जा रही हैं और सापेक्षवाद के अनुसार इस रेखागणित में ऊपर-नीचे, दाएँ-बाएँ, पूरब-पश्चिम तथा दिशा-ज्ञान आदि कुछ भी नहीं है, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड की रेखागणित यूक्लिड की समानान्तर रेखाओं पर आधारित नहीं है, बल्कि रीमानियन रेखागणित पर आधारित वृत्ताकार (circular) रूप से निर्मित है। इसका अर्थ यह हुआ कि एक वृत्ताकार ब्रह्माण्ड में पहला, दूसरा, तीसरा, आदि संख्या सम्बन्धी नियम, भूत, वर्तमान और भविष्य सम्बन्धी कालचक्र तथा आदि, मध्य और अन्त सम्बन्धी गणनात्मक विश्लेषण एवं कल्पनाएँ केवल मानसिक भ्रम मात्र हैं। इस भ्रम का कारण यह है कि हम इस रेखागणित को, अपरिमित ब्रह्माण्ड को अपने सापेक्ष ज्ञान द्वारा मापने की चेष्टा करते हैं, उसे सीमाबद्ध करने का प्रयास करते हैं जिसका अस्तित्व सापेक्ष है, परस्पर एक दूसरे के सन्दर्भ में है। चूँकि निरपेक्ष शक्ति की हम कोई कल्पना नहीं कर पाते, इसलिए सापेक्ष ब्रह्माण्ड ही हमारे लिए यथार्थ बन जाता है, एक सत्य हो जाता है। इसका निर्धारण तभी हो सकेगा जब हम एक निरपेक्ष शक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन कर सकेंगे। वेदान्त के अनुसार जब उस निरपेक्ष शक्ति आत्मा या परमात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन होता है तो 'देश-काल-निमित्त' तथा सापेक्षजगत लुप्त हो जाता है, सब कुछ एकाकार हो जाता है, सभी जड़ पदार्थ चैतन्य में बदल जाते हैं और योगी कहते हैं कि नाम-रूपात्मक भेद समाप्त होकर सभी कुछ ब्रह्ममय हो जाता है। शास्त्रों में इसी को आत्मसाक्षातकार कहते हैं, प्रत्यक्षानुभूति भी कहते हैं, विभिन्नत्व का एकत्व में रूपान्तरण भी कहते हैं। अगर इस भाव को दार्शनिक भाषा में व्यक्त किया जाय तो इसी अवस्था को हम चेतना का चरमोत्कर्ष (unfoldment of consciousness) कहते हैं, प्रकृति का लय कहते हैं, शक्ति का चेतना में समापन भी कह सकते हैं। इसप्रकार परमात्मा ही अपने संकल्प द्वारा प्रकृतिरूपी शक्ति में बदल गया है।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जो प्रमुख वैज्ञानिक सिद्धान्त हैं उन्हें हम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो भागों में बांट सकते हैं—पहला है 'क्रमविकासवादी सिद्धान्त' (Evolutionary theory) और दूसरा है 'स्थिरता का सिद्धान्त' (Steadystate theory)। क्रमविकासवादी सिद्धान्त के प्रवर्त्तकों में बेल्जीयम के जार्ज लेमातें (Lemaitre) जार्ज वाशिंगटन विश्वविद्यालय के डा० जार्ज गेमोव तथा अमेरिका में केलीफोर्निया तकनीकी संस्थान के डा० आर० सी० टोलमैन का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। लेमातें के अनुसार आज से लगभग २० अरब वर्ष पहले इस ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण पदार्थ जो एक खरब आकाशगंगाओं को निर्मित करने के लिए यथेष्ट था, पहले एक छोटे द्रव्यमान के रूप में केन्द्रित था जिसे 'आदिमपरमाणु' (primeval atom) नाम दिया गया है। उस आदिम परमाणु का घनत्व असीम था और किसी कारणवश उसमें विस्फोट हो गया, जिसके फलस्वरूप वह केन्द्रित पदार्थ चारों ओर छिटक गया। इस क्रिया द्वारा जब पदार्थों का विस्तार कुछ धीमा हुआ तो एक स्थिर अवस्था बन गई और इसीसमय आकाशगंगाओं का निर्माण हुआ। समय के प्रवाह में किसीप्रकार फिर यह सन्तुलन विगड़ गया और उसी अवस्था में यह ब्रह्माण्ड आज तक बना हुआ है। लेकिन कुछ वैज्ञानिक इस सिद्धान्त में संशोधन कर यह विचार व्यक्त करते हैं कि इसमें कभी स्थिरता (Steady-state) नहीं आई, बल्कि उसमें निरन्तर विस्तार होता गया है। इस सिद्धान्त की महत्वपूर्ण बात यह है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का निर्माण एक ही केन्द्रविन्दु पर एक ही समय में हुआ और तभी से इसमें निरन्तर विस्तार होता जा रहा है। इस आधार पर कुछ वैज्ञानिकों का विश्वास है कि इस ब्रह्माण्ड का सर्वदा के लिए विस्तार होता जायेगा, लेकिन दूसरी ओर कुछ वैज्ञानिक मानते हैं कि यह विस्तार एक अवस्था पर आकर रुक जायेगा और इसके पश्चात ब्रह्माण्ड में संकोच (contraction) प्रारम्भ हो जायेगा तथा वह क्रिया तब तक चलती रहेगी जब तक कि सम्पूर्ण पदार्थ फिर एक बार एक ही विन्दु पर केन्द्रित नहीं हो जाता। इसप्रकार इस सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड में निरन्तर 'क्रमविकास,(Evolution) और 'क्रमसंकोच' (Involution) होता रहेगा, सृष्टि का निर्माण और विनाश चलता रहेगा।

जार्ज गेमोव के अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड की नाभिक (Nucleus) एक ही प्रकार के मौलिक तथा भाप से युक्त पदार्थ का एक नारकीय स्थल था जो असीम और प्रचण्ड ताप से उबल रहा था और उस प्रज्वलित अवस्था में पदार्थ के अणुओं, परमाणुओं तथा भिन्न-भिन्न तत्वों का कोई अस्तित्व नहीं था, बल्कि उस अवस्था में सिर्फ स्तन्त्र न्यूट्रोन कण अपने प्रचण्ड रूप में उद्वेलित हो रहे थे। इसप्रकार जब द्रव्यमान का विस्तार होने लगा तो तापमान गिरने लगा और इस प्रक्रिया में न्यूट्रोन कण घनीभूत होकर इलेक्ट्रान कणों में परि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर्त्तित होने लगे और अन्ततः वे कण केन्द्रकों (Nuclei) से संयुक्त हो गये तथा इस क्रिया द्वारा क्रमशः परमाणुओं, तत्वों (Elements) एवं असंख्य नक्षत्र-पिण्डों की उत्पत्ति हुई। गेमोव ने उन आधारभूत मौलिक तत्वों (constituent elements) का भी विशद विवेचन किया है जो ब्रह्माण्ड के उस मूल प्रज्वलित रूप में विद्यमान थे और आगे चलकर उन्हीं तत्वों का क्रमिक विस्तार हुआ जो प्रकृति के गुणात्मक तत्वों के रूप में आज भी दृष्टिगोचर होते हैं।

डा० टोलमैन के अनुसार ब्रह्माण्ड की विस्तारवादी प्रक्रिया (Expanding universe) एक अस्थायी प्रक्रिया है जो सुदूर भविष्य में क्रमसंकोच (Involution) में ही परिवर्त्तित हो जायेगी। इस सिद्धान्त के अनुसार यह ब्रह्माण्ड एक विशाल रबड़ का गुब्बारा (Baloon) है जिसमें क्रमविस्तार और क्रमसंकोच एक वृत्त (Cycle) की भाँति निरन्तर चलता रहेगा, क्योंकि पदार्थ की यह प्रक्रिया अनादि एवं अनन्त है। यह सिद्धान्त इस कल्पना पर आधारित है कि ब्रह्माण्ड में विनाश के साथ-साथ कहीं निर्माण भी चल रहा है, मृत्यु के साथ-साथ जीवन भी लगा हुआ है।

ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में दूसरा महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त 'स्थिरता का सिद्धान्त' (Steady-state theory) है और इसके प्रमुख प्रवर्त्तकों में केम्ब्रिज के फ्रेड ह्वायल, गोल्ड और बोंदी माने जाते हैं। इसका सारतत्व यही है कि समस्त ब्रह्माण्ड का स्वरूप सर्वदा इसीप्रकार बना रहेगा, क्योंकि ताराओं के रूप में ऊर्जा और पदार्थ का जो विनाश हो रहा है, उस ऊर्जा और पदार्थ की पूर्ति ब्रह्माण्ड में ही नये ताराओं के निर्माण द्वारा होती जा रही है। यही कारण है कि इस ब्रह्माण्ड का स्वरूप सदैव ऐसा ही बना रहेगा। उदाहरण के लिए जिसप्रकार नदी का जल जब तरंगों (Waves) के रूप में आगे बढ़ जाता है तो उसी नदी की पिछली तरंगें तत्काल उन तरंगों की पूर्ति कर देती हैं, उसीप्रकार आकाश में ताराओं तथा आकागंगाओं की भी पूर्ति होती जा रही है, विनाश निर्माण में बदलता जा रहा है। इस सिद्धान्त का दार्शनिक अर्थ यह होगा कि फिर जीव-जगत की मृत्यु भी कोई वस्तु नहीं है, बल्कि मूलरूप से वह जीवन की ही एक प्रक्रिया है और इसीप्रकार विनाश भी निर्माण की ही एक प्रक्रिया है, क्योंकि सापेक्षजगत का यही स्वाभाविक परिणाम हो सकता है। लेकिन हम ऐसा दावा तभी कर सकते हैं जब प्रकृति में विद्यमान स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों को भलीभाँति समझ लें और अपने अन्तर्जगत में उनका प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त कर लें, उन दोनों अवस्थाओं के रहस्य को अच्छी तरह पहचान लें।

अभी पिछले वर्षों कुछ सुदूर ताराओं के सम्बन्ध में रोमांचक तथ्य भी वैज्ञानिकों के समक्ष आये हैं, किन्तु अभी तक उनका कोई सन्तोषजनक समा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धान नहीं हो पाया है। लेकिन उन संकेतों से ऐसा प्रतीत होता है कि इस ब्रह्माण्ड में असंख्य सभ्यताएँ विद्यमान हैं। इस सन्दर्भ में यह महत्त्वपूर्ण है कि कुछ सुदूर ताराओं पर रेडियो तरगों (Radio waves) के श्रोत प्राप्त होते हैं और उन्हें संक्षेप में 'क्वेसर' (Quasars) कहते हैं। १९६३ ई० में पालोमर वेधशाला के वैज्ञानिक श्मिट् (Schmidt) ने एक मद्धिम आभायुक्त नीले तारे की खोज की। उसके प्रभामण्डल (Spectrum) का परीक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि उस तारे पर रेडियो श्रोत विद्यमान है। श्मिट् को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वह नीला तारा कोई साधारण तारा नहीं है, बल्कि 'हबुलनियम' के अनुसार उस तारे की दूरी अरबों प्रकाशवर्ष है। इसके पश्चात् आकाश में इसी-प्रकार के कई अन्य तारे भी दृष्टिगोचर हो चुके हैं, जिनकी दूरी हजारों प्रकाश-वर्ष है और उनकी गति लगभग १५०,००० मील प्रति सेकण्ड है जो प्रकाश की गति से कुछ कम है। उन ताराओं की आभा को देखकर वैज्ञानिकों ने यह अनुमान लगाया है कि वे तारे आकाशगंगा के अन्य ताराओं से सैकड़ों गुना अधिक चमकीलें हैं। अभी तक निश्चित रूप से यह ज्ञात नहीं हो सका है कि उनकी अपार ऊर्जा का रहस्य क्या है! इस विषय पर अभी अनुसन्धान चल रहे हैं।

स्विस विचारक एरिक वान डेनिकेन ने अपनी पुस्तक (Chariots of the Gods ?) में लिखा है कि यह विषय अब गुप्त नहीं रह गया है कि नवम्बर १९६१ ई० में ग्रीन बैंक (पश्चिमी वर्जिनिया) के 'राष्ट्रीय रेडियो-खगोल वेध-शाला' (National Radio Astronomy observatory) में ११ उच्चकोटि के वैज्ञानिकों की एक गुप्त वैठक हुई। इसका उद्देश्य दूसरे ग्रहों पर मानव अस्तित्व के सम्बन्ध में परस्पर विचार-विनियम करना था। इस वैठक में अन्य लोगों के अतिरिक्त प्रख्यात वैज्ञानिक डा० कोकोनी, डा० सू शू हुआंग, डा० फिलिप मारीसन, ड० फ्रैंक ड्रेक, डा० ओटो स्ट्रूबे, डा० कार्ल सैगन तथा नोवेल पुरस्कार विजेता मेल्विन काल्विन भी मौजूद थे। इस वैठक के बाद वैज्ञानिक जिस निष्कर्ष पर पहुँचे उसे वैज्ञानिक जगत में 'ग्रीनवैंक फारमूला' के नाम से जाना जाता है। यह एक गणितीय फारमूला है जो आकाशगंगा में ताराओं की विद्यमानता पर आधारित है। इस फारमूला के अनुसार केवल हमारे सूर्यमण्डल से सम्बद्ध आकाशगंगा (Galaxy) में ही कम से कम पाँच करोड़ विभिन्न मानव सभ्यताएँ वर्त्तमान हैं जो यां तो पृथ्वी से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयत्न कर रही हैं या परस्पर एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करना चाहती हैं। डेनिकेन के अनुसार ब्रह्माण्ड में जीव-जन्तुओं का पता लगाने के लिए विज्ञान में जीवशास्त्र की एक नई शाखा (Exobiology) विकसित हो रही है और इस संस्था से अमेरिका के NASA तथा अन्य देशों के उच्चकोटि के वैज्ञानिक सम्बद्ध हैं!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन वैज्ञानिकों का यह उद्देश्य है कि पुराने रूढ़िवादी वैज्ञानिक नियमों एवं सिद्धान्तों का अतिक्रमण कर यौगिक, पराभौतिक तथा अन्य सूक्ष्म विधियों द्वारा सत्य का पता लगाया जाय। यद्यपि अभी तक इस दिशा में जो अनुसन्धान हुए हैं उनसे कोई अकाट्य वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है, किन्तु फिर भी उत्साहजनक तथ्यों के स्पष्ट संकेत प्राप्त हुए हैं। हमें विश्वास रखना चाहिये कि यह वैज्ञानिक आधारशिला एक दिन अनेक चमत्कारों को जन्म देगी।

अतः इस ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में जो अनेक प्रकार के सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं उनका मूल आधार न्यूटन का 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' (Mechanistic theory of universe) तथा 'ऊर्जा सिद्धान्त' (Conservation law) ही हैं। इन सिद्धान्तों में महत्वपूर्ण बात यह है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का कारण पदार्थ को ही मान लिया गया है, जबकि क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का मूल आधार एक मानसिक शक्ति है और उस शक्ति में चेतना की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है। सापेक्षवाद के अन्तर्गत जब हम 'सार्वभौमिक मन' (Universal mind) के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं तो आधुनिक भौतिकविज्ञान, दर्शनशास्त्र से जुड़ जाता है और इसप्रकार यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित तथा न्यूटन के मशीनी ब्रह्माण्डवाद (Mechanistic theory of universe) पर आधारित सम्पूर्ण वैज्ञानिक ढाँचा ध्वस्त हो जाता है, क्योंकि इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि परमाणुओं का संयोजन, नियमन एवं संचालन उसी शक्ति द्वारा होता है।

महान् गणितज्ञ यूक्लिड भी अपनी रेखागणित द्वारा कभी यह सिद्ध नहीं कर पाया कि दो बिन्दुओं के बीच एक सीधी रेखा ही सबसे संक्षिप्त दूरी (Shortest distance) होती है और स्वेच्छापूर्वक (Arbitarily) उसने इस रेखागणित को सही मान लिया। अतः आइन्स्टीन के अनुसार यही कारण है कि जब हम अपनी भ्रमपूर्ण मानसिक अवस्था में अपने सीमित इन्द्रिय ज्ञान द्वारा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मापने की चेष्टा करते हैं तो इसके परिणामस्वरूप उस क्रिया द्वारा उत्पन्न फल भी अपूर्ण एवं भ्रमपूर्ण हो जाता है। उदाहरण के लिए यह मानसिक भ्रम का ही परिणाम था कि कभी पृथ्वी को चपटी (Flat) माना जाता था। लेकिन एक दूसरी रेखागणित द्वारा यह माना जाने लगा कि उसका आकार गोला है। परन्तु अब क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित के अनुसार स्वचेतना (Self consciousness) से पृथक् स्वयं पदार्थ एवं ब्रह्माण्ड का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है। दूसरे शब्दों में इस ब्रह्माण्ड का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है और इस सम्बन्ध में यूक्लिड तथा न्यूटन की रेखागणित भ्रामक एवं तथ्यों से परे थी। इस भ्रमपूर्ण मानसिक अवस्था के आधार पर ही कभी आधुनिक जीवशास्त्र में यह मान लिया गया था कि जीव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की उत्पत्ति जड़ पदार्थ द्वारा हुई है, लेकिन अब क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद के प्रकाश में हम मानने के लिए बाध्य हो गये हैं कि जीव पदार्थ के गुण-विकारों से युक्त चेतना का ही एक विशिष्ट स्तर है और इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन भी करते हैं। अतः आइन्स्टीन अपने गणितीय अनुसन्धान द्वारा इस निस्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यूक्लिड की रेखागणित के अनुसार यह ब्रह्माण्ड अनन्त (Infinite) नहीं है, बल्कि वह सीमित (Finite) और सापेक्ष है, किन्तु अपार (Unbounded) है। यह रेखागणित क्रान्तिकारी सिद्ध हुई और विज्ञान-जगत में एक हलचल सी मच गई, क्योंकि आइन्स्टीन की इस रेखागणित ने न्यूटन के 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' (Mechanistic theory of universe) को ध्वस्त कर दिया। इसप्रकार 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' के स्थान पर अब 'मानसिक ब्रह्माण्डवाद' का सिद्धान्त प्रतिष्ठित हो गया। अपने अनुसन्धान द्वारा महान वैज्ञानिक सर जेम्स जीन्स तथा आर्थर एडिगंटन भी इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं।

चूँकि यूक्लिड की रेखागणित सीधी रेखाओं की गणित है, इसलिए वह आइन्स्टीन के 'चार आयामों वाले ब्रह्माण्ड' (Fourdimensional continuum) के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र (Gravitational field) में कार्य नहीं कर सकती, क्योंकि ब्रह्माण्ड का निर्माण वस्तुतः सीधी रेखाओं में नहीं हुआ है, बल्कि उसका ढांचा वृत्ताकार (Circular) है। यही कारण है कि जब प्रकाश की किरणें उस गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से गुजरती हैं तो उस विशेष रेखागणित (Curvature) के अनुरूप ही उन किरणों में भी झुकाव (Deflection) उत्पन्न हो जाता है और इसके फलस्वरूप ताराओं की अवस्था गें भी तदनुकूल परिवर्त्तन हो जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रकृति के विशेष नाम-रूप तथा घटनाचित्र (Phenomena) सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की उस विशेष अवस्था में उन विशेष नाम-रूपों तथा घटनाचित्रों द्वारा अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं और उस विशेष अवस्था में तब तक कोई मौलिक परिवर्त्तन नहीं हो सकता जब तक समय, दूरी और गति को विजित नहीं कर लिया जाता। दूसरे शब्दों में जब समय, दूरी और गति पर विजय प्राप्त हो जायेगी तो जगत के उन विशेष नाम-रूपों तथा घटनाचित्रों में भी मौलिक परिवर्त्तन हो जायेगा। इसका दूसरा अर्थ यह भी हुआ कि हमारी इन्द्रियाँ समय, दूरी और गति आदि प्राकृतिक शक्तियों द्वारा सीमाबद्ध हैं।

इस ब्रह्माण्ड में किसी भी गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र का ढांचा उस क्षेत्र में विद्यमान आकाशपिण्डों के द्रव्यमान तथा गति द्वारा निर्मित होता है और यही कारण है कि उसकी रेखागणित भी सम्पूर्ण पदार्थ के योग पर निर्भर करेगी। इसप्रकार उन आकाशपिण्डों की गतिशीलता के फलस्वरूप 'देश-काल' (Space-time) के आयाम में भी परिवर्त्तन हो जाता है, क्योंकि उन पिण्डों की गतिशीलता से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आसपास के क्षेत्रों में नदी की लहरियों (Ripples) की भाँति चारों ओर हलचल उत्पन्न हो जाती है और उसी हलचल द्वारा विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों का जन्म होता है। इस सन्दर्भ में यह ध्यान रखना चाहिये कि उन स्थूल आकाश-पिण्डों में यद्यपि वह हलचल सूक्ष्म रूप से परमाणुओं में हो रही है, लेकिन उस क्रिया का प्रभाव एवं फल स्थूल रूप से उन आकाशपिण्डों में प्रकट हो रहा है। यही कारण है कि इस सापेक्ष जगत में स्थूल और सूक्ष्म दोनों अभिन्न हैं, परस्पर एक दूसरे पर निर्भर हैं, क्योंकि कालचक्र (भूत, वर्त्तमान और भविष्य) उनके साथ लगा हुआ है और वह वृत्त (Circle) पूर्ण होकर ही कोई नया वृत्त शुरू हो सकता है। सापेक्षवाद के अनुसार किसी क्षेत्र में पदार्थ जितना ही केन्द्रीभूत होगा उस क्षेत्र में 'देश-काल' (Space-time) का झुकाव उतना ही अधिक होगा। उदाहरण के लिए जिसप्रकार समुद्र में छोटी मछली के गुजरने से कम हलचल उत्पन्न होती है और बड़ी मछली के गुजरने से अधिक हलचल उत्पन्न होती है उसीप्रकार छोटे आकाशपिण्डों से कम हलचल होती है और बड़े आकशपिण्डों की गतिशीलता से अधिक हलचल उत्पन्न होती है। इस-प्रकार इन हलचलों द्वारा ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में एक विशेष झुकाव उत्पन्न हो जाता है और वह झुकाव हीं उस क्षेत्र की विशेष रेखागणित है, जिसमें पड़कर पदार्थ एक विशेष आचरण प्रदर्शित करने लगता है और वही प्रकृति का नियम बन जाता है।

अतः आइन्स्टीन का ब्रह्माण्ड सीधी रेखाओं वाला ब्रह्माण्ड नहीं है, बल्कि वह वृत्तियों (Great circles) वाला ब्रह्माण्ड है और उस विशेष ब्रह्माण्ड में कोई भी वस्तु अथवा प्राकृतिक शक्ति (प्रकाश, चुम्बकत्व, नक्षत्र-पिण्डआदि) जिस केन्द्रविन्दु से चलेगी उसे अन्त में घूमकर उसी केन्द्रविन्दु पर ही वापस आना पड़ेगा। उदाहरण के लिए अगर कोई मनुष्य अणुशक्ति द्वारा संचालित अन्तरिक्ष यान में बैठ कर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का चक्कर लगाता है तो अन्त में उसे इस पृथ्वी पर ही वापस आना पड़ेगा। सूर्य की प्रकाश किरणें भी अन्त में सूर्य में ही वापस आयेंगी। इस वैज्ञानिक नियम का दार्शनिक पहलू यह है कि अगर मनुष्य तथा जीव-जन्तुओं की उत्पत्ति परमात्मा द्वारा हुई हैं तो उनका अन्त भी उसी परमशक्ति में होगा। यही कारण है कि वेदान्त सृष्टि का आदि और अन्त परमात्मा में ही मानता है। लेकिन इस भौतिक जगत की ब्रिडम्बना यह है कि आधुनिक विज्ञान के अनुसार ब्रह्माण्ड के साथ जीवजगत की उत्पत्ति भी पदार्थ 'द्वारा हुई है और यही कारण है कि विज्ञान के सभी नियम घूमफिर कर पदार्थ में ही वापस आ जाते हैं। परन्तु क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद द्वारा अब इसमें परिवर्त्तन हो गया है। हम चेतना को किसीप्रकार भी अपने अस्तित्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से पृथक नहीं कर सकते। जिसप्रकार एक कीड़ा किसी विशेष क्षेत्र को ही अपनी दुनियां समझ लेता है उसीप्रकार इस पृथ्वी का मनुष्य सूर्यमण्डल की सीमाओं को ही अपना सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड समझ बैठा था, लेकिन अब सापेक्षवाद विज्ञान की उन सीमाओं को तोड़ चुका है।

"सापेक्षवाद के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का जो स्वरूप बनता है उसका एक चित्रण सर जेम्स जीन्स ने अपनी पुस्तक (The Mysterious Universe) में में प्रस्तुत किया है। इसके अनुसार जिसप्रकार साबुन के एक बुलबुले (Soap bubble) के आसपास अनेक सिकुड़न भरे छोटे-छोटे बुलबुले (Corrugations) एकत्र होते हैं, उसीप्रकार ब्रह्माण्ड के ग्रह-नक्षत्र-पिण्ड भी साबुन के बुलबुले की भाँति हैं। लेकिन जीन्स के अनुसार ब्रह्माण्ड बुलबुले का भीतरी भाग नहीं है, बल्कि उसका सतह है। इसके अतिरिक्त साबुन के बुलबुले में केवल दो आयाम होते हैं, जबकि ब्रह्माण्डरूपी बुलबुले में चार आयाम (लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई और समय) होते हैं और जिस शक्ति द्वारा यह असीम ब्रह्माण्ड दृष्टिगोचर हो रहा है वही 'देश-काल' (Space-time) का अमूर्त्त एवं अभिन्न आयाम है।" यद्यपि मानसपटल पर आइन्स्टीन के ब्रह्माण्ड की धारणा करना बड़ा कठिन है, लेकिन गणित की संख्या में भी इसे प्रस्तुत किया गया है। विल्सन वेधशाला के खगोल वैज्ञानिक एडविन हबुल के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्रति वर्ग सेन्टीमीटर (Per cubic centimeter) क्षेत्र में ,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,००१ ग्राम पदार्थ विद्यमान है। इस आधार पर यह गणना की गई है कि इस ब्रह्माण्ड का अर्द्धव्यास (Radius) ३५ अरब प्रकाशवर्ष है। दूसरे शब्दों में वह–२१०,०००,०००,०००,०००,०००,०००,००० मील है और इस विशाल ब्रह्माण्ड में प्रतिसेकन्ड १,८६,००० मील की रफतार से चली हुई सूर्य की प्रकाश किरणें अन्त में घूमती हुई लगभग २ खरब वर्षों में फिर सूर्य की ओर ही वावस आ जायेंगी। आज यही विज्ञान द्वारा इस ब्रह्माण्ड की एक परिकल्पना है।

परन्तु आइन्स्टीन के सिद्धान्त मे 'देश-काल' (Space-time) के रहस्य को समझने के लिए हमें प्रकाश की गति (प्रतिसेकन्ड १,८६,००० मील) के महत्व को भी समझना पड़ेगा। हम पीछे देख चुके हैं कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्रकाश की गति एक समान (Constant) है और यह किसी भी भौतिक पदार्थ के लिए अन्तिम गति है। दूसरे शब्दों में इस ब्रह्माण्ड की कोई भी वस्तु इससे अधिक तेज नहीं जा सकती। इसी आधार पर इस ब्रह्माण्ड की वैज्ञानिक व्याख्या के लिए आइन्स्टीन ने प्रकाश की गति को एक स्थिर और निरपेक्षशक्ति मान लिया। लेकिन इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है कि किसी वस्तु या शक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की गति जितनी ही बढ़ने लगती है 'देश-काल' (Space-time) के आयाम अथवा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के ढ़ाँचे में सिकुड़न (Contraction) उतनी ही अधिक होने लगती है। दूसरे शब्दों में असीम गति इस ब्रह्माण्ड की अपरिमित दूरी को तथा समय के विस्तार को विजित कर लेती है। यह महत्वपूर्ण नियम केवल ब्रह्माण्ड पर ही लागू नहीं होता, बल्कि जीवजगत के सन्दर्भ में जो समय का विस्तार है उसपर भी उसीप्रकार लागू होता है। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि वेदान्त के अनुसार अगर आत्मा या परमात्मा को सर्वव्यापी और अनन्त मान लिया जाय तो उसकी गति असीम हो जाती है और इसप्रकार वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं जीवजगत में व्याप्त हो जाता है, क्योंकि असीम गति और सर्व-व्यापकता दोनों समानार्थक हैं। लेकिन आइन्स्टीन के अनुसार पदार्थ की गति प्रकाश की गति से अधिक नहीं हो सकती और यदि आत्मा या परमात्मा सर्वव्यापी हैं तो इस नियम के अनुसार वे पदार्थ नहीं हो सकते। परन्तु योगी पदार्थ के अत्यन्त सूक्ष्म नाम-रूपों का भी वर्णन करते हैं और उन अति सूक्ष्म शक्तियों को विचारशक्ति(Thought waves), प्राणशक्ति (Vital force) तथा मानसिकशक्ति (Mental power or Psycho-Kinesis) आदि विशेष नाम-रूपों से सम्बोधित करते हैं। योगी कहते हैं कि इन अतिसूक्ष्म शक्तियों की गति एक क्षण में अरबों-खरबों मील है। अतः जेराल्ड फेनवर्ग का प्रतिपदार्थ भी इन शक्तियों से भिन्न नहीं हो सकता, क्योंकि पदार्थ और प्रतिपदार्थ (Matter and anti-matter) दोनों परस्पर विरोधी प्रक्रियाएँ मानवीय चेतना से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई हैं और चेतना की सर्वव्यापकता द्वारा ही इन प्राकृतिक शक्तियों को असीम गति प्राप्त हो जाती है। इसप्रकार प्रकृति केवल पदार्थ और उसकी गति (प्रतिसेकन्ड १८६००० मील) द्वारा ही सीमित नहीं है, बल्कि उसका विस्तार विचारशक्ति, प्राणशक्ति और मानसिकशक्ति के अत्यन्त सूक्ष्म नाम-रूपों में भी हुआ है।

अतः आइन्स्टीन का सापेक्षवाद केवल स्थूलजगत या भौतिकजगत का ही विश्लेषण करता है, क्योंकि आइन्स्टीन ने प्रकाश की गति को एक निरपेक्ष शक्ति (Alsolute Power) मान लिया है और उसका स्वाभाविक फल भी भौतिक-जगत की सीमाओं तक ही विस्तृत है। यही कारण है कि आइन्स्टीन यद्यपि स्थूलजगत की व्याख्या करते हैं, लेकिन वे सूक्ष्मजगत तथा परमाणु या उप-परमाणु जगत की समुचित व्याख्या नहीं कर पाते। अपने अन्तिम दिनों में आइन्स्टीन इस दिशा में प्रयत्नशील रहे, किन्तु वे सफल नहीं हो सके। इसके विपरीत जेराल्ड फेनबर्ग का प्रतिपदार्थ यदि पूर्णतया सफल हो जाता है तो वह सूक्ष्मजगत की यथेष्ट व्याख्या करने में समर्थ होगा। अभी इस सिद्धान्त पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुसन्धान चल रहे हैं।

गति और पदार्थ के सम्बन्ध में एक विख्यात डच भौतिकशास्त्री एच० ए० लोरेन्ट्ज ने अपना महत्त्वपूर्ण समीकरण प्रस्तुत किया है और विज्ञान में उसे 'लोरेन्ट्ज रूपान्तरण' (Lorentz transformation) के नाम से जाना जाना है। इस नियम के अनुसार अगर किसी गतिशील वस्तु अथवा प्रणाली (Moving system) से किसीप्रकार की कोई घड़ी समय के मापदण्ड के लिए जुड़ी हुई है तो उस घड़ी की चाल एक स्थिर घड़ी की चाल से भिन्न होगी। इसीप्रकार अगर किसी गतिशील वस्तु या प्रणाली से एक मापक छड़ी (Measuring rod) जुड़ी हुई है तो उस वस्तु की गति के अनुपात में उस छड़ी के आकार-प्रकार में भी अन्तर हो जायेगा। इस सिद्धान्त के अनुसार उस वस्तु की गति जितनी बढ़ती जायेगी उससे सम्बद्ध घड़ी की चाल उतनी ही मन्द होती जायेगी और मापक छड़ी में भी उसी के अनुसार सिकुड़न (shrinking) होती जायेगी। इस परिवर्तन का सम्बन्ध उस वस्तु के ढाँचे (Structure) अथवा किसी यान्त्रिक परिवर्त्तन से नहीं है, बल्कि उसकी अवस्था विशेष से है। उदाहरण के लिए अगर कोई मनुष्य दिल्ली से कलकत्ता की यात्रा एक ऐसी रेलगाड़ी में करता है जिसकी गति ५,००० मील प्रति घण्टे है तो इस नियम के अनुसार उस मनुष्य के घड़ी की चाल एक स्थिर मनुष्य (Stationary observer) की तुलना में मन्द गति से चलेगी। इसीप्रकार दिल्ली से कलकत्ता के बीच की दूरी को अगर मापक छड़ी (Measuring rod) मान लिया जाय तो दूरीरूपी उस छड़ी में भी सिकुड़न दिखाई देगी। अब मान लीजिये उस रेलगाड़ी की गति ५००० मील प्रति सेकण्ड है तो उस घड़ी की चाल और भी मन्द हो जायेगी तथा इसके साथ ही दूरीरूपो छड़ी (Measuring rod) भी अत्यन्त सिकुड़कर लुप्त सी हो जायेगी। दूसरे शब्दों में किसी वस्तु की गति जितनी ही बढ़ती जायेगी 'देश-काल' (Space-time) के आयाम में उतना ही अधिक परिवर्त्तन हो जायेगा और उस वस्तु का आकार-प्रकार सापेक्ष रूप से उतना ही सिकुड़ जायेगा। इस सम्बन्ध में जार्ज गेमोव ने अपनी पुस्तक (one two three······Infinity) में एक दृष्टान्त प्रस्तुत किया है—अगर दो अन्तरिक्षयान अत्यन्त तीव्र गति से विपरीत दिशा की ओर जाते हुए अन्तरिक्ष में अकस्मात् शामने-सामने मिलते हैं तो उनकी छोटी खिड़की से देखने पर दोनों अन्तरिक्षयानों के मनुष्यों को यह दिखाई देगा कि एक के लिए दूसरा अन्तरिक्षयान काफी सिकुड़ा हुआ है, जबकि अन्दर बैठे हुए दोनों यानों के मनुष्यों को स्वयं अपने अन्तरिक्ष यान के सम्बन्ध में यह सिकुड़न दिखाई नहीं देगी। दूसरे शब्दों में उन मनुष्यों की एक अवस्था में अन्तरिक्ष यान का आकार-प्रकार उसीप्रकार रहेगा, जबकि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्हीं मनुष्यों की दूसरी सापेक्ष अवस्था में अन्तरिक्षयानों के आकार-प्रकार में परिवर्त्तन हो जायेगा। इससे स्पष्ट है कि गति एवं समय का सम्बन्ध मानवीय दृष्टि अथवा इन्द्रियों से भी है। दूसरे क्षब्दों में पदार्थ की गति का अभिन्न सम्बन्ध 'देश-काल' (space-time) तथा मानवीय चेतना से भी है और लगभग प्रकाश की गति पर मानसिक दृष्टिकोण में भी परिवर्त्तन हो जाता है, क्योंकि उस गति पर समय भी प्रभावित होता है।

अब यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि एक स्थिर मनुष्य (stationary observer) के लिए 'देश-काल' (space-time) का प्रभाव उसीप्रकार बना रहेगा, लेकिन एक तीव्रगति से भागते हुए मनुष्य के लिए 'देश-काल' का प्रभाव अत्यन्त क्षोण हो जायेगा, क्योंकि गति के साथ-साथ समय और दूरी भी घट जायेगी। जब गति बढ़ती है तो समय घट जाता है और उसी के अनुसार दूरी भी सिकुड़ जाती है, क्योंकि सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में तीनों अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। इसप्रकार जब एक प्रभावित होता है तो उसी समय दूसरा भी प्रभावित हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि सापेक्षवाद के अन्तर्गत 'देश-काल' का भी कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है। लेकिन इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि जब किसी वस्तु की गति प्रकाश की गति (प्रति सेकण्ड १८६,००० मील) के बराबर हो जाती है तो उस अवस्था में समय की गति बिलकुल बन्द हो जाती है और दूरी के रूप में भौतिकजगत का स्थूल ढाँचा भी सिकुड़ कर लुप्त हो जाता है। इस नियम के अनुसार जब किसी वस्तु की गति प्रकाश की गति के करीब ९० फीसदी होती है तो सिकुड़न लगभग आधी होती हैं, लेकिन उसके पश्चात् सिकुड़न बहुत तेजी से होती है और प्रकाश की गति पर पूर्ण होकर लुप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए अगर कोई मनुष्य प्रकाश की गति से पृथ्वी का चक्कर लगाता है तो उस मनुष्य के लिए पृथ्वी का स्थूल स्वरूप समाप्त हो जायेगा, लेकिन उसकी स्वचेतना उसीप्रकार बनी रहेगी और पृथ्वी का सूक्ष्म स्वरूप (Astral form) उसीप्रकार दृष्टिगोचर होगा। योगदर्शन के अनुसार यह अवस्था मनुष्य की मृत्यु (महा-समाधि) के समय उपस्थित होती है।

अतः पदार्थ एवं 'देश-काल' (Space-time) मनुष्य के लिए बन्धनस्वरूप हैं, प्रकृति की ओर से एक सीमा-अवरोध हैं और इस बन्धन से मुक्त हो जाना ही मनुष्य का चरम लक्ष्य है। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार जीव के स्थूल शरीर (Physical body) के साथ लगा हुआ सूक्ष्म शरीर या लिंग शरीर (Astral body) भी होता है जो मृत्यु के समय स्वतः उपस्थित हो जाता है और स्वचेतना अपने गुण-विकारों के साथ उस शरीर में स्थित होकर सूक्ष्मजगत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Astral world) से सम्बद्ध हो जाती है।

आइन्स्टीन ने लोरेन्ट्ज के इस नियम को अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त मे प्रयुक्त किया है और यह प्रमाणित किया है कि प्रकाश की गति इस ब्रह्माण्ड में सबसे अधिक है। आइन्स्टीन के अनुसार मानवहृदय तथा नाड़ी की धड़कनें भी घड़ी के समान हैं, क्योंकि उनमें होनेवाली धक्-धक् की आवाज समय के क्षणों को ही व्यक्त करती है। यही कारण है कि प्रकाश की गतिपर हृदय की धड़कन तथा नाड़ी की गति भी बन्द हो जाती हैं और यही क्रिया मनुष्य की मृत्यु के समय भी होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि मृत्यु के समय मनुष्य को प्रकाश की गति स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाती है और उस अवस्था में समय की गति भी बन्द हो जाती है। दूसरे शब्दों में उस अवस्था में समय का रूप भौतिक जगत के उल्टा या विपरीत हो जाता है, क्योंकि प्रकृति की सापेक्ष और द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया में ऐसा होना आवश्यक है। यह अवस्था प्रकृति की एक दूसरी विरोधी प्रक्रिया के प्रारम्भ का द्योतक है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि यह ब्रह्माण्ड ऊपर से जितना सरल और स्पष्ट दिखाई देता है भीतर से उतना ही गूढ़ और जटिल प्रतीत होता है। आज वैज्ञानिक जितना ही प्रकृति की गहराई में जाने का प्रयास कर रहे हैं उतना ही रहस्यों का अम्बार लगता जा रहा है। आधुनिक विज्ञान पदार्थ का परीक्षण करने के बाद भी प्रकृति में विद्यमान गुणात्मक तत्व, विचारशक्ति, मानसिकशक्ति तथा चेतनशक्ति जैसी अति सूक्ष्म शक्तियों को छू तक नहीं पाया है। ये शक्तियाँ 'देश-काल' तथा भौतिक जगत की परिधि से परे प्रतीत होती हैं और यही कारण है कि उन्हें वैज्ञानिक नियमों की सीमा में अभी तक नहीं बाँधा जा सका है। इसीलिए आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा भी इन अति सूक्ष्म शक्तियों की व्याख्या नहीं हो पाती है। देश-काल और प्रकाश की गति केवल भौतिक जगत की प्रक्रिया की ओर संकेत करती हैं और इस प्रक्रिया से परे अन्य अनेक प्रक्रियाओं का अस्तित्व दृष्टिगोचर होता है। इस सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि प्रकाश की गति भौतिक पदार्थ की अन्तिम गति तो हो सकती है, किन्तु वह प्रकृति अथवा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की अन्तिम या निरपेक्ष शक्ति नहीं हो सकती। दूसरे शब्दों में वह भौतिक स्वरूप तथा प्रकृति के कुछ रहस्यों की व्याख्या तो कर सकती है, लेकिन सूक्ष्म परमाणु-जीन-कोष तथा स्थूल ग्रह-नक्षत्र-पिण्डों को नियन्त्रित और संचालित नहीं कर सकती। जेराल्ड फेनबर्ग के प्रतिपदार्थ द्वारा भी यही संकेत मिलता है। वास्तव में इसका रहस्य मन में ही विद्यमान है और अगर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यह पदार्थ का क्रमविकास नहीं हो रहा है, बल्कि पदार्थ के रूप में मन का क्रमविकास है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहा है। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन की भी यही मान्यता है।

इस सन्दर्भ में जव हम वैज्ञानिक नियमों की परीक्षा करते हैं तो वे अपूर्ण और भ्रामक प्रतीत होते हैं। उदाहरण के लिए ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के सिद्धान्तों द्वारा यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि विनाश के बाद पदार्थ का निर्माण किस प्रक्रिया द्वारा हो रहा है और किसप्रकार ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण पदार्थ एक ही विन्दु पर केन्द्रित हो जाता है? वह केन्द्रविन्दु एक मशीनी प्रक्रिया है अथवा कोई परम चेतनशक्ति है? दूसरी ओर 'ऊर्जा सिद्धान्त (Conservation law) द्वारा यह स्पष्ट होता है कि पदार्थ कभी नष्ट नहीं होता, बल्कि दूसरे नाम-रूप में परिवर्त्तित हो जाता है। अगर यह सिद्धान्त सही है तो इस ब्रह्माण्ड में जो ऊर्जा का अनवरत विनाश हो रहा है उस पदार्थ का रूपान्तरण (Transformation) किस रूप में हो रहा है? इसके अतिरिक्त मृत्यु के बाद जीव की स्वचेतना (Self consciousness) का क्या होता है? आज विज्ञान के पास इसका कोई उत्तर नहीं है, क्योंकि उसकी रेखागणित एक स्वतन्त्र और निरपेक्ष रेखागणित है। लेकिन सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन की वृत्तात्मक रेखागणित के अनुसार जीव की स्वचेतना उसीप्रकार वनी रहती है और मृत्यु के बाद अपने गुण-विकारों के साथ भौतिक जगत से पृथक होकर सूक्ष्मजगत (Astral world) में पहुँच जाती है। इसप्रकार इस वृत्तात्मक प्रक्रिया में त्रिविध गुण-विकार (सत्व, रज, तम) ही पदार्थ वन जाता है और पदार्थ ही त्रिविध गुण-विकार। दूसरे शब्दों में कारणजगत ही कार्यजगत बन जाता है और कार्य-जगत ही कारणजगत, क्योंकि सापेक्षवाद में 'कारण और कार्य' (Cause and effect) अभिन्न हैं, एक को दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। अतः इस नियम के अनुसार अगर विनाश हो रहा है तो कहीं निर्माण भी अवश्य होना चाहिये, क्योंकि सापेक्षवाद में एक के बिना दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं है। आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के समक्ष यूक्लिड की रेखागणित तथा न्यूटन के 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' पर आधारित आधुनिक विज्ञान कहीं टिक नहीं पाता है, क्योंकि वह एक स्वतन्त्र और निरपेक्ष रेखागणित पर आधारित है जो सीमित एवं सापेक्ष इन्द्रियज्ञान का प्रत्यक्ष परिणाम है। इस सिद्धान्त के प्रकाश में आधुनिक विज्ञान का यह निष्कर्ष गलत है कि चेतना की उत्पत्ति भी जड़पदार्थ द्वारा हुई है, क्योंकि चेतना और पदार्थ दोनों परस्पर विरोधी तत्व हैं और इनके संयोग से ही सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा 'कारण और कार्य' श्रृंखला की उत्पत्ति होती है। अतः सापेक्षवाद के जन्मदाता महर्षि कपिल थे जिसकी वैज्ञानिक व्याख्या आधुनिक युग में आइन्स्टीन द्वारा की गई।

इस मूल सिद्धान्त के अनुसार चेतना निष्क्रिय है, जबकि मन, बुद्धि एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अहंकार (Ego) आदि प्राकृतिक शक्तियाँ सक्रिय हैं और इसप्रकार परस्पर विरोधी शक्तियों अथवा ऋण (Negative) और धन (Positive) के संयोग से ही किसी कर्म-व्यापार अथवा हलचल की उत्पत्ति हो सकती है। अरस्तू और गैलीलियो तथा न्यूटन ने अहंवाद का पुट देकर विज्ञान को दर्शन से पृथक किया था, लेकिन मैक्सप्लैंक तथा आइन्स्टीन ने उसे भौतिकवादी दलदल से निकाल कर फिर दर्शन से जोड़ दिया। परन्तु आइन्स्टीन का सापेक्षवाद महामुनि कपिल के सापेक्षवाद के समक्ष बौना है, क्योंकि पहला सापेक्षवाद केवल भौतिकजगत की व्याख्या कर पाता है, जबकि कपिल का सापेक्षवाद सम्पूर्ण प्रकृति तथा उसके अन्तर्गत असंख्य दिव्य लोकों (Planes) की सर्वांगींण व्याख्या करता है। क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद का यही दिव्य सन्देश है।

लोग विज्ञान के पन्ने उलटकर यथार्थवादी बन जाते हैं और धार्मिक ग्रन्थों को कल्पना की उड़ान मान लेते हैं। लार्ड मैकाले योरोपीय सभ्यता के प्रतीक पुरुष थे और उसी सभ्यता को भारत में लाने के लिए बड़ा उत्सुक रहा करते थे। वे पौराणिक कथाओं की हँसी उड़ाया करते थे, क्योंकि उनकी रेखागणित भी यूक्लिड और न्यूटन की रेखागणित से मिलती-जुलती थी। अगर आज वे बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में होते तो रामचरित मानस के उत्तरकाण्ड में दो पक्षियों के बीच इस वार्त्तालाप को सुनना पसन्द करते—

उदर माझ सुनु अंडज राया। देखेउँ बहु ब्रह्माण्ड निकाया॥
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका। रचना अधिक एक ते एका॥
कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा। अगनित उडगन रबि रजनीसा॥
अगनित लोकपाल जम काला। अगनित भूधर भूमि बिसाला॥
सागर सरि सर बिपिन अपारा। नाना भाँति सृष्टि बिस्तारा॥
लौक लोक प्रति भिन्न बिधाता। भिन्न बिष्नु सिव मनु दिसित्राता॥
नर गंधर्व भूत बेताला। किंनर निसिचर पसु खग ब्याला॥
देव दनुज गन नाना जाती। सकल जीव तहँ आनहि भाँती॥
महि सरि सागर सर गिरि नाना। सब प्रपंच तहँ आनइ आना॥
अंडकोस प्रति प्रति निज रूपा। देखेउँ जिनस अनेक अनूपा॥
अवधपुरी प्रति भुवन निनारी। सरजू भिन्न भिन्न नर नारी॥
दसरथ कौसल्या सुनु ताता। बिबिध रूप भरतादिक भ्राता॥
प्रति ब्रह्माण्ड राम अवतारा। देखउँ बाल बिनोद अपारा॥

आश्चर्य होता है उस युग पर जबकि पक्षियों में भी ऐसी दृष्टि हुआ करती थी और तरस आता है इस युग पर जबकि छायाचित्रों को ही यथार्थ मान लिया जाता है, उठती और गिरती हुई तरंगों को ही सत्य समझ लिया जाता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। मनुष्य की इस अन्तर्दृष्टि पर ही कहीं परा-भौतिकवाद बनता है और कहीं भौतिकवाद; कभी आदर्शवाद ऊपर उठता है और कभी यथार्थवाद, कभी भावना प्रधान हो जाती है और कभी कर्म प्रधान बन जाता है। यह सभी कुछ प्रकृति और पुरुष के संयोग का ही परिणाम हैं, उस द्वन्द्वात्मक संघर्ष के खेल का ही फल है जिसकी उत्कृष्ट व्याख्या केवल कपिल जैसा अद्भुत मस्तिष्क ही कर सकता था।

कभी पुराणों ने एक कथा सुनाई, कभी विज्ञान ने भी अपनी एक कहानी बना ली, कभी सूर और तुलसी ने एक गीत गा दिया और कभी न्यूटन और आइन्स्टीन ने अपना सिद्धान्त सुना दिया, कभी कलाकार ने स्टेज पर अपनी कला दिखा दी और कभी संगीतकार ने मधुर-ध्वनि सुना दी। जब बाहर देखता हूं तो बड़े भेद दिखाई देते हैं और जब भीतर देखता हूं तो सभी एक नजर आते हैं। तो फिर भेद क्यों दिखाई देता है ? इसका कारण जानने के लिए जब एक पुस्तक (रामकृष्ण वचनामृत) उलटता हूं तो रामकृष्ण परमहंस के ये शब्द दिखाई देते हैं, "ब्रह्म और शक्ति (प्रकृति) अभेद हैं, जैसे कि अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति, सूर्य और उसका विकिरण, दूध और उसकी धवलता। ब्रह्म ही काली हैं और काली ही ब्रह्म, जब सृजन, पालन और प्रलय करती हैं तो वह काली बन जाती हैं और जब निर्गुण, निराकार और अनन्त हो जाती हैं तो वह ब्रह्म कहलाती हैं। शक्ति एक ही है, भेद केवल नाम और रूप में है। वे बाहर भी हैं और भीतर भी हैं, जब अन्तर्मुख होकर ध्यान लगाता हूं तो वे ही दिखाई देती हैं और बहिर्मुख होकर संसार की ओर देखता हूँ तो असंख्य मोम के पुतलों में वे ही हाँथ-पैर हिलाती हुई नजर आती हैं। जीव का अहंकार (Ego) ही माया है, कामिनी और कांञ्चन ही तृणा है। अगर ईश्वर की कृपा से 'मैं' (I–sense) नष्ट हो गया तो वह मनुष्य जीवनमुक्त हो गया।"

जब दूसरी पुस्तक उलटता हूं (Talks with sri Raman Maharshi; The teachings of Bhagavan Sri Raman Maharshi in his own words) तो वहाँ भी एक ही सिद्धान्त दिखाई देता है, "अगर तुम्हें अपना ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का ज्ञान स्वतः प्राप्त हो जायेगा। आत्मा या परमात्मा सिनेमा के पर्दे की तरह है और यह जगत चलचित्र (Movies) के समान हैं। जबतक पर्दा है तभी तक छायाचित्र दिखाई देंगे और जब दर्शक स्वयं पर्दा बन जायेगा तो केवल आत्मा शेष रह जायेगा। विचारहीनता शून्य नहीं है, बल्कि उस शून्य का अनुभव करने वाला कोई द्रष्टा, साक्षी और भोक्ता होना चाहिये। जिसप्रकार निद्रा में मनुष्य अपना व्यक्तित्व खो देता है, लेकिन अपने पूर्व संस्कारों (Innate tendencies) के प्रभाव से वह फिर वापस लौट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आता है उसीप्रकार मृत्यु के बाद भी मनुष्य का अस्तित्व बना रहता है। तुम लाख प्रयत्न करो जो होना निश्चित नहीं है वह कभी नहीं होगा और जो होना निश्चित है वह होकर ही रहेगा, यह शिश्चित है। अतः सर्वोत्तम उपाय यही है कि मौन द्रष्टा बने रहो। इस जगत में शरीर द्वारा जो कर्म होना है वह जन्मकाल में ही निश्चित हो जाता है। यह मनुष्य के अपते वश में नहीं होता कि वह उन्हें स्वीकार या अस्वीकार कर दे। मनुष्य को केवल यही स्वाधीनता (Free will) प्राप्त है कि वह अपने मन को अन्तर्मुखी बनाकर कर्मों (अहंकार) का त्याग कर दे। इस जगत में सभी कुछ पूर्वनिश्चित (Predetermined) है। जबतक मनुष्य अपने को एक पृथक अस्तित्व समझता रहेगा तबतक वह अपने को स्वाधीन भी समझता रहेगा। जबतक अहंज्ञान (Ego) है तबतक कर्म भी अनिवार्य है और जब अहंकार चला जाता है तो क्रिया भी स्वेच्छानुसार स्वतः होती हैं। मैं कर्त्ता हूँ—यह भाव ही बाधा है। खोज करो, कौन करता है? ध्यान रखो तुम कौन हो और तब कर्म तुम्हें नहीं बाँध सकेंगे। अहंकार के साथ विचार-तरंगो (Thought waves) का उदय हो जाता है जो जगत में जीव, जन्तु तथा वनस्पति आदि के रूप में प्रदर्शित होता है। वास्तव में यह सभी कुछ आत्मा है और आत्मा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। अगर तुम आत्म-स्वरूप हो तो सभी कुछ आत्मस्वरूप प्रतीत होगा। ईश्वर की खोज उससे प्रेम करना है, अतः ज्ञान और भक्ति दोनों एक हैं। आत्मसाक्षात्कार के लिए केवल अहंज्ञान (Ego) को ही नष्ट करना है। इसका अस्तित्व बहिर्जगत में नहीं है, बल्कि अन्तर्जगत में ही है। सभी प्रकार के अनिष्ट का कारण यही है और जब यह नष्ट हो जाता है तो आत्मसाक्षात्कार स्वतः हो जाता है। वास्तव में हमारा स्वभाव मुक्त है, लेकिन अहंज्ञान ही बन्धन में डाल देता है। इसका ज्ञान तभी होता है जब हम मुक्तावस्था में पहुँच जांय। यह सभी कुछ मन या माया का प्रभाव है द्वैत भाव और सापेक्ष जगत का परिणाम है। जीवन और मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं है, जो जन्म लेता है वह शरीर और उससे सम्बद्ध अहंकार है। वस्तुतः वह विचार तरंगें (Thought waves) होती हैं जिनके द्वारा सभी कुछ होता है। खोज करो कि विचार-तरंगों का उदय कहाँ से होता है? तब तुम शाश्वत आत्मा में स्थित होकर जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो जाओगे। मन की वास्तविक प्रकृति को जानना ही पुरुषार्थ है और इस प्रयास में अगर आत्मा की खोज की जाय तो मन लुप्त हो जायेगा। योगवाशिष्ट में कहा गया है—जो सत्य है वह हमसे छिपा हुआ है और जो असत्य है वह हमें सत्य के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है।

बज एक तीसरी पुस्तक उलटता हूं तो एक ऐसी अमरवाणी सुनाई देती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि फिर आगे कुछ पढ़ने की इच्छा ही नहीं रह जाती—

"पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ,
पंडित भया न कोय
ढाई अक्षर प्रेम का।
पढ़े से पंडित होय॥
जब मैं था, तब हरि नहीं,
अब हरि हैं मैं नाहिं।
सब अँधियारा मिट गया,
तब दीपक देख्या माँहि

अब स्वप्नलोक से नीचे उतर कर हम उस मायापुरी में चलते हैं जिसकी एक झलक हम पीछे देख चुके हैं। लेकिन वह झलक भी केवल एक खण्ड की ही थी। अभी तो अनेक खण्डों की झलक देखनी बाकी रह गई है। ऐसी ही एक मायापुरी महाभारत के युद्ध में घटोत्कच ने भी पाण्डवों के लिए बनाई थी। अब यह निर्णय करना आपका काम है कि उस मायापुरी का दर्शन प्राप्त कर आप उसे यथार्थ समझ लें अथवा मायारूप ही मानते रहें।

प्राचीन यूनान में कभी थेल्स (६०० ई० पू०) ने भी अम्बर नामक पदार्थ पर प्रयोग कर चुम्बकत्व का पता लगाया था, लेकिन एक लम्बे अन्तराल के बाद सत्रहवीं सदी के आरम्भ में एक चिकित्सक डा० गिलबर्ट ने इस शक्ति पर खोज की थी। परन्तु सन् १६४६ ई० में सर थामस ब्राउन ने उस अदृश्य शक्ति को 'विद्युत' (Electricity) नाम दिया जिसमें घर्षण द्वारा आकर्षण और विकर्षण परस्पर विरोधी गुण उत्पन्न होते हैं। अमेरिकी वैज्ञानिक वेन्जामिन फ्रेंकलिन ने एक प्रकार के गुण को 'ऋण-आवेश' (Negative) नाम दिया तथा विरोधी गुण को 'धन-आवेश' (Positive) बतलाया। इस नियम के अनुसार समान चिन्हों अथवा गुणों के दो कण परस्पर विकर्षण उत्पन्न करते हैं, जबकि विपरीत चिन्हों अथवा गुणों के दो कण परस्पर आकर्षण उत्पन्न करते हैं। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में फ्रांसीसी वैज्ञानिक डू फे और डेनमार्क के प्रोफेसर एच० सी० ओर्स्टेड तथा एम्पीयर आदि के प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि विद्युत्-प्रवाह द्वारा एक 'चुम्बकीय क्षेत्र' (Magnetic field) उत्पन्न होता है जिसमें आकर्षण और विकर्षण परस्पर विरोधी शक्तियाँ विद्यमान होती हैं और इस क्षेत्र में जब कोई वस्तु आती है तो वह तत्काल प्रभावित हो जाती है। दूसरे शब्दों में वह स्वतन्त्र वस्तु इस प्रभाव से बन्धनग्रस्त हो जाती है। लेकिन इस प्रभाव का मूल कारण हमें विज्ञान की पुस्तकों में नहीं मिलेगा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बल्कि महर्षि कपिल के सांख्यदर्शन में ही प्राप्त होगा। कपिल कहते हैं जब प्रकृति और पुरुष (आत्मा) दो परस्पर विरोधी शक्तियों का संयोग होगा तो स्वाभाविक है कि अनेक प्रकार की परस्पर विरोधी भौतिक शक्तियों का भी जन्म होगा, क्योंकि द्वन्द्वात्मक संघर्ष से ही तो जगत का कर्म-व्यापार आगे बढ़ सकेगा, कारण और कार्य की अटूट श्रृंखला बनी रहेगी। अगर विज्ञान की तरह एक ही शक्ति को मान लिया जाय तो यह द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा 'कारण और कार्य' की श्रृंखला कैसे बन पायेगी ? अगर प्रकृति नाम की एक ही शक्ति है तब तो उसपर यूक्लिड और न्यूटन की रेखागणित हावी हो जायेगी, 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' (Mechanistic theory of universe) का नियम लागू हो जायेगा। ऐसी स्थिति में फिर आइन्स्टीन का सापेक्षवाद (Relativity) तथा द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद का जन्म कैसे हो जायेगा ? कपिल यह भी कहते हैं कि यह सापेक्षवाद और द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद कारण और कार्य (Cause and effect श्रृंखला में अनादि काल (प्रकृति और पुरुष संयोग) से कारणस्वरूप असंख्य लोकों Astral planes) से होता हुआ जा रहा है और यह श्रृंखला यदि कार्यस्वरूप भौतिक जगत (Physical world) में पहुँच गई तो इसमें नई बात कौन सी हो गई ? इसको आविष्कार कैसे कहा जा सकता है ? वह श्रृंखला (Causation) तो योजनाबद्ध ढ़ंग (Predetermined) से इसीलिए बनाई ही गई थी कि भौतिकजगत तक पहुँच जाय। अब अहंकारवश कोई यह मान ले कि हम तो स्वतन्त्र और निरपेक्ष (Absolute) हैं तो इसमें योजनाकार का तो कोई दोष नहीं कहा जा सकता।

इन वैज्ञानिक खोजों के आधार पर सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक माइकेल फेराडे (१७९१–१८६७) ने यह विचार किया कि जब विद्युतधारा से चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न हो सकता है तो इसके विपरीत चुम्बकीय क्षेत्र से भी विद्युतधारा उत्पन्न हो सकती है। उसने मोटर का मूल सिद्धान्त प्रतिपादित किया और एक ऐसे डाइनेमो का निर्माण किया जिससे अनवरत विद्युत उत्पन्न होती थी। फेराडे की सबसे महत्वपूर्ण खोज उसका 'विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्र' (Electro-magnetic field) का सिद्धान्त हैं। उसने यह भी खोज की कि अन्तरिक्ष में अनेक प्रकार की भौतिक शक्तियाँ विद्यमान हैं।

इन खोजों से अनुप्राणित होकर महान वैज्ञानिक जेम्स क्लर्क मैक्सवेल (१८३१–१८७९) ने इस सिद्धान्त को और व्यापक रूप देकर पुष्ट आधार प्रदान किया। इसी काल में हेनरी केवेन्डिश तथा जोसेफ हेनरी आदि वैज्ञानिकों ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। अपने प्रयोगों द्वारा मैक्सवेल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि विद्युतधारा और तापीय ऊर्जा (Flow of Radiant heat) में एकरूपता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। दूसरे शब्दों में विद्युत और ताप (Heat) एक ही शक्ति के दो नाम-रूप हैं। इसी खोज द्वारा आगे चलकर अणुओं की हलचल से उत्पन्न 'ऊर्जा सिद्धान्त, (Kinetic molecular theory) का प्रतिपादन हुआ। मैक्सवेल का यह अनुसन्धान ही भविष्य में 'परमाणु विज्ञान' (Atomic theory) का एक प्रमुख आधारस्तम्भ बना। इस खोज द्वारा ही विद्युत को भौतिक आधार प्राप्त हुआ। दूसरे शब्दों में विद्युत-तरंगें परमाणुओं की हलचल से ही आगे बढ़ती हैं। इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि विद्युत और चुम्बकत्व ऊर्जा के ही विभिन्न नाम-रूप है। मैक्सवेल ने यह भी प्रदर्शित किया कि प्रकाश भी एक प्रकार का 'विद्युत-चुम्बकीय विकिरण' है और अन्तरिक्ष में अनेक प्रकार की चुम्बकीय तरंगें विद्यमान हैं जो मानव इन्द्रियों द्वारा ग्राह्य नहीं हैं। यद्यपि अपने संक्षिप्त जीवनकाल में वह इस सिद्धान्त को सिद्ध नहीं कर पाया, लेकिन आज हम जानते हैं कि अन्तरिक्ष की सामूहिक तरंगों में बैंगनी, पराबैंगनी, एक्स-रे, गामा-रे तथा विभिन्न 'ब्रह्माण्डीय विकिरण' (Cosmic Radiation) आदि मिश्रित हैं जिनका तरंग-दैर्घ्यं (Wavelength) भिन्न-भिन्न होता हैं। इसी आधार पर १० वर्षों बाद हेनरिक हर्ज ने अनेक प्रकार की रेडियो तरंगों (Radio waves) के अस्तित्व को प्रमाणित किया जिनमे 'विद्युत चुम्बकत्व' (Electro magnetism) विद्यमान होता है। इसप्रकार मैक्सवेल ने अपने गहन अनुसन्धान द्वारा रेडियो, टेलीविजन, राडार, कम्प्यूटर आदि इलेक्ट्रानिक यन्त्रों के आविष्कार हेतु मार्ग प्रशस्त कर दिया। अतः फेराडे, मैक्सवेल तथा हर्ज आदि वैज्ञानिकों के अनुसन्धान द्वारा विज्ञान में एक क्रान्तिकारी खोज की गई कि प्रकाश-तरंगों की भाँति एक विशेष प्रकार का विद्युतीय सर्किट (Electrical circuit) निर्मित कर चुम्बकीय तरंगें उत्पन्न की जा सकती हैं और इसी आधार पर जर्मन वैज्ञानिक मार्कोनी ने १९०० ई० में पहला वायरलेस निर्मित किया जो आधुनिक संसार में अत्यन्त लोकप्रिय बन गया।

पदार्थ में चुम्बकत्व एक ऐसी शक्ति है जिससे सभी वस्तुए आकर्षण और विकर्षण नियमों द्वारा अदृश्य रूप से प्रभावित होती रहती हैं। यह प्रबल शक्ति पृथ्वी, सूर्य एवं ताराओं से कण-तरंगों के रूप में निरन्तर प्रवाहित होती रहती है। यही शक्ति जीव-जन्तु एवं वनस्पति में विद्यमान है जिसके फलस्वरूप आकर्षण और विकर्षण (Attraction and Repulsion) होता रहता है, द्वन्द्वात्मक संघर्ष चलता रहता है। चुम्बकत्व का वर्त्तमान सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक चुम्बकीय पदार्थ में अति सूक्ष्म आकार के अनेक 'डोमेन' (Domains) होते हैं और प्रत्वेक डोमेन में असंख्य ($१०^{१०}$ से $१०^{२०}$) पारमाणविक चुम्बक होते हैं। लेकिन ताप के प्रभाव से ये डोमेन भी अस्तव्यस्त हो जाते हैं। चुम्बक का यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुण होता है कि वह एक ही दिशा की ओर इंगित करता है और इस आधार पर दिशा-ज्ञान के लिए भौगोलिक रूप से उसे दो भागों में विभक्त किया गया हैं—'उत्तर चुम्बकीय ध्रुव' (North magnetic pole) तथा विपरीत दिशा को 'दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव' (South magnetic pole) कहते हैं।

समान चुम्बकीय ध्रुवों से 'विकर्षण' (Repulsion) होता है, जबकि विपरीत चुम्बकीय ध्रुवों से 'आकर्षण' (Attraction) होता है। यही कारण है कि नक्षत्र-पिण्डों की गतिशीलता से उनके चारों ओर एक 'विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्र' (Electro-magnetic field) स्थापित हो जाता है और उस क्षेत्र में सूक्ष्म एवं स्थूल सभी पदार्थ प्रभावित होते हैं। हमारी पृथ्वी तथा उस पर विद्यमान सभी निर्जीव एवं सजीव वस्तुएँ उन विशालकाय नक्षत्र-पिण्डों की शक्तिशाली चुम्बकीय तरंगों से प्रभावित होती रहती हैं और इस अदृश्य प्रक्रिया का प्रत्यक्ष सम्बन्ध जीव-जन्तु एवं वनस्पति के क्रमविकास (Evolution) से है। प्रकृति की यह द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि इस पृथ्वी पर हमारा क्रमविकास (Evolution) एक स्वतन्त्र या निरपेक्ष प्रक्रिया नहीं है, बल्कि विभिन्न चुम्बकीय तरंगों एवं शक्तियों द्वारा संचालित और नियन्त्रित है, क्योंकि सापेक्षजगत तथा कारण-कार्य श्रृंखला में पदार्थ के कण-तरंगों द्वारा बना हुआ यह शरीर एक स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं हो सकता। अगर ब्रह्माण्ड का सम्पूर्ण पदार्थ किसी निश्चित नियम के अनुसार असंख्य वृत्तात्मक प्रक्रियाओं में रूपान्तरित हो रहा है तो उसी पदार्थ द्वारा बना हुआ हमारा शरीर सामान्यतः उस निश्चित नियम, प्रक्रिया तथा भौतिक परिधि से बाहर नहीं हो सकता। अगर कोई शक्ति बाहर हो सकती है तो वेदान्त एवं योगदर्शन के अनुसार वह गुण-विकार युक्त चेतन पुरुष ही हो सकता है जो इस प्रबल भौतिक प्रक्रिया से मुक्त होकर निर्गुण और निराकार हो जाता है।

अब यहीं पर जीव को मुक्त होने के लिए द्वन्द्वात्मक संघर्ष करना पड़ता है, अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए कर्म-व्यापार करना पड़ता है, सुख-दुख की सापेक्ष अनुभूतियों से गुजरना पड़ता है। यह निश्चित है कि बिना संघर्ष किये हमें मुक्ति नहीं मिल सकती और यहीं पर जगत में कर्म की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है (कर्मप्रधान विस्व करि राखा····)। लेकिन यह संघर्ष एटम बम द्वारा नहीं हो सकता, बल्कि हमें मुक्त होने के लिए अपनी इच्छा-वासनाओं से संघर्ष करना पड़ेगा, अपने मन और अहंकार से संघर्ष करना पड़ेगा, बुद्ध की तरह अशुभ को शुभ में परिवर्त्तित करना पड़ेगा, हिंसा को अहिंसा में वदलना पड़ेगा, असत्य को सत्य में परिवर्त्तित करना पड़ेगा और निश्चय ही वही हमारा राजमार्ग (Royal Road) है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधुनिक विज्ञान के लिए यह आज भी एक पहेली है कि प्रकाश, विकिरण एवं चुम्बकीय तरंगें अन्तरिक्ष में कणों के रूप में चलती हैं अथवा तरंगों के रूप में। आज भी विज्ञान इस गुत्थी को सुलझा नहीं पाया है और यही कारण है कि दोनों सिद्धान्तों को मान्यता प्राप्त है। जब कोई वस्तु या शक्ति किसी माध्यम में कम्पन (Vibration) उत्पन्न करती है तो उस कम्पन से वातावरण में व्याप्त अन्य सूक्ष्म कण भी प्रकम्पित होकर गतिशील हो उठते हैं और इस क्रिया द्वारा उस माध्यम में एक हलचल (Disturbance) उत्पन्न हो जाती है। पदार्थ की यह हलचल एक निश्चित वेग से आगे बढ़ती है और विज्ञान में इसी भौतिक शक्ति को तरंग कहते हैं। उदाहरण के लिए तालाब में जब पत्थर फेंका जाता है तो लहरियों (Ripples) के रूप में जो हलचल होती है वह तरंग है, जब रस्सी द्वारा घंटी बजती है तो विज्ञान के अनुसार वह रस्सी नहीं, बल्कि तरंग द्वारा बजती है। इसीप्रकार जब रेडियो, टेलीविजन, राडार, कम्प्यूटर आदि इलेक्ट्रानिक यन्त्र कार्य करते हैं तो वह चुम्बकीय तरंगों (Electro-magnetic waves) द्वारा ही होता है। जीव-जन्तु एवं वनस्पति भी प्रकृति के इस नियम का अपवाद नहीं हैं और उनका अस्तित्व भी तरंगों के रूप में क्रम-विकसित होता है। योगी कहते हैं कि विचार तरंगें (Thought waves) इन भौतिक तरंगों से भी अत्यधिक सूक्ष्म होती हैं और भिन्न-भिन्न विचार-तरंगों के भिन्न-भिन्न रंग-रूप एवं गति भी होती है। मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर आदि पवित्र स्थानों में शुभ विचार-तरंगें, रेडियो तरंगों की तरह तैरती रहती हैं और हम उन तरंगों द्वारा अदृश्य रूप से प्रभावित भी होते रहते हैं। इसीप्रकार वैश्यालय, मदिरालय, जुआघर आदि अपवित्र स्थानों में अशुभ विचार तरंगें तैरती रहती हैं जो मनुष्य को निश्चित रूप से प्रभावित करती हैं। इसीलिए हमारे यहाँ शास्त्रों में सत्संग की महिमा गाई गई है। इन विचार-तरंगों पर आजकल रूस और अमेरिका में प्रयोग (Telepathy) चल रहे हैं, क्योंकि ये प्रयोग अन्तरिक्ष यात्राओं में रेडियो सम्पर्क भंग हो जाने पर बड़ा उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। लेकिन प्रकाश अथवा चुम्बकीय तरंगों के भी अनेक स्तर होते हैं और अधिक सूक्ष्म तरंगों (एक्स-रे, गामा-रे आदि) को हमारी आँखें नहीं देख सकतीं, क्योंकि हमारा इन्द्रिय-ज्ञान अत्यन्त सीमित और सापेक्ष है। अगर हमारी आँखें एक्स-रे किरणों को देखने में समर्थ हो जाँय तो हम दीवारों के पार गुप्त वस्तुओं को भी देख सकेंगे, हमारे लिए जगत पारदर्शी स्वरूप (Transparent) ग्रहण कर लेगा। जब हम सभी प्रकाश तरंगों को नहीं देख सकते तो अत्यन्त सूक्ष्म विचार-तरंगों (Thought-waves) को भला कैसे देख सकते हैं! इन तरंगों को केवल योगी देख सकते हैं अथवा सामान्य मनुष्य इन विचार-तरंगों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृत्यु के बाद देख सकता है। यही रहस्य है अनेक प्रकार की भौतिक एवं पराभौतिक तरंगों (waves) का और यही रहस्य है हमारी इन्द्रियों का जिससे प्राप्त ज्ञान के आधार पर तथा दृश्य जगत को देखकर ही यथार्थ मान लेते हैं। यही कारण है कि योगी इन्द्रियों से परे होकर वास्तविक ज्ञान (Transcendental knowledge) प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, क्योंकि इन्द्रियों द्वारा जो वस्तु-जगत हमें दिखाई देता है वह भ्रामक और तथ्यों से परे है, केवल छायाचित्र है। इस सन्दर्भ में विश्वविख्यात भौतिकशास्त्री सर जेम्स जीन्स ने ठीक ही कहा है (The Mysterious Universe) कि हम उस ब्रह्माण्ड में निवास करते हैं जो तरंगों और सिर्फ तरंगों से व्याप्त है तथा इन सूक्ष्म तरंगों में ही प्रकृति की वास्तविक शक्ति निहित है।

इस महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त (तरंग सिद्धान्त) का प्रतिपादन सत्रहवीं सदी में क्रिश्चीयन ह्यूगेन्स (१६२९–१६९५) द्वारा किया गया। उसका कहना था कि ध्वनि तरंगों की भाँति प्रकाश भी तरंगों (waves) में प्रवाहित होता है। इन तरंगों को प्राथमिक (Primary) और माध्यमिक (Secondary) तरंग कहा जाता है और इन तरंगों के बीच की दूरी को 'तरंग-दैर्ध्य' (wavelength) कहते हैं। अपने तरंग सिद्धान्त को सिद्ध करने के लिए ह्यूगेन्स ने एक प्रमुख वैज्ञानिक रोमर की खोजों का आश्रय लिया जिसके अनुसार प्रकाश की गति नाड़ी की धड़कनों (Pulses) की तरह होती है जिसे गणित द्वारा सिद्ध किया जा सकता है।

परन्तु बहुत से वैज्ञानिक न्यूटन के 'कण सिद्धान्त' (Corpuscular theory) को मानते हैं, क्योंकि प्रकाश तरंगों का निर्माण इलेक्ट्रान और परमाणु कणों द्वारा होता है। इस नियम के अनुसार प्रकाश के श्रोत से अति सूक्ष्म कण निरन्तर प्रवाहित होते रहते हैं। मैक्सप्लैंक के क्वान्टमवाद तथा आइन्स्टीन के फोटोनवाद (Photo-electric effect) द्वारा भी यही सिद्ध होता है कि प्रकाश के अतिरिक्त पदार्थ के सभी नाम-रूप (रंग-रूप, ध्वनि, स्वाद, गंध आदि) कणों के रूप में ही चलते हैं। यही रहस्य आज वैज्ञानिकों की बुद्धि से परे है और यही विवाद आजतक भी बना हुआ है। इस विवाद का प्रमुख कारण यह है कि प्रकाश एवं पदार्थ की प्रकृति कभी कणों के रूप में प्रदर्शित होती है और कभी तरंगों के रूप में दिखाई देती है। इसीलिए आज भी विज्ञान में दोनों परस्पर विरोधी सिद्धान्तों को मान्यता प्राप्त है और स्कूल, कालेजों में भी दोनों विरोधी सिद्धान्त पढ़ाये जाते है। दोनों मे से सही सिद्धान्त कौन-सा है यह विज्ञान के लिए आज भी एक रहस्य है। इस सम्बन्ध में सर जेम्स जीन्स का सुझाव है (The Mysterious universe) कि प्रकृति की एकरूपता में हमारा विश्वास तभी बना रह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सकता है जबकि हम यह मान लें कि 'कण सिद्धान्त' और 'तरंग सिद्धान्त' दोनों मूल रूप से एक ही हैं। इस कथन का दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि इसका मूल कारण विज्ञान की वर्त्तमान सीमाओं एवं दृष्टि से परे है और जब तक हम उसे निर्धारित नहीं कर लेते तब तक विज्ञान का निष्कर्ष सही नहीं है, क्योंकि सत्य एक ही हो सकता है दो नहीं। सापेक्षवाद के एक अन्य श्रेष्ठ समीक्षक लिन्कन बार्नेट अपनी पुस्तक (Tha universe and Dr. Einstein) के अन्त में कहते हैं कि वैज्ञानिक विचारधारा के क्रमविकास में यह तथ्य प्रभावशाली ढंग से स्पष्ट हो गया है कि इस भौतिक जगत में कोई भी ऐसी पहेली नहीं है जो अपने से परे एक दूसरी पहेली की ओर संकेत न करती हो।

यही महर्षि कपिल का सापेक्षवाद है। यहाँ भी हमें प्रकृति का द्वन्द्वात्मक स्वरूप दिखाई देता है जो कारण और कार्य शृखंला द्वारा अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। आधुनिक विज्ञान सापेक्ष प्रकृति में निरपेक्ष शक्ति की खोज कर रहा है, लेकिन इस प्रक्रिया में वह केवल भौतिकजगतरूपी कार्य को देखता है जबकि सूक्ष्मजगतरूपी (Astral world) कारण को वह जानने का प्रयास नहीं करता। कपिल का सापेक्षवाद कारण और कार्य में कोई फर्क नहीं मानता, क्योंकि वृत्तात्मक रेखागणित में कारण ही कार्य हो जाता है और कार्य ही कारण, सूक्ष्म ही स्थूल बन जाता है और स्थूल ही सूक्ष्म तथा यह प्रकिया आकर्षण और विकर्षण नियमों द्वारा होती है, जो प्रकृति और पुरुष के संयोग से ही आरम्भ हो जाती है। कपिल का सांख्यदर्शन यह मानता है कि त्रिविध गुण-विकार (सत्व, रज, तम) ही वह मूलद्रव्य कारण है जो कारणजगत (Astral world) और कार्यजगत (Physical world) के बीच गुणात्मक तरंगों या वासना-तरंगों (Thought waves) के रूप में घूमता रहता है और वे ही तरंगें भौतिकजगत के परमाणुओं के योग से कण-तरंगों के रूप में प्रदर्शित होती हैं, लेकिन उस प्रदर्शन का द्रष्टा और भोक्ता केवल चेतन पुरुष है और कोई दूसरा नहीं। इसप्रकार वह प्रक्रिया आइन्स्टीन के 'फोटोनवाद' (Photo-electric Effect) के अनुसार इलेक्ट्रान और फोटोन कणों के टक्कर से शुरु होती है और उसी प्रक्रिया द्वारा कारणजगत की गुणात्मक तरंगें कार्यजगत के गुण-विकारों में प्रदर्शित होती हैं और उसी प्रक्रिया में नक्षत्र-पिण्ड, जीव-जन्तु एवं वनस्पति का क्रमविकास होता है। अगर यह द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया नहीं होगी तो कारणजगत (Astral world) कभी भी कार्यजगत (Physical world) के रूप में परिवर्त्तित नहीं हो सकता। यही कारण है कि हमें भौतिक जगत में कण और तरंग दोनों दिखाई देते हैं, क्योंकि कण का सम्बन्ध भौतिक जगत है जिनसे स्थूल शरीर का निर्माण होता है ज़बक़ि तरंगों का सम्बन्ध सूक्ष्मजगत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Astral world) से है जिनसे लिंग शरीर (Astral body), वासना तरंगें या विचार-तरंगों (Thought waves) का निर्माण होता है । गीता (३-२७) के अनुसार भी केवल गुण-विकारों का संचार ही गुण-विकारों में हो रहा है । यह आवश्यक नहीं कि गुण-विकारों (प्रेम, दया, करुणा, वात्सल्य, सत्य, अहिंसा, रंग-रूप, गंध, स्वाद, आकर्षण इत्यादि) का अस्तित्व केवल सूक्ष्म रूप में ही रहे, क्योंकि तब सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित अपना वृत्त पूर्ण नहीं कर सकेगी, जिसके फलस्वरूप कारणजगत कार्यजगत में नहीं बदल सकता, आकर्षण और विकर्षण की प्रक्रिया से द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद नहीं चल सकता । यह कारण-जगत (Astral world) की उन गुणात्मक तरंगों (Qualitative Flow) का ही प्रभाव है कि हमें इस भौतिक जगत में प्रेम और घृणा, सत और असत, सुख और दुख, जीवन और मृत्यु, प्रकाश और अन्धकार, आकर्षण और विकर्षण, हिंसा और अहिंसा आदि अनेक प्रकार के सापेक्ष तत्व, गुण-विकार एवं द्वन्द्वात्मक संघर्ष सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहे हैं । आधुनिक विज्ञान के ज्ञानभ्रम एवं गलत निष्कर्ष का कारण यह है कि उसके सभी सिद्धान्त यूक्लिड और न्यूटन की स्व-तन्त्र या निरपेक्ष रेखागणित पर आधारित हैं जिसके फलस्वरूप भौतिकजगत कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत से सर्वथा पृथक और स्वतन्त्र हो जाता है । इस आधार पर आधुनिक विज्ञान ने यह सर्वथा गलत निष्कर्ष निकाल लिया है कि जीवजगत एवं सभी वस्तुओं का निर्माण जड़ परमाणुओं द्वारा हुआ है जिनमें गुणात्मक तत्व सृष्टि के आदि काल से ही चले आ रहे हैं और उन्हीं स्वतन्त्र एवं निरपेक्ष पर-माणुओं द्वारा इस ब्रह्माण्ड की रचना हुई है और फिर उन्हीं द्वारा मन, बुद्धि एवं चेतना की भी उत्पत्ति हुई है । वे गुणात्मक तत्व सृष्टि के आदि काल से आ जरूर रहे हैं, लेकिन सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार असंख्य सूक्ष्म लोकों से होते हुए आ रहे हैं, कारण और कार्य की श्रृखंला में गुँथे हुए द्वन्द्वा-त्मक संघर्ष की प्रक्रिया से आ रहे हैं । अतः परमाणु उन कारणस्वरूप गुणात्मक तरंगों (Qualitative waves) के बिना शून्य है । अगर आधुनिक विज्ञान सांख्य दर्शन के इस अदभुत सिद्धान्त को स्वीकार करना आवश्यक नहीं समझता, तो भी आज का क्वान्टमवाद और आइन्स्टीन का सापेक्षवाद उसे इस तथ्य को मानने के लिए बाध्य कर दे रहा है । यही नहीं, बल्कि इन सिद्धान्तों से यह भी प्रमाणित होता है कि चेतना का अस्तित्व पदार्थ से सर्वथा पृथक और स्वतन्त्र है । अगर स्वतन्त्र और पृथक है तो विज्ञान की रेखागणित से बाहर वह कहाँ चली जाती है ? इस परम सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अब आधुनिक विज्ञान को महामुनि कपिल का महाविज्ञान पढ़ना पड़ेगा ।

अब हम मायापुरी के उस महाखण्ड में चलते हैं जिसे विज्ञान में 'परमाणु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जगत' कहा जाता है। लेकिन उस खण्ड में घुसने से पहले इस तथ्य को हमेशा ध्यान में रखना चाहिये कि परमाणु ही (अब तो इलेक्ट्रान को माना जाता है) आधुनिक विज्ञान का ईश्वर है तथा वही कर्त्ता, द्रष्टा और भोक्ता है। उसी से ब्रह्माण्ड का प्रवाह चलता है और फिर यह विशाल ब्रह्माण्ड उसी में लीन हो जाता है। अगर आधुनिक युग में योगी बच गये हैं तो उस स्वर्गतुल्य जगत का दर्शन प्राप्त कर आसानी से प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो सकते हैं।

अब तक के वैज्ञानिक अनुसन्धानों के फलस्वरूप इस ब्रह्माण्ड का जो स्वरूप निश्चित होता है उसके अनुसार इसकी रचना अति सूक्ष्म परमाणुओं द्वारा हुई है। परमाणु शब्द (Atom) वैज्ञानिक युग की ही देन नहीं है। प्राचीन युग में भी लोग इस शब्द तथा इसकी सूक्ष्मता से परिचित थे। कपिल से पूर्व कणाद के न्यायसूत्रों के अनुसार जगत का मूलकारण परमाणु हैं। इस दर्शन के अनुसार परमाणुओं से ही चैतन्य की उत्पत्ति हुई। जैन और बौद्ध दर्शन में भी परमाणुओं का उल्लेख मिलता है। यूनानी दार्शनिक डेमोक्राइट्स तथा ल्यूक्रिटीयस के अनुसार भी जगत की रचना परमाणुओं द्वारा हुई है। डेमोक्राइट्स कहता था कि मनुष्य की आत्मा भी परमाणुओं द्वारा निर्मित है। डेमोक्राइट्स के 'परमाणुवाद' को आधुनिक युग में जान डाल्टन (१७६६-१८४४) ने पुनर्जीवित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार सभी पदार्थ सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवं अविभक्त (Infinitestimal and indivisible) कणों द्वारा निर्मित हैं और जितने प्रकार के तत्व होते हैं उतने ही प्रकार के परमाणु भी होते हैं तथा उनके भार में भी अन्तर होता है, किन्तु एक ही तत्व के परमाणुओं में समानता होती है। परमाणुओं का सृजन (Creation) और विनाश नहीं होता है। यद्यपि डाल्टन के इस सिद्धान्त में अनेक दोष थे, किन्तु परवर्त्ती वैज्ञानिक अनुसन्धानों के लिए यह सिद्धान्त मार्ग-दर्शक सिद्ध हुआ। विज्ञान में अनेक खोंजों द्वारा अभी तक १०५ विभिन्न तत्वों (Elements) का पता लगाया जा चुका है और इन्हीं तत्वों के रासायनिक मिश्रण द्वारा विभिन्न वस्तुओं का निर्माण होता है। उदाहरण के लिए जल, आक्सीजन और हाइड्रोजन दो विभिन्न तत्वों (Elements) द्वारा बनता है और जिसप्रकार कुछ अक्षरों के योग से असंख्य शब्दों एवं वाक्यों की रचना होती हैं उसीप्रकार १०५ विभिन्न तत्वों के रासायनिक संयोजन द्वारा असंख्य यौगिक पदार्थों (Compounds) की उत्पत्ति होती है।

यद्यपि इस सम्बन्ध में अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ, लेकिन अति सूक्ष्म परमाणु की आन्तरिक संरचना का स्पष्ट चित्र हमें लार्ड अर्नेस्ट रदरफोर्ड (१८७१-१९३७) के प्रयोगों द्वारा ही सर्वप्रथम प्राप्त होता है। विज्ञान में रदर-फोर्ड की गिनती गैलीलियो, न्यूटन, फेराडे, मैक्सवेल, मैक्सप्लैंक तथा आइन्स्टीन जैसे महान वैज्ञानिकों के समकक्ष होती है। सर आर्थर एडिंगटन का कहना है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि पदार्थ के सम्बन्ध में डेमोक्राइट्स के बाद हमारे दृष्टिकोण में सबसे बड़ा परिवर्त्तन रदरफोर्ड के सिद्धान्त द्वारा ही हुआ। परमाणुवाद के अनुसन्धान में सुप्रसिद्ध भौतिकशास्त्री नील्स बोर (१८८५–१९६२) का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है ओर इनकी खोज के आधार पर ही १९२२ ई० में उन्हें भौतिकशास्त्र का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। अनुसन्धान की इस कड़ी में मासले नामक वैज्ञानिक का नाम भी आदरपूर्वक लिया जाता है। नील्स वोर ने एक बार यह स्वप्न देखा कि वह प्रज्वलित गैस के एक गोले पर बैठा हुआ है और उसके चारों ओर अनेक ग्रह एक विशेष मार्ग का अनुसरण करते हुए चक्कर लगा रहे हैं जो आग के उस गोले से धागे में वँधे हुए हैं। अचानक गैस का गोला तथा ग्रह आदि सिकुड़ कर जम से गये। नील्स बोंर का कहना है कि इसी समय उसकी नींद टूट गई और उसे यह बोध हो गया कि स्वप्नचित्र वास्तव में 'परमाणु की संरचना' (model) का ही एक स्वरूप था। इसप्रकार नील्स बोर को एक भौतिक सत्य का दर्शन प्राप्त हुआ। इस सम्वन्ध में योगी कहते हैं कि स्वप्नावस्था में मनुष्य सूक्ष्मलोक (Astral plane) में ही विचरण करता है और हो सकता है कि नील्स को इस प्रक्रिया द्वारा एक भौतिक वास्तविकता का ही वोध हुआ हो।

आधुनिक विज्ञान में रदरफोर्ड के अनुसन्धान द्वारा अब यह सिद्ध हो चुका है कि प्रत्येक परमाणु 'ऋण-आवेशित इलेक्ट्रान' (Negatively charged electrons) तथा 'धन-आवेशित प्रोटोन' (Positively charged protons) द्वारा निर्मित होता है। परमाणु का आकार इतना सूक्ष्म होता है कि एक सूई की नोंक पर लाखों परमाणु आसानी से टिक सकते हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि परमाणु का स्वरूप एक 'लघु सूर्यमण्डल' (Miniature solar system) के समान है। जिसप्रकार अनेक ग्रह एवं उपग्रह अपने केन्द्रविन्दु सूर्य की परिक्रमा एक नियत कक्ष पर किया करते हैं उसीप्रकार सूक्ष्मजगत में परमाणु के विभिन्न उप-कण (इलेक्ट्रान, प्रोटोन, न्यूट्रोन आदि) आकर्षण एवं विकर्षण नियमों के अनुसार अपने नियत कक्ष पर 'केन्द्रक अथवा नाभिक' (Central Nucleus) के चारों ओर अकल्पनीय गति से चक्कर लगाया करते हैं। इस वैज्ञानिक चित्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रकृति के सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों रूप समान हैं और एक ही नियम द्वारा संचालित होते हैं। दूसरे शब्दों में सूक्ष्मजगत और स्थूल जगत अथवा कारण और कार्य दोनों में एकरूपता है और दोनों परस्पर कारण और कार्य श्रृंखला से जुड़े हुए हैं। यहाँ भी कपिल का सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा आकर्षण और विकर्षण का नियम उसीप्रकार दिखाई देता है क्योंकि प्रकृति और पुरुष दो परस्पर विरोधी तत्वों के संयोग का यही स्वाभाविक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिणाम है। इसीलिए कपिल का सांख्यदर्शन कहता है, "जो पिण्ड में है वही ब्रह्माण्ड में भी है" (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। आज जिस तथ्य को विज्ञान बीसवीं सदी में प्रमाणित कर रहा है वह महर्षि कपिल ने अपनी अन्तर्दृष्टि द्वारा हजारों वर्ष पहले सिद्ध कर दिया था ओर उस सत्य की पुष्टि मैक्सप्लैंक के क्वाण्टमवाद तथा आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा भी हो जाती है। कपिल की रेखागणित में परमाणु तो केवल प्रतीक मात्र हैं, गुणात्मक तरंगों (Qualitative waves) के वाहक हैं जो चेतन पुरुष के प्रकाश में टेलीविजन चित्रों की भाँति प्रतिभासित होते हैं। अगर परमाणु वास्तविक और निरपेक्ष कण होते तो उनमें चेतना भी दिखाई देती, लेकिन चेतना तो प्रकाश या समय की गति को पार कर भौतिक जगत की परिधि से बाहर कारणजगत (Astral world) में चली जाती है, क्योंकि वृत्तात्मक रेखागणित में कार्य (शरीर) भी अन्ततः कारण में बदल जाता है। अतः विज्ञान की यह कहानी किसी गल्पकथा से कुछ अधिक महत्व नहीं रखती। अपने सिद्धान्त को पुष्ट आधार प्रदान करने के लिए विज्ञान को यह प्रमाणित करना ही पड़ेगा कि तथाकथित मूलभूत परमाणुओं में गुणात्मक तरंगे एवं चारीत्रिक विशेषताएँ किस प्रक्रिया द्वारा संचारित होती हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि इस पृथ्वी पर ९० प्रकार के विभिन्न परमाणु प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं, जैसे आक्सीजन, हाइड्रोजन, कार्बन, सोना तथा यूरेनियम आदि और लगभग आधा दर्जन कृत्रिम परमाणु वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में भी बनाये जा सकते हैं। कुछ पदार्थ अथवा वस्तुएँ परमाणुओं की एक स्तरीय प्रक्रिया द्वारा निर्मित होती हैं और कुछ वस्तुएँ दो स्तरीय प्रक्रिया द्वारा बनती हैं। पहली प्रक्रिया में एक ही प्रकार के विशिष्ट परमाणु उस वस्तु का निर्माण करते हैं और यह प्रक्रिया हमें अधिकांश धातुओं में दिखाई देती है। परन्तु दूसरी प्रक्रिया में बहुधा अनेक प्रकार के परमाणु पहले एक अणु (Molecule) का निर्माण करते हैं और इसप्रकार निर्माण की एक इकाई (unit) बनती है। उदाहरण के लिए जल की बूँद का एक छोटा कण एक साधारण अणु (Molecule) द्वारा निर्मित है जिसमें दो परमाणु हाइड्रोजन के हैं और एक परमाणु आक्सीजन का होता है, क्योंकि हाइड्रोजन और आक्सीजन दो भिन्न-भिन्न परमाणु होते हैं। इसीप्रकार जल से बना हुआ भाप (Water Vapour) पृथक-पृथक अणुओं (Molecules) द्वारा निर्मित होता है जो किसी विशेष ढाँचे से सम्बद्ध नहीं है। इसी तरह नानाप्रकार की निर्जीव एवं सजीव वस्तुएँ परमाणुओं तथा अणुओं के जटिल संयोग से निर्मित होती रहती हैं।

कभी भौतिकदर्शन और विज्ञान में यह कल्पना की गई थी कि 'परमाणुजगत' ही कारणस्वरूप वह अन्तिम सूक्ष्मजगत है जिसके पार कहीं और कुछ नहीं है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन परमाणुओं से ही नक्षत्र-पिण्डों और जीवजगत का निर्माण हुआ तथा उनमें गुणात्मक तत्वों का विकास हुआ। इन्हीं अविभाज्य (Indestructible) एवं अविनाशी (Eternal) परमाणुओं द्वारा इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार एवं चेतना की भी उत्पत्ति हुई। प्राचीन यूनानी भौतिकदर्शन से लेकर आज के विज्ञान तक वही पुरानी भौतिक विचारधारा उसीप्रकार चली आ रही है। परन्तु बीसवीं सदी में कुछ ऐसे क्रान्तिकारी आविष्कार हुए जिसके फलस्वरूप विज्ञान का सम्पूर्ण ढाँचा ध्वस्त हो गया। क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद द्वारा यह प्रमाणित हुआ कि स्वचेतना (Self consciousness) ऊर्जा एवं परमाणुओं से भी अधिक सूक्ष्म तथा इन भौतिक शक्तियों से परे हैं। सर जेम्स जीन्स, आर्थर एडिगंटन जैसे अनेक महान भौतिक-शास्त्रियों ने यह प्रमाणित किया कि इस ब्रह्माण्ड का संञ्चालन, नियमन एवं संयोंजन एक महाशक्तिशाली 'सार्वभौमिक मन' (Universal mind) द्वारा सम्पन्न हो रहा है और प्रकृति के गुणात्मक तत्व (प्रेम, दया, रंग रूपआदि), विचारशक्ति तथा अहंकार आदि तत्व ऊर्जा एवं परमाणुओं से भी अधिक सूक्ष्म तथा पृथक हैं। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में वैज्ञानिकों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि सूक्ष्म 'परमाणु जगत' से परे भी एक अतिसूक्ष्म 'उप-परमाणु जगत' का भी अस्तित्व है जिसमें अपार शक्ति छिपी हुई है। इसीप्रकार बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कोलम्बिया विश्वविद्यालय के जेराल्ड फेनबर्ग ने यह प्रमाणित किया कि हमारे जगत के प्रतिकूल एक सूक्ष्मजगत (Astral world) का भी अस्तित्व है जो 'प्रतिपदार्थ' (Anti-matter) के नियमों द्वारा संञ्चालित होता है जिसकी निम्नतम गति प्रकाश की गति है और अधिकतम गति अरबों मील प्रति सेकन्ड। उससे भी अधिक आश्चर्य वैज्ञानिकों को यह जानकर होता है कि सूक्ष्म और स्थूल सभी जगत पर सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा कारण और कार्य का नियम उसीप्रकार लागू होता है। आज यही वह विषम स्थिति है जिससे वैज्ञानिकों की बुद्धि चकरा जाती है और उन्हें यह मानने के लिए बाध्य होना पड़ता है कि वे अपने अनुसन्धान में जितना ही आगे बढ़ते जा रहे हैं प्रकृति का रहस्य उतना ही गहरा होता जा रहा है, वह प्रकृति अनन्त समुद्र की तरह दिखाई देने लगती है।

इस ज्ञानभ्रम का कारण यह था कि पूर्ववर्त्ती वैज्ञानिकों ने अरस्तू और गैलीलियो की परम्परा का निर्वाह करते हुए यह मान लिया था कि सत्य का ज्ञान इन्द्रियों द्वारा ही प्राप्त हो सकता है तथा इस ब्रह्माण्ड की रेखागणित यूक्लिड और न्यूटन की स्वतन्त्र रेखागणित पर आधारित है। यद्यपि अरस्तू एक बड़ा पंडित था, लेकिन वह बुद्धिवाद के चक्कर में पड़ गया। कहा जाता है कि उसका मस्तिष्क एक 'विश्वकोश' (Encyclopaedia) के ससान था। उस कोश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से एक भौतिकवादी धारा फूटी जो तूफानी वेग से बढ़ चली और उस धारा में छोटे-बड़े सभी डुबकी लगाने लगे। उस महानदी का कोई थाह नहीं लगा सका। परन्तु बीसवीं सदी में एटम बम का एक बड़ा धमाका हुआ और वह महानदी भाप बनकर उड़ गई। अगर अरस्तू ने अपने गुरु प्लेटो की यह बात मान ली होती कि सत्य का ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता तो वह नदी भाप बन कर नहीं उड़ती।

लेकिन दूसरी तरफ गोस्वामी तुलसीदास ने प्राचीन भारत में विद्यमान गुरु-शिष्य परम्परा का निर्वाह करते हुए अपने गुरु की यह बात मान ली। यही कारण है कि बुद्धिवाद और 'स्वाधीन इच्छा' के सिद्धान्त के चक्कर में न पड़कर 'आत्मसमर्पण' (Self surrender) की नीति का ही अनुसरण किया—

सारद सेस महेस विधि आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन करहिं निरंतर गान॥

नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानंद निरुपाधि अनूपा॥
संभु विरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहिं जासु अंस तें नाना॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता। ब्यापक अजित अनादि अनंता॥

माता कौशल्या को भी ऐसा ही अद्भुत दर्शन प्राप्त हुआ था—

देखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मांड॥

अगनित रवि ससि सिव चतुरानन। बहुगिरि सरित सिंधु महि कानन॥
काल कर्म गुन ग्यान सुभाऊ। सोउ देखा जो सुना न काऊ॥

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं सदी के आरम्भ में जो अनेक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक आविष्कार हुए उसी कड़ी में सर जोसेफ जान थामसन (१८५६-१९४०) ने इलेक्ट्रान कणों की खोज की। आस्ट्रिया के एक प्रमुख भौतिकशास्त्री वोल्फगैंग पाली (१९००–१९५८) ने १९३१ ई० में 'न्यूट्रिनो' (Neutrino) नामक एक नये उप-परमाणुकण (Subatomic particle) की खोज कर हमें 'उप-परमाणु जगत'(Subatomic world) से भी परिचित करा दिया।

विभिन्न खोजों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि प्रत्येक सूक्ष्म परमाणु का एक केन्द्र होता है जिसे 'नाभिक' (Nucleus) कहते हैं और वह केन्द्र धनात्मक प्रोटोन तथा तटस्थ न्यूट्रोन नामक कणों से युक्त होता है। केन्द्रीय नाभिक के चारों ओर ऋण-आवेशित इलेक्ट्रान नाम के सूक्ष्म पारदर्शी कण होते हैं। इलेक्ट्रान ऋण-आवेशित विद्युत्कण (Negatively charged) होते हैं जिनका द्रव्यमान (Mass) परमाणु के धन-आवेशित (positively charged) प्रोटोन कणों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बराबर होता है । इसप्रकार प्रत्येक परमाणु का आन्तरिक सन्तुलन बना रहता है । इसके अतिरिक्त परमाणु में न्यूट्रोन नामक कण तटस्थ (Neutral) होते हैं दूसरे शब्दों में उनमें ऋणात्मक या धनात्मक कोई विद्युत नहीं होती । न्यूट्रो नामक कणों की खोज १९३२ ई० में जेम्स चाडविक द्वारा की गई । वास्तव में रदरफोर्ड, नील्सबोर तथा मासले द्वारा प्रतिपादित परमाणु सिद्धान्त में एक बड़ा दोष था जो चाडविक के इसी खोज द्वारा दूर हुआ । उदाहरण के लिए पदार्थ का सबसे हल्का परमाणु हाइड्रोजन कण एक इलेक्ट्रान और एक प्रोटोन द्वारा निर्मित होता है जिसकी परमाणु संख्या एक है और पारमाणविक भार भी एक ही है । लेकिन हीलियम गैस का परमाणु जो दो इलेक्ट्रान कण तथा दो प्रोटोन कणों का बना होता है और जिसकी परमाणु संख्या दो है, किन्तु पारमाणविक भार चार है । इसीप्रकार यूरेनियम की परमाणु संख्या ९२ है और पारमाणविक भार २३८ है । यह समस्या विज्ञान के लिए एक पहेली थी कि नाभिक में अधिक द्रव्यमान (Mass) का क्या कारण है और इस विषमता से परमाणु का आन्तरिक सन्तुलन किसप्रकार बना रहता है ! इस समस्या का समाधान चाडविक की इस खोज द्वारा हुआ । चूँकि न्यूट्रोन कणों में किसीप्रकार का कोई विद्युत् आवे (Electric charge) नहीं होता, इसलिए इन तटस्थ उप-कणों द्वारा परमा का विद्युतीय सन्तुलन नहीं बिगड़ता जिसके फलस्वरूप परमाणु की नाभि (Nucleus) में द्रव्यमान या भार उसीप्रकार स्थिर बना रहता है ।

लेकिन अभी तक यह तथ्य विज्ञान के लिए एक पहेली ही बना हुआ है कि अत्यधिक ताप (करोड़ों डिग्री) के फलस्वरूप जब उप-कणों (इलेक्ट्रान, प्रोटोन न्यूट्रोन) का विखंडन हो जाता है तो किस प्रकार परमाणु की नाभिक या केन्द्र (Nucleus) का अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है । वास्तव में इस समस्या का समाधान भी कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद में ही निहित है, क्योंकि इस सिद्धान्त के अन्तर्गत वह केन्द्रक (Nucleus) भी अपेक्षाकृत किसी दूसरी शक्ति शाली प्रक्रिया अथवा शक्ति-केन्द्र से जुड़ा हुआ है और वह सूत्र हमें योगविज्ञा द्वारा प्राप्त हो सकता है । सापेक्ष प्रकृति में केन्द्रक अथवा नाभिक भी न्यूटन की तरह एक स्वतन्त्र शक्ति नहीं हो सकती, बल्कि उसका अभिन्न सम्बन्ध सांख्य के पुरुष तथा वेदान्त और योगदर्शन के आत्मा (Soul) से है, क्योंकि उसी के संयोग से स्वयं प्रकृति चल रही है और उसी के प्रकाश से सब कुछ प्रकाशित हो रहा है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति) । हम अपनी इन्द्रियों द्वारा इस जगत में जो कुछ देख रहे हैं वह केवल टेलीविजन पर छायाचित्र हैं । परन्तु भौतिक सन्दर्भ में हरबर्ट स्पेन्सर का यह कथन सही है कि प्रकृति की यह प्रक्रिया किसी जादू की छड़ी द्वारा नहीं चलाई जा रही है, बल्कि जेम्स जीन्स और एडिंगटन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के शब्दों में पदार्थ के कण-तरंगों का संयोजन, नियमन एवं संचालन एक सार्वभौमिक शक्ति मन (Cosmic mind) द्वारा हो रहा है। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार यद्यपि वह बुद्धितत्त्व (महत्तत्त्व) जड़स्वरूप है, लेकिन चेतन-पुरुष (आत्मा) के संयोग से वह चैतन्य होकर गतिशील एवं सक्रिय हो उठा है। ईश्वरकृष्ण की सांख्यकारिका (२०) में कहा गया है कि जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग से अचेतन बुद्धितत्त्व (लिङ्गम्) भी चेतन सा प्रतीत होने लगता है और यह क्रिया उसीप्रकार होती है जिसप्रकार स्फटिक मणि के ऊपर से भिन्न-भिन्न रंग-रूप वाली वस्तुओं (त्रिगुणात्मक प्रकृति) को चलाने से स्वयं धवल स्फटिक भी उसी के अनुरूप दिखाई देने लगता है अथवा जिसप्रकार टेलीविजन पर कण-तरंगों द्वारा बने हुए छायाचित्र सजीव एवं यथार्थ प्रतीत होते हैं। इसप्रकार इस प्रक्रिया में एक दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्त्व अहंकार (Ego) भी जुड़ जाता है जिससे एक नकली आत्मा (Counterfeit soul) का उदय हो जाता है जो वास्तविक कर्त्ता न होते हुए भी भ्रमवश अपने को ही कर्त्ता समझ बैठता है और वस्तुतः इसी प्रक्रिया द्वारा 'चेतनोऽहं करोमि' की प्रतीत होने लगती है। यद्यपि यह भ्रामक अवस्था एक निश्चित समय तक ही रहती है और विवेकज्ञान हो जाने पर भ्रम दूर हो जाता है और उसी अवस्था में सत्य का बोध होता है। इसीलिए तुलसीदास ने लिखा है—

अस बिबेक जब देइ बिधाता। तब तजि दोष गुनहिं मनुराता ।।
काल सुभाउ करम बरि आईं। भलेउ प्रकृति बस चुकइ भलाई ।।

जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।
वंदउँ सबके पद कमल सदा जोरि जुग पानि ।।

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी ।।
सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोर जुग पानी ।।

वैज्ञानिक कहते हैं कि सूक्ष्म परमाणुओं में हलचल के अनेक कारण हैं और इस हलचल के परिणामस्वरूप सभी निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं के रंग-रूप, आकार-प्रकार तथा गुणात्मक स्वरूप में निरन्तर परिवर्त्तन होता रहता है, कभी जड़ चेतन बन जाता है और चेतन जड़, निर्माण विनाश में बदल जाता है और फिर विनाश निर्माण के रूप में प्रकट हो उठता है। दूसरे शब्दों में कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत की हलचल का प्रभाव कार्यस्वरूप स्थूलजगत के नाम-रूपों में प्रकट होता है। यद्यपि सापेक्षवाद की इस वृत्तात्मक प्रक्रिया में हलचल सूक्ष्मजगत में होती है, भौतिक जगत की योजना और रूपरेखा भी वहीं निर्मित होती है, लेकिन हमारे सीमित इन्द्रियज्ञान के फलस्वरूप हमें भ्रमवश ऐसा प्रतीत होता है कि वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हलचल अथवा कर्म-व्यापार स्थूलजगत में स्वतन्त्र और निरपेक्ष रूप से हो रहा है, क्योंकि वस्तुतः हमारा भौतिक दृष्टिकोण यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित होता है और हम प्रकृति के अकल्पनीय विस्तार को देखकर उसे एक स्वतन्त्र और निरपेक्ष शक्ति मान लेते हैं। यही गलती अरस्तू से लेकर आजतक इस वैज्ञानिक युग में भी दुहराई जा रही है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार सूक्ष्मजगत के परमाणुओं द्वारा उत्पन्न इस हलचल, किन्तु सुनियोजित कर्म-व्यापार में पहले इलेक्ट्रान कण ही प्रमुख रूप से उत्तरदायी होते हैं। जब ताप या घर्षण के प्रभाव से इलेक्ट्रान कण तेजी से इधर-उधर भागने लगते हैं तो विज्ञान में उस क्रिया को परमाणुओं का 'आयनीकरण' अथवा 'विद्युतीकरण' (Ionisation) कहतें हैं जिसकी खोज प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे० जे० थामसन ने उन्नीसवीं सदी के अन्त में की थी। इस नियम के अनुसार जब हम हथेली रगड़ते हैं और इस क्रिया द्वारा जो गर्मी पैदा होती है अथवा नायलान या सिल्क का कपड़ा उतारने पर जो चट-चट की आवाज होती है अथवा पानी उबालने पर जो बुलबुले उठते हैं अथवा बादलों में जो बिजली चमकती है तो वे सभी क्रियाएँ अथवा हलचलें इलेक्ट्रान कणों के भागने से ही शुरू होती हैं जिसके फलस्वरूप परमाणुओं का आन्तरिक सन्तुलन बिगड़ जाता है और उप-कणों (Subatomic particles) में परस्पर द्वन्द्वात्मक संघर्ष छिड़ जाता है। इस क्रिया द्वारा ही जब ऋण और धन (Negative and Positive) मिल जाते हैं तो ताप, विकिरण, प्रकाश एवं चुम्बकीय तरंगों का प्रसारण होता है।

प्रकृति की इस स्वचालित प्रक्रिया में कारणस्वरूप त्रिगुणात्मक फोटोन कण (Photons) कार्यस्वरूप इलेक्ट्रान कणों से टकराते हैं, उनमें परस्पर द्वन्द्वात्मक संघर्ष छिड़ जाता है और इसप्रकार ऋणात्मक और धनात्मक (Negative and positive) कणों का परस्पर संयोग हो जाता है जिसके फलस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) सापेक्षवाद के नियमों के अनुसार कार्यस्वरूप स्थूलजगत (Physical world) में परिवर्तित होने लगता है, क्योंकि इसी प्रक्रिया द्वारा 'कारण और कार्य' की श्रृंखला (Causation) जुड़ पाती है। इसप्रकार जब फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की परस्पर टक्कर होती है तो सूक्ष्म कण इधर-उधर अनिश्चित दिशा की ओर तेजी से भागने लगते हैं और विज्ञान में इस क्रिया को 'फोटो-विद्युत् प्रभाव' (Photo-electric effect) कहा जाता है जिसकी खोज बीसवीं सदी के आरम्भ में महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन द्वारा की गई। इस क्रिया में ताप या ऊर्जा की मात्रा का स्तर (Degree) उस वस्तु से भागे हुए इलेक्ट्रान कणों की संख्या पर निर्भर करता है। आइन्स्टीन का यह सिद्धान्त जे० जे०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थामसन की खोज पर निर्भर है कि विद्युत् तरंगों की गति एवं तीव्रता के फलस्वरूप पदार्थ के द्रव्यमान (Mass) में भी परिवर्तन हो जाता है, क्योंकि जैसे-जैसे उप-परमाणु कण (Subatomic particles) भागने लगते हैं वैसे-वैसे उस वस्तु की आन्तरिक शक्ति में भी वृद्धि होने लगती है और इसी क्रिया द्वारा परमाणुओं में 'श्रृंखला प्रतिक्रिया' (Chain reaction) का उदय होता है जिससे अपार ऊर्जा उत्पन्न होती है। इसी क्रिया का लघुरूप हमें एटम या हाइड्रोजन बम में तथा इसी का विशाल रूप सूर्य एवं ताराओं में दृष्टिगोचर होता है। अतः इस नियम के अनुसार किसी वस्तु में जितनी ही गति होगी उसके अनुकूल द्रव्यमान में भी उतना ही परिवर्तन होगा। दूसरे शब्दों में गति और भौतिक-शक्ति में अटूट सम्बन्ध है। वैज्ञानिक इतिहास में थामसन का यह सिद्धान्त अत्यन्त क्रान्तिकारी सिद्ध हुआ जो महान् वैज्ञानिक न्यूटन के द्रव्यमान (Mass) के सिद्धान्त पर प्रत्यक्ष प्रहार था। न्यूटन के अनुसार किसी पदार्थ का द्रव्यमान सर्वदा सभी परिस्थितियों में स्थिर (fixed) होता है जो थामसन और आइन्स्टीन के इस सिद्धान्त द्वारा खण्डित हो गया।

विज्ञान में क्रान्तिकारी खोजों का यह सिलसिला बीसवीं सदी के आरम्भ में भी चलता रहा। सन् १९०० ई० में महान वैज्ञानिक मैक्सप्लैंक (१८५८–१९४७) ने भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वैज्ञानिक खोज की जो 'क्वाण्टम सिद्धान्त' (Quantum theory) के नाम से प्रसिद्ध है। यह सिद्धान्त इतना क्रान्तिकारी था कि विज्ञान-जगत में एक हलचल सी मच गई, क्योंकि इससे सम्पूर्ण वैज्ञानिक ढ़ाँचा डगमगा उठा, यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित भौतिकवाद का ताना-बाना तथा न्यूटन के 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' का निरपेक्षतावादी सिद्धान्त ध्वस्त हो गया। इस नियम के अनुसार जब किसी पदार्थ या पिण्ड में अत्यधिक ताप (Heat) के फलस्वरूप जो विकिरण (Radiation) ऊर्जा के रूप में प्रवाहित होता है उसकी गति अटूट प्रवाह (Unbroken Stream) के रूप में नहीं होती, बल्कि पृथक-पृथक सूक्ष्म कणों (Discontinuous Bits) के रूप में होती है जिसे 'क्वान्टा' (Quanta) कहते हैं। इस सिद्धान्त द्वारा यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित का आधार ही समाप्त हो गया, क्योंकि जब तक प्रकाश या विकिरण में एक लय नहीं होगी, सम्पूर्ण प्रवाह में एक तारतम्य नहीं होगा तब तक यूक्लिड की निरपेक्ष रेखागणित आगे नहीं बढ़ सकती और जब रेखागणित आगे नहीं बढ़ सकती तो स्वयं भौतिकवाद का स्वतन्त्र सिद्धान्त ही ध्वस्त हो जाता है। यहीं पर एक मानसिक शक्ति अथवा चेतनशक्ति के अस्तित्व का बोध होता है जो इस द्वन्द्वात्मक संघर्ष में अनिश्चित दिशा की ओर भागे हुए आवारा कणों में संयोजन स्थापित कर उन्हें सगुण और साकार रूप प्रदान करती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महान् वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने आधुनिक विज्ञान की इस महान भूल को पकड़ लिया और यही कारण है कि उन्होंने अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त में 'वृत्तात्मक रेखागणित' (Circular Geometry) का प्रयोग किया, क्योंकि इस रेखागणित से एक भौतिक परिधि का बोध होता है और उस परिधि के अन्दर ही गुणात्मक परमाणुओं के संयोग से एक सार्वभौमिक मन द्वारा नानाप्रकार की वस्तुओं का निर्माण हो सकता है, इस भौतिक जगत में प्रकाश, ऊर्जा एवं चुम्बकीय तरंगों का प्रसारण चल सकता है। अगर रेखागणित यूक्लिड की तरह स्वतन्त्र और निरपेक्ष हो जायेगी तो पदार्थ की कण-तरंगें उस भौतिक परिधि से बाहर चली जायेंगी जिसके फलस्वरूप कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत कार्यस्वरूप स्थूल-जगत में परिवर्त्तित नहीं हो सकता। इसका अर्थ यह हुआ कि इस भौतिक परिधि (प्रकाश या समय की गति) अथवा वृत्तात्मक प्रक्रिया के बाहर परमाणु अथवा स्थूल भौतिक वस्तुएँ कभी बाहर नहीं जा सकतीं। यही कारण है कि मरने के बाद परमाणुओं द्वारा बना हुआ जीव का स्थूल शरीर (Physical body) इस भौतिक परिधि में ही रह जाता है।

मैक्सप्लैंक के क्वान्टमवाद से स्पष्ट होता है कि 'क्वान्टा' स्वयं अपने में पृथक-पृथक ईकाईयाँ हैं जो भौतिकजगत के निर्माण में स्वतन्त्र रूप से आगे बढ़ती हैं, किन्तु बाद में किसी अदृश्य शक्तिद्वारा नियन्त्रित हो जाती हैं। क्वान्टमवाद द्वारा उत्पन्न यह विषम स्थिति आज सभी वैज्ञानिकों की बुद्धि से परे की वस्तु है, क्योंकि असंख्य इलेक्ट्रान और परमाणु कणों की अनिश्चित गतिशीलता को संयोजित और नियन्त्रित कर देना किसी चमत्कार से कम नहीं है। इसीलिए सर जेम्स जीन्स ने इस जगत के कर्त्ता को (The Mysterious universe) एक सर्वोच्च गणितशास्त्री की संज्ञा दी है। क्वान्टमवाद से जिस अलौकिक जगत का चित्र उपस्थित होता है वह हमारे भौतिकजगत से सर्वथा भिन्न है। हमारा भौतिकजगत जबकि 'चार आयामों' (Four dimensional continuum) में प्रदर्शित होता है, तो दूसरी ओर इस जगत से अभिन्नरूप से जुड़ा हुआ वह अदृश्य जगत असंख्य पारदर्शी आयामों से प्रदर्शित होता है। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार जीव की मृत्यु के वाद जो सूक्ष्मजगत या कारणजगत (Astral world) उपस्थित होता है उस पारदर्शी जगत की कल्पना 'क्वान्टमवाद' के इस सूक्ष्मजगत से की जा सकतीं है। सर आर्थर एडिंगटन के शब्दों में क्वान्टमवाद का यह सिद्धान्त प्राकृतिक नियमों का आधारभूत सिद्धान्त है। उनका कहना है कि इस सिद्धान्त से विज्ञान के लिए 'कारण और कार्य (cause and effect) का नियम सर्वदा के लिए समाप्त हो चुका है। लेकिन इस सम्बन्ध में स्वयं आइन्स्टीन का कहना है कि भविष्य में 'कारण और कार्य' का अटूट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नियम फिर से स्थापित होगा, क्योंकि ईश्वर जगत के साथ पासा नहीं खेल रहा है। आज विज्ञान इसी सीमारेखा पर आकर रूका हुआ है, क्योंकि अब 'कारण और कार्य' की शृंखला टूट चुकी है। यद्यपि जेम्स जीन्स, एडिंगटन, वेइल तथा आइन्स्टीन सहित (unified field theory) अनेक वैज्ञानिकों ने इस टूटी हुई शृंखला को जोड़ने की कोशिश की है तथा सूक्ष्म एवं स्थूल जगत में सामंजस्य लाने का अथक प्रयास किया है, लेकिन अभीतक कोई भी वैज्ञानिक सफल नहीं हो सका है। वास्तव में यह टूटी हुई कड़ी केवल महामुनि कपिल के अद्‌भुत सापेक्षवाद तथा योगदर्शन के वैज्ञानिक सिद्धान्तों द्वारा ही जुड़ सकती है, क्योंकि आइन्स्टीन का भौतिक सापेक्षवाद जहाँ समाप्त होता है वहीं से महर्षि कपिल का अलौकिक सापेक्षवाद शुरू होता है।

आइन्स्टीन ने अपने अनुसन्धान द्वारा 'क्वान्टमवाद' (Quantum physics) को और व्यापक रूप प्रदानकर उसे एक पुष्ट धरातल पर स्थित किया। उनके अनुसार सिर्फ प्रकाश और विकिरण ही नहीं, बल्कि पदार्थ के अन्य नाम-रूप भी पृथक-पृथक कणों के रूप में ही आगे चलते हैं। इस नियम के अनुसार प्रकाश, ऊर्जा, ताप, चुम्बकीयतरंगें, एक्स-रे, गैस, वायु, रंग-रूप, स्वाद, गंध आदि शक्तियाँ भी अन्तरिक्ष में अलग-अलग सूक्ष्म कणों के रूप में चलती हैं। यह महत्वपूर्ण सिद्धान्त विज्ञान में 'फोटो-विद्युत् प्रभाव' (photoelectric effect) के नाम से प्रसिद्ध है और इसी आविष्कार पर आइन्स्टीन को १९२१ ई० में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस नियम के अनुसार सूर्य तथा आग की जो गर्मी हम अपने दैनिक जीवन में अनुभव करते हैं उसका कारण यह है कि प्रकाश या उर्जा के छोटे-छोटे अदृश्य कण तीव्र गति से आकर हमारे शरीर की त्वचा से टकराते हैं और उसी घर्षण द्वारा हमें गर्मी का अनुभव होता है। इसीप्रकार दृश्यजगत में जो हम नानाप्रकार के रंग-रूप देखते हैं, कलियों को फूल और फल में बदलते हुए अनुभव करते हैं, जीवजगत एवं वनस्पति में गुणात्मक तरंगों का जो क्रमिक प्रवाह देखते हैं वह सभी कुछ इन सूक्ष्म गुणात्मक कणों का ही चमत्कार हैं जो तीव्र गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) से आकर हमारी आँखों के पर्दों से टकराते हैं और इन्द्रियों के माध्यम से हमारे मस्तिष्क में नानाप्रकार के छाया-चित्रों का सृजन कर जाते हैं। वास्तव में ये सूक्ष्म गुणात्मक कण क्रमशः घनीभूत होकर हमारी इन्द्रियों द्वारा जब ग्राह्य होते हैं अथवा आँखों से दिखाई देने लगते हैं तो उन मोहक छायाचित्रों को ही हम कली, फूल और फल कहते हैं, भ्रूण, बालक और मनुष्य के नाम से पुकारते हैं अथवा रंग, रूप, रस, गंध, शब्द, चित्र आदि भिन्न-भिन्न नामों से सम्बोधित करते हैं, क्योंकि उन सूक्ष्म गुणात्मक कणों द्वारा ही भौतिक-जगत का निर्माण होता है और क्रमिक रूप से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन कणों द्वारा ही इस भौतिक-जगत का विनाश होता है।

आइन्स्टीन ने उन चमत्कारी गुणात्मक कणों को 'फोटोन' (Photon) नाम दिया, क्योंकि इन कणों द्वारा ही मोहक छायाचित्र उभरते हैं। जब असंख्य गुणात्मक फोटोन कण किसी पदार्थ या वस्तु से टकराते हैं तो उस पदार्थ के सूक्ष्म इलेक्ट्रान कण भी तेजी से इधर-उधर भागना आरम्भ कर देते हैं। फोटोन और इलेक्ट्रान कणों के इस द्वन्द्वात्मक संघर्ष से ही दृश्यजगत असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित होता है, नानाप्रकार की वस्तुओं में गुण-विकारों का रंग-रूप चढ़ता है और वही रंग-रूप हमें भौतिक-जगत के रूप में दृष्टिगोचर होता है। आइन्स्टीन ने प्रमाणित किया कि 'उच्च आवृत्ति फोटोन कणों' (High Frequency Photons), जैसे बैंगनी, परा-बैंगनी आदि किरणों में अधिक ऊर्जा होती है अपेक्षाकृत कम तीव्र प्रकाश-कणों में, जैसे लाल, पीला आदि (Red and infra-Red Photons)। आइन्स्टीन का यह सिद्धान्त आगे चलकर 'स्पेक्ट्रास्कोपी' तथा टेलीविजन आदि इलेक्ट्रानिक यन्त्रों के आविष्कार में बड़ा सहायक सिद्ध हुआ। परन्तु आइन्स्टीन का यह 'फोटो विद्युत् नियम' लगभग दो शताब्दी से चले आ रहे इस अकाट्य नियम के सर्वथा विरूद्ध था जो विज्ञान में 'तरंग सिद्धान्त' (Wave theory) के नाम से प्रसिद्ध हैं। 'कण सिद्धान्त' और 'तरंग सिद्धान्त' की इस पहेली को विज्ञान अभी तक नहीं समझ पाया है। यही आज उसकी विषम स्थिति है जहाँ आकर विज्ञान रुका हुआ है, क्योंकि फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर में उसे 'कारण और कार्य, (Cause and effect) की कोई श्रृंखला नहीं दिखाई देती।

वास्तव में विज्ञान की इस पहेली का समाधान तभी हो सकता है और इस मंझधार से वह तभी उबर सकता है, जबकि वह निःसंकोच महामुनि कपिल के सांख्यदर्शन में प्रतिपादित सापेक्षवाद के मूल सिद्धान्त को स्वीकार कर लेता है क्योंकि आइन्स्टीन का सापेक्षवाद केवल भौतिक जगत की ही व्याख्या कर पाता है, लेकिन कपिल का सापेक्षवाद सम्पूर्ण प्रकृति की व्याख्या करता है। सापेक्षवाद का यह मूल सिद्धान्त जड़ और चेतन दो परस्पर विरोधी शक्तियों के द्वन्द्वात्मक संघर्ष पर निर्भर करता है और वह संघर्ष प्रकृति की वैषम्यावस्था से शुरू होता है तथा उसकी साम्यावस्था तक निरन्तर चलता रहता है। यद्यपि इस सापेक्ष प्रक्रिया में असंख्य चेतन पुरुष एक-एक कर मुक्त होते रहते हैं, लेकिन सृष्टि में 'कारण और कार्य' की अटूट श्रृखंला निरन्तर उसीप्रकार बनी रहती है और द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा प्रकृति का क्रमविकास साम्यावस्था तक आगे बढ़ता रहता है। कपिल के सापेक्षवाद की मूल बात है 'द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद' जो प्रारम्भ से लेकर अन्त तक निरन्तर बना रहता है। इस सिद्धान्त की दूसरी विशेषता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि पदार्थ के प्रत्येक कण एवं वस्तुओं का एक सूक्ष्म प्रतिरूप (Counterpart) होता है, क्योंकि इस प्रतिरूप द्वारा ही' कारण और कार्य' की शृखंला जुड़ी रहती है और प्रत्येक कण तथा प्रत्येक वस्तु से चेतनपुरुष का संयोग निरन्तर बना रहता है। इसप्रकार सापेक्षवाद की इस प्रक्रिया में द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद एक सार्थक रूप ग्रहण करता है।

हमारा भौतिकजगत कणों द्वारा निर्मित है, जबकि इसका सूक्ष्म प्रतिरूप (Astral counterpart) तरंगों (Thought waves) द्वारा निर्मित है। इस-प्रकार आकर्षणऔर विकर्षण नियमों के अनुसार जब सूक्ष्मजगत और स्थूलजगत में द्वन्द्वात्मक संघर्षहोता है तो प्रतीकस्वरूप यह द्वन्द्वात्मक संघर्ष गुणात्मक फोटोन कणों तथा इलेक्ट्रान कणोंमें भी दृष्टिगोचर होता है, क्योंकि कारणस्वरूप सूक्ष्म-जगत की तरंगों को कार्यस्वरूप स्थूलजगत में परिवर्त्तित होने के लिए पहले उन्हें फोटोन कणों का रूप ग्रहण करना पड़ता है और इस द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा तरंग कणोंमें तथा कण तरंगों में बदलते रहते हैं। तरंग-कण-तरंग की यह प्रक्रिया कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत एवं कार्यस्वरूप स्थूलजगत को परस्पर एक दूसरे से जोड़ देती है, लेकिन सम्पूर्ण प्रक्रिया में चेतनपुरुष उसीप्रकार द्रष्टा और साक्षी बना रहता है, क्योंकि उसके बिना प्रकृति की कोई भी प्रक्रिया आगे नहीं बढ़ सकती, यह द्वन्द्वात्मक संघर्ष भी नहीं चल सकता। इसप्रकार फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से भौतिक जगत में परमाणुओं का क्रमगठन होता है जो 'बहि-र्गत प्रक्रिया' (Objective process) द्वारा सम्पन्न होता है जिसमें सूक्ष्मजगत की तरंगों को कणों में परिवर्तित होना पड़ता है। लेकिन इसके विपरीत पर-माणुओं का क्रमविघटन अथवा जीवजगत की मृत्यु की प्रक्रिया 'आभ्यन्तरिक प्रक्रिया' (Subjective process) द्वारा सम्पन्न होती है जिसमें कणों को तरंगों में परिवर्तित होना पड़ता है, क्योंकि एक प्रक्रिया का सम्बन्ध भौतिक स्वरूप से है जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध प्रकाश एवं चुम्बकीय तरंगों से होता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया का सम्बन्ध परा-भौतिक स्वरूप (Astral world) से है जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध समय (Time) से होता है। इसप्रकार कण अपनी भौतिक परिधि में ही रह जाते हैं, जबकि तरंगें समय के विघटन द्वारा अपनी परा-भौतिक परिधि में चली जाती हैं और इस प्रक्रिया में चेतनपुरुष का वाहन होता है 'लिंग शरीर' (Astral body)। अतः इस नियम के अनुसार सूक्ष्मजगत की गुणा-त्मक तरंगें कणों के माध्यम से जब तक स्थूलजगत में प्रवेश नहीं करती हैं तब तक इस भौतिक जगत का कोई भी रचनात्मक स्वरूप नहीं बन सकता, क्योंकि प्रकृति की सम्पूर्ण प्रक्रिया एक सापेक्ष और द्वन्द्वात्मक प्रकिया है। अतः भौतिक-जगत में हमें जो प्रकाश, विकिरण, चुम्बकीय तरंगें तथा जीवजगत में जो गुणा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्मक प्रभाव एवं स्पन्दन दिखाई दे रहा है वह सूक्ष्मजगत की तरंगों द्वारा फोटोन कणों के माध्यम से ही प्रकट हो पाता है, क्योंकि अगर ऐसा न माना जाय तो भौतिक जगत पर यूक्लिड और न्यूटन की स्वतन्त्र रेखागणित का बोलबाला हो जायेगा जो कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के नियमों के प्रतिकूल है। इस नियम के अनुसार हमारा भौतिकजगत कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष जगत नहीं है, बल्कि उसका अस्तित्व कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत पर निर्भर करता है। जब कारण रहेगा तो कार्य भी अवश्य होगा और उस कार्य में द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद भी प्रकट होगा। अतः इलेक्ट्रान कण भी कोई स्वतन्त्र कण नहीं हैं, बल्कि फोटोन कणों के टक्कर से इलेक्ट्रान कण भी सक्रिय हो उठते हैं और भौतिकजगत की इस विषमता से परमाणुओं का सन्तुलन भी बिगड़ जाता है जिसके फलस्वरूप वहाँ भी वही द्वन्द्वात्मक संघर्ष छिड़ जाता है। इसी प्रक्रिया द्वारा सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में कारण ही कार्य हो जाता है और कार्य ही कारण, सूक्ष्म ही स्थूल बन जाता है और स्थूल ही सूक्ष्म, चेतन ही जड़ बन जाता है और जड़ ही चेतन। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर अथवा धनात्मक-आवेश एवं ऋणात्मक-आवेश का यह संघर्ष वस्तुतः कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत और कार्यस्वरूप स्थूलजगत का एक द्वन्द्वात्मक संघर्ष है जो प्रकृति और पुरुष दो परस्पर विरोधी शक्तियों के संयोग का स्वाभाविक परिणाम है।

इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि स्थूलजगत की प्रक्रिया 'भौतिक सार्वभौमिक मन' (Physical universal mind) द्वारा सम्पन्न हो रही है, जबकि सूक्ष्मजगत की प्रक्रिया 'सूक्ष्म सार्वभौमिक मन' (Astral universal mind) द्वारा सम्पन्न हो रही है, क्योंकि सापेक्ष प्रकृति के अन्तर्गत यह द्वन्द्वात्मक संघर्ष दो परस्पर विरोधी जगत और दो परस्पर विरोधी महाशक्तियों (Universal minds) के बिना आगे नहीं बढ़ सकता, कारण और कार्य की अटूट श्रृंखला नहीं जुड़ सकती। अगर यूक्लिड और न्यूटन की तरह इस ब्रह्माण्ड को सर्वथा स्वतन्त्र मान लिया जाय तो फिर द्वन्द्वात्मक संघर्ष का कोई प्रश्न ही नहीं है। अतः आज के विज्ञान के लिए यह उपयुक्त होगा कि वह अपनी स्थिर गाड़ी को गति देने के लिए महामुनि कपिल के परिपूर्ण सापेक्षवाद को स्वीकार कर ले।

मैक्सप्लैंक के 'क्वान्टमवाद' तथा आइन्स्टीन के 'फोटोनवाद' (Photo-electric effect) के आविष्कार का परिणाम यह हुआ कि विज्ञान में 'निश्चयवाद' (Determinism) के स्थान पर 'अनिश्चयवाद' (Indeterminacy) की लहर दौड़ गई। दूसरे शब्दों में यूक्लिड और न्यूटन का निरपेक्षतावादी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्धान्त अब कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद में परिवर्तित हो गया। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि अपने इन्द्रियज्ञान द्वारा आधुनिक विज्ञान ने जिन अपूर्व सिद्धान्तों की रचना की थी। वे सभी सिद्धान्त भ्रामक और सत्य से बहुत दूर थे। पदार्थ के मूलभूत कणों की अनिश्चित गतिशीलता से उत्पन्न अराजकता के इस साम्राज्य को ही विज्ञान में 'अनिश्चयवाद' का नियम कहते हैं। एक तरफ अनिश्चयवाद और दूसरी तरफ नियम यह विज्ञान के बुद्धिवादी कौशल का ही एक छोटा सा उदाहरण हैं अतः वर्त्तमान तथ्यों के प्रकाश मे कुछ वैज्ञानिक इस विषम स्थिति को एक अस्थायी पहलू (Temporary Phase) मानते हैं, जबकि कुछ अन्य वैज्ञानिक इसे प्रकृति का आधारभूत नियम कहते हैं, क्योंकि इस अनिश्चयवाद एवं निश्चयवाद की पहेली में उन्हें एक परम चेतनशक्ति (परमात्मा) का हाँथ दिखाई दे रहा है। इस सन्दर्भ में आइन्स्टीन तथा मैंक्स-प्लैंक जैसे महान वैज्ञानिकों का कहना है कि विज्ञानके लिए यह एक अस्थायी अवस्था है और भविष्य में 'निश्चयवाद' (Determinism) तथा 'कारण और कार्य' (Cause and effect) का अटूट नियम पुनः स्थापित होगा, जबकि दूसरी ओर एडिगंटन तथा श्रोडिंगर जैसे वैज्ञानिकों का विचार है कि निश्चयवाद तथा 'कारण और कार्य' का नियम विज्ञान में सर्वदा के लिए समाप्त हो चुका है। परन्तु सर जेम्स जीन्स जैसे भी कुछ वैज्ञानिक हैं जो यह मानते हैं कि 'तरंग सिद्धान्त' (Wave Theory) और 'कण सिद्धान्त' (Particle Theory) दोनों मूलरूप से एक ही हैं अथवा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जीन्स के इस कथन का दार्शनिक अर्थ यह होगा कि कारण और कार्य तथा सूक्ष्म और स्थूल भी दोनों मूलरूप से एक ही हैं और सांख्यदर्शन में इसी को 'सत्कार्यवाद' भी कहते हैं।

सांख्यकारिका (९) के अनुसार कार्य भी उत्पत्ति से पहले सत् होता है। असत् कार्य का कोई कारण नहीं है (असदकरणात्), क्योंकि कार्य सर्वदा सत् ही होता है। चूँकि कारण से पहले कार्य व्यक्त अवस्था में नहीं होता, इसलिए उसे साकार रूप देने के लिए ही कारण-व्यापार की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिए तिल में तेल को साकार रूप देने के लिए ही उसे पीसना पड़ता है, बृक्ष को साकार रूप देने के लिए बीज को जमीन में गाड़ना पड़ता हैं तथा जीव को भौतिक स्वरूप प्रदान करने लिए रज एवं वीर्य अथवा अण्डाणु एवं शुक्राणु का संयोग कराना पड़ता है। सांख्यदर्शन के अनुसार कारण और कार्य अभिन्न हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जैसा कारण होगा उसी के अनुरूप वैसा कार्य अथवा फल उत्पन्न होगा। यही कारण है कि मनुष्यसे मनुष्य पशु से पशु, कीट-पतंग से कीट-पतंग तथा वनस्पति से वनस्पति उत्पन्न होते हैं। जब कारण और कार्य अभिन्न हैं तो सांख्य की दृष्टि में दोनों सत् हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वास्तव में आइन्स्टीन और मैक्सप्लैंक तथा एडिंगटन और श्रोडिंगर के दोनों परस्पर विरोधी सिद्धान्त अपनी-अपनी जगह पर सही हैं, क्योंकि एक कथन से किसी परम चेतनशक्ति (परमात्मा) का बोध होता है, जबकि दूसरे कथन से मनुष्य की भौतिक सीमा का बोध होता है। लेकिन सर जेम्स जीन्स ने दोनों परस्पर विरोधी कथनों में यह कह कर सामंजस्य स्थापित किया है कि सापेक्ष प्रकृति की सभी शक्तियाँ मूलरूप से एक ही परम चेतनशक्ति के असंख्य नाम-रूप हैं और यही अद्वैतवेदान्त का सारतत्त्व भी है। विज्ञान में 'तरंग सिद्धान्त' और 'कण सिद्धान्त' को एक दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। जब दृश्यजगत में हम किसी जलप्रपात को देखते हैं अथवा जीवजगत या वनस्पतिजगत का निरीक्षण करते हैं तो मस्तिष्क में ऐसा चित्र उभर जाता है कि वस्तुजगत का क्रमगठन एक लय और सुर में अटूट तरंगों (waves) द्वारा हो रहा है, जबकि 'क्वान्टमवाद' और फोटोनवाद'से ऐसा कोई स्पष्ट मानसचित्र (Mental image) नहीं उभर पाता, क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ के मूलभूत कणों (फोटोन-इलेक्ट्रान) में भयंकर द्वन्द्वात्मक संघर्ष छिड़ा रहता है और उस संघर्ष के परिणामस्वरूप वे मूलभूतकण अनिश्चित दिशा में इधर-उधर तीव्र गति से भागते हुए दिखाई देते हैं, मानो वे सभी स्वतन्त्र कण हों जो अपनी स्वाधीन इच्छा से आवारा कणों की भाँति इधर-उधर उछल-कूद रहे हैं। इन कणों में विद्यमान अराजकता के इस साम्राज्य से कारण और कार्य की शृंखला टूट जाती है। लेकिन विज्ञान को यह देखकर आश्चर्य होता है कि कारणस्वरूप उस अराजकता के साम्राज्य से ही कार्यस्वरूप इस भौतिकजगत का एक निश्चित स्वरूप चारों ओर झलकने लगता है।

वास्तव में कण-तरंगों का यह खेल अथवा उनकी जटिल रेखागणित आज भी विज्ञान के लिए एक पहेली है, क्योंकि आज भी वैज्ञानिक अपनी इन्द्रियों तथा बुद्धिवादी कौशल द्वारा ही सत्य का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, 'देश-काल निमित्त' (space-time-causation) के अन्तर्गत ही वे सत्य अथवा निरपेक्ष शक्ति का निर्धारण करना चाहते हैं। यही कारण है कि वे प्रकृति के जितना ही भीतर घुसते हैं रहस्य उतना ही गहरा हो जाता है। परन्तु सार्वभौमिक मन-रूपी इलेक्ट्रानिक मशीन के लिए उन मूलभूत कणों एवं तरंगों की सटीक गणना करना, उनका संयोजन, नियमन एवं संचालन करना कोई समस्या नहीं है : जब हमें सार्वभौमिक मन (cosmic mind) का उच्च स्तर प्राप्त हो जायेगा तो हम भी उसीप्रकार कण-तरंगों की सटीक गणना कर सकेंगे। लेकिन निश्चय ही वह अवस्था इन्द्रियों तथा 'देश-काल' (space-time) से परे है और उस अवस्था को प्राप्त करने के लिए हमें योगविज्ञान का आश्रय लेना पड़ेगा। वैज्ञानिक इतिहास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पंर एक विहंगम सी दृष्टि डालते हुए सर जेम्स जीन्स अपनी पुस्तक (The Mysterious universe) में यह तर्क उपस्थित करते हैं कि विज्ञान में पहले यह माना जाता था कि सजीव और निर्जीव पदार्थ दो पृथक तत्त्वों (Elements) द्वारा निर्मित होते हैं, किन्तु बाद में जब 'कोशिका सिद्धान्त' (cell theory) की खोज की गई तो यह ज्ञात हुआ कि सजीव और निर्जीव दोनों पदार्थ एक ही रासायनिक परमाणुओं द्वारा निर्मित होते हैं और स्वाभाविक है कि उन पर भी एक ही प्राकृतिक नियम लागू होना चाहिये। लेकिन वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार वस्तुतः एकत्व का वह नियम स्वयं जड़ पदार्थ में नहीं है, बल्कि आत्मा या परमात्मा में है जो कण-तरंगों का आवरण धारण कर जगत के असंख्य नाम-रूपों में प्रकट हो उठता हैं। उसके असीम चुम्बकीय प्रभाव से जड़ भी चेतन सा प्रतीत होने लगता है तथा मन, बुद्धि एवं अहंकार आदि यान्त्रिक शक्तियाँ भी सजीव एवं सक्रिय हो उठती हैं। दूसरे शब्दों में उसी के प्रकाश से सब कुछ प्रकाशित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)।

अपनी वर्त्तमान विषम स्थिति में भी वैज्ञानिक बुद्धिवादी कौशल का परिचय देने में सदा तत्पर दिखाई देते हैं। जीन्स अपनी पुस्तक (The Mysterious universe) में आगे कहते हैं कि जब हम परमाणुओं तथा इलेक्ट्रान कणों का बड़े-बड़े समूहों के रूप में अध्ययन करते हैं तो 'निश्चयवाद' (Determinism) का एक औसत गणितीय नियम लागू हो जाता है जिसे पूर्ववर्त्ती भौतिकशास्त्र पकड़ नहीं पाया अथवा उस रहस्य को समझ नहीं पाया। उदाहरण के लिए अगर एक सिक्का हवा में उछाला जाय तो यह निश्चित नहीं है कि वह चित होगा या पट (Head or tail) लेकिन यह विचित्र बात है कि यदि लाखों टन सिक्के एक साथ हवा में उछाले जांय तो विज्ञान के अनुसार उनमें से आधे चित होंगे और आधे पट। इस प्रयोग को यदि सैकड़ों बार दुहराया जाय तो भी वही फल प्राप्त होगा। यहाँ जीन्स का तात्पर्य यह है कि कुछ थोड़े परमाणुओं पर अनिश्चयवाद का नियम लागू होता है, जबकि असंख्य परमाणुओं के समूह पर निश्चयवाद का गणितीय नियम लागू हो जाता हैं। जीन्स तथा कुछ अन्य वैज्ञानिकों का मत है कि बाह्य दृष्टि से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि यह गणितीय नियम स्वयं प्रकृति की एकरूपता का प्रमाण है जो कारण और कार्य के अटूट नियम द्वारा संचालित हो रहा है, लेकिन वस्तुतः ऐसी बात है नहीं, क्योंकि यह तथ्य शुद्ध रूप से एक 'गणितीय सम्भावना का नियम' (Mathematical laws of chance) है। इसप्रकार विज्ञान में इस मायावी निश्चयवाद के सिद्धान्त की घुसपैठ हो गई है और इस आधार पर नवीन भौतिकशास्त्र द्वारा ब्रह्माण्ड का जो स्वरूप निश्चित होता है उसके अन्तर्गत 'कारण ओर कार्य' के कठोर नियम के लिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई स्थान नहीं रह गया है। जीन्स के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि हम तब तक किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते जब तक कि हम समय (Time) की वास्तविक प्रकृति को नहीं समझ लेते और सर्वदा से समय ही प्रकृति की वह पहेली है जो हमारे विचारों को अवरुद्ध कर देती हैं। अगर हम समय की पहेली को नहीं समझ सकते तो जीन्स के अनुसार प्रकृति में 'निश्चयवाद' (Determinism) और 'स्वाधीन इच्छा' (Free will) की पहेली को भी हम नहीं समझ सकते। अतः जीन्स कहते हैं कि यदि हम भौतिकजगत की मूलभूत प्रकृति को समझना चाहते हैं तो हमें सूक्ष्मजगत के भीतर जाना पड़ेगा, क्योंकि इसी जगत में समस्त ब्रह्माण्ड का रहस्य छिपा हुआ है और हम उस जगत को तरंगों (waves) के रूप में पाते हैं। जीन्स का विचार है कि हम एक ऐसे ब्रह्माण्ड के निवासी हैं तो तरंगों द्वारा निर्मित है तथा इस जगत में तरंगों के सिवाय और कुछ नहीं है।

यद्यपि जीन्स का यह कथन सही है कि यह जगत तरंगों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है, लेकिन ये तरंगें स्वयं इस भौतिक जगत की अपनी नहीं हैं, बल्कि उनका श्रोत कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) में है जो कारण और कार्य श्रृंखला से जुड़ी हुई इस भौतिकजगत को भी तरंगमय बना देती है और सापेक्षवाद के वृत्त (Circle) को पूर्ण कर फिर अपने विन्दु में ही मिल जाती हैं। यह वृत्तात्मक प्रक्रिया फोटोन और इलेक्ट्रान कणों के टक्कर से शुरू होती है और चेतना के संयोग से उस विन्दु से ही समय तरंगित होने लगता है, क्योंकि साथ ही साथ सार्वभौमिक मन द्वारा कण-तरंगों का क्रमगठन भी होने लगता है जो क्रमशः निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं के रूप में साकार होता है। लेकिन इस क्रमगठन के साथ ही छाया की तरह क्रमविघटन भी लगा रहता है और भौतिक परिधि के अपने अन्तिम विन्दु पर जब समय का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तो उस वस्तु का क्रमविघटन भी पूर्ण हो जाता है। इसप्रकार सापेक्षवाद की इस वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) में वह तरंग जिस विन्दु से चलती है समय का अपना चक्र पूर्ण कर फिर अपने विन्दु में ही वापस लौट आती है। अतः भौतिकजगत में समय केवल कणों का ही क्रमगठन करता है, तरंगों का नहीं, लेकिन कणों के द्वन्द्वात्मक संघर्ष से ही सूक्ष्मजगत की असंख्य तरंगें अपना वृत्त पूर्ण कर पाती हैं। इसप्रकार तरंग–कण–तरंग की यह वृतात्मक प्रक्रिया 'कारण और कार्य' श्रृंखला में निरन्तर चलती रहती है जो प्रकृति की साम्यावस्था में ही समाप्त होती है।

क्वाण्टमवाद और फोटोनवाद का यह सिद्धान्त नियन्त्रित प्रयोगों पर आधारित है। जब धातु के किसी प्लेट पर शुद्ध बैंगनी किरणें पड़ती हैं तो उस प्लेट से इलेक्ट्रान कणों का एक झरना (Shower) सा फूट पड़ता है। लेकिन जब उसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्लेट पर पीला या लाल जैसी निम्न आवृति (Lower Frequency) की किरणें पड़ती हैं तो भी इलेक्ट्रान कण बाहर निकलते हैं, किन्तु उनमें अपेक्षाकृत कम गतिशीलता होती है। इस क्रिया में इलेक्ट्रान कणों का निकलना प्रकाश के रंग पर निर्भर करता है, न कि उसकी तीव्रता पर। अगर प्रकाश के श्रोत को दूर भी रख दिया जाय तथा रोशनी मद्धिम भी हो जाय तो भी यद्यपि इलेक्ट्रान कणों की संख्या कम होंगी, फिर भी उनकी गति में कोई अन्तर नहीं आयेगा। अगर प्रकाश अत्यन्त कम होकर बुझने की स्थिति में आ जाय तो भी वह क्रिया तत्काल होती है। इस सम्बन्ध में फोटोनवाद के संस्थापक आइन्स्टीन का कहना है कि इस विलक्षण क्रिया का कारण यह है कि प्रकाश के सभी रंग-रूप पृथक-पृथक कणों अथवा ऊर्जा के सूक्ष्म दानों (Grains) द्वारा निर्मित होते हैं जिन्हें उन्होंने 'फोटोन' (Photons) नाम दिया और इन फोटोन कणों की जब इलेक्ट्रान कणों से टक्कर होती है तो ऐसा प्रतीत होता है, जैसे दो बिलियर्ड गेदों के बीच टक्कर हो रही हो। आइन्स्टीन ने यह भी कहा कि बैंगनी, परा-बैंगनी (Ultra-Violet) आदि उच्च आवृत्ति (High Frequency) विकिरण द्वारा उत्पन्न फोटोन कणों में अधिक ऊर्जा होती है और उसी ऊर्जा के अनुपात में इलेक्ट्रान कणों की तीव्रता निर्भर करती है। इसी नियम पर टेलीविजन, कम्प्यूटर, राडार आदि इलेक्ट्रानिक यन्त्रों का सिद्धान्त निर्भर करता है। आइन्स्टीन के इस सिद्धान्त से स्पष्ट होता है कि इलेक्ट्रान स्वतन्त्र कण नहीं है, बल्कि फोटोन कणों के टक्कर से ही इलेक्ट्रान कण सक्रिय होते हैं और भौतिजगत में कण-तरंगों की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

परन्तु दूसरी तरफ वैज्ञानिक नियन्त्रित प्रयोगों द्वारा 'तरंग सिद्धान्त' को भी प्रमाणित करते हैं। जब किसी पतले तार या बाल को प्रकाश के श्रोत तथा पर्दा के बीच में लाया जाता है तो उस तार या बाल की छाया नहीं पड़ती, क्योंकि प्रकाश किरणें झुककर उस खाली जगह को उसीप्रकार घेर लेती हैं जिस-प्रकार जल की धारा तरंगों के रूप में किसी छोटी चट्टान को घेर लेती है। इसी-प्रकार अगर प्रकाश किरणों को किसी तवे (Disc) के गोल छेद (Aperture) से गुजारा जाय तो पर्दे पर तवे का स्पष्ट छायाचित्र दृष्टिगोचर होगा। लेकिन अगर छिद्र सूई की नोक के बराबर हो तो पर्दे पर तवा का रूप प्रकाश और अन्धकार की धारियों से युक्त मुड़ा हुआ सा प्रतीत होगा। विज्ञान में इस घटनाचित्र (Phenomenon) को 'बिखराव' (Diffraction) के नाम से जाना जाता है और यह क्रिया उसीप्रकार होती है जिसप्रकार कोई नदी संकीर्ण मुहाने पर झुककर फैल जाती है। अगर एक छिद्र की जगह अगल-बगल बिल्कुल सटे हुए दो छिद्र कर दिए जाँय तो प्रकाश की किरणें समानान्तर फीतों (Parallel

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

stripes) के समान एक में मिल जाती हैं और यह क्रिया उसीप्रकार होती है जिसप्रकार नदी की दो धाराएँ एक में मिल जाती हैं। प्रकाश की यह लुका-छिपी विज्ञान के अनुसार 'तरंग सिद्धान्त' के अनुरूप होती है। अगर प्रकाश का ढाँचा कणों के रूप में माना जाय तो वस्तुजगत में घटनाचित्रों की कल्पना नहीं हो सकती। इन प्रयोगों से यह स्पष्ट होता है कि प्रकाश की किरणें तरंगों (Waves) द्वारा निर्मित हैं।

कण और तरंगों की इस पहेली पर अपना विचार व्यक्त करते हुए फ्रांसीसी भौतिकशास्त्री लुई डी ब्रोगली ने १९२५ ई० में यह सुझाव दिया था कि पदार्थ-ऊर्जा प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न घटनाचित्रों को हम तभी अच्छी तरह समझ सकते हैं जबकि इलेक्ट्रान कणों को पृथक-पृथक स्वतन्त्र कणों के रूप में न देखकर समस्त प्रक्रिया को तरंगों की एक प्रणाली समझा जाय। ब्रोगली के इस सिद्धान्त के तुरन्त बाद वियना के एक विक्यात भौतिकशास्त्री श्रोडिंगर ने भी इसी सिद्धान्त को गणित की भाषा में प्रस्तुत किया है जो विज्ञान में 'तरंग यान्त्रिकी' (Wave mechanics) के नाम से प्रसिद्ध है। श्रोडिंगर के इस सिद्धान्त की पुष्टि १९२७ ई० में दो अमेरिकी वैज्ञानिक डेविसों तथा जर्मर द्वारा भी की गई। इन दोनों वैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया कि वस्तुतः इलेक्ट्रान कणों का प्रदर्शन तरंगमय है। लेकिन कुछ अन्य प्रयोगों द्वारा यह भी ज्ञात हुआ कि परमाणुओं तथा अणुओं (Molecules) में भी तरंगमय प्रवृत्ति विद्यमान है।

सुप्रसिद्ध जर्मन भौतिकशास्त्री हेसेनबर्ग तथा बार्न द्वारा किये गये गणितीय प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि-कण और तरंग दोनों सिद्धान्त अपनी-अपनी जगह पर सही हैं। उनसे पता चलता है कि इस सन्दर्भ में पृथक-पृथक स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों की कल्पना निरर्थक है। इन कणों का जब एक समूह बनता है तो 'सम्भावना का नियम' (Law of Probability) लागू हो जाता है और इससे निष्कर्ष में कोई फर्क नहीं पड़ता कि व्यक्तिगत रूप से इलेक्ट्रान का स्वरूप कणों के रूप में द्रदर्शित होता है अथवा तरंगों के रूप में। दूसरे शब्दों में हम उनकी कल्पना चाहे कणों के रूप में करें अथवा तरंगों के रूप में दोनों एक ही बात हैं। इसप्रकार अब पदार्थ का तरंगमय रूप सम्भावना के तरंग में परिवर्त्तित हो गया है। यद्यपि क्वान्टमवाद के सिद्धान्त द्वारा पदार्थ और विकिरण का गणितीय सम्बन्ध बहुत ही उपयुक्त ढ़ंग से स्पष्ट होता है, किन्तु दोनों की वास्तविक प्रकृति के सम्बन्ध में एक बड़ी उलझन भी उत्पन्न कर देता है जिसके फलस्वरूप प्रकृति के घटनाचित्रों में 'अनिश्चयवाद का समावेश हो जाता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि यह अनिश्चयवाद स्वयं विज्ञान की यान्त्रिक त्रुटियों तथा अपूर्णता द्वारा नहीं उत्पन्न होता, बल्कि स्वयं उन वस्तुओं की आन्तरिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकृति द्वारा उत्पन्न होता हैं। इस तथ्य को हेसेनबर्ग ने १९२७ ई० में अपने एक भौतिक नियम में प्रस्तुत किया था जो विज्ञान में 'अनिश्चयवाद का सिद्धान्त' (Principle of uncertainty) के नाम से विख्यात है। अपने सिद्धान्त को प्रमाणित करने के लिए हेसेनवर्ग ने एक काल्पनिक प्रयोग का चित्रण प्रस्तुत किया है जिसमें एक भौतिकशास्त्री अत्यन्त शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी यन्त्र (Super Microscope) द्वारा एक गतिशील इलेक्ट्रान कण की गति एवं दिशा का निरीक्षण कर रहा है। इस प्रयोग द्वारा यह स्पष्ट होता है कि जब तक वह भौतिकशास्त्री किसी एक या कुछ इलेक्ट्रान कणों की निश्चित गतिशीलता का बोध करना चाहेगा तो उसे निराशा ही हाँथ लगेगी और जब उन्हीं कणों का अत्यधिक संख्या में अध्ययन किया जायेगा तो उसे एक निश्चित घटनाचित्र का बोध होगा और उस पर 'सम्भावना का नियम'(Law of Probability) तत्काल लागू हो जायेगा। हेसेनबर्ग के अनुसार व्यक्तिरूप से किसी इलेक्ट्रान कण का किसीप्रकार का कोई निर्धारण उसीप्रकार एक मानसिक भ्रम है जिसप्रकार प्रेम, घृणा, स्वाद, गंध आदि गुणात्मक तत्वों के सम्बन्ध में किसीप्रकार का कोई निर्धारण करना। इस गणितीय नियम के अनुसार इलेक्ट्रान कणों की संख्या जितनी ही कम होगी अनिश्चयवाद का नियम उतना ही अधिक होगा और उन कणों की संख्या जितनी हीं अधिक होगी 'सम्भावना का नियम' उतना ही अधिक होता जायेगा।

अतः हेसेनबर्ग के अनुसार इस अनिश्चयवाद का कारण विज्ञान तथा उससे सम्बद्ध किसी यान्त्रिक उपकरण की त्रुटि एवं अपूर्णता नहीं है, बल्कि यह स्वयं प्रकृति की ओर से एक 'सीमा-अवरोध' (Ultimate barrier) है जो हमारा मार्ग अवरुद्ध कर देता है। हेसेनबर्ग कहते हैं कि अगर उस चमत्कारी सूक्ष्मदर्शी यन्त्र को अरबों गुना शक्तिशाली बनाकर किसी इलेक्ट्रान कण को देख भी लिया जाय तो समस्या का समाधान नहीं हो सकता, क्योंकि एक इलेक्ट्रान कण किसी प्रकाश-तरंग से भी छोटा होता है और एक्स-रे किरण जैसे छोटे तरंग-दैर्घ्य (Wavelength) द्वारा भी उसे नहीं देखा जा सकता। यद्यपि इलेक्ट्रान कणों को सिर्फ रेडियम की 'गामां-किरण' (Gamma-rays) द्वारा ही देखा जा सकता है, लेकिन इस सन्दर्भ में समस्या यह है कि इस प्रक्रिया में प्रकाश के फोटोन कणों तथा इलेक्ट्रान कणों में परस्पर टक्कर होने के फलस्वरूप यह क्रिया भी सफल नहीं हो पायेगी इसप्रकार हेसेनबर्ग का काल्पनिक प्रयोग तथा उनका सुपर माइक्रोस्कोप भी उस सूक्ष्मजगत में निरर्थक हो जाता है। लेकिन विज्ञान के अन्य सिद्धान्तों की तरह उनका 'सम्भावना का नियम' भी एक बुद्धिवादी कौशल के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। इस नियम की न तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकृति से संगति बैठती है और न विज्ञान से, बल्कि एक तरह से यूक्लिड ई स्वतन्त्र रेखागणित को थोपने का प्रयास है।

अपने सिद्धान्त में हेसेनबर्ग प्रकृति के जिस 'सीमा-अवरोध' (Ultima barrier) की ओर संकेत कर रहे हैं वस्तुतः वही हमारी भौतिक परिधि जिसका उलंघन केवल 'आभ्यन्तरिक प्रक्रिया' (Subjective process) द्वा ही हो सकता है जो या तो मृत्यु की प्रक्रिया द्वारा स्वाभाविक रूप से होता अथवा योगी की समाधि अवस्था में हो पाता है जहाँ 'देश-काल' (Spac time) का कोई अस्तित्व नहीं होता, लेकिन कारण और कार्य की शृंखल विद्यमान होती है। यह शृंखला केवल निर्विकल्प समाधि में ही टूट पा है। इसीलिए मृत्यु को भी योगविज्ञान में 'महासमाधि' कहा गया है, क्यों यह प्रक्रिया भौतिक प्रक्रिया से भिन्न होती है। भौतिक प्रक्रिया एक बहिरं प्रक्रिया (Objective proces) है जहाँ हम छायाचित्रों के दर्शन करते है जबकि 'आभ्यन्तरिक प्रक्रिया' (Subjective process) सत्य को जानने एक वास्तविक प्रक्रिया है जहाँ हमें यथार्थ स्वरूप का दर्शन होता है।

आधुनिक विज्ञान में जिस भौतिकशक्ति का सम्बन्ध 'आणविक ऊर्जा' (Ato mic energy) से हैं वह आइन्स्टीन के अत्यन्त महत्वपूर्ण समीकरण (E=Mc पर आधारित है। यह समीकरण विज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण समीकरण (Equ ation) माना जाता है। इसी समीकरण पर एटम तथा हाइड्रोजन बम ए आणविक भट्टियों (Atomic reactors) का निर्माण किया गया है जिससे ए तरफ तो उद्योग-धन्धों के लिए असीम ऊर्जा प्राप्त हो सकती है, लेकिन दूस तरफ यह भौतिकशक्ति संसार में प्रलय भी उपस्थित कर सकती है। यह व शक्ति है जिसका प्रयोग द्वितीय महायुद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी पर कि गया था। यही शक्ति सूर्य एवं ताराओं में अरबों वर्षों से प्रवाहित हो रही है यद्यपि महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने एटमबम के निर्माण का घोर विरोध कि था, लेकिन बुद्धिवाद का प्रयोग करने वाले राजनीति के खिलाड़ियों पर इस कोई प्रभाव नहीं पड़ा और अन्ततः एनरिको फर्मी (१९०१–१९५४) तथा अमे रिकी वैज्ञानिक राबर्ट आपेनहाइमर (१९०४–१९६७) के अनुसन्धान द्वारा १ जुलाई १९४५ ई० में एटमबम का सफल परीक्षण कर ही लिया गया।

भौतिकविज्ञान में आइन्स्टीन के इस महत्वपूर्ण समीकरण ($E=Mc^2$) 'द्रव्यमान का सापेक्षवाद' (Relativity of Mass) कहते हैं। अपने इस सिद्धा में आइन्स्टीन ने जे० जे० थामसन तथा मैक्सप्लैंक के 'क्वाण्टम' नियमों अत्यन्त व्यापक रूप प्रदान किया। आइन्स्टीन के इस सिद्धान्त का सारत है—"पदार्थ ही ऊर्जा है और ऊर्जा ही पदार्थ।" अगर इसी समीकरण अद्वैतवेदान्त की भाषा में व्यक्त किया जाय तो कहा जा सकता है, "ब्रह्म है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही ब्रह्म।" इसी समीकरण को रामकृष्ण परमहंस ने भक्तों की भाषा में व्यक्त किया है, "ब्रह्म की काली (शक्ति या प्रकृति) है और काली ही ब्रह्म।"

अतः इस सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ और ऊर्जा में जो भेद दिखाई दे रहा है वह केवल अवस्था का भेद है। दूसरे शब्दों में यह भेद हमारे सीमित इन्द्रिय-ज्ञान का प्रत्यक्ष परिणाम है, केवल आँखों का एक भ्रम है और जब हम इन्द्रियों से परे हो जायेंगे तो यह सापेक्ष भ्रम भी समाप्त हो जायेगा। महाभारत के युद्ध में यही सापेक्ष भ्रम महावीर अर्जुन को भी हो गया था जिसका समूल विनाश करने के लिए भगवान श्रीकृष्ण को गीता का उपदेश देना पड़ा। अगर हम भी अपना सापेक्ष भ्रम दूर करना चाहते हैं तो इसके लिए स्वयं कृष्ण को ढूढ़ने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि वह दिव्यस्वरूप गीता के रूप में साक्षात् विराजमान है, क्योंकि इस समीकरण के अनुसार कृष्ण ही शब्द है और शब्द ही कृष्ण। केवल उन शब्दों का जाप करना है, उन शब्दों द्वारा अपने हृदय के तारों को झंकृत करना है। लेकिन यह सापेक्ष भ्रम जल्दी दूर नहीं होता है, क्योंकि उसके साथ अहंकार (Ego) जुड़ा हुआ होता है। अर्जुन के साथ भी ऐसा ही हुआ था और जब भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें दिव्य दृष्टि (दिव्यम् चक्षुः) प्रदान कर अपने अद्भुत विश्वरूप का दर्शन कराया तो उनका सापेक्ष भ्रम दूर हो गया। उस विश्वरूप का सजीव चित्रण संजय द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो परम पवित्र ग्रन्थ गीता (११।१०—५५) में संचित है। परब्रह्म परमेश्वर के दिव्य-स्वरूप का ऐसा अनुपम चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है—

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम्।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम्॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा॥

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसंघान्।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्॥
अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम्।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् ।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥
त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
त्वमव्यय शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥
अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥

आइन्स्टीन के इस समीकरण ($E = Mc^2$) के अनुसार जब कोई पदा॰ या वस्तु प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) प्राप्त कर लेती तो वह वस्तु ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है, क्योंकि उस गतिशील अवस्था पदार्थ का द्रव्यमान (Mass) विघटित होकर, ऊर्जा, प्रकाश, विकिरण ए॰ चुम्बकीय तरंगों में परिवर्त्तित हो जाता है । इसप्रकार इस प्रक्रिया द्वारा वस्तु नाम-रूप बदल कर ऊर्जा या प्रकाश हो जाता हैं । इसके विपरीत जब ऊर्जा सम॰ के घनत्व से केन्द्रीभूत होकर जम जाती है अथवा गतिशील अवस्था से स्थि॰ हो जाती है अथवा सूक्ष्मरूप से स्थूलरूप ग्रहण कर लेती है और जब उस॰ द्रव्यमान (Mass) निश्चित रूप से मापा जा सकता है तो वह पदार्थ या वस्तु क॰ जाती है । जब पदार्थ ऊर्जा में बदलता है तो उसके परमाणु अत्यधिक गतिशी॰ हो उठते हैं, लेकिन जब ऊर्जा समय के प्रभाव से किसी वस्तु में परिवर्त्तित हों॰ लगती है तो उस वस्तु के परमाणुओं का क्रमगठन (Integration) होने लग॰ है और उस वस्तु में त्रिविध गुण-विकारों का रंग-रूप चढ़ने लगता है । इस॰ अर्थ यह हुआ कि एक अवस्था में हमें त्रिविध गुण-विकार स्थूल जगत में दृष्टि॰ गोचर होते हैं, जबकि दूसरी अवस्था में वे त्रिविध गुण-विकार हमारी आँखों॰ ओझल होकर सूक्ष्मजगत (Astral world) में चले जाते हैं । इससे यह त॰ प्रमाणित होता है कि सांख्य दर्शन द्वारा प्रतिपादित त्रिविध गुण-विकारों॰ आगमन कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत से होता है जो स्थूलजगत में अपना कार्य सम्प॰ कर सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित का अनुसरण करते हुए फिर उ॰ कारणजगत में लीन हो जाते हैं । इसप्रकार कण परस्पर कणों में मिल जा॰ हैं और सूक्ष्मजगत की तरंगें परस्पर तरंगों में समाहित हो जाती हैं । इ॰ प्रक्रिया द्वारा देश, काल, गति एवं पदार्थ का ढ़ाचा तथा आयाम (Dimensio॰ भी निर्मित होता है जिसे हम भौतिकजगत कहते हैं और जब यह ढ़ाँचा त॰ आयाम लुप्त हो जाता है तो हम उसे सूक्ष्मजगत या कारणजगत (Astra॰ world) कहते हैं, क्योंकि चेतन पुरुष (आत्मा) अपने सूक्ष्मशरीर (Ast॰ body) के वाहन में इस कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत में भी विद्यमान रहता है इसी को महामुनि कपिल का सापेक्षवाद कहते हैं जिसका गहन अध्ययन अब अ॰

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के वैज्ञानिकों को करना पड़ेगा। अतः इस प्रक्रिया में चेतनपुरुष के समक्ष बहिर्गत प्रक्रिया द्वारा समय का गठन होता है और फिर उसी चेतनपुरुष की अध्यक्षता में आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective Process) द्वारा समय का विघटन होकर वही स्थूलजगत फिर सूक्ष्मजगत में परिवर्त्तित हो जाता है, क्योंकि कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद में कारण ही कार्य है और कार्य ही कारण, सूक्ष्मजगत ही स्थूलजगत है और स्थूलजगत ही सूक्ष्मजगत।

आइन्स्टीन के इस समीकरण ($E = Mc^2$) से प्रमाणित होता है कि किसी पदार्थ की गति (Velocity) के अनुरूप ही उस पदार्थ के द्रव्यमान में बृद्धि होती है, क्योंकि गति एक प्रकार की ऊर्जा (Kinetic energy) है। इस-प्रकार गतिशील पदार्थ का बढ़ा हुआ द्रव्यमान उस पदार्थ के बढ़े हुए उर्जा के रूप में ही वर्त्तमान रहता है। दूसरे शब्दों में ऊर्जा में उस वस्तु का बढ़ा हुआ द्रव्यमान होता है तथा द्रव्यमान मे ऊर्जा होती है और यदि सम्पूर्ण उर्जा को तौल दिया जाय तो वह उस पदार्थ के द्रव्यमान के बराबर होगी, क्योंकि ऊर्जा और पदार्थ का द्रव्यमान परमाणुओं की संख्या पर निर्भर है जो स्थूल और सूक्ष्म दोनों अवस्थाओं में समान है। इस आधार पर वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि इस ब्रह्माण्ड में परमाणुओं की संख्या निश्चित है और इसीलिए आज का भौतिकविज्ञान न्यूटन की भाँति एक यान्त्रिक विषय (Mechanistic Theory) नहीं है, बल्कि एक गणित का विषय बन गया है। रामकृष्ण परमहंस कहा करते थे कि मुझे तो आम खाने से मतलब है, पेड़ पर कितनी हजार डालियाँ हैं, कितने करोड़ पत्ते हैं इससे मेरा कोई प्रयोजन नहीं। आज का विज्ञान परमाणुओं के रूप में इन पत्तों की ही गणना कर रहा है जिसे बुद्धि की कसरत कहा जा सकता है।

इस असामान्य प्रक्रिया द्वारा असंख्य परमाणुओं का स्वतः विखंडन होने लगता है जिसे 'शृंखला प्रतिक्रिया' (Chain reaction) कहते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा जो असीम ऊर्जा उत्पन्न होती है उसका एक अनुमान लिन्कन बार्नेट ने अपनी पुस्तक (The universe and Dr. Einstein) में प्रस्तुत किया है और उस समीकरण[1] की भी व्याख्या की है। अगर इस प्रक्रिया (Chain reaction-) द्वारा लगभग एक किलो कोयले को परमाणुऊर्जा में परिवर्त्तित कर दिया जाय तो उससे करोड़ों किलोवाट घन्टे विद्युत उत्पन्न हो सकती हैं जिससे हजारों कल-कारखानें महीनों तक चलाये जा सकते हैं। इस सिद्धान्त द्वारा ही सूर्य एवं

1. The energy contained in any Particle of matter is equal to the mass of that body (in grams) multiplied by the Square of the velocity of light (in centimeters per second)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तारामण्डलों में असीम ऊर्जा श्रोत का रहस्य ज्ञात हो सका। परमाणु-ऊर्जा में यह प्रक्रिया आकर्षण और विकर्षण नियमों के अनुसार होती है जिसमें एक तरफ असंख्य परमाणु केन्द्रीय नाभिक (Central nucleus) से दूर भागते हैं तो दूसरी ओर असंख्य परमाणु उनकी जगह लेने के लिए तत्काल दौड़ पड़ते हैं। भौतिकशास्त्री कहते हैं कि जब परमाणु की केन्द्रीय नाभिक में यह द्वन्द्वात्मक संघर्ष आरम्भ होता है तथा धनात्मक प्रोटोन कण भी तटस्थ न्यूट्रोन नामक कण में बदल जाते हैं जिसके फलस्वरूप 'पोजीट्रोन' (Positron) तथा 'न्यूट्रिनो' (Neutrino) नामक उप-कण भी उत्पन्न होते रहते हैं। यही क्रिया सूर्य एवं ताराओं में भी होती है (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। सूर्य की इस प्रक्रिया को 'कार्वन वृत्त' (Carbon cycle) कहते हैं जिसकी खोज एच० बीथ तथा सी० वीजसैकर द्वारा की गई। यह प्रक्रिया एक 'बन्द वृत्ताकार श्रृंखला' (Closed circular chain) है जो घूमती हुई बारबार अपने विन्दु पर पहुँच जाती है। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध भौतिकशास्त्री फ्रेड ह्वायल कहते हैं (Frontiers of Astronomy) कि एक सेकन्ड में सूर्य जितनी ऊर्जा उत्पन्न करता है वह मानव इतिहास के सम्पूर्ण ऊर्जा उपभोग से कहीं अधिक है। भौतिकजगत और सूक्ष्म परमाणुजगत की व्याख्या करते हुए फ्रेड ह्वायल आगे कहते हैं कि परमाणु इतना सूक्ष्म होते हैं कि अगर दस अरब परमाणुओं को एक के ऊपर एक सीधी रेखा में विछा दिया जाय तो उनकी दूरी एक मनुष्य की ऊँचाई के बराबर होगी। ह्वायल के अनुसार एक वयस्क मनुष्य में लगभग ७,०००,००० ०००,०००,०००,०००,०००,०००,००० परमाणु होते हैं। इसके अतिरिक्त परमाणु की नाभिक (Nucleus) उससे भी अधिक सूक्ष्म होती है जो एक परमाणु के अन्दर केवल दस खरबवें भाग के बराबर जगह घेरती है और अब इसी को उप-परमाणु जगत (Sub-atomic world) कहा जाता है। भौतिक विज्ञान की भाषा में यह तो है अति सूक्ष्मजगत (Ultra-small), लेकिन अति विशाल (Ultra-large) की संख्या अकल्पनीय है—१०,०००,०००,००० ०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००, इसप्रकार ह्वायल की दृष्टि में विज्ञान के समक्ष आज प्रकृति के रहस्यों की कितनी बड़ी समस्या है! परन्तु ह्वायल की यह जटिल समस्या जेराल्ड फेनवर्ग के 'प्रतिपदार्थ' (Anti-matter) तथा कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद से अब और अधिक बढ़ जायेगी।

नवीन अनुसन्धानों के फलस्वरूप जब विज्ञान की गाड़ी कुछ आगे बढ़ी तो वैज्ञानिकों ने परमाणुजगत से परे उप-परमाणु जगत को ही अन्तिम जगत मान लिया और उस जगत की मूलभूत ईकाई इलेक्ट्रान कण को ही एक निरपे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्ति मान लिया तथा उस कण पर भी यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित को उसीप्रकार लागू कर दिया, क्योंकि अब इसी बुद्धिवादी कौशल द्वारा भौतिकवाद की रक्षा हो सकती हैं। यह आधुनिक भौतिकवाद सोने की लंका के समान है जिसकी सुरक्षा किसी न किसी व्यूहरचना द्वारा ही हो सकती हैं। लेकिन जेराल्ड फेनबर्ग के 'प्रतिपदार्थ' द्वारा अब इस पर भी तुषारापात हो गया।

सन् १९६७ ई० में न्यूयार्क के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर जेराल्ड फेनबर्ग ने एक वैज्ञानिक पत्रिका (Physical-Review) में अपना सुप्रसिद्ध 'टेचयान सिद्धान्त' (Theory of Tachyons) प्रकाशित कराया जिसमें (Tachyons), ट्रेडयान (Tradyons) और लक्सयान (Luxyons) आदि कणों का समावेश है। यद्यपि फेनबर्ग का यह सिद्धान्त नियन्त्रित प्रयोगों द्वारा सिद्ध नहीं है, लेकिन गणित द्वारा प्रमाणित है। अभी इस विषय पर आगे अनुसन्धान चल रहा है और इस सिद्धान्त में उपयुक्त वर्गीकरण होना शेष है। आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार इस भौतिकजगत में किसी वस्तु का द्रव्यमान (Mass) उस वस्तु की गति (Velocity) के अनुपात में बढ़ता जाता है। चूँकि द्रव्यमान ऊर्जा का ही एक रूप है, इसलिए जब उसे प्रकाश की गति प्राप्त हो जाती है तो इस क्रिया द्वारा अपार शक्ति (Atomic energy) उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में द्रव्यमान (Mass) में सुप्त या संचित अपार ऊर्जा होती हैं जो वस्तु की गति के अनुपात में बढ़ती जाती है और यह क्रिया परमाणुओं के स्वचालित विखंडन (Fission) द्वारा सम्पन्न होती है। इसके विपरीत जेराल्ड फेनबर्ग के सिद्धान्त के अनुसार आइन्स्टीन के समीकरण ($E=Mc^2$) का एक प्रतिरूप (counterpart) भी होता है जिसकी निम्नतम गति प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) के बराबर होती है और अधिकतम गति प्रकाश की गति से अरबों गुना अधिक होती है। उस परा-भौतिक शक्ति पर समय का कोई व्यवधान नहीं हो सकता, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार प्रकाश की गति पर समय की गति बन्द हो जाती हैं। फेनबर्ग के अनुसार इस भौतिकजगत के विपरीत उस परा-भौतिकजगत में कणों की गति जितनी बढ़ती जायेगी उनके द्रव्यमान और ऊर्जा में उतना ही ह्रास (Loss) होता जायेगा जो आइन्स्टीन के सिद्धान्तों के प्रतिकूल है, क्योंकि वह जगत भी सापेक्षवाद के अनुसार हमारे भौतिक जगत के प्रतिकूल है। इस सिद्धान्त से स्पष्ट है कि उस जगत में 'देश-काल' (Space-time) का प्रभाव भी प्रतिकूल होगा। उस जगत में समय की गति उल्टी होगी जिसमें फल (effect) पहले होगा और कारण (cause) बाद में। यह कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा भी स्वयंसिद्ध है, क्योंकि वृत्तात्मक रेखागणित में कारण ही कार्य है और कार्य ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कारण । भौतिकजगत में पदार्थ की प्रकृति नीचे से ऊपर की ओर है, जबकि सूक्ष्मजगत में सब कुछ ऊपर से नीचे की ओर है।

जेंराल्ड फेनबर्ग अपने सिद्धान्त में जिस सूक्ष्मजगत (Astral world) की ओर संकेत करते हैं उसका विशद विवेचन सांख्य, योगदर्शन तथा पुराणों द्वारा प्राप्त होता है। लेकिन वह जगत कण नहीं, बल्कि तरंगों द्वारा निर्मित है। जिस कड़ी द्वारा स्थूल और सूक्ष्म दोनों जगत जुड़े हुए हैं उसे सांख्य और योगदर्शन में लिंग शरीर या सूक्ष्मशरीर (Astral body) कहते हैं। सांख्यकारिका (३१, ४४) के अनुसार पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं पाँच कर्मेन्द्रियाँ (नेत्र, घ्राण, श्रोत्र, रसना, त्वचा तथा वाक, हस्त, पाद' उपस्थ और गुदा) तथा मन, बुद्धि, अहंकार ये कारणस्वरूप तेरह तत्व (करण) परस्पर मिलकर (परस्पराकूतहेतुकांवृत्तिम्) जीव के शरीर में अपने-अपने कर्म-व्यापार को स्वतन्त्ररूप से स्वयं करते हैं जिसके फलस्वरूप चेतनपुरुष का भोग-विलास सम्बन्धी कार्य सम्पन्न होता है। इन यान्त्रिक शक्तियों का कार्य पुरुष के भोग-विलास का साधना जुटाना है। यद्यपि ये प्राकृतिक शक्तियाँ अपना भिन्न-भिन्न कार्य करती हुई परस्पर मिलकर एक ही उद्देश्य को पूर्ण करती हैं। इन तेरह प्रकार के करणों का प्रमुख रूप से दो प्रकार के कार्य होते हैं जो लौकिक और अलौकिक दो भागों में विभक्त होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि इन करणों के स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूप होते हैं। स्थूल रूप का प्रयोग संसार में मनुष्यों द्वारा होता है, जबकि सूक्ष्मरूप का उपभोग दिव्यलोक में देवताओं द्वारा होता है। इसीप्रकार मन वृद्धि एवं अहंकार द्वारा धारण किये जाने वाले देवताओं के पाँच भौतिक शरीर दिव्य हैं तथा सामान्य मनुष्यों के लौकिक होते हैं। इसी प्राकृतिक नियम के अनुसार देवताओं की ज्ञानेन्द्रियों के विषय भी (तन्मात्रा) अलौकिक होते हैं, जबकि सामान्य मनुष्यों के लौकिक होते हैं। मन, बुद्धि एवं अहंकार के शरीर के अन्दर स्थित होने से उन्हें अन्तःकरण (अन्दर के करण) कहा गया है, जबकि पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा पाँच कर्मेन्द्रियों को ब्राह्यकरण कहा गया है, क्योंकि इन्द्रियाँ विषय-वस्तुओं को ग्रहण कर मन, बुद्धि एवं अहंकार के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इन शक्तियों की विशेषता यह है कि इन्द्रियरूपी बाह्यकरण वर्त्तमान विषयों के ही ग्राहक होते हैं, जबकि अन्तःकरण भूत, वर्त्तमान और भविष्य तीनों कालों की विषय-वस्तुओं को ग्रहण करता है, सामान्य मनुष्यों की ज्ञानेन्द्रियाँ स्थूल विषय-वस्तुओं को ग्रहण करती हैं, जबकि देवता एवं योगियों की ज्ञानेन्द्रियाँ स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार की विषय-वस्तुओं को ग्रहण करती हैं। वस्तुजगत में यह कर्म-व्यापार बाह्य साधनस्वरूप इन्द्रियों द्वारा सम्पन्न होकर अन्तःकरण को प्रेषित होता है।

इस जटिल प्रक्रिया में जिसप्रकार त्रिविध गुण-विकार (सत्व, रज, तम) द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया द्वारा परस्पर विरोधी कार्य सम्पन्न करते हुए दीपक की भाँति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(तेल, बत्ती, अग्नि) एकजुट होकर एक ही कार्य सम्पन्न करते हैं उसीप्रकार इन्द्रियाँ, मन एवं अहंकार अपना पृथक-पृथक कार्य सम्पन्न करते हुए एक ही उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए विषय-वस्तुओं को ग्रहण कर बुद्धि के समक्ष प्रस्तुत कर देते हैं। यद्यपि एक तरफ बुद्धि नानाप्रकार की विषय-वस्तुओं को चेतन पुरुष के समक्ष प्रस्तुत कर उसे सुख-दुःख का अनुभव प्राप्त करने में सहायक बनती है तो वहीं दूसरी तरफ वही बुद्धि जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष में भेद-ज्ञान उत्पन्न कर पुरुष को प्रकृति के बन्धन से मुक्त होने में सहायता भी प्रदान करती है। सांख्यकारिका (२९) के अनुसार बुद्धि का व्यापार है किसी विषय में निश्चय करना और अहंकार का काम है अभिमान करना तथा मन का व्यापार है संकल्प-विकल्प करना। ये पृथक-पृथक लक्षण इनके असाधारण कर्म-व्यापार हैं, जबकि प्राण-अपान आदि पांच प्रकार के ऊर्जा-प्रसारण इनका सामान्य कर्म-व्यापार है। सांख्यकारिका (३८) में तन्मात्राओं को सूक्ष्म कहा गया है और उन पंच तन्मात्राओं (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश ये पाँच महाभूत उत्पन्न होते हैं। इन पंचमहाभूतों को विशेष (स्थूल) कहा गया है। जब सत्वगुण प्रधान होता है तो ये पंचमहाभूत सुख एवं शान्ति प्रदान करते हैं और रजोगुण प्रधान होनेपर दुःख एवं अशान्ति उत्पन्न करते हैं तथा तमोगुण प्रधान होनेपर मोह एवं अज्ञान उत्पन्न करते हैं। तन्मात्रा तथा पंचमहाभूत कार्य हैं, जबकि बुद्धि, अहंकार, मन तथा ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियाँ करण हैं।

सांख्यकारिका (३९–४४) में आगे कहा गया है कि सूक्ष्मशरीर अथवा वस्तुएँ स्थूलशरीर अथवा वस्तुओं से अधिक स्थायी होती हैं। उदाहरण के लिए सूक्ष्मशरीर (लिंग शरीर) अथवा पदार्थ प्रलयकाल पर्यन्त स्थायी रहकर बाद में नष्ट हो जाते हैं, जबकि माता-पिता के रज-वीर्य से उत्पन्न स्थूलशरीर तथा स्थूलजगत का निर्माण और विनाश बारबार हुआ करता है। यह लिंग शरीर मन, अहंकार तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ एवं पंच तन्मात्राओं का आश्रय ग्रहण कर प्रकृति द्वारा सृष्टि के आरम्भ काल में सर्वप्रथम उत्पन्न होता है जो परमाणु आदि सूक्ष्म पदार्थों में भी सरलता से संचरण कर सकता है। इस लिंग शरीर का अस्तित्व सृष्टि से लेकर प्रलय काल तक स्थायी है और यह शरीर धर्म-अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य-अवैराग्य तथा ऐश्वर्य-अनैश्वर्य इन आठ प्रकार के सापेक्ष भावों से युक्त होकर बिना किसी स्थूलशरीर के किसी भी विषय-वस्तु का उपभोग करने में असमर्थ होता है और इसीलिए पुराने शरीरों को छोड़कर नये-नये स्थूलशरीरों को धारण करता रहता है अथवा उनमें प्रवेश करता रहता है। गीता (२–२२) में इसी को वस्त्र परिवर्तन कहा गया है,

७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि सापेक्ष प्रकृति की यह एक वृत्तात्मक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य चेतन पुरुष को नये-नये जगत में नये-नये नाप-रूपों से सदैव सम्बद्ध रखना है। जब विरक्ति होती है तभी उद्धार होता है। लिंग शरीर की आवश्यकता पर बल देते हुए सांख्यकारिका कहती हैं कि जिसप्रकार आश्रय के बिना चित्र का तथा वृक्ष आदि के बिना छाया का रहना असम्भव है उसीप्रकार सूक्ष्मशरीर (लिंग) के बिना इन्द्रियों, मन, बुद्धि तथा अहंकार का रहना असम्भव है। दूसरे शब्दों में मन, बुद्धि एवं अहंकार का वास-स्थान सूक्ष्मशरीर ही है। यह लिंग शरीर भिन्न-भिन्न योनियों में भ्रमण करता रहता है और कभी देव तथा कभी दानव का रूप उसीप्रकार धारण करता रहता है जिसप्रकार एक नट किसी नाटक में कभी राम और कभी रावण तथा कभी कृष्ण और कभी दुर्योधन का रूप बदलता रहता है। इसका कारण यह है कि प्रकृति की विभूतियों के अन्तर्गत (प्रकृतेर्विभुत्वयोगात्) कारण और कार्य अभिन्न हैं, एक ही सिक्कें के दो पहलू हैं और यह सापेक्ष भ्रम सीमित इन्द्रियज्ञान का परिणाम है। सापेक्ष दृष्टि के फलस्वरूप भावपदार्थ भी सापेक्ष हो जाते हैं। धार्मिक भावपदार्थ से जीव स्वर्ग आदि उत्तम लोकों को प्राप्त होता है और अधर्म से निम्न लोकों में भ्रमण करता रहता है तथा ज्ञान से मोक्ष प्राप्त करता है और अज्ञान से मोहमाया के बन्धन में पड़ा रहता है। गीता (४-३८) में भी कहा गया है कि संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला और कुछ नहीं है। लेकिन वह ज्ञान बुद्धिवाद का ज्ञान नहीं है, बल्कि परा-इन्द्रियज्ञान (Transcendental Knowledge) है जो चेतना के उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) द्वारा ही सम्भव हो पाता है। सांख्यकारिका (५५) में आगे कहा गया है कि जीवजगत में स्थूलशरीर से कारणस्वरूप लिंग शरीर के सम्बद्ध होने से जीव आवागमन के चक्र में भटकता हुआ अनेक प्रकार के दुखों का अनुभव करता है। यह सूक्ष्मशरीर ही वह कड़ी है जिससे 'कारण और कार्य (Cause and effect की शृखंला चलती रहती है और सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (आवागमन-चक्र) में परस्पर विरोधी शक्तियों एवं तत्वों का द्वन्द्वात्मक संघर्ष चलता रहता है।

उच्च लोक एवं निम्नलोक पर प्रकाश डालते हुए सांख्यकारिका (५३,५४) में कहा गया है कि भौतिक सृष्टि १४ प्रकार की होती है। इनमें ब्रह्म, प्रजापति, इन्द्र, पितृ, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस तथा पिशाच ये आठ प्रकार की सृष्टि देवताओं की है। इनमें ब्रह्म सम्बन्धी ब्रह्मलोक तीन हैं—सत्यलोंक, तपलोक और जनलोक। सत्यलोक में ब्रह्म एवं परमहंस लोग निवास करते हैं। इसके नीचे तपलोक में अन्य उत्कृष्ट देवता लोग निवास करते हैं। इसीप्रकार जन लोक में ब्रह्म से सम्बन्धित देवता लोग निवास करते हैं। दूसरी श्रेणी 'मह' नामक प्रजापति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का लोक है। इसके नीचे तीसरी श्रेणी में स्वर्ग नामक इन्द्रलोक है। चौथी श्रेणी को पितृलोक कहते हैं और पाँचवीं को गन्धर्वलोक कहते हैं तथा छठीं श्रेणी में कुबेर यक्षों के साथ रहता है। वितल लोक को छोड़कर अतल, सुतल, तलातल और रसातल आदि ६ लोकों में राक्षस लोग निवास करते हैं तथा वितल (८) में भूत, प्रेत, पिशाच, ब्रह्मराक्षस आदि लोग रहते हैं। इसके अतिरिक्त पशु-पक्षियों की सृष्टि पाँच प्रकार की है तथा मानवीय सृष्टि एक प्रकार की है। इसप्रकार सांख्यदर्शन में कुल १४ प्रकार की भौतिक सृष्टि है। उच्च लोक सत्वगुण प्रधान होने से अत्यन्त सुखद हैं और निम्नलोक तमोगुणप्रधान होने से दुखपूर्ण हैं। भूलोक अथवा मध्यलोक रजोगुणप्रधान है जिसमें जीव-जन्तु मोह-माया के बन्धन में ग्रसित होकर दुखी रहते हैं। गीता (१४।१४–१५) में भी कहा गया है कि सत्त्वगुण के उत्कर्ष काल में यदि मनुष्य की मृत्यु होती है तो उसे स्वर्गतुल्य उत्तम लोक प्राप्त होता है और जब रजोगुण की प्रधानता होती है तो कर्मों में आसक्ति के फलस्वरूप वह भौतिकजगत में मानव स्वरूप ग्रहण करता है तथा तमोगुण प्रधान होने पर वह पशु-तुल्य जीवन प्राप्त करता है। लेकिन लौकिक और अलौकिक जीवन का यह चक्र केवल कपिल के सापेक्ष-वाद की वृत्तात्मक रेखागणित में ही सम्भव है।

वास्तव में जीव के सामान्य एवं दुखपूर्ण जीवन को दिव्य जीवन में परिवर्तित करने के लिए ही प्राचीन ऋषि-मुनियों ने योग का आविष्कार किया था। इस दिव्य जीवन की भी अनेक श्रेणियाँ हैं और उन श्रेणियों के अनुरूप ही अनेक दिव्य लोक विद्यमान हैं। जीव का जैसा पुरुषार्थ होता है उसके अनुकूल ही वैसा लोक (Plane) प्राप्त होता है, क्योंकि लोक का उद्देश्य स्वयं अपने में कुछ नहीं है, बल्कि उसका सम्बन्ध चेतन पुरुष की अवस्था विशेष से है और यही सापेक्ष-वाद की वृत्तात्मक रेखागणित का उद्देश्य भी है। इस यौगिक प्रक्रिया में विज्ञान की तरह किसी यान्त्रिक उपकरण का आश्रय नहीं लिया जाता है, बल्कि वह प्रयोग अन्तस्थल की प्रयोगशाला में चेतना के उत्कर्ष (unfoldment of consciousness) द्वारा ही सम्भव हो पाता है। इसीलिए वैज्ञानिक प्रक्रिया में केवल छायाचित्रों के दर्शन होते हैं, जबकि यौगिक प्रक्रिया में सत्य का दर्शन प्राप्त होता है। विज्ञान बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) का प्रयोग करता है, जबकि योगी आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) का आश्रय लेते हैं। वैज्ञानिक प्रक्रिया में समय का क्रमगठन (कण-तरंग) होता है, जबकि यौगिक-प्रक्रिया में समय का क्रमविघटन (कण-तरंग) होता है।

विज्ञान में कारण और कार्य की शृंखला और दृढ़ होती है, क्योंकि उस प्रक्रिया में अहंकार प्रबल होता है, जबकि योग में कारण और कार्य की शृंखला टूटने लगती है, क्योंकि उस प्रक्रिया में 'आत्मसमर्पण' (Self surrender)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रधान होता है। एक प्रक्रिया भौतिक एवं लौकिक होती है, जबकि दूसरी प्रक्रिया परा-भौतिक एवं अलौकिक होती है। इन दोनों प्रक्रियाओं में अन्तर के परिणाम-स्वरूप दोनों के फल में भी जमीन और आसमान का अन्तर है। अतः यूक्लिड की रेखागणित भी कोई गलत रेखागणित नहीं है, बल्कि वह रेखागणित हमें (Ego) सापेक्ष प्रकृति के बन्धन से मुक्त करती हैं, हमारे सीमित एवं सापेक्ष अस्तित्व को निरपेक्ष एवं अनन्त (सच्चिदानन्दस्वरूप) बना देती है। सामान्य मनुष्य सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित का अनुसरण करते हैं, जबकि असा-मान्य मनुष्य (योगी) यूक्लिड की निरपेक्ष रेखागणित का प्रयोग करते हैं।

विज्ञान में हम जिसे प्रमाण समझते हैं वह वस्तुतः इन्द्रियों द्वारा प्राप्त एक सीमा-ज्ञान है, पदार्थ-मिश्रित चेतन पुरुष (Ego) की एक भ्रामक अवस्था है जिसकी उपयोगिता इस भौतिकजगत के लिए तो हो सकती है, लेकिन सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत के लिए वह निरर्थक, भ्रामक और तथ्यों से परे है, क्योंकि चेतनपुरुष की एक अवस्था में देश-काल (Space-time) का आयाम होता है, जबकि उसी चेतन पुरुष की दूसरी अवस्था (सूक्ष्म लोक) में 'देश-काल' का वह भौतिक आयाम नहीं होता जिसके फलस्वरूप सम्पूर्ण भौतिक-जगत एक विन्दु (सूक्ष्म शरीर) में ही केन्द्रीभूत हो जाता है। यही कारण है कि जेराल्ड फेनवर्ग के प्रति पदार्थ (Anti-matter) सम्बन्धी सूक्ष्मजगत की रेखा-गणित हमारे भौतिक जगत की रेखागणित से सर्वथा भिन्न है। अतः सापेक्ष प्रकृति के अन्तर्गत स्वयं विज्ञान को भी ज्ञान के अन्य श्रोतों से सर्वथा पृथक् स्वतन्त्र या निरपेक्ष नहीं माना जा सकता, बल्कि सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखा-गणित में इस भौतिक परिधि (प्रकाश या समय की गति) के बाद स्वयं विज्ञान भी वेदान्त में ही समाहित हो जायेगा। इसका कारण यह है कि विज्ञान बहुत दिनों तक बुद्धिवादी कौशल द्वारा स्वयं अपने को किसी 'बन्द वृत्तात्मक प्रक्रिया' (closed circular system) में नहीं रख सकता। प्रकृति के क्रमविकास में एक दिन उसे भी सत्य का ज्ञान प्राप्त करना ही है।

समय के चक्र से इस भौतिक जगत का क्रमविकास हो रहा है,कण-तरंगों के संयोग से घटनाचित्रों का क्रम बन रहा है और इस प्रक्रिया में भविष्य वर्त्तमान में वर्त्तमान भूत में तथा भूत भविष्य में बदल र.ा है। एक ही शक्ति सापेक्षवाद की इस वृत्तात्मक रेखागणित में असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित हो रही है। लेकिन स्थूल और सूक्ष्म इन सभी प्रक्रियाओं में वह चेतन पुरुष ही एकमात्र केन्द्रविन्दु है जिसके भोग-विलास के लिए अतृप्त कामिनी प्रकृति द्वारा यह प्रदर्शनी लगाई गई है। ईश्वर कृष्ण की सांख्यकारिका (५८,५९,६०,६१) में कहा गया है कि जिसप्रकार मनुष्य अपनी इच्छावृत्तियों की पूर्त्ति के लिए जगत में कर्म-व्यापार करता है उसीप्रकार प्रकृति भी पुरुष को मोक्ष पद प्राप्त कराने के लिए सृष्टि की ओर प्रवृत्त होती है। इस कर्म-व्यापार में जिसप्रकार कोई नर्त्तकी सजी हुई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महफिल में बैठे हुए रसिक लोगों के समक्ष अपने हाव-भाव एवं रंग-रूप का लीला-प्रदर्शन प्रस्तुत कर और प्रतिक्रिया स्वरूप उन आसक्त दर्शकों से वाह-वाह एवं धन्य-धन्य आदि प्रशंसात्मक शब्दों को सुनकर अतिशय प्रसन्न होती हुई तथा अपने को कृतकृत्य मानती हुई उस मोहक लीला-प्रदर्शन से निवृत्ति हो जाती है उसीप्रकार प्रकृति भी पुरुष को तत्त्वज्ञान प्रदान कर उसे मोक्षपद प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त कर देती है। प्रकृति की इस प्रक्रिया द्वारा सापेक्ष (क्रमविकास) और निरपेक्ष (मोक्ष) दोनों प्रकार के कर्म-व्यापार सम्पन्न हो जाते हैं। त्रिविध-गुण सम्पन्न एवं परोपकारिणी प्रकृति अपनी अनेक शक्तियों (इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार) द्वारा उस विशिष्ट चेतन पुरुष के लिए यह कर्म-व्यापार निःस्वार्थ भाव से करती है। ईश्वरकृष्ण आगे कहते हैं कि जिसप्रकार किसी लज्जाशील कुलवधु के सिर से आँचल ढ़ल जाने पर जब कोई परपुरुष उसे देखकर पहचान लेता है तो वह कुलवधु संकोचवश फिर उस परपुरुष के समक्ष नहीं आती है उसीप्रकार अत्यधिक लज्जाशील प्रकृति का यथार्थ स्वरूप भी जब ज्ञानी पुरुष (बुद्ध और रामकृष्ण जैसे) द्वारा भलीभाँति देख और समझ लिया जाता है तो फिर प्रकृति उस सर्वज्ञानी महापुरुष के समक्ष लज्जावश कभी नहीं जाती है। इसप्रकार उस ज्ञानी पुरुष के लिए कारण और कार्य की शृंखला सर्वदा के लिए टूट जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब तक मनुष्य में इच्छा-वासना, तृष्णा एवं आसक्ति है तब तक वह पुरुष प्रकृति के बन्धन में है, लेकिन जब उसे तत्त्व-ज्ञान प्राप्त हो जाता है, उस हाव-भाव एवं लीला-प्रदर्शन से विरक्ति हो जाती है तथा अहंज्ञान लुप्त हो जाता है तो वह पुरुष मोक्ष या निर्वाण को प्राप्त हो जाता है।

अतः नोबेल पुरस्कार प्राप्त प्रख्यात भौतिकशास्त्री नील्स बोर का यह कथन ठीक ही है कि जगतरूपी इस रंगमंच पर हम नटी भी हैं और दर्शक भी। नटी इसलिए कि हमारा भौतिकशरीर कारणस्वरूप गुणात्मक कण-तरंगों का बना हुआ है और दर्शक इसलिए कि हम पदार्थ से सर्वथा भिन्न एक चेतनपुरुष (आत्मा) हैं। जब उस पृथक अस्तित्व का संयोग प्रकृति या पदार्थ से होता है तो वह सापेक्ष बन जाता है और जब उसे तत्त्वज्ञान हो जाता है तो वह मुक्त होकर निरपेक्ष बन जाता है।

कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत तरंगमय है। त्रिविध गुण-विकारों के प्रभाव से वासना-तरंगें भी त्रिगुणात्मक हो जाती हैं। विचार और जीवन का अभिन्न सम्बन्ध है। अगर विचार सात्विक है तो जीवन भी सात्विक होता है। इसी-प्रकार रजोगुण और तमोगुण के अनुरूप ही जीवन भी ढ़ल जाता है। विचार तरंगों (Thought waves) में अत्यधिक शक्ति होती है और कोई भी विचार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कभी व्यर्थ नहीं जाता, बल्कि देर-सबेर अपना फल अवश्य लाता है। जिन वासना-तरंगों की पूर्ति इस भौतिकजगत में नह हो पाती उनकी पूर्ति सूक्ष्मजगत में होती है तथा कारण और कार्य नियमों के अनुसार उनका फल परस्पर एक-दूसरे जगत से सम्बद्ध है। योगी कहते हैं कि विचार-तरंगें (Thought waves) उसीप्रकार एक शक्ति है जिसप्रकार विद्युत्तरंगें अथवा चुम्बकीय तरंगें और जिस विज्ञान के अन्तर्गत इसका ज्ञान प्राप्त होता है योगदर्शन में उसे 'विचार-वैगिकी' (Thought dynamics) कहते हैं। योगी कहते हैं कि भौतिकजगत की चुम्बकीय तरंगों से विचारतरंगों की गति एवं शक्ति असंख्यगुना अधिक है। जगत में शुभ एवं अशुभ विचारतरंगों का निरन्तर प्रसारण होता रहता है जिनमें त्रिविध गुण-विकार मिश्रित होते हैं और जिसप्रकार प्रकाश तरंगों में तीव्रता तरंगदैर्घ्य एवं आवृत्ति (Wave-length and frequency) होती है उसी प्रकार नानाप्रकार की विचारतरंगों में भी नानाप्रकार की तीव्रता, तरंगदैर्घ्य एवं आवृत्ति होती है। नानाप्रकार की विचारतरंगें अन्तरिक्ष में उसीप्रकार मिश्रित होती हैं जिसप्रकार चुम्बकीय तरंगें और रेडियोतरंगें और समस्त जीव-जगत इन विचार-तरंगों से निरन्तर प्रभावित होता रहता है, क्योंकि जीव-जन्तुओं के रूप में विचार-तरंगों को भी अनुकूल और प्रतिकूल माध्यम (Good or bad conductor) की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि एक साधु पुरुष मन्दिर और सत्संग की ओर आकर्षित होता है, जबकि एक दुराचारी वैश्यालय एवं मदिरालय की ओर। यह सभी कुछ त्रिविध गुण-विकारों का ही प्रभाव है। इन गुण-विकारों के प्रभाव को ही हम जीवविज्ञान में रासायनिक प्रक्रिया (Chemical process) से नाम से जानते हैं। इन शुभ और अशुभ विचार-तरंगों द्वारा हमारे मानसिक स्तर में भी परिवर्तन होता रहता है।

योगदर्शन के अनुसार विचारतरंगों की शक्ति प्राणशक्ति (Vital force) की तीव्रता पर निर्भर करती है। विचारतरंगों में प्राणशक्ति जितनी ही अधिक होगी उन तरंगों की शक्ति उतनी ही अधिक होगी। सामान्यतः प्राणशक्ति ऊर्जा के अर्थ में लिया जाता है, लेकिन उसका क्षेत्र ऊर्जा से अत्यन्त व्यापक होता है जो कारण और कार्य दोनों जगत से सम्बद्ध होता है। जब ये विचार-तरंगें प्राणशक्ति का संयोग पाकर घनीभूत होती हैं जो विचारप्रवाह (Thought stream) का रूप ग्रहण कर लेती हैं जिनकी गति असीम हो जाती है। योगी कहते हैं कि मनुष्य तथा अन्य जीव-जन्तुओं के शरीर से त्रिगुणात्मक प्रभाव के अनुरूप अनेक प्रकार की आभा निकलती रहती है जिन्हें धर्मग्रन्थों में 'प्रभामण्डल' (Human aura) कहा गया है। इसी प्रभामण्डल को आधुनिक विज्ञान में 'शीतल विकिरण' (Cold radiation) के नाम से जाना जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो 'कीर्लियन फोटोग्राफी' द्वारा स्पष्ट हो जाता है। इससे पता चलता है कि भावनात्मक सवेगों (Emotions) के अनुरूप इन प्रभामण्डलों के रंग-रूप में भी परिवर्तन होता रहता है। योगदर्शन के अनुसार वासना-तरंगों के विभिन्न रंग-रूप होते हैं और सूक्ष्मदृष्टि सम्पन्न (Astral sight) योगी इन वासना-तरंगों के रंग-रूप को देखकर मनुष्यों के मनोभावों को भी पढ़ लेते हैं। इन विचार-तरंगों में जो हजारों प्रकार के रंग-रूप होते हैं वे लौकिक और अलौकिक अनेक स्तरों में विभक्त होते हैं। उदाहरण के लिए कालिमायुक्त वासना-तरंगों से घृणा, द्वेष एवं प्रतिशोध का भाव प्रकट होता है, जबकि भूरे रंग से भय एवं आतंक का भाव स्पष्ट होता है। कालिमायुक्त लाल रंग से जन्तुवासना (Animal passion) का भाव प्रकट होता है और चमकीले लाल रंग से क्रोध का भाव दिखाई देता है। गहरे लाल रंग (Crimson) से प्रेम, भूरे लाल रंग से वासना-जनित प्रेम, चमकीले नारंगी रंग से अहंकार एवं महत्वाकांक्षा, पीले रंग से बौद्धिकशक्ति, सुनहले रंग से महान बौद्धिक क्षमता तथा गाढ़ा नीले रंग से धार्मिक प्रवृत्ति का आभास मिलता है, चमकीले हल्का नीले रंग से उच्च आध्यात्मिक भाव प्रकट होता है। विचारतरंगों के ये विभिन्न रंग-रूप विभिन्न लोकों में क्रमशः दिव्य होते जाते हैं और उत्तम लोकों में तो उनकी कोई कल्पना भी नहीं हो सकती। सूक्ष्मजगत की इन विविध तरंगों के रहस्य को समझना भी स्वयं अपने में एक महाविज्ञान है जो विभिन्न पुरुषों के चेतन-स्तर तथा आध्यात्मिक-शक्ति पर निर्भर करता है।

इन त्रिगुणात्मक विचार-तरंगों का प्रसारण जिस प्रक्रिया द्वारा होता है उसे 'टेलीपेथी' (Telepathy) कहते हैं और योगी इन विचार-तरंगों का आदान-प्रदान (Thought transference) किया करते हैं। टेलीपेथी उस क्रिया को कहते हैं जिसमें विचार-तरंगों (Thought waves) को बिना इन्द्रियों का आश्रय लिए एक मन से दूसरे मन तक प्रेषित किया जाता है और इस क्रिया में 'देश-काल' (Space-time) का कोई व्यवधान नहीं होता, क्योंकि विचार-तरंगें भौतिक शक्तियों के अत्यधिक सूक्ष्म होती हैं। सांख्य और योगदर्शन के अनुसार जिसप्रकार स्थूलजगत में मनुष्य अपनी इन्द्रियों का प्रयोग करता है उसीप्रकार मृत्यु के बाद सूक्ष्मजगत में भी उन इन्द्रियों के प्रतिरूप (Counterparts) का प्रयोग करता है और इस प्रक्रिया में विभिन्न तरंगों को ग्रहण करता है। टेली-पेथी क्रिया में मन जितना ही एकाग्र होगा विचारतरंगों में उतनी ही तीव्रता होगी जिसके फलस्वरूप 'विचार सम्प्रेषण' (Thought-transference) उतना ही सफल होगा।

अन्तरिक्ष यात्राओं को सफल बनाने के लिए आजकल विज्ञान द्वारा भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

टेलीपेथी का प्रयोग होने लगा है। सुप्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिक त्सियोलकोवोस्की ने १९३० ई० में यह कहा था कि निकट भविष्य में अन्तरिक्ष यात्रा हेतु 'विचार सम्प्रेषण' (Thought transference) का ज्ञान आवश्यक होगा। अगस्त १९५९ ई० में अमेरिकी आणविक पनडुब्बी नाटिलस (Atomic Submarine Nautilus) द्वारा टेलीपेथी पर एक प्रयोग किया गया जिससे यह ज्ञात हुआ कि 'विचार सम्प्रेषण' सम्भव है। इन प्रयोगों द्वारा यह भी प्रमाणित हुआ कि मानव मस्तिष्कों के बीच मानसिक विचारों का आदान-प्रदान (Mental communication) रेडियो तरंगों की अपेक्षा अत्यधिक शक्तिशाली होता है। इससे ज्ञात हुआ कि यद्यपि समुद्र के बहुत निचले तल में रेडियो संचार भंग हो जाता है, लेकिन टेलीपेथी द्वारा 'मानसिक संचार व्यवस्था' सदैव बनी रहती है, क्योंकि देश-काल का उन पर कोई व्यवधान नहीं पड़ता। सोवियत रूस में टेलीपेथी पर वैज्ञानिक ढंग से अनेक प्रकार के प्रयोग किये गये हैं और जो परिणाम सामने आये हैं उनसे स्पष्ट होता है कि पृथ्वी की अपेक्षा अन्तरिक्ष में टेलीपेथी द्वारा विचारों का संचारण (Thought Transference) ज्यादा अच्छीतरह सम्पन्न हो सकता है। इसके अतिरिक्त पृथ्वी के निर्जन और वीरान प्रदेशों में यह क्रिया अधिक सफल होती है। इस सम्बन्ध में एक रूसी पत्र (Maritime News) में १९६७ ई० में समाचार प्रकाशित हुआ था जिसके अनुसार मार्च १९६७ ई० में रूसी वैज्ञानिकों ने मास्को और लेनिनग्राड के बीच गुप्त संकेतों के माध्यम से विचार सम्प्रेषण (Telepathy) क्रिया को सफलतापूर्वक सम्पन्न किया था। इस प्रक्रिया में यूरी कामेनेस्की ने विचारतरंगों को प्रेषित किया और कार्ल निकोलेयेव ने उन विचारतरंगों को ग्रहण किया तथा इस क्रिया में पेवलोवा और सर्जेयिव जैसे रूसी डाक्टरों ने में अपना सहयोग प्रदान किया। आज रूस और अमेरिका जैसे विकसित देशों में अन्तरिक्ष यात्रियों (cosmonauts) को टेलीपेथी की भी ट्रेनिंग दी जा रही है, क्योंकि इससे अन्तरिक्ष के खतरों का पूर्वाभास (Precognition) हो सकता है तथा रेडियो संचार भंग हो जाने पर विचारों का आदान-प्रदान टेलीपेथी द्वारा सम्पन्न हो सकता है। इसके पहले १९६० ई० में एक अमेरिकी वैज्ञानिक डगलस डीन ने एक नई खोज की जिसका विवरण उसने १९६४ ई० में वैज्ञानिकों के एक अन्तरिक्ष सम्मेलन (Space conference) में प्रस्तुत किया। डीन ने एक विशेष यन्त्र द्वारा यह प्रदर्शित किया कि टेलीपेथी द्वारा जब विचार तरंगों का प्रसारण किया जाता है तो उससे कोष-क्रियाओं पर भी प्रभाव पड़ता है तथा रक्त-प्रवाह में भी परिवर्तन होता है। डीन का कहना है कि इस प्रयोग की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि टेलीपेथी द्वारा जो व्यक्ति विचार प्रेषित करता है वह किसी ऐसे व्यक्ति पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपना ध्यान केन्द्रित करता है जिससे उसका मधुर और भावनात्मक सम्बन्ध होता है। डगलस डीन ने अपने इन प्रयोगों को सैकड़ों मील दूर से प्रदर्शित कर लोगों को प्रभावित किया। डीन को इस विशेष अनुसन्धान का सूत्र प्राग के एक डाक्टर स्टीपन फाइगर द्वारा प्राप्त हुआ था।

इन प्रयोगों से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य का शरीर टेलीविजन प्रणाली की भाँति एक अद्भुत् इलेक्ट्रानिक यन्त्र है जो सूक्ष्म संवेदनाओं तथा गुणात्मक तरंगों को आकर्षित और विकर्षित करता रहता है और इस प्रक्रिया का सम्बन्ध कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत तथा कार्यस्वरूप स्थूलजगत दोनों से है। आज रूस और अमेरिका दोनों इस योगशक्ति की ओर आकर्षित हुए हैं। एक अमेरिकी वैज्ञानिक डा० कानेकी का कहना है कि रूस में अन्तरिक्ष कार्यक्रम के अन्तर्गत मनुष्य में विद्यमान चुम्बकीय शक्तियों के माध्यम से टेलीपेथी तथा अन्य यौगिक विषयों पर गम्भीर असुसन्धान चल रहे हैं। एक अमेरिकी परामनोवैज्ञानिक के स्टर्नर के अनुसार रूस में अन्तरिक्ष यात्रियों को योगविज्ञान के अन्तर्गत मानसिक शक्ति तथा सम्मोहन आदि की भी ट्रेनिंग दी जा रही है। अतः जेराल्ड फेनबर्ग के प्रतिपदार्थ'(Anti-matter) का सम्बन्ध उस महाशक्तिशाली सूक्ष्मजगत से ही है जिसका विशद विवेचन हमें योगविज्ञान द्वारा द्राप्त होता है। आज विज्ञान जिस विषम स्थिति में है, अब और आगे वह उस कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत की उपेक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि स्वयं अपने अधुनातन प्रयोगों द्वारा वह उसी अदृश्य जगत की ओर तेजी से बढ़ता जा रहा है।

कभी प्रख्यात भौतिकशास्त्री सर जेम्स जीन्स ने समय को विज्ञान के लिए एक पहेली बतलाया था, क्योंकि उसकी प्रकृति वैज्ञानिकों की समझ से परे थी। लेकिन आइन्स्टीन के अतिरिक्त रूसी वैज्ञानिक डा० कोजीरेव ने अपने नियन्त्रित प्रयोगों (controlled experiments) द्वारा उस पहेली पर और प्रकाश डाला है। सोवियत संघ में स्थित पुल्कोवो वेधशाला के प्रोंफेसर निकोलाई कोजीरेव एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक हैं जिन्होंने चन्द्रमा, मंगल, शुक्र तथा वृहस्पति आदि ग्रहों पर महत्त्वपूर्ण खोज की है। अमेरिका के नोबेल पुरस्कार विजेता डा० हेराल्ड ऊरे भी उनके नये सिद्धान्तों से प्रभावित हुए हैं। अभी हाल में ही लेनिनग्राड के एक वैज्ञानिक सम्मेलन में डा० कोजीरेव ने यह विचार व्यक्त किया है कि वृहस्पति ग्रह नहीं है, बल्कि वह सूर्य के समान एक स्वप्रकाशमान नक्षत्र है जिसका आंन्तरिक तापमान १९६,००० डिग्री सेण्टीग्रेड है। डा० कोजीरेव ने समय (Time) के सम्बन्ध में एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। उनके अनुसार समय ऊर्जा का ही एक नाम-रूप है जो भौतिक जगत में सृष्टि तथा जीवन के लिए उत्तरदायी है। लेकिन समय का प्रसार विद्युत् या प्रकाश तरंगों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की भाँति नहीं होता, बल्कि वह सर्वत्र एक ही क्षण में तत्काल प्रकट हो उठता है और जीवजगत तथा ब्रह्माण्ड की सभी वस्तुओं को एक ही समय में सूत्रबद्ध कर लेता है। कोजीरेव के अनुसार समय में अनेक प्रकार के स्वाभाविक गुण हैं जिनका अध्ययन वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में हो सकता है। अपनी प्रयोगशाला में अनेक जटिल यन्त्रों के माध्यम से कोजीरेव ने यह सिद्ध किया कि समय में रबड़ की तरह लोच और घनत्व (Density) भी पाया जाता है। समय का घनत्व कारण (cause) की ओर पतला और कार्य (effect) की ओर घना (dense) होता है। गुरुत्वाकर्षण की तरह समय पर भी किसी अवरोध का प्रभाव नहीं पड़ता और समय की प्रतिक्रिया लोहे की दीवारों से होकर भी प्रकट होती है। कोजीरेव का कहना है कि समय के घनत्व पर मानवीय विचारों, संवेदनाओं तथा गुरुत्वाकर्षण का भी प्रभाव पड़ता है और उसके घनत्व में तदनुसार परिवर्त्तन हो जाता है। वस्तुजगत में किसी भी कर्म-व्यापार द्वारा अथवा ऊर्जा प्रक्रिया से जो हलचल उत्पन्न होती है उसके परिणामस्वरूप समय का घनत्व भिन्न-भिन्न वस्तुओं में भिन्न-भिन्न होता है और उनमें उतार-चढ़ाव भी होता रहता है। उदाहरण के लिए वह सीसा (lead) की अपेक्षा अल्मुनियम में दुगुने अधिक समय तक रहता है। इसीप्रकार लकड़ी (wood) में सीसा की अपेक्षा पाँच गुने अधिक समय तक रहता है। कोजीरेव के अनुसार समय में केवल प्रवाह ही नहीं होता, बल्कि उस प्रवाह में अनेक स्तर भी होते हैं जिसके फलस्वरूप 'कारण और कार्य' (cause and cffect) में भी अन्तर हो जाता है। इसप्रकार जब समय के स्तर में परिवर्त्तन होता है तो उन वस्तुओं के भार में भी अन्तर हो जाता है। जब कोई वस्तु बाएँ तरफ से गतिशील होती है तो समय का प्रवाह धनात्मक (Positive) होता है जिससे ऊर्जा में वृद्धि होती है। इसके विपरीत जब वस्तुओं की गतिशीलता दाँयीं ओर से होती है तो समय का प्रवाह ऋणात्मक (Negative) होता है।

डा० कोजीरेव के अनुसार भौतिकजगत की गतिशीलता वाममार्गी (Left-hand system) है और इस प्रक्रिया में समय का प्रवाह धनात्मक (Positive) है। इस प्रक्रिया द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड में ऊर्जा-प्रवाह तथा भौतिकशक्ति में वृद्धि हो रही है। सन् १९६६ ई० में नक्षत्र-विज्ञान पर बेल्जीयम के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में डा० कोजीरेव ने अपना यह विचार व्यक्त किया कि नक्षत्र-पिण्डों की गतिशीलता से उत्पन्न ऊर्जा एवं विकिरण द्वारा समय तरंगित होता है और दूसरी तरफ समय के असीम तरंग से नक्षत्र-पिण्डों तथा जीव-जन्तुओं मे ऊर्जा-प्रवाह तथा भौतिकशक्ति क्रमविकसित होती है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि डा० कोजीरेव के नियन्त्रित प्रयोगों द्वारा यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्ध हुआ कि समय ऊर्जा का ही एक नाम-रूप है। अगर समय ऊर्जा है तो आइन्स्टीन का यह निष्कर्ष सही है कि प्रकाश की गति पर समय की गति भी बन्द हो जाती है और स्वचेतना में ऊर्जा-प्रवाह अथवा कण-तरंगों के क्रमगठन से ही समय का बोध होता है। दूसरे शब्दों में समय का अस्तित्व स्वतन्त्र या निरपेक्ष नहीं है, बल्कि घटनाचित्रों के क्रम अथवा कण-तरंगों के क्रम-गठन पर निर्भर है। दूसरी तरफ सापेक्षवाद के अनुसार घटनाचित्र अथवा कण-तरंगों का क्रमगठन भी स्वतन्त्र या निरपेक्ष नहीं है, क्योंकि भौतिकजगत के घटनाचित्र कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की गुणात्मक तरंगों पर निर्भर हैं जो फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर द्वारा द्वन्द्वात्मक स्वरूप ग्रहण करते हैं और उस द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया से ही भौतिकजगत में ऊर्जाप्रवाह अथवा कण-तरंगों का क्रमगठन आगे बढ़ता है तथा कारण और कार्य की शृंखला भी चलती रहती है। इस भौतिक प्रक्रिया को डा० कोजीरेव ने वाममार्गी (Left-hand system) कहा है, क्योंकि इलेक्ट्रान कण ऋणात्मक कण (Negative particles) होते हैं और कारणस्वरूप धनात्मक फोटोन कणों (Positive particles) की टक्कर से ही उन्हें गति मिलती है, भौतिकजगत के निर्माण का मानचित्र प्राप्त होता है और वह मानचित्र ही घटनाचित्रों अथवा कण-तरंगों के संयोग से भौतिक स्वरूप ग्रहण करता है। लेकिन ये सभी प्रक्रियाएँ चेतन पुरुष की अध्यक्षता में ही होती हैं, क्योंकि सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के अनुसार प्रकृति की यह प्रदर्शनी उसी के लिए लगाई जा रही है। अतः भौतिकजगत में समय का अस्तित्व भी कारणस्वरूप उन फोटोनकणों पर ही निर्भर है, क्योंकि समय भी कारण और कार्य की शृंखला से जुड़ा हुआ है। इसप्रकार भौतिकजगत में ऊर्जा-प्रवाह अथवा कण-तरंगों की प्रक्रिया एक बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) है जिसमें घटनाचित्रों द्वारा समय का क्रमगठन होता है, जबकि यौगिक प्रक्रिया एक आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) है जिसमें समय के क्रमविघटन (Disintegration) द्वारा भौतिकजगत के घटनाचित्रों का भी क्रमविघटन होता है। जब घटनाचित्रों का क्रमविघटन होगा तो चेतनपुरुष के लिए भौतिकजगत का भी क्रमविघटन होगा और इसके परिणामस्वरूप कारण और कार्य की शृंखला भी प्रभावित होगी। अतः बहिर्गत प्रक्रिया (objective Process) द्वारा चेतनपुरुष प्रकृति के बन्धन में होता है, जबकि आभ्यन्तरिक प्रक्रिया द्वारा वह उस बन्धन से मुक्त होता है। यही अन्तर है भौतिकजगत की बहिर्गत प्रक्रिया में और सूक्ष्मजगत की आभ्यन्तरिक प्रक्रिया में, क्योंकि एक प्रक्रिया में चेतनपुरुष बन्धनग्रस्त होता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया में वह उस बन्धन से छुटकारा पाता है। यही कारण है कि डा० कोजीरेव को ऊर्जा और समय में अन्तर दिखाई देता है, क्योंकि ऊर्जा का सम्बन्ध भौतिकजगत के क्रमगठन से है, जबकि समय का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सम्बन्ध भौतिकजगत के क्रमविघटन से है। एक प्रक्रिया द्वारा चेतनपुरुष का प्रत्यक्ष सम्बन्ध भौतिकजगत से हो जाता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया से उसी चेतन पुरुष का सम्बन्ध सूक्ष्मजगत (Astral world) से हो जाता है, एक प्रक्रिया को हम जीवन कहते हैं और दूसरी को मृत्यु। इसीलिए योगदर्शन में मृत्यु को महा-समाधि कहा गया हैं, क्योंकि उस अवस्था में देश-काल (Space-time) का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। यही कारण है कि योगी भौतिकशरीर में ही स्थूल और सूक्ष्म दोनों जगत का अनुभव प्राप्त करते हैं।

डा० कोजीरेव के प्रयोगों द्वारा यह भी सिद्ध होता है कि भिन्न-भिन्न वस्तुओं में समय का घनत्व (Density) भिन्न-भिन्न होता है और वह कारण की ओर पतला तथा कार्य की ओर घना होता है। इसका कारण यह है कि समय का प्रभाव फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से शुरु होता है और जैसे-जैसे पदार्थ के कण-तरंगों का क्रमगठन होता जाता है वैसे-वैसे समय का घनत्व भी भिन्न-भिन्न होता जाता है, क्योंकि कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकारों का सामंजस्य भी कार्यस्वरूप भौतिक जगत की निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं में भिन्न-भिन्न होता है। दूसरे शब्दों में जैसा कारण होगा कण-तरंगों के संयोग से समय का क्रमगठन भी वैसा ही होगा और भिन्न-भिन्न वस्तुओं में समय का अस्तित्व अथवा घनत्व भी वैसा ही होगा। अतः सापेक्षवाद के अनुसार समय ही ऊर्जा-प्रवाह है, घटना चित्र है और ऊर्जाप्रवाह अथवा घटनाचित्र ही समय है, क्योंकि कारण ही कार्य है तथा कार्य ही कारण, सूक्ष्म ही स्थूल है और स्थूल ही सूक्ष्म। यह सभी कुछ एक सापेक्ष भ्रम है जो हमारे सीमित इन्द्रियज्ञान का प्रत्यक्ष परिणाम है। यही कारण है कि हमें इन्द्रियों द्वारा सत्य का ज्ञान कभी नहीं प्राप्त हो सकता। इसके लिए हमें इन्द्रियों से परे (Extra sensory perception) जाना होगा।

अतः जहाँ भौतिक विज्ञान समाप्त होता है (प्रकाश या समय की गति) वहीं से अदभुत् योगविज्ञान शुरु होता है और आत्मा या परमात्मा के अनन्त ज्ञान में विलीन हो जाता है जहाँ स्थूल और सूक्ष्मजगत की कोई भी भाषा उस निरपेक्ष अवस्था में काम नहीं कर सकती। अतः सर जेम्स जीन्सने समय नामक जिस पहेली का जिक्र किया था वह पहेली चेतन पुरुष पर ऊर्जा-प्रवाह के रूप में प्रकृति का एक बन्धन है और इस बन्धन को समाप्त कर देना ही पुरुषार्थ अथवा योगमें सिद्धि प्राप्त करना है। हम बहिर्गत प्रक्रिया (Objective process) द्वारा भी प्रकाश की गति प्राप्त कर समय की गति को बन्द कर सकते हैं जिससे कण-तरंगों का क्रमगठन रुक सकता है, लेकिन इस प्रक्रिया द्वारा हम कारण और कार्य की शृंखला को समाप्त नहीं कर सकते, क्योंकि प्रकृति का क्रमविकास समस्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्रह्माण्ड में एक ही लय और एक ही सुर मे चल रहा है। हम प्रकृति के उस क्रमविकास को निमित्तमात्र होकर एक निश्चत मोड़ दे सकते हैं, लेकिन उसे पूर्णतया रोक नहीं सकते, बल्कि आभ्यन्तरिक प्रक्रिया का आश्रय लेकर केवल उस बन्धन से मुक्त हो सकते हैं और सिर्फ यही स्वाधीनता मनुष्य को प्राप्त है। समय के घनत्व पर मानवीय विचारों एवं संवेदनाओं का प्रभाव इसलिए पड़ता है, क्योंकि उन संवेदनाओं से कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकारों का अभिन्न सम्बन्ध है और आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा जब हम कारण को प्रभावित करते हैं तो उसके साथ निश्चित रूप से कार्य भी प्रभावित होता है। अतः डा० कोजीरेव के प्रयोगों द्वारा कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद की ही पुष्टि होती है।

वास्तव में सापेक्षवाद की इस वृत्तात्मक प्रक्रिया में जीवन और मृत्यु का कोई अस्तित्व नहीं है, क्योंकि समय के क्रमगठन द्वारा भौतिक जीवन प्राप्त होता है और फिर समय के क्रमविघटन द्वारा ही उसी वृत्तात्मक प्रक्रिया में सूक्ष्मजीवन (Astral life) प्राप्त हो जाता है। इसप्रकार इस वृत्तात्मक प्रक्रिया में कारण जिस विन्दु से शुरू होता है इस जगत में अपना भौतिक कार्य सम्पन्न कर फिर उसी बिन्दु में ही मिल जाता है। यही कारण है कि गीता (२।२२) में भौतिक शरीर के त्याग को वस्त्र परिवर्त्तन माना गया है, क्योंकि सापेक्षवाद में जीवन और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और सत्य का ज्ञान प्राप्त हो जाने पर ये दोनों पहलू समाप्त हो जाते हैं।

आज से लगभग तीन सौ वर्ष पहले एक ऐसे महान अंग्रेज वैज्ञानिक का उदय हुआ जिसने अपने बुद्धिवादी कौशल एवं नवीन वैज्ञानिक सिद्धान्तों द्वारा आधुनिक विज्ञान को अपनी मुट्ठी में समेट लिया। वह महान वैज्ञानिक समस्त संसार में सर आइजक न्यूटन (१६४२-१७२७) के नाम से प्रसिद्ध है और उसके क्रान्तिकारी सिद्धान्त को 'गुरुत्वाकर्षण का नियम' (Universal law of gravitation) कहते हैं। यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित पर आधारित यह वही सिद्धान्त है जिसपर आधुनिक विज्ञान का 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद (Mechanistic theory of universe) अबतक टिका हुआ है और इसी महत्वपूर्ण सिद्धान्त पर तथाकथित भौतिकवाद, परमाणुवाद, डार्विनवाद, मार्क्सवाद, जीवशास्त्र, यथार्थवाद आदि अनेक महत्वपूर्ण सिद्धान्त आधारित हैं। वास्तव में न्यूटन का यह भूत इतना शक्तिशाली भूत है कि वह आधुनिक जगत के मस्तिष्क एवं मन से जल्दी उतरने वाला नहीं है, क्योंकि उस भूत का सम्बन्ध स्वाधीनतावाद, बुद्धिवाद एवं अहंवाद से है और जब तक अहंवाद है तब तक न्यूटन का वह भूत भी विद्यमान रहेगा। यद्यपि न्यूटन ईश्वरवादी था, लेकिन अपने वैज्ञानिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सिद्धान्तों में वह पूर्णतया भौतिकवादी था। परन्तु बीसवीं सदी के आरम्भ में आइन्स्टीन नामक एक ऐसे महावैज्ञानिक का उदय हुआ जिसने अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त द्वारा न्यूटनरूपी इस भूत पर जबरजस्त प्रहार किया। लेकिन वह भूत भी कोई साधारण भूत नहीं था और यही कारण है कि वह महाभूत आज भी संसार के सभी विद्यालयों, प्रयोगशालाओं तथा अनुसन्धान केन्द्रों में उसी-प्रकार विद्यमान है। परन्तु मैक्सप्लैंक तथा आइन्स्टीन के प्रादुर्भाव से उस भूत का पुराना जादू अब समाप्त हो चुका है, वह अन्तिम साँसें गिन रहा है, तो भी उसकी छाया तो अभी है ही।

न्यूटन के सिद्धान्त और आइन्स्टीन के सिद्धान्त में जमीन और आसमान का अन्तर है। एक का गुरुत्वाकर्षण जड़ और मशीन की तरह यान्त्रिक है, जबकि दूसरे का गुरुत्वाकर्षण चेतन और तरंगों की तरह सजीव हैं। न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन से बहुत दूर है, जबकि आइन्स्टीन का गुरुत्वाकर्षण सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन का भौतिक संस्करण है। लेकिन दोनों सिद्धान्तों की समीक्षा करते हुए आज के वैज्ञानिक यहाँ भी अपने बुद्धिवादी कौशल का परिचय देते हैं। उनका कहना है कि दोनों में से सही कौन है और गलत कौन है, हम इस विवाद में नहीं पड़ते। हमें तो इतने से ही सन्तोष है कि दोनों का फल एक ही आता है। इसप्रकार कण सिद्धान्त और तरंग सिद्धान्त की भाँति आज के विज्ञान ने इन दोनों सिद्धान्तों से समझौता कर लिया है।

इस सिद्धान्त के अनुसार अपने द्रव्यमान के अनुपात में प्रत्येक वस्तु किसी दूसरी वस्तु को अपनी ओर आकर्षित करती है जिसका एक निश्चित मापदण्ड होता है। यह शक्ति इतनी सूक्ष्म होती है कि दैनिक जीवन में इसका आभास तक नहीं होता। इस महत्वपूर्ण शक्ति पर विश्वविख्यात रूसी वैज्ञानिक तथा राकेट-विज्ञान के पिता कान्स्टेन्टीन एड्यूवर्डेविच त्सियोलकोवोस्की (१८५७-१९३५) ने अपनी गणना द्वारा (The call of the cosmos–Moscow Publishing House) अच्छा प्रकाश डाला है। उन्होंने युवा पत्र प्रावदा में २३ जुलाई सन् १९३५ को लिखा था कि मैं किसी विषय में इतना तल्लीन नहीं होता जितना पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति पर विजय प्राप्त कर अन्तरिक्ष यात्रा की समस्या को सम्भव बना देने में आत्मविभोर हो जाता हूँ। त्सियोल-कोवोस्की का कहना है कि दो बलवान मनुष्य एक मीटर की दूरी से ०.०५ मि० ग्राम की शक्ति से परस्पर एक दूसरे को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और यह शक्ति एक मीटर लम्बे बाल को झुका सकती है, किन्तु उसे कभी तोड़ नहीं सकती। विभिन्न ताराओं तथा ग्रहों पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति उनके द्रव्यमान और घनत्व के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। अगर पृथ्वी पर कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य लगभग ८० कि० ग्रा० वजनी किसी वस्तु को उठा कर कुर्सी पर कूद सकता है तो वही मनुष्य चन्द्रमा पर गाय को उठाकर ऊँची चारदीवारी के पार छलांग लगा सकता है। लेकिन सूर्य पर वही मनुष्य खड़ा तक नहीं हो सकता, बल्कि गिर कर मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा, क्योंकि वहाँ पृथ्वी से २७$\frac{9}{10}$ गुना अधिक गुरुत्वाकर्षण शक्ति है। इसीप्रकार मंगल और बुध ग्रहों पर १६०–२४० कि० ग्रा० वजनी वस्तु को उठा कर एक टेबुल पर कूद सकता है और वृहस्पति पर बिना किसी भार के वह मुश्किल से घसीट कर चल सकता है। दूसरी तरफ अत्यन्त छोटे ग्रहों (Asteroids—जो मंगल और वृहस्पति के बीच अधिक संख्या में हैं) पर वही मनुष्य मकानों को उठाकर ऊँचे वृक्षों, जंगलों, घाटियों तथा पहाड़ों के पार छलांग लगा सकता है। यह क्रिया उन ग्रहों के आकार-प्रकार पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए कुछ मीटर आकार वाले ग्रहों-उपग्रहों (Aero-lites) पर मनुष्य को किसीप्रकार के गुरुत्वाकर्षण का कोई अनुभव नहीं होगा।

त्सियोलकोवोस्की के अनुसार विभिन्न ग्रहों पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति पहाड़ों, मकानों तथा जीव-जन्तु के अंगों को सीमित कर देती है। चूँकि चन्द्रमा पर गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी का १/६ भाग है, इसलिए वहाँ पहाड़ों की तुलनात्मक ऊँचाई ६ गुना अधिक होगी और जो वस्तु पृथ्वी पर १२ कि० ग्रा० है वह चन्द्रमा पर २ कि० ग्रा० होगी। अगर पृथ्वी पर कोई ४० फीट का मनुष्य हो तो उसे चलने में बड़ी कठिनाई होगी, किन्तु चन्द्रमा पर वही मनुष्य आराम का अनुभव करेगा। इसीप्रकार अगर एक हजार फीट लम्बा मनुष्य जिसका वजन लगभग ३ लाख टन भी हो तो वह एक अत्यन्त छोटे ग्रह (१५० कि० मी० गोला) पर एक बकरी की तरह फुदक सकता है। दूसरी तरफ एक बौना (६·६ सेन्टीमीटर) सूर्य पर केवल ठहर सकता है।

चन्द्रमा से ब्रह्माण्ड का दृश्य पृथ्वी से भिन्न दिखाई देगा। वहाँ से सूर्य अत्यन्त चमकीला तथा रंग में बिलकुल नीला दृष्टिगोचर होगा तथा बाह्य वातावरण चकाचौंध उत्पन्न करेगा। आकाश तारकोल की तरह काला दिखाई देगा तथा तारे पृथ्वी की तरह झिलमिल-झिलमिल नजर न आकर आकाश की काली चादर में मोती की तरह जड़वत प्रतीत होंगे। वायुमण्डल के अभाव में चन्द्रमा पर नजदीक से ऊँची आवाज भी नहीं सुनाई देगी। चन्द्रमा का भौतिक स्वरूप वीरान, वातावरण निर्जीव तथा चारों तरफ पहाड़ियाँ, चट्टानें, गह्वर या बड़े-बड़े क्रेटर दिखाई देंगे। वहाँ पर सुर्योदय तथा सूर्यास्त पृथ्वी की तरह क्रमिक और लालिमायुक्त नहीं दिखाई देगा, बल्कि उदय और अस्त अकस्मात् हो जायेंगे। रात में चन्द्रमा पर अत्यधिक ठंडा और खुली धूप में असह्य गर्मी प्रतीत होगी। अगर ज़ोर से मारा जाय तो फुटबाल एक मील ऊपर उछल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जायेगा, एक छोटी कंकड़ी या मुलायम पंख को ६०० मीटर दूर तक फेंका जा सकेगा, वहाँ अरबी घोड़ा हवा से बातें करेगा। वहाँ मक्खियाँ अथवा कीड़े-मकोड़े पृथ्वी की तरह चारों तरफ उड़ नहीं सकेंगें, बल्कि सिर्फ ऊपर-नीचे फुदक सकेंगे। अगर पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षण न हो तो वायुमण्डल भी तत्काल समाप्त हो जायेगा, नदियाँ एवं समुद्र स्थिर होकर या तो जम जायेंगे या गैस के रूप में बदल जायेंगे। गुरुत्वाकर्षण के अभाव में जीव-जन्तु एवं वनस्पति का विनाश हो जायेगा। यदि गुरुत्वाकर्षण न हो तो मनुष्य को आन्तरिक रूप से (Subjectively) ऐसा प्रतीत होगा जैसे उसका हृदय डूब रहा है तथा स्पन्दन क्षीण हो रहा है। उसे ऐसा आभास होगा मानो वह बहुत ऊँचाई से गिर रहा हो। इसके अतिरिक्त अन्तरिक्ष में जहाँ गुरुत्वाकर्षण रहित वातावरण हो और उस वातावरण में यदि कोई वस्तु वहाँ स्थिर हो जाय तो उसे तब तक गतिशील नहीं बनाया जा सकता जब तक कि उसे किसी बाह्य शक्ति द्वारा गतिशील न बना दिया जाय। इसके विपरीत अगर कोई वस्तु गतिशील हो जाय तो उसकी गति सर्वदा वही बनी रहेगी।

गुरुत्वाकर्षण के सम्बन्ध में त्सियोलकोवोस्की की इस व्याख्या से स्पष्ट हो जाता है कि भौतिक जगत में गुरुत्वाकर्षण का कितना अधिक महत्व है। लेकिन अन्य सिद्धान्तों की भाँति त्सियोलकोवोस्की का यह सिद्धान्त भी यूक्लिड और न्यूटन की स्वतंत्र रेखागणित पर आधारित है जो कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के समक्ष नहीं टिक पाता, क्योंकि इसका मूल कारण स्वयं गुरुत्वाकर्षण में नहीं है, बल्कि एक मानसिक शक्ति में निहित है और वह शक्ति भी कारण और कार्य (Cause and effect) श्रृंखला से जुड़ी हुई है। दूसरे शब्दों में गुरुत्वाकर्षण एक भौतिकशक्ति है जो स्वयं अपने में एक स्वतन्त्र या निरपेक्ष शक्ति न होकर चेतन पुरुष से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। यद्यपि यह शक्ति प्रकृति की ओर से चेतनपुरुष पर एक बन्धन है, लेकिन आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) का आश्रय लेकर योगी इस भौतिकशक्ति को समाप्त कर सकते है अथवा मृत्यु के बाद सूक्ष्मजगत (Astral world) में इस भौतिक शक्ति का अस्तित्व स्वतः समाप्त हो जाता है, क्योंकि उस अवस्था में जीवात्मा 'देश-काल' (Space-time) से परे हो जाता है।

यह गुरुत्वाकर्षण शक्ति का ही प्रभाव है कि आज हमें चन्द्रमा पर पहुँचने के लिए एक ऐसे राकेट की आवश्यकता पड़ती है जिसकी गति कम से कम २५,००० मील प्रति घन्टे हो, क्योंकि पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण को पार करने के लिए इतनी गति आवश्यक है। आज अन्तरिक्ष में सुदूर ताराओं तक पहुँचने के लिए भी विज्ञान द्वारा महत्वाकांक्षी योजनायें बनाई जा रही हैं तथा उन पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनेक प्रकार के प्रयोग चल रहे हैं। उदाहरण के लिए आज ऐसा राकेट बनाने का प्रयास हो रहा है जिसका संचालन आणविक ऊर्जा (Atomic energy) द्वारा होगा और उसकी गति लगभग प्रकाश की गति के बराबर होगी। विज्ञान में इसे 'फोटोन राकेट' का नाम दिया गया है जिसमें परमाणु इंधन को विद्युत-चुम्बकीय तरंगों (Electro-magnetic waves) में परिवर्त्तित कर दिया जायेगा और इसे 'प्लाज्मा जेट' तथा अयन इन्जन' (ion engines) भी नाम दिया गया है। आधुनिक राकेट का निर्माण न्यूटन के इस सिद्धान्त पर निर्भर है कि जब कोई क्रिया होती है तो उतनी ही शक्तिशाली एक प्रतिक्रिया (Reaction) भी होती है। जब एक रबड़ के गुब्बारे में हवा भरी जाती है तो उस शक्ति का दबाव चारों ओर बराबर होता है और जब उसका मुंह खोल दिया जाता है तो हवा बाहर निकल जाती है। इस क्रिया में जिसप्रकार हवा का दवाव उसके मुंह की ओर होता है उसीप्रकार उस शक्ति का दबाव विपरीत दिशा में भी डाला जा सकता है। इसी नियम के अनुसार राकेट में भी इंधन का प्रयोग कर ऊर्जारूपी शक्ति को विपरीत दिशा में भी प्रयुक्त किया जा सकता है। गणित और भौतिकविज्ञान के आधार पर त्सियोलकोवोस्की ने यह निष्कर्ष निकाला कि अन्तरिक्ष यान के लिए एक ऐसा इन्जन होना चाहिये जो प्रतिक्रिया शक्ति (Reactionary power) द्वारा संञ्जालित हो सके। त्सियोलकोवोस्की के अतिरिक्त राकेट-विज्ञान के विकास मे हरमन ओवर्थ तथा राबर्ट गोडार्ड आदि का नाम भी प्रमुख रूप से लिया जात है। राबर्ट गोडार्ड ने अमेरिकी प्रतिरक्षा विभाग के लिए राकेटों का विकास किया और जर्मनी में भी वर्नहर वान ब्रान द्वारा इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य किया गया। इसी आधार पर द्वितीय महायुद्ध में नाजी जर्मनी ने V—2 राकेटों का प्रयोग कर तहलका मचा दिया था। इसके पश्चात् रूस और अमेरिका ने इन राकेटों को व्यापक रूप प्रदान कर अन्तरिक्ष यानों (Space ships) को दूसरे ग्रहों पर भेज कर उनका विधि-वत अध्ययन आरम्भ किया। इसी अनुसन्धान के आधार पर २१ जुलाई १९६९ ई० में दो अमेरिकन अन्तरिक्ष यात्री नील आर्मस्ट्रांग तना एडविन आल्ड्रिन ने सर्वप्रथम चन्द्रमा की सतह पर अपने पैर रखे तथा उस रोमांचकारी दृश्य को टेलीविजन द्वारा पृथ्वी पर प्रदर्शित किया गया।

लेकिन आज का अन्तरिक्ष विज्ञान कहीं इससे भी आगे बढ़ चुका है। इस सन्दर्भ में एरिक वान डेनिकेन ने अपनी पुस्तक (Return to the stars) में एक आश्चर्यजनक वैज्ञानिक प्रयोग का उल्लेख किया है तथा दो फ्रांसीसी वैज्ञानिक लुई पावेल्स एवं जेक्विस बर्जियर की पुस्तक (The Planet of impossible possibilities) का हवाला देते हुए कहा है कि विश्वविख्यात रूसी वैज्ञानिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के० पी० स्टेन्यूकोविच द्वारा एक चमत्कारी योजना (Project) पर कार्य हो रहा है। स्टेन्यूकोविच की योजना एक ऐसे अन्तरिक्ष यान का निर्माण करना है जो 'प्रति पदार्थ' (Anti-matter) द्वारा संञ्चालित होगा और इस चमत्कारी यान को 'उड़न चिराग' (Flying lamp) नाम दिया गया है। प्रोफेसर बर्जियर जो एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक हैं इस बात पर जोर देते हैं कि यह योजना एक वैज्ञानिक कल्पनामात्र (Science-fiction) नहीं है, बल्कि यह एक निश्चित समीकरण (Formula) पर आधारित है और इस महत्वपूर्ण योजना को कोई भी व्यक्ति स्टेन्यूकोचिव की प्रयोगशाला में जाकर देख सकता है। इस समीकरण के अनुसार 'उड़न चिराग' के लिए जब अन्तरिक्ष में ६५ बर्ष बीत चुका होगा तो इस पृथ्वी पर ४५ लाख वर्ष बीत गया होगा। लेकिन यह असीम गति भी विशाल ब्रह्माण्ड को मापने के लिए बहुत कम है और दूसरी तरफ इस सन्दर्भ में मनुष्य की आयु बहुत थोड़ी है। इसके लिए भी एक हल ढूँढ़ा गया है कि वह चमत्कारी उड़न चिराग यन्त्रमानव (Robot) चलायेगा और मनुष्य को बर्फ की तरह जमा कर (—२७३ डिग्री सेन्टीग्रेड) उसे हिमसमाधि दे दिया जायेगा तथा अन्तरिक्ष में जब मंजिल नजदीक आ जायेगी तो हिमसमाधि से मनुष्य को पुनर्जीवित कर दिया जायेगा। इसके पश्चात उस अन्तरिक्ष यान का संञ्चालन उस मनुष्य द्वारा ही किया जायेगा। इस सम्बन्ध में गीता कहती है कि वह हिमसमाधि तो केवल वस्त्र परिवर्त्तन है, स्थूल और सूक्ष्म का परस्पर रूपान्तरण है।

सोवियत रूस में स्टेन्यूकोविच की इस महत्वाकांक्षी योजना से कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद तथा जेराल्ड फेनबर्ग के प्रतिपदार्थ (Anti-matter) की पुष्टि होती है, क्योंकि जब कोई अन्तरिक्ष यान प्रतिपदार्थ द्वारा संञ्चालित होगा तो वह निश्चित रूप से प्रकाश की गति से परे सूक्ष्मजगत (Astral world) में विद्यमान होगा और जब सूक्ष्मजगत में विद्यमान होगा तो उस पर भौतिक जगत के 'देश-काल (Space-time) का कोई व्यवधान नहीं होगा। यह वही सूक्ष्म जगत होगा जहाँ फल (effect) पहले होता है और कारण (cause) बाद में। दूसरे शब्दों में इस भौतिकजगत के विपरीत उस सूक्ष्मजगत (Astral world) में भूत और वर्त्तमान से पहले भविष्य ही घटित हो जाता है, अर्थात् वहाँ समय उल्टी गति से चलता है। वास्तव में यह नियम सापेक्षवाद पर आधारित है जिसके अनुसार कारण और कार्य अभिन्न हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इस सम्बन्ध में जार्ज वाशिंगटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जार्ज गेमोव ने अपनी पुस्तक (one two three...Infinity) में एक दृष्टान्त प्रस्तुत किया है—कुमारी ब्राइट नाम की एक युवा लड़की थी जो प्रकाश की गति से भी तेज जा सकती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थी। एक रात्रि उसने इस गति से प्रस्थान किया और पूर्वरात्रि को ही वह लौट आई। दूसरे शब्दों में इस क्रिया द्वारा फल पहले हो गया और कारण बाद में। लेकिन गेमोव ने इस तथ्य पर प्रकाश नहीं डाला है कि वस्तुतः वह भौतिक जगत में थी अथवा मृत्यु के बाद सूक्ष्मजगत (Astral world) में, क्योंकि प्रकाश की गति से परे भौतिक सन्दर्भ में मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, जबकि गीता के अनुसार वह केवल वस्त्र परित्तंन है।

अतः स्टेन्यूकोविच के इस चमत्कारी अन्तरिक्ष यान में जो मनुष्य जायेगा भौतिक सन्दर्भ में उसकी भी मृत्यु हो जायेगी और फिर उसे हिमसमाधि देने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि भौतिक शरीर का क्षय समय द्वारा होता है और जहाँ समय का कोई प्रभाव नहीं है वहाँ भौतिक शरीर का भी कोई प्रश्न नहीं है। इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि आधुनिक विज्ञान का यह सिद्धान्त गलत प्रमाणित हो जाता है कि मनुष्य की मृत्यु के पश्चात स्वचेतना (Self consciousness) का भी अस्तित्व समाप्त हो जाता है और वह फिर जड़ परमाणुओं में ही विलीन हो जाता है, क्वोंकि अगर वह जड़ बन जायेगा तो उस चमत्कारी उड़न चिराग (Flying lamp) को कौन चलायेगा तथा सुदूर तारों पर कैसे पहुँच सकेगा ?

लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उस चमत्कारी उड़नचिराग में सैर करने-वाला मनुष्य महान योगी की तरह एक सिद्ध पुरुष बन जायेगा, क्योंकि प्रकाश की गति से परे होकर भी उसे अपने भौतिकजगत (Physical world) और उस सूक्ष्मजगत (Astral world) मे कोई अन्तर नहीं मालूम पड़ेगा। सापेक्ष-वाद के अनुसार इस सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कारणस्वरूप सूक्ष्म-जगत और कार्यस्वरूप स्थूलजगत मूलरूप से एक ही हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। सापेक्षजगत एवं उसपर आधारित सापेक्ष भ्रम के अन्तर को समझने के लिए अथवा सत्य का दर्शन प्राप्त करने के लिए हमें बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) नहीं, बल्कि योगी की तरह आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective Process) का आश्रय लेना पड़ेगा, क्योंकि पहली प्रक्रिया द्वारा हमें इस भौतिक-जगत की भाँति केवल छायाचित्रों के ही दर्शन होंगे, जबकि दूसरी प्रक्रिया द्वारा हमें परम सत्य का दर्शन प्राप्त होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि हम एक प्रक्रिया द्वारा इस विशाल ब्रह्माण्ड के ऊपर-ऊपर ही भागते फिरेंगे, बुद्धिवादी प्रयोग करते रहेंगे, जबकि दूसरी प्रक्रिया द्वारा हम आत्मसमर्पित होकर अथवा मन, बुद्धि एवं अहंकार का आश्रय छोड़कर प्रकृति या पदार्थ के अन्तस्थल मे घुस जायेंगे जहाँ सापेक्ष भ्रम समाप्त होकर सत्य का दर्शन प्राप्त होगा। यही अन्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है भौतिकवादी प्रक्रिया में और दिव्यस्वरूप यौगिकप्रक्रिया में, क्योंकि एक प्रक्रिया द्वारा हम प्रकृति के जाल में फसते हैं, उसके असंख्य मोहक नाम-रूपों एवं अनेक दिव्यलोकों में आसक्त होकर उसी को यथार्थ समझ जाते हैं, जबकि दूसरी प्रक्रिया द्वारा हम उस विकट जाल को तोड़कर बाहर निकल जाते हैं तथा कारण और कार्य की शृंखला से परे हो जाते हैं।

पहले कहा गया है कि न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण तथा आइन्स्टीन के गुरुत्वाकर्षण में जमीन और आसमान का अन्तर है, क्योंकि एक का आधार जड़ पदार्थ एवं उसकी गति है, जबकि दूसरे का आधार चेतनपुरुष एवं उसकी स्थिरता है। इस तथ्य को सांख्यदर्शन के पिता महर्षि कपिल ने आज से हजारों वर्ष पहले सिद्ध कर दिया था, लेकिन आधुनिक युग में स्वामी विवेकानन्द ने भी आइन्स्टीन, सर जेम्स जीन्स तथा आर्थर एडिंगटन से पहले ही उन्नीसवीं सदी के अन्त में ही न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का खण्डन कर दिया था। इस सन्दर्भ में ही स्वामी विवेकानन्द कहते हैं (The complete works of swami Vivekananda Vol. I, 1972 ed. P. 28) कि ज्ञान मनुष्य में ही अन्तर्निहित है। कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता, सब कुछ अन्दर ही है। आविष्कार का अर्थ है—मनुष्य का अपनी अनन्त ज्ञानस्वरूप आत्मा के ऊपर से (कण-तरंग) आवरण को हटा लेना। संसार ने जो कुछ ज्ञान लाभ किया है, वह मन से निकला है। विश्व का असीम पुस्तकालय तुम्हारे मन में ही विद्यमान है। स्वामी आगे कहते हैं कि सेव का गिरना न्यूटन के लिए उद्दीपक कारणस्वरूप हुआ और उसने अपने मन का अध्ययन किया। उसने अपने मन में पूर्व से स्थित भाव-शृंखला की कड़ियों को एक बार फिर से व्यवस्थित किया तथा उनमें एक नई कड़ी का आविष्कार किया। उसी को हम 'गुरुत्वाकर्षण' का नियम कहते हैं। यह न तो सेव में था और न पृथ्वी के केन्द्र में स्थित किसी अन्य वस्तु में ही। अतः समस्त ज्ञान चाहे वह व्यवहारिक हो या पारमार्थिक, लौकिक हो या अलौकिक मनुष्य के मन में ही निहित है। बहुधा यह प्रकाशित न होकर ढंका रहता है और जब आवरण (गुणात्मक) धीरें-धीरे हटता जाता है, तो हम कहते हैं कि हमें ज्ञान हो रहा है। जिस मनुष्य पर से यह आवरण (त्रिगुणात्मक सामंजस्य) बिलकुल चला जाता है, वह सर्वज्ञ पुरुष कहलाता है।

परन्तु न्यूटन ईश्वरवादी होते हुए भी अपने गुरुत्वाकर्षण को एक स्वतन्त्र या निरपेक्ष सिद्धान्त बना दिया। अगर पूछा जाय कि फिर ईश्वर क्या करता है ? तो अरस्तू की भाँति आधुनिक विज्ञान भी यही उत्तर देगा कि वह चुपचाप पड़ा देखता रहता है। लेकिन इस उत्तर में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। हमारा सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन भी यही कहता है कि निर्गुण और निरा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार आत्मा या परमात्मा केवल द्रष्टा और साक्षी है। वास्तव में जगत का कर्म-व्यापार तो प्रकृति या पदार्थ द्वारा ही होता है, कण-तरंगों के क्रमगठन एवं क्रमविघटन द्वारा ही सृष्टि चलती है। आत्मा या परमात्मा तो एक नित्य, शाश्वत और अविनाशी तत्त्व हैं, वह तो एक स्थिर एवं अचल तत्व है। प्रकृति ही बन्धन में पड़ती है और उसी का एक अंश अहंकार (Ego) मुक्त होकर अनन्त चेतनशक्ति में विलीन हो जाता है। इस आधार पर अगर अद्वैत वेदान्त प्रकृति या पदार्थ को मायारूप मानता है तो हम इस सर्वोत्कृष्ट दर्शन का खण्डन नहीं कर सकते, क्योंकि निरपेक्ष शक्ति सर्वदा एक ही रहेगी, वह कभी भी दो नहीं हो सकती। अगर दो प्रतीत होती हैं तो इसका कारण अहंज्ञान एवं सापेक्षभ्रम है। आधुनिक जगत की एक बड़ी बिडम्बना यह है कि यूक्लिड और न्यूटन के इस मशीनी ब्रह्माण्डवाद पर आधारित विज्ञान, दर्शन एवं साहित्य सम्बन्धी लाखों पुस्तकें आज भी हजारों विद्यालयों में पढ़ाई जा रही हैं। इन विषयों पर अनुसन्धान चल रहे हैं और अनुसन्धानकर्त्ताओं को अनेक प्रकार की उपाधियों से विभूषित किया जाता है, मानों उन्हें सत्य का दर्शन हो चुका है। यह दावा किया जाता है कि वे पण्डित लोग जहाँ तक जानते हैं अब उसके आगे जानने की और कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विज्ञान द्वारा प्रस्तुत प्रामाणित सिद्धान्त एवं इन्द्रियजनित ज्ञान ब्रह्मवाक्य के समान हैं। लेकिन उन तथाकथित पण्डितों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि आज का विज्ञान एक-एक कर वही प्रमाणित करता जा रहा है जो हजारों वर्ष पहले वेदान्त प्रमाणित कर चुका है।

वास्तव में गुरुत्वाकर्षण शक्ति विज्ञान के लिए सर्वदा से एक पहेली रही है, क्योंकि यह प्रकृति की अन्य शक्तियों (ताप, प्रकाश, विकिरण, ऊर्जा, विद्युत, चुम्बकीय तरंगें, रेडियो तरंगें आदि) से सर्वथा पृथक प्रतीत होती है। यह शक्ति तत्काल (Instantaneously) अपना प्रभाव स्थापित कर लेती है, चाहे उन वस्तुओं की भौतिक एवं रासायनिक अवस्था कुछ भी क्यों न हो। यद्यपि विज्ञान में पहले यह समझा जाता था कि प्रकाश तरंगें (Light waves) चुम्बकीय तरंगें (Magnetic waves) तथा रेडियो तरंगें (Radio waves) आदि प्राकृतिक शक्तियाँ भी तुरन्त अपना प्रभाव स्थापित कर लेती हैं, लेकिन फेराडे, मैक्सवेल तथा हर्ज आदि वैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित किया कि इन शक्तियों का प्रसार 'देश-काल' (Space-time) के अन्तर्गत ही हो पाता है और इस शक्तियों की गति भी प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) के बराबर होती है। लेकिन इसके विरुद्ध गुरुत्वाकर्षण का अस्तित्व सदैव पृथक बना रहा। इसीलिए विज्ञान में इस अज्ञात शक्ति को चुम्बकीय शक्तियों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पृथक माना जाता रहा। इस शक्ति की दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस पर किसी आवरण (Sheath) अथवा अवरोध (obstruction) का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। संसार में कुछ ऐसे भी पदार्थ हैं जो प्रकाश, ताप, विकिरण, विद्युत, चुम्बकत्व तथा एक्स-रे आदि भौतिकशक्तियों की गति को अवरुद्ध कर देते हैं, किन्तु अभी तक विज्ञान किसी ऐसे पदार्थ को नहीं जानता जो गुरुत्वाकर्षण शक्ति को अवरुद्ध कर देने में समर्थ हो। उदाहरण के लिए अगर कोई वस्तु हवा में लटका दी जाय और उस वस्तु तथा पृथ्वी की सतह के बीच अनेक वस्तुएँ रख दी जाँय तो भी उस वस्तु का भार वही होगा, क्योंकि प्रकृति का गुरुत्वाकर्षण जितना ऊपर कार्य करेगा उतना ही नीचे और उस वस्तु पर पृथ्वी के खिंचाव (Pull) में कोई परिवर्त्तन नहीं होगा। यही कारण है कि विज्ञान में गुरुत्वाकर्षण को एक पृथक शक्ति माना जाता है।

आइन्स्टीन ने अपने सापेक्षवाद द्वारा न्यूटन के गुरुत्वाकर्यण को ध्वस्त कर दिया। इस सन्दर्भ में आइन्स्टीन ने सर्वप्रथम न्यूटन के 'निश्चलता-नियम' (The law of Incrtia) पर प्रत्यक्ष प्रहार किया। निश्चलता नियम के अनुसार प्रत्येक वस्तु तब तक अपनी स्थिर अवस्था (In its state of rest) में रहती है अथवा सीधी रेखा में एकरूप गति (Uniform motion) से चलती रहती है जब तक कि किसी बाह्य शक्ति के प्रभाव से उसकी अवस्था में परिवर्त्तन नहीं कर दिया जाता। उदाहरण के लिए यह 'निश्चलता शक्ति' का ही प्रभाव है कि जब रेलगाड़ी सहसा एक झटके से रुकती है या स्थिर अवस्था से गति पकड़ती है अथवा किसी मोड़ पर झटके से घूमती है तो हमारी इन्द्रियों के माध्यम से मस्तिष्क में एक विशेष प्रकार की संवेदना उत्पन्न होती है और उस संवेदनात्मक क्रिया द्वारा ही हमें रेलगाड़ी की अवस्था का बोध होता है। रेलगाड़ी की उस क्रिया द्वारा हमारी शारीरिक एवं मानसिक संवेदना जो एक सीधी रेखा में एकरूप गति (uniform motion) से चलने का अभ्यस्त हो गई थी, लेकिन जब गाड़ी में झटके आदि के रूप में एक विषम गति (Non-uniform motion) उत्पन्न हुई तथा उस विषम गति से एक प्रतिरोधक शक्ति का जन्म हुआ तो उस पूर्व शारीरिक एवं मानसिक अवस्था में भी परिवर्त्तन हो गया। इसप्रकार उसी संवेदनात्मक अनुभूति को अथवा शक्ति को 'निश्चलता शक्ति' (Inertia) कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि बाह्यजगत (Objective world) की कोई भी क्रिया अथवा प्रतिक्रिया तभी एक सार्थक रूप ग्रहण कर सकती है जब उस क्रिया या प्रतिक्रिया की एक आन्तरिक अनुभूति (Subjective stimulus) हो। इसका वास्तविक अर्थ यह हुआ कि स्वचेतना से पृथक किसी भी क्रिया, प्रतिक्रिया, ऊर्जा-प्रवाह अथवा घटनाचित्र का कोई अस्तित्व नहीं है। यह सब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ स्वचेतना एवं मानसिक शक्ति से जुड़ा हुआ विद्युत् तारों की भाँति एक जाल (Circuit) है जो ऊर्जा-प्रवाह एवं चुम्बकीय तरंगों के माध्यम से इलेट्रानिक यन्त्र मस्तिष्क (Brain) में छायाचित्रों के रूप में प्रतिभासित अथवा चित्रित (Projected) होता है। दूसरे शब्दों में आत्मा के प्रकाश से ही सब कुछ प्रकाशित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। सांख्य कहता है सृष्टि के लिए प्रकृति और पुरुष का संयोग आवश्यक है।

न्यूटन के अनुसार किसी वस्तु को गतिशील (Accelerated) बनाये रखने में शक्ति की जितनी मात्रा आवश्यक है वह उस वस्तु के द्रव्यमान (Mass) पर निर्भर है। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न भारवाली वस्तुओं पर शक्ति मी मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है। लेकिन एक अवस्था ऐसी भी होती है जबकि किसी गतिशील वस्तु के बढ़ाव (Acceleratiou) और उसके द्रव्यमान (Mass) में कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। गैलीलियो ने प्रयोग द्वारा यह पता लगाया था कि हवा के प्रतिरोध को छोड़कर सभी वस्तुएँ आकाश से जमीन पर लगभग एक ही अनुपात में गिरती हैं, चाहे उनका आकार-प्रकार कुछ भी क्यों न हो। उदाहरण के लिए शून्य (Vacuum) में एक रूमाल और एक भारी गेंद एक ही साथ नीचे गिरेंगे। यह क्रिया न्यूटन के 'निश्चलता नियम' (Law of Inertia) का उलंघन करती है। वैज्ञानिकों के लिए यह एक रहस्य का विषय था कि क्यों वस्तुएँ ऊपर से नीचे (Vertically) एक ही गति से आगे बढ़ती हैं, चाहे उनका आकार-प्रकार एवं द्रव्यमान (Mass) कुछ भी क्यों न हो, जबकि वे ही वस्तुएँ समतल या समानान्तर (Horizontally) अवस्था में अपने द्रव्यमान द्वारा ही प्रभावित होती हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि 'निश्चलता शक्ति' सिर्फ समानान्तर अवस्था में ही कार्य करती हैं।

इस समस्या का समाधान न्यूटन ने अपने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त द्वारा प्रस्तुत किया। इस नियम के अनुसार जिस रहस्यमय शक्ति द्वारा कोई भौतिक वस्तु किसी दूसरी वस्तु को आकर्षित करती है, तो उस आकर्षित वस्तु के द्रव्यमान के फलस्वरूप ही उस शक्ति में वृद्धि होती है। कोई वस्तु जितनी ही बड़ी होगी उसमें गुरुत्वाकर्षण शक्ति उतनी ही अधिक होगी। अगर कोई वस्तु छोटी है तो उसकी 'निश्चलता शक्ति' अथवा गति की प्रतिरोधक शक्ति भी अपेक्षाकृत क्षीण होगी। इसके विपरीत अगर कोई वस्तु बड़ी है तो उसकी 'निश्चलता शक्ति' (Inertia) भी बड़ी होगी और उसके साथ उस वस्तु पर गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव भी बड़ा होगा। अतः यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित गुरुत्वाकर्षण और निश्चलता शक्ति के पूर्ण सन्तुलन का यह नियम विज्ञान में बहुत दिनों तक माना जाता रहा। आधुनिक यन्त्र-विज्ञान, मशीनी ब्रह्माण्डवाद तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

खगोलशास्त्रीय सिद्धान्त भी न्यूटन के इसी नियम पर आधारित थे, पर क्वाण्टम-वाद और सापेक्षवाद ने विज्ञान का सम्पूर्ण ढाँचा तथा उसकी रेखागणित को बदल कर रख दिया।

बीसवीं सदी में आइन्स्टीन ही वह सर्वप्रथम वैज्ञानिक थे जिन्होंने न्यूटन के इस सिद्धान्त को चुनौती दी कि गुरुत्वाकर्षण स्वयं अपने में कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष शक्ति है जो तत्काल (Instantaneously) सुदूर वस्तुओं को भी अपनी ओर खींच लेती है। आइन्स्टीन ने अपने सापेक्षवाद द्वारा यह प्रमाणित किया कि गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त यूक्लिड की स्वतन्त्र या निरपेक्ष रेखागणित पर आधारित नहीं है, बल्कि उसका अभिन्न सम्बन्ध स्वचेतना (Self consciousness) से जुड़ा हुआ है तथा कारण और कार्य की अटूट शृंखला से बँधा हुआ है और वह सीधी रेखाओं वाली रेखागणित नहीं है, बल्कि कालचक्र से बँधी हुई वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) है जिसमें कारण ही कार्य हो जाता है तथा कार्य ही कारण, सूक्ष्म ही स्थूल बन जाता है और स्थूल ही सूक्ष्म। इस वृत्तात्मक रेखागणित में ऊपर-नीचे एवं दाएँ-बाएँ कुछ भी नहीं है, बल्कि सीमित इन्द्रियज्ञान द्वारा उत्पन्न एक सापेक्ष भ्रम है। उदाहरण के लिए अगर किसी दूसरे ग्रह से टेलीस्कोप द्वारा पृथ्वी की ओर देखा जाय तो यहां के मनुष्य उल्टा लटकते हुए नजर आयेंगे, जबकि हम अहंज्ञान द्वारा इस पृथ्वी पर अपने को सीधा खड़ा हुआ समझते हैं। इसीप्रकार अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त भौतिकजगत के विविध ज्ञान को ही हम यथार्थ समझ लेते हैं, उसी को सत्य की सीमा मान बैठते हैं, जबकि तथ्य यह है कि सत्य का ज्ञान हमें देश-काल तथा इन्द्रियों से परे होकर ही प्राप्त हो सकता है, क्योंकि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत इन सभी भौतिक शक्तियों से परे है। अपने अनुसन्धान और गहन चिन्तन द्वारा आइन्स्टीन ने यह निष्कर्ष निकाला कि 'देश-काल' (Space-time) के अन्तर्गत किसी वस्तु तथा अवस्था का इस ब्रह्माण्ड में कोई निरपेक्ष (Absolute) अस्तित्व नहीं है, बल्कि उसका बोध किसी दूसरी वस्तु तथा अवस्था के सन्दर्भ में ही हो सकता है और यही प्रमाणित निष्कर्ष आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का सारतत्व है। यह सिद्धान्त केवल शुद्ध विचार (Pure thought) और गणित पर आधारित नहीं है, बल्कि प्रयोगशालाओं में नियन्त्रित प्रयोगों के अन्तर्गत सिद्ध है।

अतः सापेक्षवाद के नियमों के अनुसार गुरुत्वाकर्षण शक्ति और निश्चलता शक्तियों (Inertial Forces) द्वारा उत्पन्न गतिशील शक्ति में अन्तर करना सम्भव नहीं है। इस नियम की परीक्षा हवाई उड़ान में की जा सकती है, जबकि निश्चलता शक्ति और गुरुत्वाकर्षण शक्ति में अन्तर करना असम्भव होगा। दूसरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शब्दों में दोनों शक्तियाँ अभिन्न हैं और एक को दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। वास्तव में स्वचेतना से पृथक गुरुत्वाकर्षण तथा निश्चलता शक्ति का कोई अस्तित्व नहीं है। आइन्स्टीन के अनुसार यह विचार कि दो वस्तुएँ यन्त्र की भाँति एक दूसरे को आकर्षित करती हैं सिर्फ एक सापेक्ष भ्रम (Illusion) है जो प्रकृति को एक विशाल यन्त्र (Mechanical power) के रूप में देखने का स्वाभाविक परिणाम है। सापेक्षवाद के अनुसार ब्रह्माण्ड एक मशीन नहीं है, बल्कि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत से जुड़ा हुआ एक सापेक्ष अस्तित्व है। अतः आइन्स्टीन का गुरुत्वाकर्षण स्वयं अपने में कोई शक्ति नहीं है, बल्कि स्वचेतना से जुड़ा हुआ ब्रह्माण्ड की एक ऐसी वृत्तात्मक रेखागणित है जिसमें एक गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र (Gravitational field) स्थापित हो जाता है और उस क्षेत्र में सभी नक्षत्र-पिण्ड एक विशेष आचरण एवं व्यवहार प्रकट करने के लिए बाध्य हो जाते हैं तथा उस शक्ति से प्रभावित होकर अपने नियत कक्ष (orbits) का अनुसरण करने लगते हैं। इसप्रकार स्वचेतना से संयुक्त वह भौतिक शक्ति ही गुरुत्वाकर्षण है। आइन्स्टीन के अनुसार यह भौतिकजगत चार आयामों (Four dimensional continuum) द्वारा निर्मित है तथा लम्बाई, चौड़ाई एवं ऊँचाई के अतिरिक्त समय के अभिन्न आयाम के बिना इस जगत की कोई भी रेखागणित नहीं बन सकती, क्योंकि समय का अस्तित्व घटनाचित्रों पर निर्भर है और घटनाचित्र समय पर निर्भर हैं। इस सन्दर्भ में जो अधुनातन अनुसन्धान हुए हैं उनसे स्पष्ट होता है कि यद्यपि समय ऊर्जा का ही एक नाम-रूप है, लेकिन उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध आभ्यन्तरिक प्रक्रिया से है तथा समय का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पहलू (भविष्य) कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) से जुड़ा हुआ है और जबतक हम कारण को नहीं समझेंगे तबतक कार्यस्वरूप भौतिकजगत को भी नहीं समझ सकेंगे।

न्यूटन के सिद्धान्त से यह प्रकट होता है कि गुरुत्वाकर्षण एक जड़ मशीन की तरह कार्यरत है और नक्षत्र-पिण्ड आदि सभी भौतिक वस्तुएँ स्वयं अपने में स्वतन्त्र शक्ति हैं, जबकि आइन्स्टीन के सिद्धान्त द्वारा यह प्रदर्शित होता है कि उस शक्ति की प्रकृति मानसिक है जो स्वचेतना से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है और जो ब्रह्माण्ड के विशेष ढाँचे (Four dimensional continuum) में केवल प्रतिबिम्बित होती है। यह ब्रह्माण्ड यूक्लिड की सीधी रेखागणित पर आधारित नहीं है, बल्कि उसका आधार 'रीमानियन रेखागणित' (Riemanian geometry) है। इस रेखागणित के परिणामस्वरूप आकाश-पिण्डों के आसपास बिना कोणों वाला झुकाव (curvature) उत्पन्न हो जाता है तथा यह विशेष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

झुकाव ही मन एवं स्वचेतना के प्रभाव से गुरुत्वाकर्षण शक्ति के रूप में प्रकट होता है। आइन्स्टीन के अनुसार यही कारण है कि वह शक्ति सर्वत्र एक समान अपने अपरिवर्त्तित रूप में दृष्टिगोचर होती है, क्योंकि इस शक्ति का अस्तित्व स्वयं 'देश-काल' (space-time) के उस विशिष्ट ढाँचे में ही निहित है। आइन्स्टीन के विचार से गुरुत्वाकर्षण 'निश्चलता शक्ति' का ही अभिन्न अंग है और तारामण्डलों तथा ग्रहों की गतिशीलता उसी अन्तर्निहित शक्ति (Inertia) से ही उत्पन्न होती है। यद्यपि आइन्स्टीन के सापेक्षवाद तथा उनकी वृत्तात्मक रेखागणित की धारणा अथवा मानसचित्र (Mental image) आसानी से नहीं उभर पाता है, क्योंकि हमारे मन-मस्तिष्क पर यूक्लिड और न्यूटन का भूत सवार होता है और उस भूत के साथ अहंकार (Ego) का इतना अटूट सम्बन्ध होता है कि बिना समाधि में गये उस प्रबल प्राकृतिक शक्ति (Ego) से छुटकारा नहीं हो पाता है, क्योंकि सांख्य दर्शन के अनुसार इस शक्ति की उत्पत्ति सृष्टि के आदि में ही हो जाती है। हम जड़ प्रकृति को ही सब कुछ मान लेते हैं और अपनी वास्तविक शक्ति (आत्मा) को नही पहचानते। यही कारण है कि हम प्रकृति के हाथों बन्धक हो जाते हैं। हम उस शक्ति को जिस रूप में देखेंगे वस्तुतः वह शक्ति उसी रूप में परिवर्त्तित हो जायेगी। उदाहरण के लिए अगर हम उसे ऊर्जा मानते हैं तो ऊर्जा ही हमारे लिए परम शक्ति बन जायेगी, यदि समय मानते हैं तो वह भी उसी रूप में प्रकट होगा, अगर मन, बुद्धि एवं अहंकार को सब कुछ समझते हैं तो वही सर्वशक्तिमान बन जायेंगे। इसीप्रकार यदि हम प्राकृतिक शक्तियों को कोई महत्त्व न देकर आत्मा या परमात्मा को ही सब कुछ समझते हैं, तो उसके सिवाय इस ब्रह्माण्ड में और कुछ नहीं रह जायेगा (ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या)। यही कारण है कि आज विज्ञान को ऊर्जा से परे एक मानसिक शक्ति का बोध हो रहा है, क्योंकि अब उसका चेतन-स्तर अथवा मानसिक स्तर ऊपर उठ चुका है। लेकिन उसका अहंज्ञान उसे परम चेतनशक्ति अथवा परम सत्य से पृथक कर दे रही हैं। इस अहंज्ञान द्वारा ही जगत छायाचित्रों के रूप में प्रतिभासित होता है, क्योंकि वह कर्त्ता न होते हुए भी अहंकारवश अपने को ही कर्त्ता मान लेता है। अतः जब अहंज्ञान दूर होगा तभी सत्य का बोध हो सकता है।

वास्तव में सापेक्षवाद के अनुसार यह विशाल ब्रह्माण्ड स्वयं अपने में एक विशाल चुम्बक नहीं है, बल्कि स्वचेतना के प्रकाश में उसका व्यवहार एवं चरित्र चुम्बकीय सा प्रतीत होता है, क्योंकि प्रकृति और पुरुष दो परस्पर विरोधी शक्तियों के संयोग से अनेक प्रकार की परस्पर विरोधी शक्तियों का भी जन्म हो जाता है जिसके फलस्वरूप जगत में द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा कारण और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्य की शृंखला निर्बाध चलती रहती है। सांख्य दर्शन का यह सिद्धान्त अकाट्य है और इसी अकाट्य सिद्धान्त पर वेदान्त, योगदर्शन तथा बौद्धदर्शन आदि सभी आधारित हैं। आज के विज्ञान को भी देर-सवेर इस अकाट्य सिद्धान्त को मानना ही पड़ेगा, क्योंकि महामुनि कपिल के अवतारस्वरूप डा० अलबर्ट आइन्स्टीन ने आज के विज्ञान के लिए और कोई मार्ग ही नहीं छोड़ रखा है। इस अकाट्य सिद्धान्त पर आधारित दर्शन को ही वेदान्त कहते हैं। यह एक सनातन दर्शन है और इस पर आधारित धर्म को ही पवित्र भूमि भारतवर्ष का सनातन धर्म कहते हैं जो सृष्टि के आदि से आता है और सृष्टि के अन्त तक बना रहता है। अनेक प्रकार की सभ्यता एवं संस्कृति के तूफानी थपेड़े इस सनातन धर्म का कुछ नहीं बिगाड़ सकते, क्योंकि यह सत्य का दर्शन है और सत्य सर्वदा सभी परिस्थितियों में सत्य ही रहता है। यही कारण है कि यह सनातन धर्म अनादि काल से उसीप्रकार चला आ रहा है, जबकि अनेक सभ्यता एवं संस्कृति उत्थान और पतन के गर्त्त में डूब चुकी हैं।

यह आइन्स्टीन के सिद्धान्त का ही प्रभाव है कि आज वैज्ञानिक उनके 'चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) के सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं। उदाहरण के लिए विज्ञान में पहले यह कहा जाता था कि एक चुम्बक अपनी शक्ति से एक लौह-खण्ड को अपनी ओर यान्त्रिक ढंग से खींचता है, लेकिन सापेक्षवाद के प्रादुर्भाव से अब यह कहा जाता है कि वह चुम्बक अपने चारों ओर एक ऐसी भौतिक अवस्था (Physical condition) उत्पन्न कर देता है जिससे चारों ओर एक चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) स्थापित हो जाता है और उस क्षेत्र के प्रभाव में आकर लौह-खण्ड एक विशेष प्रकार का गतिशील व्यवहार प्रदर्शित करने के लिए बाध्य हो जाता है, क्योंकि उस क्षेत्र के साथ एक प्रबल मानसिक शक्ति कार्यरत है। दूसरे शब्दों में उस भौतिक शक्ति का अस्तित्व निरपेक्ष नहीं, बल्कि सापेक्ष है। इस शक्ति के आकार-प्रकार को सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जेम्स क्लर्क मैक्सवेल ने प्रमाणित कर दिया था। आइन्स्टीन के अनुसार इसीप्रकार आकाश में तारा-मण्डलों तथा ग्रह-नक्षत्र-पिण्डों की गतिशीलता द्वारा उनके चारों ओर एक शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) उत्पन्न हो जाता है और जिसप्रकार चुम्बक के क्षेत्र में लौह-पिण्ड प्रभावित हो जाते हैं उसीप्रकार उस चुम्बकीय क्षेत्र में ग्रह, नक्षत्र-पिण्ड तथा आकाश गगाएँ एवं प्रकाश किरणें भी प्रभावित हो जाती हैं, क्योंकि उनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध ऊर्जा से नहीं है, बल्कि एक प्रबल मानसिक शक्ति (cosmic mind) से है। आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार जहाँ भी पदार्थ एवं ऊर्जा तथा गति होगी वहाँ की रेखागणित भी परिवर्त्तित हो जायेगी। उदाहरण के लिए समुद्र में जब मछली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तैरती है तो जल में छोटी-छोटी लहरियों (Ripples) के रूप में हलचल उत्पन्न हो जाती है, क्योंकि ऊर्जा के रूप में विद्यमान जल की कण-तरंगें परस्पर एक दूसरे को प्रभावित कर देती हैं। इसीप्रकार तारामण्डलों तथा ग्रह-पिण्डों की गतिशीलता से 'देश-काल' (spacc-time) के अभिन्न आयाम में भी एक प्रचण्ड हलचल उत्पन्न हो जाती है जिसके फलस्वरूप स्थूल एवं सूक्ष्म तथा निर्जीव एवं सजीव सभी वस्तुएँ प्रभावित होकर अपने नियत कक्ष (orbits) अथवा वृत्तियों (circles) का अनुसरण करने लगती हैं। यद्यपि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की यह हलचल एक लय और सुर (Rhythmical order) में होती है जिसमें प्रकृति की सभी परस्पर विरोधी शक्तियाँ कार्यरत होती हैं, तो भी मनुष्य का अहंज्ञान स्वयं अपने को ही कर्त्ता समझ लेता है, क्योंकि उसे इन्द्रियों द्वारा ऐसा ही प्रतीत होता है। लेकिन जब वह इन्द्रियों से परे (Extra sensory perception) होता है तो उसे सत्य का बोध हो जाता है। जो लोग इस आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा स्वयं अपने अन्तस्थल में प्रयोग करते हैं उन्हीं महावैज्ञानिकों को हम योगी के नाम से सम्बोधित करते हैं। कपिल, बुद्ध, शंकराचार्य, रामकृष्ण तथा रमण आदि महात्माओं ने ऐसा ही प्रयोग कर अपने परम सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। अगर हम उन सिद्धान्तों को नहीं मानना चाहते हैं तो इसका मूलकरण हमारा अहंज्ञान है, उन तथाकथित वैज्ञानिक सिद्धान्तों के प्रति हमारी मोहमाया अथवा अन्धभक्ति है। वास्तव में सत्य वही है जिसे हम अपनी सीमित एवं सापेक्ष इन्द्रियों द्वारा नहीं देख पाते, नहीं समझ पाते और असत्य वही है जिसे हम इस सापेक्षजगत में अपनी इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष देखते हैं और उन्हें सत्य मानकर मुग्ध हो जाते हैं, उन्हीं पर आसक्त हो जाते हैं। गीता के अनुसार यह आसक्ति ही प्रकृति के बन्धन का मूलकारण है। इस तथ्य पर कपिल और आइन्स्टीन का सापेक्षवाद यथेष्ट प्रमाण प्रस्तुत कर चुका है और अब अधिक प्रमाण देने की कोई आवश्यकता नहीं है।

इसप्रकार आइन्स्टीन का गुरुत्वाकर्षण न्यूटन के सिद्धान्त से सर्वथा भिन्न है, किन्तु बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग करनेवाले अधिकांश वैज्ञानिक अब भी यही मानते हैं कि प्रयोग में न्यूटन के नियम भी सन्तोषजनक फल देते हैं। जब पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने न्यूटनके सिद्धान्त को ही ब्रह्मवाक्य मान लिया तो बीच में कौन ऐसी हस्ती है जो उस सिद्धान्त का खण्डन कर सके। यही कारण है कि सभी विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में हमारे बुद्धिजीवी प्रोफेसर न्यूटन के उस वेद-वाक्य की ही शिक्षा देते चले आ रहे हैं, क्योंकि वह शुद्ध ज्ञान पश्चिम के अकाट्य प्रमाणों पर आधारित है। जब कोई बुद्धिवादी सिद्धान्त अकाट्य प्रमाणों पर आधारित हो जायेगा तो सामान्य मनुष्यों को भी अन्धविश्वासी बनना पड़ेगा, उन सिद्धान्तों के अनुरूप अपने को ढालना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ेगा, क्योंकि सभी कपिल, शंकराचार्य, रामकृष्ण और रमण नहीं हो सकते। आधुनिक जगत की आज वही स्थिति है कि हम वैज्ञानिक सिद्धान्तों की चकाचौंध में अन्धविश्वासी बन गये हैं, असत्य को सत्य समझने लगे हैं, क्योंकि स्वयं हमें अपने अर्न्तज्ञान पर विश्वास नहीं रह गया है, क्योंकि चेतना को छोड़कर हम जड़ पदार्थ को ही सत्य समझ गये हैं। ऐसी अवस्था में अगर असत्य भी सत्य प्रतीत होता है तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, क्योंकि सापेक्षवाद का यही स्वाभाविक कल होता है।

लेकिन स्वयं आज के ही वैज्ञानिक यह स्वीकार करते हैं कि आइन्स्टीन के इस नवीन सिद्धान्त की परीक्षा बुधग्रह (Mercury) की अनिर्दिष्ट (Eccentric) चाल के सम्बन्ध में कसौटी पर खरी सिद्ध होती है, जबकि न्यूटन के सिद्धान्त द्वारा उसकी समुचित व्याख्या नहीं हो पाती। यह आइन्स्टीन के सिद्धान्त की एक प्रमुख विजय मानी जाती है। अन्य ग्रहों की भाँति बुध ग्रह एक निश्चित अण्डवृत्ताकार गति (Elliptical motion) का अनुसरण न कर प्रत्येक वर्ष अपने स्वाभाविक पथ से कुछ विचलित होकर एक नये मार्ग पर गतिशील रहता है और यह अनोखी क्रिया विज्ञान के लिए एक पहेली थी। आइन्स्टीन के अनुसार सूर्य के प्रचण्ड गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र (Gravitational field) और बुध ग्रह की तीव्र गति के फलस्वरूप ही यह अन्तर होता है जो ३० लाख वर्षों में एक सम्पूर्ण वृत्त (Revolution) के बराबर होता है। इसप्रकार तीव्र गति तथा शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्रों के सन्दर्भ में आइन्स्टीन की गणना न्यूटन की गणना से अधिक सही और उपयुक्त प्रमाणित होती है।

इसके अतिरिक्त आइन्स्टीन के सिद्धान्त द्वारा जो अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाचित्र (Phenomenon) उपस्थित होता है वह है—प्रकाशकिरणों पर गुरुत्वाकर्षण शक्ति का प्रभाव। इस नियम के अनुसार जिसप्रकार गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से आकाशपिण्डों (ग्रह-नक्षत्र) के गुजरने से 'देश-काल' के आयाम में ब्रह्माण्ड की रेखागणित के अनुरूप (Four dimensional continuum) बिना कोणोंवाला एक झुकाव (curve) उत्पन्न हो जाता है उसीप्रकार अन्तरिक्ष की प्रकाश किरणें जब उस गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से गुजरती हैं तो उनमें भी बिना कोणों वाला एक झुकाव उत्पन्न हो जाता है, क्योंकि चार आयाम वाले उस ढ़ाँचे (Four dimensional structure) में वही उनका संक्षिप्त एवं स्वाभाविक मार्ग (Shortest route) है। इस नियम का वैज्ञानिक अर्थ यह हुआ कि किसी सुदूर तारे की प्रकाश-किरण जब सूर्य के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से गुजरेगी तो उस किरण में झुकाव (Deflection) आ जायेगा जिसके फलस्वरूप आकाश में वह तारा अपनी जगह से हटा हुआ (Displaced) प्रतीत होगा। सापेक्षवाद में यह भी मानसिक भ्रम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का एक उदाहरण है जो यूक्लिड की सीधी रेखागणित का प्रत्यक्ष परिणाम है। आइन्स्टीन के इस सिद्धान्त की परीक्षा वैज्ञानिक ग्रहण (Eclipse) के समय ही कर पाते हैं और २९ मई १९१९ ई० को ग्रहण के अवसर पर उत्सुक वैज्ञानिकों ने इस सिद्धान्त की प्रथम परीक्षा की। इस वैज्ञानिक परीक्षण में खींचे गये चित्रों को जब साफ किया गया तो आइन्स्टीन का कथन पूर्णतया सही सिद्ध हुआ। इसके पश्चात् तो अनेक परीक्षण हो चुके हैं और सभी में उसी तथ्य की पुष्टि हुई है।

आइन्स्टीन के इस सिद्धान्त की एक अन्य महत्वपूर्ण वात यह है कि सूर्य के परमाणुओं का कम्पन पृथ्वी के उसीप्रकार के परमाणुओं के कम्पन से अपेक्षाकृत धीमी गति से होगा और इस क्रिया द्वारा प्रकाश की किरणों में गुणात्मक परिवर्त्तन आ जायेगा, क्योंकि भौतिकजगत में त्रिविध गुण-विकारों का प्रसार समय के अभिन्न आयाम से जुड़ा हुआ है। इस नियम का वैज्ञानिक अर्थ यह हुआ कि गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में समय के क्षणों में भी परिवर्त्तन हो जायेगा। उदाहरण के लिए अगर सूर्य और पृथ्वी दोनों पर एक-एक घड़ी मिलाकर रख दी जाय तो सूर्य पर घड़ी की चाल पृथ्वी पर घड़ी की चाल से अपेक्षाकृत धीमी गति से होगी और एक सौर परमाणु का विकिरण (Radiating solar atom) पृथ्वी के अपेक्षा निम्न आवृत्ति Lower frequency) का होगा। लेकिन दूसरी तरफ तरंगदैर्घ्य (wavelength) में इतना मामूली अन्तर होगा जिसे मापा नहीं जा सकता। परन्तु इस ब्रह्माण्ड में ऐसे भी नक्षत्र-पिण्ड हैं जिनका 'गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र' सूर्य से भी हजारों गुना अधिक शक्तिशाली है। उदाहरण के लिए साइरियस (sirius) तारे का एक जोड़ा जिसे सफेद बौना (white dwarf) कहा जाता है, उसका गुरुत्वाकर्यण क्षेत्र इतना शक्तिशाली है कि वहाँ के एक वर्गइन्च (cubic inch) पदार्थ का एक टुकड़ा पृथ्वी पर लगभग एक टन का होगा और अगर प्रकाश अथवा कोई पिण्ड उस प्रबल चुम्बकीय क्षेत्र से गुजरेगा तो वह सफेद बौना तारा उन्हें सैकड़ों गुना अधिक शक्ति से अपनी ओर आकर्षित करेगा। विज्ञान में इस नियम को 'आइन्स्टीन प्रभाव' (Einstein effect) के नाम से जाना जाता है।

आइन्स्टीन द्वारा घोषित इसप्रकार की सभी सम्भावनाएँ प्रयोगों द्वारा सही प्रमाणित हुई हैं और उनके नियम कसौटी पर खरे उतरे हैं। वैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि आइन्स्टीन के सिद्धान्तों द्वारा प्राकृतिक नियमों की एकरूपता, समरसता तथा घटनाक्रमों की सम्बद्धता अत्यधिक होती है और विशेष रूप से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सन्दर्भ में उन नियमों की व्याख्या व्यापक रूप से की जा सकती है। लेकिन इस सम्बन्ध में जे० डब्लू० एन० सुलीवन अपनी पुस्तक (The limitations of science) में कहते हैं कि सभी वैज्ञानिक नियम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस सिद्धान्त के अन्तर्गत नहीं आ पाते, विशेष रूप से विद्युत तथा चुम्बकीय घटनाचित्रों (Phenomena) का यथार्थ विश्लेषण नहीं हो पाता। यद्यपि अनेक वैज्ञानिकों ने सामंजस्य लाने का प्रयास किया है, लेकिन वस्तुत: ये घटनाचित्र 'रीमानियन रेखागणित की परीधि में नहीं आ पाते। परन्तु एडिंगटन ने गणित द्वारा यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है और उनका विचार है कि कोई अन्य शक्ति इन प्राकृतिक शक्तियों में सामंजस्य स्थापित करती है। एडिंगटन के अनुसार सम्भवत: इसका रहस्य मन में ही विद्यमान है और इसी के फलस्वरूप भौतिक जगत की उत्पत्ति होती है। सुलीवन के अनुसार यद्यपि आइन्स्टीन ने इन दार्शनिक विचारों को प्रोत्साहन नहीं दिया, लेकिन उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि मैं इसे गलत नहीं कह सकता। अपनी पुस्तक में सुलीवन आगे कहते हैं कि आज विज्ञान इसी सीमा पर आकर रुका हुआ है और वैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि इस सीमा के बाद विज्ञान में दार्शनिक सिद्धान्तों का समावेश हो जाता है। अत: इस सीमातक आकर भी विज्ञान आज रहस्य ही बना हुआ है, क्योंकि वह अभी तक किसी निरपेक्षशक्ति (Absolute power) का निर्धारण नहीं कर पाया है।

वास्तव में सुलीवन का यह कथन विज्ञान की उस विषम स्थिति का चित्रण करता है जिसमें वह स्वयं अपने द्वारा बनाये हुए यूक्लिडीयन नियमों के परिणामस्वरूप फंस गया है, क्योंकि उसकी रेखागणित जड़ परमाणुओं से शुद्ध होती है और अपना वृत्त (circle) पूर्ण कर उसी में विलीन हो जाती है। यद्यपि आइन्स्टीन ने सापेक्षवाद की व्याख्या की, लेकिन उन्होंने भी भौतिक सन्दर्भ में प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) को एक निरपेक्ष शक्ति मानकर भूल की, क्योंकि इससे उनका सापेक्षवाद (Relativity) केवल भौतिकजगत तक ही सीमित हो जाना है। यही कारण है कि इससे विद्युत, चुम्बकीय तरंगें, गुणात्मक तरंगें तथा अन्य अति सूक्ष्म प्राकृतिक शक्तियों की व्याख्या नहीं हो पाती। इन अति सूक्ष्म विविध तरंगों का श्रोत वस्तुत: कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) में है और दोनों जगत की वह चमत्कारी प्रक्रिया धनात्मक फोटोन कणों तथा ऋणात्मक इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा (तरंग-कण-तरंग) शुरु होती है और उसी से भौतिकजगत के सभी घटनाचित्र टेलीविजन की भाँति रजतपट पर प्रदर्शित होते हैं। इसप्रकार उन असंख्य कण-तरंगों में सामंजस्य स्थापित करनेवाली उस महाशक्तिशाली इलेक्ट्रानिक यन्त्र को ही हम 'सार्वभौमिक मन' (Universal mind) कहते हैं और हमारा व्यक्तिगत मन (Individual mind) भी उसी सार्वभौमिक मन का एक छोटा सा अंश है। आज का विज्ञान अपने कठोर नियमों के अन्तर्गत चाहे दार्शनिक तत्त्वों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रोत्साहन दे अथवा न दे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि सत्य पर डाला हुआ पर्दा अपने निश्चित समय पर स्वतः बिखर जाता हैं और उसका शुद्ध प्रकाश जगत को आलोकित करने लगता है। अतः वर्त्तमान परिस्थितियों में आज के विज्ञान को महामुनि कपिल के अद्‌भुत् सापेक्षवाद को स्वीकार कर लेने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह गया है, क्योंकि जहाँ पर आइन्स्टीन का सापेक्षवाद समाप्त होता है वहीं से वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल का सापेक्षवाद शुरू होता है। वास्तव में दर्शन और विज्ञान का यह अपूर्व संयोग भी उसी चमत्कारी शक्ति के क्रमविकास (Evolution) का ही एक अंग विशेष हैं।

आधुनिक विज्ञान में यह एक तथ्य है कि एक तरफ वैज्ञानिक किसी सर्वशक्तिमान मानसिक शक्ति अथवा परम चेतनशक्ति के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, लेकिन दूसरी तरफ अपने बुद्धिवादी कौशल तथा भौतिकवादी सिद्धान्तों द्वारा उसे झुठलाने की कोशिश भी करते हैं। यह ठीक है कि इससे जगत में कर्मवाद की प्रतिष्ठा होती है, लेकिन यह भी सही है कि इससे हमारे अहंकार में वृद्धि होती है, सत्य पर पर्दा पड़ता है जिसके फलस्वरूप सापेक्ष भ्रम उत्पन्न होता हैं। यही कारण है कि वस्तुजगत के प्रति हमारा दृष्टिकोण यूक्लिडीयन हो जाता हैं और उसी का फल आज विज्ञान को भुगतना पड़ रहा है। हम सर्वशक्तिमान परमात्मा अथवा परम सत्य को मन, बुद्धि और अहंकार द्वारा कभी नहीं समझ सकते, लेकिन उसकी विभूतियों को देखकर मुग्ध हो सकते हैं, उनमें आसक्त होकर भ्रमवश उन्हीं को सत्य मान सकते हैं। यह भ्रम मनुष्यों को ही नहीं, बल्कि देवताओं को भी होता है। भगवान श्रीकृष्ण अपनी अनेक विभूतियों का वर्णन करते हुए गीता (१०।४०-४१-४२) में आगे कहते हैं कि हे अर्जुन! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है। यह तो केवल दिग्दर्शन मात्र है। इस जगत में जो कुछ भी आलोकपूर्ण, कान्तियुक्त एवं विभूतियुक्त है उन्हें तुम मेरे तेज के अंश से ही उत्पन्न हुई जान। तुम्हें तो इतना ही जानना यथेष्ट है कि मैं सम्पूर्ण जगत को अपने एक अंशमात्र से धारण करके स्थित हूं। अतः आज का विज्ञान उन असंख्य विभूतियों को ही सत्य मानकर और उनमें आसक्त होकर अपने जन्मकाल से ही चला आ रहा है, लेकिन वह इस बात को भूल जाता है कि ये विभूतियाँ 'देश-काल' (Space-time) के अन्तर्गत सापेक्ष हैं और निरपेक्ष शक्ति इन सभी विभूतियों तथा नाम-रूपात्मक जगत से अत्यन्त परे है। उस परम सत्य का दर्शन केवल यौगिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा ही हो सकता है, क्योंकि इसी प्रक्रिया द्वारा मन, बुद्धि एवं अहंकार आदि प्रबल प्राकृतिक शक्तियों का विनाश होता है जिसके फलस्वरूप चेतनपुरुष आत्मस्थित हो जाता है। इस आत्मस्थित अवस्था का विशद विवेचन गीता (अध्याय २) में किया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यद्यपि गीता पढ़कर अनेक महान वैज्ञानिक भी वह आत्मस्थित अवस्था अथवा समत्व बुद्धियोग प्राप्त करना चाहते हैं; लेकिन यूक्लिड और न्यूटन का महाभूत (अहंज्ञान) भी तो साथ ही लगा रहता है, जो बड़ी आसानी से यह समझा देता है कि उप-परमाणु जगत (इलेक्ट्रान-प्रोटोन) ही अन्तिम सत्य है। इस जगत के बाद कहीं और कुछ नहीं है। अगर और कुछ नहीं है तो आज जेराल्ड फेनबर्ग तथा अन्य वैज्ञानिक अनुसन्धान किस जगत पर कर रहे हैं ? लेकिन कुछ ऐसे भी महा वैज्ञानिक होते हैं जो अपने आन्तरिक मनोभावों को खुलकर सामने रख देते हैं और उन्हीं लोगों से हम सर जेम्स जीन्स तथा आर्थर एडिंगटन जैसे वैज्ञानिकों की गणना कर सकते हैं। अब यहाँ पर हम उन्हीं महा-रथियों के विचारों का जायजा लेंगे।

लिन्कन बार्नेट ने एक प्रसिद्ध पुस्तक (The universe and Dr. Einstein) लिखी है जिसकी भूमिका १० सितम्बर १९४८ को स्वयं महावैज्ञानिक आइन्स्टीन द्वारा लिखी गई है। इस भूमिका में आइन्स्टीन ने यह विचार व्यक्त किया है कि इस पुस्तक में सापेक्षवाद की उत्तम व्याख्या की गई है। इस पुस्तक में लिन्कन बार्नेट कहते हैं कि अगर भौतिक घटनाचित्र इतना अनिश्चित हैं कि हम उनकी धारणा 'कारण और कार्य' (cause and effect) नियमों के अनुसार नहीं कर सकते तो इससे यह तार्किक निष्कर्ष निकलता है कि इस ब्रह्माण्ड में 'स्वाधीन इच्छा' (Free will) की ही प्रधानता है। लेकिन इसके साथ ही एक दूसरी शक्ति का भी बोध होता है जिसे मन (mind) कहा जाता है और सम्भवतः इसी शक्ति द्वारा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना हुई है। जेम्स जीन्स और आर्थर एडिंगटन भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। बार्नेट आगे कहते हैं कि मन का सम्बन्ध चूँकि विचारजगत (Thought world) से है, इसलिए एक भौतिकशास्त्री अपने नियमों (लक्ष्मण रेखा) के अनुकूल उससे अपना नाता नहीं जोड़ सकता। यहाँ बार्नेट का तात्पर्य यह है कि विज्ञान अपनी भौतिक परिधि से बाहर नहीं जा सकता। अगर विज्ञान अपनी स्वाधीन इच्छा से उस भौतिक परिधि से बाहर नहीं जाना चाहता तो मत जाय, स्वयं प्रकृति मृत्यु अथवा विनाश (Destruction) की प्रक्रिया से उसे उस भौतिक परिधि से बाहर ढकेल देगी और इसप्रकार वह स्थूलजगत से सूक्ष्मजगत (Astral world) में पहुँच जायेगा। अब प्रकृति की इस प्रक्रिया को स्वाधीन कहा जाय अथवा निश्चयवाद (Determinism) इस प्रश्न पर वैज्ञानिकों को फिर से विचार करना चाहिए। एक तरफ तो बार्नेट यह कहते हैं कि सम्भवतः इस ब्रह्माण्ड की रचना मन (Mind) द्वारा हुई है और वेदान्त भी यही कहता है, लेकिन दूसरी तरफ बार्नेट यह भी कहते हैं कि हम (अहंज्ञान) उस शक्ति से अपना नाता नहीं जोड़ सकते। अगर वह नाता नहीं जोड़ना चाहते तो मत जोड़ें, लेकिन महाशक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(universal mind) इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से पहले ही सभी निर्जीव एवं सजीव पदार्थों से अपना अभिन्न सम्बन्ध जोड़कर बैठी हुई है और उस नाता को तोड़ देना आसान बात नहीं है। वह नाता केवल आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा ही टूट सकता है और सिर्फ योगी ही ऐसा करने में समर्थ हैं। वास्तव में पतञ्जलि योगसूत्र के अनुसार विचार अथवा इच्छावृत्तियों से ही मन की उत्पत्ति होती है और उन वृत्तियों के समाप्त होने पर मन भी स्वतः समाप्त हो जाता है। इसीलिए योगसूत्र में इच्छावृत्तियों के निरोध (योगश्चित्त-वृत्तिनिरोधः) पर इतना बल दिया गया है, क्योंकि इन्हीं वृत्तियों द्वारा प्रकृति की यान्त्रिक शक्तियों को बल प्राप्त होता है और इन वृत्तियों के समाप्त होने पर स्वयं इन प्राकृतिक शक्तियों का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। अतः विचार-जगत अथवा इच्छावृत्तियों (whirl pools) से भी केवल योगी ही अपना नाता तोड़कर प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो सकते हैं। यह वैज्ञानिकों के वश की बात नहीं कि वे विचारजगत से अपना नाता तोड़ दें। बार्नेट का यह निष्कर्ष भी गलत है कि जो तथ्य वैज्ञानिकों की बुद्धि से परे है वहाँ 'स्वाधीन इच्छा' (Free will) का नियम स्वतः लागू हो जायेगा, क्योंकि यह तर्क कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के नियमों के प्रतिकूल है।

विश्वविख्यात वैज्ञानिक सर जेम्स जीन्स अपनी पुस्तक (The New Background of Science) में कहते हैं कि पदार्थ और विकिरण द्वारा निर्मित इस जगत का परीक्षण कर भौतिकविज्ञान इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वह इनकी प्रकृति का चित्रण नहीं कर सकता। जीन्स के अनुसार एक भौतिकशास्त्री के लिए फोटोन, इलेक्ट्रान तथा प्रोटोन कणों की प्रकृति उसीप्रकार निरर्थक हो गई है जिसप्रकार एक छोटे बच्चे के लिए बीजगणित का पहला पाठ (x, y, z)। जीन्स आगे कहते हैं कि बीसवीं सदी के भौतिकविज्ञान द्वारा इस ब्रह्माण्ड का जो अन्तिम स्वरूप दृष्टिगोचर होता है वह एक ऐसा चित्र है जिसमें पदार्थ की कल्पना पूर्णतया लुप्त हो जाती है और उसके स्थान पर मन एक सर्वोच्च शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। बीसवीं सदी के भौतिकशास्त्र द्वारा उपलब्ध दर्शन का सत्व यही है कि प्रकृति या पदार्थ का अस्तित्व स्वयं मनुष्य से पृथक नहीं है। जीन्स का यह निष्कर्ष सही नहीं है कि इस जगत का निर्माण केवल पदार्थ और विकिरण द्वारा हुआ है, बल्कि इस जगत का निर्माण जड़ प्रकृति और चेतन पुरुष के संयोग द्वारा हुआ है और इसीलिए इस जगत में सापेक्षवाद, द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद तथा कारण और कार्य की शृंखला विद्यमान है और सांख्यदर्शन के अनुसार वह शृंखला आवागमन के चक्र से चलती रहती है। अतः इस वृत्तात्मक रेखागणित में मूलद्रव्य कारणस्वरूप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्रिविध गुण-विकारों (सत्व, रज, तम) का क्रमविकास (Evolution) होता है जिसे हम पदार्थ के भिन्न-भिन्न तत्वों (Elements) के नाम से जानते हैं। बीसवीं सदी में विज्ञान के लिए पदार्थ की कल्पना इसलिए पूर्णतया लुप्त हो जाती है, क्योंकि स्वचेतना अथवा आत्मा से ही पदार्थ को प्रकाश, गति, जीवन और स्पन्दन प्राप्त होता है तथा उसके बिना पदार्थ या परमाणु स्वयं अपने में कुछ नहीं हैं (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। प्रकृति की इस प्रक्रिया में पदार्थ के स्थान पर मन एक सर्वोच्च शक्ति के रूप में इसलिए प्रतिष्ठित हो जाता है, क्योंकि वस्तुतः इसी शक्ति (Cosmic mind) द्वारा फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों जगत परस्पर जुड़ पाते हैं तथा इसी शक्ति द्वारा भौतिकजगत में कण-तरंगों (स्थूल और सूक्ष्म) का क्रमगठन होता है जिसके फलस्वरूप चेतन पुरुष की अध्यक्षता में समय (Time) तरंगित होने लगता है और समय की तरंगों से वस्तुजगत प्रतिबिम्बित होने लगता है। यही कारण है कि प्रकृति या पदार्थ का अस्तित्व स्वयं मनुष्य से पृथक नहीं है, क्योंकि मनुष्य जड़ पदार्थ नहीं है, बल्कि गीता के अनुसार नित्य, शाश्वत और अविनाशी आत्मा है। इस शुद्ध ज्ञान के लिए अब बीसवीं सदी के अन्त में विज्ञान को परम पवित्र ग्रन्थ गीता का गहन अध्ययन करना पड़ेगा।

सर जेम्स जीन्स अपनी एक दूसरी महत्वपूर्ण पुस्तक (The Mysterious universe) में यह विचार व्यक्त करते हैं कि अधुनातन विज्ञान के चित्रण से प्रकृति का जो स्वरूप निश्चित होता है, जो घटनाचित्र उपस्थित होते हैं वे सभी गणितीयचित्र (Mathematical pictures) हैं और जीन्स कहते हैं कि अगर हम चाहें तो उन्हें काल्पनिक चित्र (Fiction) भी कह सकते हैं, क्योंकि अन्तिम सत्य (Ultimate reality) से अभी तक विज्ञान का कोई सम्पर्क नहीं हो पाया हैं। जीन्स के अनुसार अगर दर्शनशास्त्र के व्यापक दृष्टिकोण से देखा जाय तो अनेक लोग इस तथ्य को स्वीकार करेंगे कि बीसवीं सदी की सबसे बड़ी सफलता न तो सापेक्षवाद में है और न क्वान्टमवाद में ही, बल्कि वह इस तथ्य में निहित है कि अन्तिम सत्य से अभी हम बहुत दूर हैं और अगर इसी को प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक प्लेटो के शब्दों में व्यक्त किया जाय तो अभी तक हम अपनी गुफा (Cave) में बन्दी हैं और प्रकाश हमारी पीठ पर पीछे की ओर से पड़ रहा है तथा इस भौतिकजगत में हमें जो कुछ प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहा है वह दीवार पर केवल छायामात्र है। जीन्स आगे कहते हैं कि जब हम उन छायाचित्रों (Shadows) में सत्य की खोज करते हैं तो हमें इस तथ्य का सामना करना पड़ता है कि उस अन्तिम सत्य के सम्बन्ध में सभी प्रकार के तर्क-वितर्क तब तक खोखला (Barren) हैं जब तक कि कोई ऐसा बहिर्गत (Extra-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

neous) मापदण्ड नहीं प्राप्त हो जाता है जिससे हम प्रकृति के घटनाचित्रों की तुलनां कर सकें। यही कारण है कि दार्शनिक लाक के शब्दों में पदार्थ का सारतत्व सर्वदा के लिए अज्ञात है। जीन्स के अनुसार प्रकृति में सर्वदा परिवर्तन होता रहा है और उसकी तुलना हम अपने मन की अमूर्त्त रचनाओं (Abstract creations) से कर सकते हैं। जब कोई मनुष्य नीला चश्मा पहनता है तो उसे सारा जगत नीला दिखाई देता है, उसीप्रकार कान्ट के शब्दों में यदि हमारा मानसिक झुकाव गणितीय है तो हमें सारा जगत गणितीय दिखाई देगा। जीन्स आगे कहते हैं कि इस सम्बन्ध में यह निर्विवाद है कि विज्ञान की अन्य शाखाओं की तुलना में किसी तरह प्रकृति शुद्ध गणित (Pure mathematics) से अधिक निकट है और उस गणित का प्रवेश ऊपर की ओर से है न कि नीचे से। जीन्स कहते हैं कि यह तो हमारी समझ में आता है कि एक रस्सी खींचने से घंटी बजती है, क्योंकि उन दोनों के बीच एक भौतिक कड़ी है, लेकिन यह बात समझ में नहीं आती कि परमाणुओं की अनिश्चित (Indeterminate) गतिशीलता एवं हलचल से यह भौतिकजगत कैसे निर्मित होता है, क्योंकि दोनों की प्रकृति बहुत भिन्न है। इसीलिए डेस्कार्टीज ने कहा था कि पदार्थ और मन दोनों पृथक तत्व हैं, लेकिन दूसरी ओर बर्कले और कान्ट जैसे आदर्शवादी दार्शनिक यह मानते हैं कि मन और पदार्थ एक ही तत्व हैं और उसके बिना इस ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है। इस सन्दर्भ में स्वयं जीन्स का यह विचार है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड परमात्मा का ही एक विचारप्रवाह (Thought form) है। अतः जीन्स अपनी पुस्तक में बीसवीं सदी के विज्ञान का जो विश्लेषण करते हैं वह लगभग वही विश्लेषण है जो उपनिषद, ब्रह्मसूत्र और गीता आदि वेदान्त सम्बन्धी पुस्तकें करती हैं। जीन्स के विचारों में हमें मायावाद की वही झलक मिलती है जो अद्वैत वेदान्त द्वारा प्राप्त होती है तथा उस दर्शन की झलक हमें शंकराचार्य, रामकृष्ण, विवेकानन्द, रमण आदि महात्माओं के उपदेशों में मिलती है। फर्क केवल इतना है कि जीन्स की यह आवाज विज्ञान द्वारा निर्मित मायापुरी में नक्कारखाने में तूती के समान है।

इसीप्रकार एक दूसरे महान वैज्ञानिक सर आर्थर एडिंगटन अपनी पुस्तक (The Philosophy of physical science) में कहते हैं कि सत्य की खोज में वैज्ञानिक प्रणाली के अतिरिक्त मानवीय अनुभूतियों के अन्य पहलुओं का भी समुचित स्थान है। उनके अनुसार मानव जीवन के व्यापक दार्शनिक पहलू तथा भौतिकविज्ञान के विश्लेषण में कोई असंगति (disharmony) नजर नहीं आती। यहाँ एडिंगटन का तात्पर्य यह है कि विज्ञान के निष्कर्ष को अन्तिम नहीं माना जा सकता, क्योंकि वह प्रकृति के एक विशेष पहलू का ही विश्लेषण कर पाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपनी एक दूसरी पुस्तक (Space. time aud gravitation) में एगिगंटन यह विचार व्यक्त करते हैं कि यद्यपि सापेक्षवाद का सिद्धान्त भौतिकविज्ञान के सभी पहलुओं का दिग्दर्शन करता है और उनके नियमों में समरसता एवं सामंजस्य स्थापित कर उन्हें एक सूत्र में सम्बद्ध करता है, लेकिन तो भी यह सिद्धान्त वस्तुजगत की आन्तरिक प्रकृति के सन्दर्भ में केवल बाह्यरूप से एक खोलमात्र है, सिर्फ एक संकेतात्मक ज्ञान (Pointer reading) है। अतः एडिगंटन के अनुसार पदार्थ का वह अज्ञात सत्व समस्त भौतिकजगत में प्रवाहित हो रहा है जो निश्चय ही हमारी चेतना का पदार्थ है। भौतिकविज्ञान के क्षेत्र में उन पहलुओं का संकेत प्राप्त होता है, तो भी वे भौतिकशास्त्र की प्रणाली एवं साधनां द्वारा अगोचर हैं। एडिगंटन के विचार से आइन्स्टीन का सापेक्षवाद केवल भौतिकजगत की व्याख्या करता है। लेकिन इससे सम्बद्ध, किन्तु इससे परे सूक्ष्मजगत (Astral world) की व्याख्या कपिल के सापेक्षवाद के बिना नहीं हो सकती, क्योंकि कपिल का सापेक्षवाद एक पूर्ण सापेक्षवाद है जो सृष्टि के असंख्य लोकों (Planes) से सम्बद्ध है, जबकि आइन्स्टीन का सापेक्षवाद एक अपूर्ण सापेक्षवाद है जो केवल भौतिकजगत तक ही सीमित है। इस जगत में भौतिकविज्ञान को केवल संकेतात्मक अथवा छायाचित्रों के समान ज्ञान इसलिए प्राप्त होता है, क्योंकि वह सत्य की खोज में बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) का अनुसरण करता है, जबकि योगी को सत्य का दर्शन इसलिए प्राप्त होता है, क्योंकि वह आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (subjective process) का अनुसरण करता है जहाँ देश-काल, पदार्थ, मन, बुद्धि, अहंकार, सापेक्षभ्रम, द्वन्द्ववाद तथा कारण और कार्य की शृंखला आदि सभी प्रबल प्राकृतिक शक्तियाँ समाप्त हो जाती हैं।

आर्थर एडिगंटन अपनी एक दूसरी पुस्तक (The Domain of Physical Science) में यह विचार व्यक्त करते हैं कि गणितीय ढाँचे का ज्ञान (Knowledge of Mathematical structure) ही वह एकमात्र ज्ञान है जो आधुनिक भौतिकविज्ञान हमें प्रदान कर सकता है और एडिगंटन उस ज्ञान को 'संकेतात्मक ज्ञान' (Pointer-reading) कहते हैं। उनके अनुसार संकेतात्मक ज्ञान वह ज्ञान है जो हमें किसी यन्त्र (Instrument) पर प्राप्त होता है। यद्यपि हम सोचते हैं कि वह यान्त्रिक ज्ञान बाह्यजगत के विभिन्न गुणों (Qualities) को प्रदर्शित करता है, किन्तु इस प्रक्रिया द्वारा वस्तुतः जो हमें ज्ञान प्राप्त होता है वह मापक यन्त्रों (Measuring instruments) पर उन गुणों की छापमात्र है। एडिगंटन के विचार से यद्यपि 'सत्यं, शिवम्, सुन्दरम्' की अभिव्यक्ति आध्यात्मिक क्षेत्र के अन्तर्गत आती है, किन्तु यदि इन दार्शनिक तत्वों को विज्ञान की परिधि (लक्ष्मण रेखा) से पृथक कर दिया जाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो भी भौतिकशास्त्र को विशालता (Massiveness), सारतत्व (Substantiality), विस्तार-बृद्धि (Extension) तथा 'देश-काल' विस्तार (Duration) आदि गुणात्मक तत्वों का सामना करना पड़ता है। लेकिन आज भौतिकविज्ञान इस अवस्था में नहीं है कि उन गुणात्मक तत्वों से वह प्रत्यक्ष रूप से निपट सके। एडिगंटन के अनुसार उन गुणात्मक तत्वों की प्रकृति अगोचर और दुर्भेद्य (Inscrutable) है। यद्यपि हम अपने गणनात्मक ज्ञान में वृद्धि करने के लिए मानसचित्रों (Mental pictures) का प्रयोग कर सकते हैं, लेकिन कोई भी मानसचित्र उसकी प्रतिकृति (Replica) नहीं हो सकता जो मन में पहले से विद्यमान न हो। अंतः एडिगंटन के अनुसार भौतिकविज्ञान अपनी वास्तविक प्रक्रिया में स्वयं उन अगोचर और दुर्भेद्य गुणात्मक तत्वों का अध्ययन नहीं करता है, बल्कि उन छायाचित्रों (Pointer-readings) का अध्ययन करता है जिनका हम परीक्षण कर सकते हैं। यह सही है कि परीक्षण जगत में उन गुणों के उतार-चढ़ाव (Fluctuations) प्रतिभासित होते हैं, लेकिन इस सन्दर्भ में हमारा वास्तविक ज्ञान उन छायाचित्रों का ही होता है न कि स्पयं उन गुणात्मक तत्वों का। उन दोनों में बस इतना ही सादृश्यता (Resemblance) है जितना एक टेलीफोन नम्बर और उसके ग्राहक (Subscriber) के बीच होता है। इसका उदाहरण प्रस्तुत करते हुए एडिगंटन कहते हैं कि एक मनुष्य की केहुँनी (Elbow) छाया के रूप में छायारूपी मेज पर टिकी हुई है और छायारूपी स्याही छायारूपी कागज पर प्रवाहित हो रही है। एडिगंटन की दृष्टि में यह सभी कुछ केवल संकेतात्मक है। यहाँ एडिगंटन ने विज्ञान की वर्त्तमान सीमाओं को स्वीकार कर लिया है। उसे वास्तविक ज्ञान इसलिए नहीं प्राप्त होता है, क्योंकि वह वस्तुजगत को बाहर से देख रहा है, अपने इन्द्रियज्ञान को ही सत्य मानकर चल रहा है, जबकि सत्य का ज्ञान इन्द्रियों से परे होकर चेतना के उत्कर्ष (Unfoldment of consciousness) द्वारा पदार्थ के अन्तस्थल से प्राप्त किया जाता है और योगी ही ऐसा करने में समर्थ हैं। इसके अतिरिक्त गुणात्मक तत्वों (प्रेम, दया, करुणा, रंग-रूप आदि) का वास्तविक ज्ञान भौतिकजगत में बाह्यरूप से नहीं प्राप्त हो सकता, बल्कि उनका वास्तविक ज्ञान कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) में ही होता है और वह सूक्ष्मजगत भी असंख्य लोकों में विभक्त है जहाँ गुणात्मक तत्व दिव्य से दिव्यतर तथा दिव्यतम स्तरों में विभक्त हैं। इसप्रकार उन सापेक्ष विभूतियों की भी कोई सीमा नहीं है, ऐसा गीता तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों में विस्तृत रूप से कहा गया है। यही कारण है कि विज्ञान को इस भौतिकजगत में केवल छायाचित्रों के ही दर्शन होते हैं।

अपने इसीप्रकार के विचारों को एडिंगटन गणित की भाषा में अपनी एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्य पुस्तक (The mathematical theory of Relativity) में दूसरी तरह प्रस्तुत करते हैं। इसमें एडिंगटन पदार्थ और उसके नियमों की व्याख्या करते हुए 'घटना-विन्दु' (Point-events) की कल्पना करते हैं। एडिंगटन के अनुसार हम नहीं जानते और जानने की आवश्यकता भी नहीं समझते कि 'घटना-विन्दु' क्या है? जो कुछ हम जानते हैं बस इतना ही कि किसी 'घटना-विन्दु' को अपूर्व ढंग से इंगित करने के लिए चार संख्याओं की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिए न्यूयार्क नगर में किसी मकान को अपूर्व ढंग से इंगित करने के लिए केवल दो संख्याओं की आवश्यकता पड़ती है—सड़क या गली का नम्बर और मकान का नम्बर, आसपास के युगल (Pairs) घटनाविन्दुओं के मध्य एक सम्बन्ध है जिन्हें मध्यान्तर (Interval) कहते हैं, फिर हम यह भी नहीं जानते कि इस सम्बन्ध की प्रकृति क्या है। लेकिन उनका एक गणितीय पहलू है और बस यही सब कुछ है जिसे हमें जानने की आवश्यकता है।

एडिंगटन और जेम्स जीन्स के वैज्ञानिक विचारों की व्याख्या करते हुए जे० डब्लू० एन० सुलीवन अपनी तुस्तक (The limitations of science) में कहते हैं कि एडिंगटन और जीन्स भिन्न-भिन्न मार्गों का अनुसरण करते हुए अन्त में एक ही निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अन्ततोगत्वा इस ब्रह्माण्ड की प्रकृति मानसिक है। जीन्स का निष्कर्ष इस आधार पर है कि बिना शुद्ध विचार के (Pure thought) हम प्राकृतिक रहस्यों को नहीं समझ सकते और एडिंगटन का निष्कर्ष इस आधार पर हैं कि जो कुछ भी प्रत्यक्ष ज्ञान हम प्राप्त करते हैं वह केवल मानसिक अवस्थाओं का ज्ञान है तथा अन्य सभीप्रकार के भौतिकज्ञान माने हुए तार्किक ज्ञान (Inferred knowledge) हैं जो परस्पर एक दूसरे से तार्किक श्रृंखलाओं में बंधे हुए हैं। सुलीवन के अनुसार एडिंगटन इस सिद्धान्त में दृढ़ विश्वास करते हैं कि बाह्य जगत का सम्पूर्ण ज्ञान उत्तेजनाओं के रूप में इन्द्रियों द्वारा मस्तिष्क में पहुँचता है और वे उत्तेजनायें मस्तिष्क में पहुँच कर किसी-प्रकार परिवर्तित हो जाती हैं तथा इस प्रक्रिया द्वारा विभिन्न मानसिक अवस्थाओं का निर्माण होता है जो भौतिक अवस्थाओं से पूर्णतया भिन्न हैं। वह तर्क देते हैं कि उसकी अन्तिम कड़ी मानसिक अवस्था में ही निहित है। अगर आध्यात्मिक दृष्टिकोण से माना जाय कि मानवीय इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान सीमित होता है तो हमें यह भी मानना पड़ेगा कि हमारा भौतिक ज्ञान भी सीमित होगा। उदाहरण के लिए जब हम कोई वस्तु देखते हैं तो उसका बाह्य ढाँचा ही जान पाते हैं और उसकी प्रकृति तथा आन्तरिक रहस्य का ज्ञान हमें नहीं हो पाता। एडिंगटन अपनी व्याख्या में डब्लू० के० क्लीफोर्ड के विचारों को उद्धृत करते हैं कि भावनाओं का क्रम जिनसे मानवीय चेतना गठित है वही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वास्तविकता है जिसके फलस्वरूप मस्तिष्क की गतिशीलता का बोध हमारे मन में होता है। एडिंगटन कहते हैं कि अगर बाह्य रूप से देखा जाय तो सजीव मस्तिष्क असंख्य गतिशील अणुओं का भण्डार प्रतीत होता है और अगर उसी को आन्तरिक रूप से देखा जाय तो वह मानसिक अवस्थाओं का भण्डार प्रतीत होता है। दूसरे शब्दों में मस्तिष्क का बाह्य स्वरूप हमें भौतिकजगत के ढाँचे का ज्ञान प्रदान करता है और उसका आन्तरिक स्वरूप हमें उसकी प्रकृति एवं सत्व का ज्ञान प्रदान करता है। अतः एडिंगटन के अनुसार सम्पूर्ण बहिर्जगत (objective world) और मन स्वाभाविक रूप से एक ही तत्व हैं। उनका विचार है कि संसार का पदार्थ मन का पदार्थ है (The stuff of the world is mind-stuff)। सुलीवन के विचार से सर जेम्स जीन्स इससे भी आगे बढ़ कर इस ब्रह्माण्ड को पूर्णतया मानसिक बना देते हैं।

वास्तव में आज के विज्ञान की सभी समस्याओं का समाधान सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन में ही निहित हैं जिनके अनुसार सृष्टि का उद्देश्य स्वयं जड़ प्रकृति के लिए नहीं है, बल्कि गुण-विकार युक्त असंख्य चेतन पुरुषों (Egos) के लिए है जो एक तरफ तो जगत में कर्मवाद की प्रतिष्ठा करते हैं और इसीलिए मोहग्रस्त होकर बन्धन में पड़े रहते हैं, लेकिन दूसरी तरफ ज्ञान प्राप्त कर प्रकृति के बन्धन से मुक्त भी होते रहते हैं। अतः इस सन्दर्भ में इन्द्रियाँ, मस्तिष्क, हृदय, मन, बुद्धि, अहंकार आदि प्राकृतिक तत्व वास्तविक शक्तियाँ नहीं हैं, बल्कि उस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए चेतन पुरुषों के हाथों यन्त्रस्वरूप (Tools) हैं और इसीलिए जब शुद्ध ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो इनका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। चेतन पुरुष के लिए स्थूल और सूक्ष्म दोनों जगत प्रकृति द्वारा रचित प्रदर्शनी के समान हैं, टेलीविजन के धवल पट पर छायाचित्रों के सदृश्य हैं जिनमें आसक्त होकर चेतन पुरुष बन्धन में भी रह सकता है और उनमें निरासक्त रहकर राजा जनक की तरह विदेह भी हो सकता है अथवा भक्त की भाँति कण-कण में भगवान का रूप देखकर प्रह्लाद या चैतन्य महाप्रभु भी बन सकता है अथवा उस प्रदर्शनी से विरक्त होकर बुद्ध या रामकृष्ण की भाँति निर्वाण अथवा मोक्ष पद भी प्राप्त कर सकता है। चेतन पुरुष के लिए सभी रास्ते खुले हुए हैं और यह सभी कुछ अपने-अपने चेतन-स्तर पर निर्भर करता है। विज्ञान के समक्ष सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वह स्वचेतना अथवा आत्मा को किसी न किसी तरह पदार्थ के आधीन मान लेता है अथवा बहुत से वैज्ञानिक आत्मा को मानते ही नही और इसीलिए सभी उलझनें पैदा होती हैं, क्योंकि चेतना या आत्मा से पृथक इस ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है और इसप्रकार प्रकृति की कोई प्रदर्शनी भी नहीं है।

चेतना की प्रकृति और उसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए वियना के सुप्रसिद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भौतिकशास्त्री एरविगं श्रोडिगंर अपनी पुस्तक (What is life ?) में यह विचार व्यक्त करते हैं कि चेतना की अनुभूति कभी अनेक (Plural) में नहीं होती, बल्कि सिर्फ एकबचन (Singular) में होती है। श्रोडिगंर के अनुसार चेतना केवल एक अस्तित्व है और उसका अनेक अज्ञात है। यहाँ केवल एक ही वस्तु है और जो कुछ अनेक नाम-रूपों में प्रतिभासित होता है वह केवल एक ही वस्तु के क्रमानुसार विभिन्न पहलूमात्र हैं जो भ्रम (Deception) द्वारा उत्पन्न होते हैं। श्रोडिगंर का यह कथन सही है, किन्तु जब चेतना त्रिविध गुण-विकारों के फलस्वरूप पदार्थ-मिश्रित होती है तो वह असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित होती है और जब मुक्त हो जाती है तो एकत्व को प्राप्त हो जाती है।

विख्यात जर्मन भौतिकशास्त्री हेसेनबर्ग के अनुसार (Physics and Philosophy) भौतिक विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्त—देश, काल, पदार्थ और निमित्त (Space, Time, Matter and Causality) द्वारा एक वैज्ञानिक ढांचे का निर्माण किया गया है जो अत्यन्त कठोर और संकुचित है। विज्ञान के अनुसन्धान द्वारा यह स्पष्ट हुआ कि पदार्थ ही इस जगत का वास्तविक सत्व है। लेकिन हेसेनबर्ग कहते हैं कि उन्हें उस वैज्ञानिक भाषा अथवा विश्लेषण में ही ऐसे सत्व का दर्शन होता है जो सर्वदा से उस पदार्थ में ही विद्यमान था और विज्ञान ने उस सत्व की उपेक्षा कर दी। हेसेनबर्ग उस सत्व अथवा गुणात्मक तत्वों में मानसिक विचार, मानव आत्मा तथा मानव जीवन के अन्य उच्च सिद्धान्तों का समावेश करते हैं। हेसेनबर्ग के विचार से आधुनिक भौतिक विज्ञान के प्रकाश में वास्तविकता के सम्बन्ध में जो मूलभूत परिवर्त्तन हुए हैं वे उन्हें 'क्वान्टमवाद' के विद्धान्त में ही दृष्टिगोचर होते हैं और उनके अनुसार इसी सिद्धान्त में परमाणु-विज्ञान के नवीन विचारों का समावेश होता है। परन्तु हेसेनबर्ग कहते हैं कि यह क्रान्तिकारी परिवर्त्तन भूतकाल का क्रमिक विस्तारमात्र (Continuation of The Past) नहीं है, बल्कि वह आधुनिक विज्ञान के ढ़ाँचे का एक वास्तविक विखंडन है। अतः हेसेनबर्ग आज के विज्ञान के लिए जिस नये ढ़ाँचे की आवश्यकता पर जोर दे रहे हैं वह नवीन और असीम ढ़ाँचा सांख्य-दर्शन द्वारा प्रतिपादित अद्भुत सापेक्षवाद ही हो सकता है जो प्रकृति के सर्वांगीण विवेचन के लिए स्वयं अपने में पूर्णतया वैज्ञानिक है। यही कारण है कि वेदान्त, योगदर्शन तथा बौद्धदर्शन ने भी इसे स्वीकार किया है। यह अभूतपूर्व सिद्धान्त असंख्य ऋषि-मुनियों की प्रत्यक्षानुभूतियों का दर्शन है जिसमें सन्देह एवं यान्त्रिक त्रुटियों के लिए कोई स्थान नही है और इसीलिए वह हजारों वर्षों से उसीप्रकार चला आ रहा है।

इस सन्दर्भ मे एक प्रसिद्ध जीवशास्त्री पीरे टेलहार्ड डी कार्डिन (The

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Phenomenon of Man—1959) कहते हैं कि अब वह समय आ गया है जब कि इस तथ्य को हृदयगंम कर लिया जाय कि इस ब्रह्माण्ड की कोई भी व्याख्या तब तक सन्तोषप्रद नहीं होगी जब तक उसमें वस्तुओं के बाह्य एवं आन्तरिक प्रकृति का समावेश न हो। दूसरे शब्दों में विज्ञान की व्याख्या तभी पूर्ण हो सकेगी जबकि उस व्याख्या में पदार्थ और मन दोनों का समावेश हो। कार्डिन की दृष्टि में एक सच्चा भौतिकशास्त्र वही हो सकता है जो इस जगत की सम्बद्ध व्याख्या में मनुष्य के सर्वागींण स्वरूप को समाहित कर सके। कार्डिन के विचार से अब मनुष्य की आन्तरिक प्रकृति को और अधिक टाला नहीं जा सकता, क्योंकि वह अन्तर्दृष्टि का प्रत्यक्ष विषय है और सभी ज्ञान का सत्व है। कार्डिन का कहना है कि प्रकृति में चारों ओर वस्तुओं का आन्तरिक स्वरूप विभिन्न स्तरों में विद्यमान है और इस तथ्य को अब अस्वीकार करना असम्भव है। यहां कार्डिन का तात्पर्य यह है कि स्वचेतना ही पदार्थ का सत्व है और बिना इसे माने हुए अब विज्ञान की गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती।

धर्म और विज्ञान पर प्रकाश डालते हुए महावैज्ञानिक आइन्स्टीन अपने एक लेख (Out of my later Years) में कहते हैं, "यद्यपि धर्म और विज्ञान के क्षेत्र स्वयं अपने में परस्पर एक दूसरे से पृथक हैं, तो भी दोनों मे परस्पर एक शक्तिशाली सम्बन्ध और निर्भरता विद्यमान है। धर्म को अपने उद्देश्य की पूर्ति में विज्ञान द्वारा निरूपित साधनों की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन दूसरी तरफ विज्ञान का निर्माण उन्हीं द्वारा हो सकता है जिनमें सत्य और ज्ञान के प्रति तीव्र उत्कंठा विद्यमान हो और इस भाव का श्रोत धर्म के श्रेत्र से ही उत्पन्न होता है। अतः आइन्स्टीन के अनुसार धर्म के बिना विज्ञान लगंड़ा है और विज्ञान के बिना धर्म अन्धा है।" वास्तव में धर्म और विज्ञान एक ही हैं, केवल सापेक्ष भ्रम के फलस्वरूप दो दिखाई दे रहे हैं। यद्यपि स्वयं विज्ञान का जन्म धर्म से ही हुआ हैं, लेकिन उसमें अहंवाद का पुट आ जाने से वह विज्ञान के रूप में पृथक हो गया। अगर विज्ञान से अहंवाद समाप्त हो गया तो स्वयं विज्ञान भी धर्म में ही समाहित हो जायेगा, क्योंकि विज्ञान का आधार कर्म है जो बुद्धिवाद, अहंवाद, इन्द्रियज्ञान एवं तर्क पर आधारित है, जबकि धर्म कर्मों के त्याग, आत्मसमर्पण (Self surrender), मन-बुद्धि-अहंकार के विनाश, परा-इन्द्रिय ज्ञान तथा विश्वास पर आधारित है। प्राचीनकाल में जब विज्ञान नहीं था तब भी धर्म जिन्दा था, क्योंकि उस समय भी सांख्यदर्शन का महाविज्ञान विद्यमान था और गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा वह शुद्ध ज्ञान उसीप्रकार आजतक चला आ रहा है। बुद्ध, शंकराचार्य, रामकृष्ण तथा रमण को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए किसी आधुनिक विज्ञान की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि उनका दर्शन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बुद्धिवाद एवं अहंवाद पर आधारित नहीं था, बल्कि त्याग और आत्मसमर्पण पर आधारिक था। विज्ञान हमें इस जगत में भोगविलास एवं भौतिक सुख के साधन दे सकता है, लेकिन वह हमें मनुष्य का परम उद्देश्य मुक्ति नहीं दे सकता, परमसत्य से साक्षात्कार नहीं करा सकता, क्योंकि उसके लिए अहंवाद का विनाश आवश्यक है। यह ठीक है कि बुद्धि हमें मुक्ति के द्वार तक पहुँचा सकती है, लेकिन उस अन्तिम अवस्था में भी हमें आत्मस्थित ही होना पड़ेगा। परन्तु आज का विज्ञान यह दावा तभी कर सकता है जबकि वह सांख्यदर्शन के महाविज्ञान को स्वीकार कर ले।

यद्यपि वैज्ञानिक सृष्टि के सम्बन्ध में ईश्वर शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं, लेकिन आइन्स्टीन ने न्यूटन की भाँति ऐसी किसी मर्यादा को स्वीकार नहीं किया है। इस सम्बन्ध में उनके विचारों को उद्धृत करते हुए लिन्कन वार्नेट अपनी पुस्तक (The universe and Dr. Einstein) में कहते हैं, "आइन्स्टीन के अनुसार मेरा धर्म उस अनन्त परम चेतनशक्ति (Illimitable superior spirit) के प्रति विनीत श्रद्धा भाव से ओतप्रोत है जो स्वयं अपने को ही उन कुछ थोड़े तथ्यों में प्रकट कर इस योग्य बनाता है कि हम अपने दुर्वल और क्षीण मन द्वारा उसे ग्रहण करने में समर्थ होते हैं और वह प्रबल भावनात्मक दृढ़ विश्वास कि इस अकल्पनीय ब्रह्माण्ड (Incomprehensible universe) में एक उत्कृष्ट विवेकशील शक्ति विद्यमान है—यह भाव ही ईश्वर के प्रति मेरा अपना विचार है।" आइन्स्टीन के इन विचारों का अर्थ यह हुआ कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड तथा निर्जीव एवं सजीव सभी वस्तुएँ योजनाबद्ध ढंग से चल रही हैं। यह विचार भौतिकवादी विचारधारा पर एक प्रत्यक्ष प्रहार है जो इस सिद्धान्त कां प्रतिपादन करती है कि इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति अनायास एवं योजनाविहीन ढंग से हुई है। लेकिन अद्वैत वेदान्त तो स्वयं ईश्वर को भी मनुष्य से पृथक नहीं समझता, क्योंकि ईश्वर ही स्वयं अपने को ही असंख्य नाम-रूपों में प्रकट कर रहा है। यही कारण हैं कि अद्वैत वेदान्त यह घोषित करता है, "अहम् ब्रह्मास्मि"। अतः इस दर्शन के अनुसार जीव और परमात्मा का भेद भी सापेक्ष भ्रम के कारण उत्पन्न होता है जिसका मूलकारण अहंकार (Ego) है। जब बीच से अहंकार हट जायेगा तो जीव स्वयं ब्रह्मस्वरूप हो जायेगा। लेकिन बिडम्बना यह है कि आज का विज्ञान अहंज्ञान द्वारा ही परब्रह्म परमेश्वर को जानना चाहता है जो वेदान्त और योग-दर्शन के अनुसार असम्भव है।

एक अन्य प्रमुख अंग्रेज वैज्ञानिक सर ओलीवर लाज ने तो विज्ञान की सभी सीमाओं को तोड़ते हुए यह विचार व्यक्त किया है कि इस भौतिकजगत से परे भी जीवजगत अथवा चेतन आस्तित्व विद्यमान है। वह मृतात्माओं का आवाहन (Seances) भी करते थे और आत्मा के अस्तित्व में उनका दृढ़ विश्वास था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ब्रिटिश एसोशिएशन के शताब्दी समारोह में एकत्र वैज्ञानिकों की वृहद सभा में उन्होंने यह घोषित किया कि निकट भविष्य में विज्ञान अन्तरिक्ष में जीवजगत और मन के अस्तित्व को प्रमाणित करेगा। लाज के विचारों से विलियम क्रुक्स, जान रेले, चार्ल्स रिचेट, जे० जे० थामसन तथा अल्फ्रेड आर० वालेस आदि प्रमुख वैज्ञानिक भी सहमत थे।

अमेरिका के टेक्सास विश्वविद्यालय में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर डा० ई० सी० जी० सुदर्शन ने दिल्ली में १३ नवम्बर १९७७ को 'जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल व्याख्यानमाला' के अवसर पर भाषण देते हुए (The Times of India Dt. 14-11-77) यह विचार व्यक्त किया, "आज भौतिकविज्ञान को एक नई व्याख्या, नया गणितीय ढाँचा तथा सर्वथा नये स्वरूप की आवश्यकता है। जब हम जगत और सृष्टि की रचना का अध्ययन एवं चिन्तन-मनन दैवी दृष्टिकोण से करते हैं तो भौतिकशास्त्र भी एक भक्ति का विषय बन जाता है। चूँकि भौतिकविज्ञान का सम्बन्ध जगत के सभी कर्म-व्यापार से हैं, इसलिए वह केवल भौतिकविज्ञान ही नहीं है, बल्कि एक आध्यात्मिक शास्त्र भी है। अध्यात्म एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें जगत की सभी प्रक्रियाओं का अन्त हो जाता है। डा० सुदर्शन के अनुसार किसी वस्तु का ज्ञान प्राप्त हो जाने पर उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। डा० सुदर्शन कहते हैं कि इसीप्रकार भौतिकविज्ञान भी साध्य नहीं है, बल्कि साधन मात्र है और ज्ञान प्राप्त हो जाने पर अध्यात्म में ही परिवर्तित हो जायेगा"। डा० सुदर्शन का यह विचार केवल एक सुन्दर व्याख्यान है, जो किसी समारोह में दिया गया है। वैसे उनका यह कहना ठीक है कि जैसा दृष्टिकोण होगा शास्त्र भी वैसा ही बन जायेगा, क्योंकि मूलरूप से दर्शन और विज्ञान मे कोई अन्तर नहीं है। लेकिन वह दृष्टिकोण स्वयं किसी शास्त्र में नहीं होता, बल्कि चेतनपुरुष में होता है और वह आध्यात्मिक दृष्टिकोण आज के वैज्ञानिकों के व्यवहार और चरित्र में भी परलक्षित होना चाहिये, तभी भौतिकविज्ञान अध्यात्म का विषय बन सकता है। परन्तु व्यवहारिक रूप से ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता जिससे यह प्रकट हो कि यूक्लिड और न्यूटन का महाभूत विज्ञान के सिर से इतनी आसानी से उतर जायेगा। आज के विज्ञान के समक्ष सबसे बड़ा प्रश्न दिशा एवं दृष्टिकोण का है और उस परम उद्देश्य में अहंज्ञान ही वह विकट बाधा है जो उसे सत्य के रास्ते से भटका देती है। यही कारण है कि उसे सत्य का बोध न होकर टेलीविजन के रजतपट पर केवल छाया-चित्रों के दर्शन होते हैं। सत्य का दर्शन प्राप्त करने का सौभाग्य तो योगियों को ही प्राप्त होता है। डा० सुदर्शन आज के विज्ञान के लिए जिस नये गणितीय ढाँचे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा स्वरूप की बात कर रहे हैं वह ढ़ाँचा और स्वरूप विज्ञान को केवल सांख्य-दर्शन से ही प्राप्त हो सकता है।

लेकिन विज्ञान और अध्यात्म को मिलाने के प्रयास में बर्कले विश्वविद्यालय में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर डा० फ्रिट्जोफ केप्रा सभी वैज्ञानिकों से आगे बढ़कर बाजी मार ले गये हैं। उन्होंने आज के वैज्ञानिकों को एक सिद्ध योगी का दर्जा प्रदान कर दिया है और इसप्रकार गीता तथा पतंञ्जलि योगसूत्र को आज के परम भौतिकशास्त्र के आधीन कर दिया है। डा० केप्रा अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The Tao of Physics) में कहते हैं कि पूर्वीय योगविद्या (Mysticism) के दिव्य ज्ञान तथा पाश्चात्य विज्ञान में एक सारभूत समरसता है और उसे प्रदर्शित कर विज्ञान के स्वरूप का परिष्कार करना ही इस पुस्तक का प्रधान उद्देश्य है। डा० केप्रा के अनुसार इस अभियान में दार्शनिक दृष्टिकोण से विज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण कदम 'परमाणु जगत' (World of atoms) में प्रवेश करना है। परमाणु की आन्तरिक संरचना की खोज में विज्ञान इद्रियजनित मानवीय कल्पनाओं की सीमा से परे चला गया है और इस सीमापर आकर वह तर्कशास्त्र एवं सहज-ज्ञान पर पूर्णतया भरोसा नहीं कर सकता। पारमाणविक भौतिकशास्त्र द्वारा वैज्ञानिकों को वस्तुओं की सारभूत प्रकृति की पहली झलक मिलती है। डा० केप्रा कहते हैं कि जिसप्रकार योगी (Mystics) पराइन्द्रिय अनुभूति प्राप्त करते हैं उसीप्रकार भौतिकशास्त्री भी अब इन्द्रियों से परे वास्तविकता का अनुभव प्राप्त करते हैं और योगी की भाँति ही वे अपनी अनुभूतियों में परस्पर विरोधी पहलुओं का सामना करते हैं। इसप्रकार आधुनिक भौतिकशास्त्र के आदर्शों एवं प्रति बिम्बों (Images) तथा पूर्वीय दर्शनशास्त्र के सिद्धान्तों में एकरूपता स्थापित हो जाती है। पूर्वीय विचारधारा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि सभी वस्तुओं तथा घटनाओं में एकत्व हैं और वे सभी परस्पर सम्बद्ध हैं। पूर्वीय परम्पराएँ हमेशा उस अन्तिम सत्य की अविभाज्यता की ओर संकेत करती हैं जो सभी वस्तुओं में स्वयं अपने को ही प्रकट कर रहा है और सभी वस्तुएँ उसी परम सत्य का ही अंग हैं। उस परम सत्य को हिन्दू धर्म में ब्रह्म कहा गया हैं, बौद्धधर्म में धर्मकाय और तओवाद में ताओ कहा गया है।

डा० केप्रा के अनुसार इस ब्रह्माण्ड का मूलभूत एकत्ववाद सिर्फ यौगिक अनुभूतियों का ही सत्व नहीं है, लल्कि यह आधुनिक भौतिकविज्ञान का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रत्यक्षानुभूति भी है। यह अनुभूति परमाणु के स्तर पर स्पष्ट होती है और जैसे-जैसे हम पदार्थ की गहराई में प्रवेश कर उपपारमाणविक कणों के क्षेत्र में पहुँचते हैं वैसे-वैसे वह अनुभूति और स्पष्ट होती जाती है। अगर हम आधुनिक भौतिकशास्त्र तथा पूर्वीय दर्शनशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन करें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तो हमें सभी वस्तुओं तथा घटनाचित्रों में इस एकत्व के ही दर्शन होंगे। डा० केप्रा स्वामी विवेकानन्द को उद्धृत करते हुए (Jnana yoga, p. 169) कहते हैं कि 'देश-काल और निमित्त' (Space-time and causation) शीशे की भाँति हैं जिनसे होकर निरपेक्ष शक्ति दृष्टिगोचर होती है, लेकिन उस निरपेक्ष शक्ति में 'देश-काल-निमित्त' का कोई अस्तित्व नहीं है। केप्रा के अनुसार पूर्वीय योग-विद्या समय के बन्धन से मुक्त करती है और यही बात सापेक्षवादी भौतिक-शास्त्र के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। पूर्वीय दार्शनिक दृष्टिकोण के अनुसार सत्य पदार्थ के सभी नाम-रूपों से परे है और इसीलिए उसे निराकार अथवा शून्य भी कहा गया है। लेकिन केप्रा के विचार से इस शून्य का अर्थ खालीपन से नहीं है, बल्कि इसके विपरीत वह पदार्थ के सभी नाम-रूपों का सत्व है तथा जीवजगत का श्रोत है, जैसाकि छान्दोग्य उपनिषद में कहा गया है— ब्रह्म ही जीवन है''''ब्रह्म ही आनन्द है''''इत्यादि।

अतः डा० केप्रा का मत है कि आधुनिक भौतिकशास्त्र में पारमाणविक घटनाचित्रों के सन्दर्भ में चेतना का प्रश्न उपस्थित होता है। क्वान्टमवाद (Quantum physics) से यह स्पष्ट होता है कि इन घटनाचित्रों की धारणा तभी हो सकती है जबकि उन्हें प्रक्रियाओं की शृंखला में कड़ियों के रूप में देखा जाय और उस कड़ीं का अन्तिम छोर मानवीय चेतना में ही निहित है। यूजीन विग्नर के शब्दों में हम 'क्वान्टमवाद' के नियमों की क्रमबद्ध धारणा चेतना के बिना नहीं कर सकते और केप्रा के अनुसार इस सन्दर्भ में आधुनिक भौतिकशास्त्री चेतना के अभिन्न अस्तित्व की अनिवार्यता को स्वीकार करते हैं।

अगर डा० केप्रा के क्रान्तिकारी विचारों को आज के विज्ञान की एक नई दृष्टि माना जाय तो यह निष्कर्ष निकलता है कि एक योगी और वैज्ञानिक में कोई अन्तर नहीं है। यह आज के विज्ञान के लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि कि अब वैज्ञानिकों को परमाणु तथा उपपरमाणु जगत में एक सिद्ध योगी की भाँति सत्य का दर्शन प्राप्त होने लगा है। जिस परमाणुजगत में सर जेम्स जीन्स, आर्थर एडिंगटन तथा आइन्स्टीन जैसे सिद्ध वैज्ञानिकों को सत्य का दर्शन नहीं प्राप्त हो सका अब उसी जगत में डा० केप्रा के अनुसार विज्ञान की नई तकनीक द्वारा वह दिव्यदर्शन प्राप्त करना सम्भव हो गया है। लेकिन जब सुप्रसिद्ध जर्मन भौतिकशास्त्री हेंसेनबर्ग ने अपने सुपर माइक्रोस्कोप (अरबों गुना शक्तिशाली) द्वारा उस उपपरमाणुजगत का निरीक्षण किया तो उन्हें वहाँ पर फोटोन और इलेक्ट्रान कणों के बीच भीषण द्वन्द्वात्मक संघर्ष दिखाई दिया। अगर इसी को सत्य का दर्शन कहते हैं तो फिर हमें महाभारत तथा प्रथम और द्वितीय विश्व-युद्ध को भी सत्य का दर्शन कहना पड़ेगा। इसीप्रकार अपने गहन अनु सन्धान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा कोलम्बिया विश्वविद्यालय में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर जेराल्ड फेनबर्ग तो उपपरमाणु जगत से भी परे होकर 'प्रतिपदार्थ जगत' (Anti-matter world) में पहुँच गये हैं और इस नियम के अनुसार स्वाभाविक है कि उन्हें इससे भी अधिक दिव्य दर्शन प्राप्त होते होंगे। जो कुछ भी हो अब विज्ञान कम से कम इतना तो मानने लगा हैं कि इस भौतिकजगत से परे और भी बहुत कुछ है तथा उसे जड़पदार्थ नहीं देखता, बल्कि स्वचेतना (Self consciousness) देखती है। अतः स्वयं आज के विज्ञान द्वारा प्रमाणित स्वचेतना का यह नवीन सिद्धान्त उसके सभी पुराने सिद्धान्तों तथा सम्पूर्ण भौतिकवादी विचारधारा को पूर्णतया ध्वस्त कर देता है, क्योंकि क्वान्टमवाद और आइन्स्टीन के सुप्रसिद्ध समीकरण ($E = Mc^2$) के अनुसार चेतना पदार्थ से पृथक तत्व सिद्ध हो जाती हैं। अगर चेतना (आत्मा) पदार्थ से पृथक तत्व सिद्ध हो जाती है तो यहीं से सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन का महाविज्ञान अपने नये अध्याय के साथ शुरु हो जाता है जो स्वयं अनन्त ज्ञान में विलीन हो जाता है। इस नये परिप्रेक्ष्य में अरस्तू से लेकर आइन्स्टीन से पहले तक का सम्पूर्ण वैज्ञानिक ढ़ाँचा अब टूटकर गिर चुका है और उस पुरानी नींव पर ही आज के विज्ञान को अब नई तकनीक द्वारा नया महल बनाना पड़ेगा।

कपिल के पूर्ण सापेक्षवाद द्वारा यह स्पष्ट होता है कि हमारा भौतिकजगत तथा इससे परे असंख्य लोक अपनी असंख्य वृत्तियों (circles) का अनुसरण करते हुए 'कारण और कार्य' (cause and effect) शृंखला द्वारा परस्पर बंधे हुए हैं तथा सम्पूर्ण प्रक्रिया द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा ही आगे बढ़ रही है। यह द्वन्द्वात्मक संघर्ष ही सापेक्षवाद है, कारण और कार्य की शृंखला है तथा स्वयं हमारा अपना जीवन भी है और इस प्रक्रिया से परे हो जाना ही मुक्ति है, निर्वाण है, कैवल्य है। यही सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन का सारतत्व है। इसप्रकार सापेक्षवाद की असंख्य वृत्तियों में तथा असंख्य लोकों में स्वयं आधुनिक विज्ञान की भी अपनी एक वृत्ति है, अपना एक लोक है और वह उसी वृत्ति तथा उसी लोक का अनुसरण कर रहा है जिसमें पदार्थ ऊर्जा बन जा रहा है तथा ऊर्जा पदार्थ ($E = Mc^2$)। जब विज्ञान इस वृत्ति को पार कर जायेगा तो वह 'प्रतिपदार्थ' (Antimatter) की दूसरी महावृत्ति में पहुँच जायेगा और प्रकृति के नियमों के अनुसार उसे उसी महावृत्ति अथवा लोक का अनुसरण करना पड़ेगा। इसप्रकार प्रकृति के अन्तर्गत इन असंख्य वृत्तियों एवं असंख्य लोकों की कोई सीमा नहीं है।

आधुनिक युग के अद्वितीय संत रामकृष्ण परमहंस अपने भक्तों से प्रायः कहा करते थे, "इस संसार में मनुष्य की वही स्थिति है जैसे महासमुद्र में जहाज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के मस्तूल पर एक पक्षी बैठा हुआ चारों ओर देख रहा है, कभी इधर जा रहा है और कभी उधर जा रहा है। लेकिन उस अकल्पनीय समुद्र का कहीं ओर-छोर नहीं दिखाई दे रहा है। अन्त में हार मानकर वह पक्षी उस अनन्त प्रभु की शरण में जाकर यह प्रार्थना करता हैं—हे प्रभो ! मेरा उद्धार करो।" इसी शुद्ध ज्ञान को संत तुलसीदास ने रामचरितमानस में इन शब्दों में व्यक्त किया है—

हरि अनंत हरि कथा अनंता। कहहिं सुनहिं बहु बिधि सब संता॥

आधुनिक विज्ञान उन असंख्य कथाओं में से अपनी भी एक छोटी सी कथा लोगों को सुना रहा है। लेकिन उस भौतिक कथा की भी अपनी एक उपयोगिता है इसमें कोई सन्देह नहीं, क्योंकि सभी कथाओं का मूलश्रोत परब्रह्म परमेश्वर ही है। इसीलिए वेदान्त कहता है कि जगत की सभी वस्तुएँ अपनी-अपनी जगह पर सही और उपयुक्त हैं। परन्तु जब कोई अपनी सीमा का उलंघन कर अहंकारवश स्वयं अपने को ही कर्त्ता समझ बैठता है तो वह परम चेतनशक्ति समय-समय पर उसे अपनी सीमा का बोध करा देती है। प्राचीन युग में रावण, दुर्योधन तथा कंस को भी ऐसा ही बोध हुआ था और आधुनिक युग में क्वान्टमवाद एवं सापेक्षवाद से विज्ञान को भी यही शिक्षा मिल रही है। उन अहंवादियों को शिक्षा देने के लिए ही तुलसीदास को यह लिखना पड़ा—

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी। मत हमार अस सुनहि सयानी॥
तदपि संत मुनि बेद पुराना। जस कछु कहहिं स्वमति अनुमाना॥
तस मैं सुमुखि सुनावउँ तोही। समुझि परइ जस कारन मोही॥
जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

इन उपदेशों को सारतत्व यही है कि हम अपने अहंज्ञान द्वारा अथवा बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग कर उस परम चेतनशक्ति को कभी भी किसीप्रकार सीमाबद्ध नहीं कर सकते। अगर भ्रमवश ऐसा प्रयास किया जायेगा तो वह स्वयं सीमाबद्ध हो जायेगा। वास्तव में यह अहज्ञान अथवा मानसिक भ्रम ही उस परम चेतनशक्ति को असंख्य नाम-रूपों में बाँट रहा है, सीमित एवं सापेक्ष अस्तित्व को निरपेक्ष या अनन्त बना दे रहा है। सापेक्ष प्रकृति की असंख्य प्रक्रियाएँ स्वयं उस अनन्त ब्रह्म की ही असंख्य प्रक्रियाएँ हैं, वही शक्ति स्वयं अपने को ही असंख्य नाम-रूपों में प्रकट कर रही है। लेकिन क्षुद्र मनुष्य का अहंज्ञान किसी अंश विशेष को भ्रमवश अपनी प्रक्रिया मान लेता है, अपने पदार्थ-मिश्रित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शरीर एवं बुद्धिवाद को स्वाधीन एवं कर्त्ता समझ लेता है। इस अहंज्ञान एवं मानसिक भ्रम से ही भौतिकवाद, यथार्थवाद तथा स्वाधीन इच्छा (Free will) आदि सापेक्ष तथा भ्रामक सिद्धान्तों का जन्म होता है। लेकिन जीव के साथ विडम्बना यह है कि यह अहंज्ञान भी अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि इसके बिना भौतिकजगत में कोई भी रचनात्मक कर्म-व्यापार सम्भव नहीं है। इस सन्दर्भ में यह कहना उपयुक्त होगा कि भौतिकवाद, परमाणुवाद तथा यथार्थवाद भी अपनी जगह पर अपनी सापेक्ष सीमाओं के अन्तर्गत उपयोगी हैं, क्योंकि इसी आधार पर हमें प्रकृति के भौतिक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो रहा है और उस ज्ञान पर ही वस्तुजगत में कर्मवाद टिका हुआ है। त्रिविध गुण-विकारों में सत्वगुण के अतिरिक्त रजोगुण और तमोगुण भी प्रकृति के ही अभिन्न अंग हैं तथा इन त्रिविध गुणों के सामंजस्य से ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना हुई है। इसप्रकार कर्म और अकर्म, निरपेक्ष और सापेक्ष, सुख और दुख तथा कारण और कार्य का यह सन्तुलन जगत में सदैव बना रहता है। वास्तव में समता से ही विषमता होती है और विषमता से ही समता, यही सापेक्ष और निरपेक्ष का रहस्य है। यह जगत मायारूप है और मायारूप नहीं भी है, यह रहस्य ही ज्ञान और अज्ञान का विषय है, जो केवल प्रत्यक्षानुभूति का विषय है, तर्क-वितर्क का नहीं।

वास्तव में इस अहंज्ञान को निमित्त बनाकर ही वह परम चेतनशक्ति जीव-जगत को कठपुतली की तरह नचा रही है। इस प्रक्रिया के दो पहलू हैं—पहला यह कि प्रकृति और पुरुष के संयोग से जब बुद्धितत्व (महत्) और अहंज्ञान का जन्म होता है तो स्वयं प्रकृति भी साम्यावस्था से वैषम्यावस्था में आती है तथा इस प्रक्रिया में त्रिगुणात्मक तत्त्वों का क्रमविकास असंख्य लोकों में होने लगता है जिसके फलस्वरूप असंख्य निर्जीव एवं सजीव मूर्त्तियाँ सर्वत्र दृष्टिगोचर होने लगती हैं। इसका दूसरा पहलू यह है कि सम्पूर्ण प्रक्रिया एक मायावी प्रक्रिया है जिसका कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है और इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन अद्वैतवेदान्त करता है। सांख्यदर्शन ने भी अनेक दृष्टान्तों द्वारा इस मायावाद की ओर संकेत कर दिया है, यद्यपि इस सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं किया है। उदाहरण के लिए प्रकृति को अतृप्त कामिनी के रूप में चित्रित करना, असंख्य लोकों तथा देवताओं के अस्तित्व को स्वीकार करना, चेतनपुरुष या आत्मा को नहीं, वल्कि स्वयं प्रकृति को ही वन्धनग्रस्त मानना तथा बन्धन और मुक्ति का सिद्धान्त आदि उदाहरण उसी ओर संकेत करते हैं, क्योंकि कोई भी सापेक्ष एवं परिवर्त्तनशील शक्ति अन्ततः किसी निरपेक्ष शक्ति में ही परिवर्त्तित होगी और वह परिवर्त्तन तभी सम्भव होगा जबकि निरपेक्ष शक्ति नित्य, शाश्वत, अविनाशी तथा स्थिर एवं अचल होगी। अतः सापेक्षतावादी सिद्धान्त ही सांख्य-

१०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दर्शन है और निरपेक्षतावादी सिद्धान्त ही अद्वैत वेदान्त का सर्वोत्कृष्ट दर्शन है। यह एक सनातनदर्शन है और इस पर आधारित धर्म को ही भारतवर्ष का सनातन धर्म कहते हैं। इसीलिए सांख्यदर्शन पर आधारित योगदर्शन कहता है कि सम्पूर्ण सृष्टि ब्रह्म का ही एक विचार प्रवाह (Thought form) है जो असंख्य लोकों के रूप में प्रतिभासित हो रहा है। सुप्रसिद्ध भौतिकशास्त्री सर जेम्स जीन्स भी इसी सिद्धान्त के प्रवर्त्तकों में से हैं। यद्यपि इस सिद्धान्त को भौतिक भाषा में सिद्ध नहीं किया जा सकता, केवल उसकी अनुभूति मात्र हो सकती है, क्योंकि जब स्वयं प्रकृति सीमित एवं सापेक्ष है तथा उसके द्वारा उत्पन्न अद्भुत् इलेक्ट्रानिक यन्त्र (मन, बुद्धि, अहंकार) भी सीमित और सापेक्ष हैं तो भला उन यन्त्रों से उस निरपेक्षशक्ति की कल्पना कैसे हो सकती है! लेकिन इन महाशक्तिशाली यन्त्रों से हम स्वयं सापेक्ष प्रकृति के रहस्यों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और विज्ञान की भाँति अनेक प्रकार के सिद्धान्तों की रचना कर सकते हैं तथा अपने अहंज्ञान द्वारा उसी को परम सत्य की सीमा मान सकते हैं एवं उन्हीं यन्त्रों द्वारा हम मुक्ति के द्वार तक भी पहुँच सकते हैं। आज का विज्ञान इन्हीं प्राकृतिक यन्त्रों (मस्तिष्क, मन, बुद्धि, अहंकार) का प्रयोग कर क्रमशः परमाणुजगत, उपपरमाणु जगत तथा प्रतिपदार्थ जगत तक पहुँचने में सफल हो सका है। लेकिन उसी को अन्तिम जगत मान लेना विज्ञान के अहंज्ञान का द्योतक होगा और अहंज्ञान का क्या परिणाम होता है यह इतिहास की पुस्तकों में भरा पड़ा है।

परन्तु अद्वैतवादी दृष्टिकोण से इस सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उन असंख्य लोकों का अस्तित्व भी छायालोकों (Shadow worlds) के समान है, क्योंकि जब स्वयं प्रकृति का अस्तित्व ही मायावी है तो उन असंख्य लोकों का अस्तित्व भी मायावी होगा। इन असंख्य छायालोकों का विशद विवेचन पुराणों में मिलता है। आज स्वयं विज्ञान को भी यह भौतिक जगत छायालोक (Shadow world) के समान प्रतीत हो रहा है, क्योंकि जैसे-जैसे बुद्धि का विकास होता है वैसे-वैसे ज्ञान में भी वृद्धि होने लगती है। लेकिन अहंज्ञान से छुटकारा पा जाना बड़ी कठोर साधना द्वारा ही सम्भव हो पाता है। यहाँ तक कि रामकृष्ण परमहंस के अनुसार अद्भुत ज्ञानी होकर भी जगद्गुरु शंकराचार्य में विद्या का अहं विद्यमान था। स्वर्ग में देवताओं को भी विभिन्न स्तरों में अहंज्ञान होता है। जिसको अहंज्ञान नहीं होता वह परमहंस होकर मुक्त हो जाता है। इसीलिए वेदान्त में 'आत्मसमर्पण का सिद्धान्त' (Self Surrender) प्रतिपादित किया गया है। योगदर्शन के अनुसार इस महाशक्तिशाली प्राकृतिक यन्त्र से छुटकारा केवल निर्विकल्प समाधि में ही हो पाता है। अतः डॉ० केप्रा जब एक भौतिकशास्त्री की तुलना एक योगी से करते हैं तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह तथ्यों पर आधारित नहीं है, क्योंकि अहंज्ञान द्वारा प्राप्त ज्ञान कभी भी किसीप्रकार परमसत्य का ज्ञान नहीं हो सकता।

अब यहीं पर उस निरपेक्ष शक्ति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए दो प्रमुख मार्ग हो जाते हैं–पहला अहंवादी मार्ग अथवा बहिर्गत प्रक्रिया(objective process) तथा दूसरा निरहंकारी मार्ग अथवा आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process)। पहली वैज्ञानिक प्रक्रिया है और दूसरी यौगिक प्रक्रिया है, लेकिन दोनों प्रक्रियाओं के फल में जमीन और आसमान का अन्तर है। एक में दर्शन तो होता है, किन्तु छायाचित्रों का, जबकि दूसरे में सत्यस्वरूप का दर्शन होता है। इस यौगिक प्रक्रिया को ही चेतना का उत्कर्ष(unfoldment of consciousness) कहते हैं, क्योंकि इस प्रक्रिया में अनेक स्तरों (सूक्ष्म एवं स्थूल) में लिपटा हुआ त्रिगुणात्मक पदार्थ का आवरण, देश-काल-निमित्त की अटूट शृंखला तथा स्वयं प्रकृति का मायावी स्वरूप सूर्य के समान आत्मा के शुद्ध प्रकाश में अन्धकार के समान लुप्त हो जाता है। यद्यपि भक्तिमार्ग में प्रवृत्तिमार्ग अथवा बहिर्गत प्रक्रिया का ही अनुसरण किया जाता है, लेकिन इस अनुसन्धान में भक्त पूर्णतया आत्मसमर्पित होता है जिससे उसका अहंज्ञान चला जाता है। इसलिए उस मार्ग को भी आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) ही समझना चाहिये। इन दोनों प्रक्रियाओं को ही वेदान्त की भाषा में 'नेति नेति' (यह नहीं यह नहीं) तथा 'इति इति' (यही है यही है) भी कहा गया है। एक से स्पष्ट होता है कि जगत मायारूप है, जबकि दूसरे से प्रकट होता है कि कण-कण में अथवा प्रत्येक परमाणु में परम चेतनशक्ति विद्यमान है। इसप्रकार हम चाहे जिस मार्ग का अनुसरण करें अन्त में पहुचेंगे उस केन्द्रविन्दु पर ही, फर्क केवल इतना है कि योगी स्वाभाविक मार्ग का अनुसरण कर बहुत जल्द पहुँच जाता है, जबकि अहंवादी को वहाँ पहुँचने में बहुत देर लगती है, क्योंकि वह रास्ते में असंख्य पेड़ों के असंख्य पत्तों को गिनता हुआ आगे बढ़ता है। इसीलिए वेदान्त में कहा गया है कि जिसप्रकार सभी नदियां घूम-फिर कर समुद्र में ही विलीन होती हैं उसीप्रकार यह अकल्पनीय सृष्टि तथा उसके अन्तर्गत भिन्न-भिन्न वस्तुएँ भिन्न-भिन्न मार्गों का अनुसरण करती हुई उसी परम शक्ति में विलीन हो जाती हैं।

आज क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद से विज्ञान को जो सबसे महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ है वह सांख्यदर्शन पर आधारित यह परा-इन्द्रिय ज्ञान है कि स्वचेतना अथवा आत्मा से पृथक इस ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है तथा प्रकृति के त्रिविध गुण-विकारों द्वारा उत्पन्न असंख्य दिव्य लोकों एवं भोग्य पदार्थों का तबतक कोई अस्तित्व या अर्थ नहीं है जब तक चेतनपुरुष के रूप में इस मोहक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रदर्शनी का कोई द्रष्टा, साक्षी एवं भोक्ता विद्यमान नहीं है। इसका दार्शनिक अर्थ यह हुआ कि स्वयं प्रकृति या पदार्थ का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है, जैसाकि आधुनिक विज्ञान अबतक प्रमाणित करने का प्रयास करता रहा है। लेकिन बुद्धिवादी कौशल की भी अपनी एक सीमा होती है, क्योंकि स्वयं यह शक्ति भी सीमित और सापेक्ष है। अब यह अपने-अपने चेतन-स्तरों पर निर्भर करता है कि कौन इस प्रदर्शनी को मायारूप समझ रहा है और कौन यथार्थ। यह सभी कुछ मनुष्य के अपने विश्वास पर निर्भर करता है।

अतः अधुनातन विज्ञान की यह नई दृष्टि, नवीन चेतना तथा नई विचारधारा उस शुभ दिशा की ही सूचक हैं जिसका संकेत हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने वेद-मन्त्रों के रूप में आज से हजारों वर्ष पहले ही दे दिया था। लेकिन बीच में विज्ञान ने अहंज्ञान एवं बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग कर दर्शन और विज्ञान के बीच एक लक्ष्मण रेखा खींच दी थी जो क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद द्वारा अब पूर्णतया टूट चुकी है। यद्यपि आज वैज्ञानिक अपने मूल सिद्धान्तों की रक्षा के लिए एक नये ढाँचे तथा नवीन दृष्टिकोण की बात कर रहे हैं, लेकिन देखने की बात यह है कि अपने अनुसन्धान में अब विज्ञान किस प्रक्रिया का अनुकरण करता है। अगर वह फिर अहंज्ञान एवं बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग कहता है तो यही विषम स्थिति आगे भी उत्पन्न होगी और इसीप्रकार फिर किसी नये ढाँचे की आवश्यकता पड़ेगी। इसके विपरीत अगर वह आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) का प्रयोग करता है तो वह स्वयं वेदान्त में समाहित हो जायेगा। इस तथ्य को समझने के लिए हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि व्यष्टि मन (Individual mind) किसी एक समय में सिर्फ एक वस्तु अथवा घटनाचित्र की ही धारणा कर सकता है, लेकिन जब वही व्यष्टि मन 'सार्वभौमिक मन' (universal mind) से संयुक्त हो जाता है तो एक क्षण में ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के रहस्यों की धारणा कर सकता हैं और वह अवस्था भी योग-साधना द्वारा ही प्राप्त होती है। जिन परमपुरुषों को यह अवस्था प्राप्त हो चुकी थी उन्हीं दिव्य पुरुषों में हम कपिल, राम, कृष्ण, बुद्ध, शंकराचार्य, रामकृष्ण तथा रमण आदि महात्माओं की गणना करते हैं और उनके आदर्शों का बिना तर्क-वितर्क के अनुसरण करते हैं।

इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है कि स्वचेतना से पृथक इस ब्रह्माण्ड का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व नहीं है। जब स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है तो इस ब्रह्माण्ड की रेखागणित, इसका आयाम (dimension) एवं इसका ढ़ाँचा हमारी स्वचेतना के भिन्न-भिन्न स्तरों अथवा अवस्थाओं पर ही निर्भर करेगी। उदाहरण के लिए जब हमारा चेतन-स्तर 'देश-काल' (Space-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

time) के अन्तर्गत होगा तो इस जगत का स्वरूप भी हमें छायाचित्रों के रूप में दृष्टिगोचर होगा, लेकिन जब वही चेतन-स्तर 'देश-काल' से परे होगा तो हमें आन्तरिक एवं वास्तविक स्वरूप का दर्शन होगा। इसप्रकार इन दर्शनों के भी असंख्य स्तर हो सकते हैं और उन स्तरों की दिव्यता में भी असंख्य स्तर हो सकते हैं, लेकिन यह सब कुछ चेतना के उत्कर्ष (unfoldment of consciousness) पर ही निर्भर करता है। असंख्य लोकों का यही महत्व है कि उनकी दिव्यता में भी असंख्य स्तर हो गये हैं जो सापेक्षवाद की प्रक्रिया में परस्पर एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। योगदर्शन के अनुसार इस ब्रह्माण्ड के असंख्य ग्रहों पर असंख्य सभ्यताएँ विद्यमान हैं और उन असंख्य सभ्यताओं के भी असंख्य सूक्ष्म नाम-रूप उनके अनुरूप सूक्ष्मजगत (Astral worlds) में विद्यमान हैं। जब चेतना का उत्कर्ष होता है तो मानसिक स्तर में भी उत्कर्ष होने लगता है, क्योंकि वह मानसिक स्तर भी प्रकृति की भाँति स्वचेतना अथवा चेतनपुरुष (आत्मा) से ही संयुक्त हैं और इस प्रक्रिया में ही व्यष्टि मन (Individual mind) सार्वभौमिक मन (Universal mind) से संयुक्त हो जाता है अथवा उस स्तर पर पहुँच जाता है जहाँ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का ज्ञान एक क्षण में ही उपस्थित हो जाता है। इस जगत में निम्न कोटि के जीव-जन्तु तथा कीट-पतंग आदि अपनी स्वचेतना का उत्कर्ष इसलिए नहीं कर पाते, क्योंकि उनके पास मनुष्य की भाँति उत्कृष्ट मस्तिष्क, मन, बुद्धि, आदि प्रकृति द्वारा रचित इलेक्ट्रानिक यन्त्र नहीं होते, क्योंकि निष्क्रिय चेतना अथवा आत्मा निर्लिप्त रह कर इन सक्रिय इलेक्ट्रानिक यन्त्रों के माध्यम से ही देखती, सुनती और अनुभव करती है। परन्तु सांख्यदर्शन के अनुसार इन उत्कृष्ट यन्त्रों की रचना भी प्रकृति के कारणस्वरूप त्रिविध गुणात्मक तरंगों द्वारा ही होती हैं। इसीलिए तुलसीदास ने कहा है—

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा॥
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

वास्तव में देवताओं के लिए भी भौतिक शरीर के रूप में ऐसा यन्त्र तथा ऐसी भौतिक अवस्था दुर्लभ होती है, क्योंकि अनेक प्रकार के दुखों से परिपूर्ण इस सापेक्ष जगत के द्वन्द्वात्मक संघर्ष से विरक्त होकर मनुष्य प्रकृति के सभी बन्धनों से मुक्त होने के लिए प्रयास करता है। इस भौतिकजगत में दुख उस अग्नि के समान है जिसमें शरीररूपी स्वर्ण को तपाया जाता है, बुद्ध और रामकृष्ण की तरह योग की कठोर साधनाओं से गुजारा जाता है और जब वह त्रिगुणात्मक शरीर तप्त होकर शुद्ध हो जाता है तो वह मनुष्य प्रकृति के सभी बन्धनों से परे होकर ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। इसके विपरीत स्वर्गलोक के देवता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अपेक्षाकृत सुख ही सुख का अनुभव करते हैं, उन्हें अग्नि में इसप्रकार अपने शरीर को नहीं तपाना पड़ता, वे लोग उस दिव्य जीवन को यथार्थ समझ कर उसी में आसक्त बने रहते हैं जिसके फलस्वरूप मुक्ति उनके लिए दूर की वस्तु हो जाती है। सृष्टि में इन त्रिगुणात्मक तरंगों का बड़ा महत्व है, क्योंकि जीव-जगत का चेतन-स्तर अथवा मानसिक अवस्था इन गुणात्मक तरंगों पर ही निर्भर करती है और जिसप्रकार आइन्स्टीन के समीकरण ($E = Mc^2$) द्वारा पदार्थ ही ऊर्जा है और ऊर्जा ही पदार्थ उसीप्रकार महामुनि कपिल के समीकरण के अनुसार त्रिगुणात्मक तरंगें (सत्व, रज, तम) ही पदार्थ हैं, जीवजगत हैं तथा जीवजगत और पदार्थ ही त्रिगुणात्मक तरंगें। यही कारण है कि एक बालक के चेतन-स्तर अथवा मानसिक स्तर तथा एक वृद्ध के चेतन-स्तर में इतना फर्क हो जाता है, क्योंकि त्रिगुणात्मक परमाणुओं के योग में जैसे-जैसे वृद्धि होती जाती है तथा उस योग से शरीर का जैसे-जैसे विकास होता जाता है मानसिक अवस्था में भी उसी के अनुरूप परिवर्त्तन होता रहता है। यही नियम जीव-जन्तु-वनस्पति तथा नक्षत्र-पिण्डों पर भी लागू होता है, क्योंकि यह त्रिगुणात्मक सामंजस्य ही प्रकाश, ताप, विकिरण, चुम्बकीय तरंगें, गुरुत्वाकर्षण तथा देश-काल-निमित्त आदि भिन्न-भिन्न शक्तियों के रूप में दृष्टिगोचर होता है। इलेक्ट्रान या परमाणु कण इन त्रिगुणात्मक तरंगों के केवल वाहक हैं, प्रकृति की वृत्तात्मक प्रक्रिया को पूर्ण करने वाले केवल साधनमात्र हैं और यह प्रक्रिया फोटोन तथा इलेक्ट्रान कणों के टक्कर से शुरू होती है।

अतः इस जगत की रेखागणित हमारी स्वचेतना की अवस्थाओं पर निर्भर करती है। जब चेतन-स्तर में परिवर्त्तन होता है तो वस्तुजगत की रेखागणित, आयाम तथा स्वरूप में भी उसी के अनुपात में परिवर्त्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए (रामकृष्ण वचनामृत-३ खण्ड एवं रामकृष्ण लीला प्रसंग-३ खण्ड, रामकृष्ण आश्रम नागपुर) रामकृष्ण परमहंस का चेतन-स्तर इतना ऊँचा उठ चुका था कि उन्हें प्रतिदिन दक्षिणेश्वर मन्दिर (कलकत्ता) में स्थित माँ काली की मूर्त्ति तथा जटाधारी नामक साधु की अष्ट धातु की बनी हुई बालक राम की मूर्त्ति (रामलला) सजीव एवं दिव्यरूप में दिखाई देती थी, वह उन मूर्त्तियों से ही हँसते-बोलते रहते थे तथा तरह-तरह की लीलाएँ किया करते थे। मूर्ख लोग उन्हें पागल कहते थे, लेकिन इसके उत्तर में वह कहा करते थे कि यह दुनियाँ भी एक पागलखाना है। कोई कामिनी और कांचन के लिए पागल है और मैं भगवान के लिए पागल हूँ। लेकिन मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरा ही पागलपन सबसे अच्छा है। वास्तव में इस परिवर्त्तन का कारण स्वयं उन मूर्त्तियों में नहीं था, बल्कि रामकृष्ण के उच्च चेतन-स्तर में था। उस अवस्था में उनका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चेतन-स्तर स्वर्गलोक अथवा किसी दिव्यलोक से सम्बद्ध था। इसके विपरीत सामान्य लोगों का चेतन-स्तर चूँकि भौतिकजगत से सम्बद्ध था, इसलिए उन्हें केवल प्रस्तर मूर्त्तियाँ ही दिखाई देती थीं और रामकृष्ण पागल नजर आते थे। रामकृष्ण के चमत्कारी स्पर्श (Mystic touch) से स्वामी विवेकानन्द के चेतन-स्तर में भी कई बार परिवर्त्तन हो चुका था जिसके फलस्वरूप उन्हें भी वस्तु-जगत अपने परिवर्त्तित स्वरूप में दिखाई दिया था। इसीप्रकार कभी अमेरिका में रहने वाले परमहंस योगानन्द द्वारा लिखित पुस्तक (Autobiography of a Yogi) के अनुसार जब योगानन्द ध्यानावस्थित हुए तो दक्षिणेश्वर मन्दिर की वही काली-प्रतिमा सजीव एवं दिव्यरूप धारण कर हाव-भाव प्रकट करने लगी, मन्दिर की दीवारें पारदर्शी हो उठीं तथा सुदूर क्षेत्र भी अत्यन्त मोहक रंग-रूप से परिपूर्ण होकर उन्हें स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा। उनका शरीर हवा की तरह हल्का हो गया और उनकी चेतना पूर्ववत् थी। इससे स्पष्ट है कि यदि स्वचेतना से पृथक् उन मूर्त्तियों अथवा वस्तुजगत का कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष अस्तित्व होता तो इस प्रकार का परिवर्त्तन कदापि नहीं हो सकता था। इसके विपरीत आत्मा या परमात्मा का अस्तित्व नित्य, शाश्वत और अविनाशी है, इसलिए उसमें कभी कोई परिवर्त्तन नहीं होता है। इससे प्रमाणित होता है कि कपिल और आइन्स्टीन का यह सिद्धान्त पूर्णतया सही है कि स्व-चेतना से पृथक इस ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है। अतः दार्शनिक ज्ञान के इस शुद्ध प्रकाश में आधुनिक विज्ञान के सभी भौतिकवादी सिद्धान्त स्वतः ध्वस्त हो जाते हैं।

यह प्रकृति का नियम है कि सामान्य मनुष्यों को एक समय में एक स्वरूप का दर्शन होता है तथा एक ही वस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है, लेकिन सिद्ध योगी एक ही क्षण में सब कुछ देख लेते हैं और उन्हें सभी वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इसी नियम के अनुसार हमें स्थूलशरीर में भौतिकजगत यथार्थ प्रतीत हो रहा है, लेकिन मृत्यु के बाद सूक्ष्मशरीर में (Astral body) सूक्ष्मजगत यथार्थ प्रतीत होगा, जागृत अवस्था में वस्तुजगत यथार्थ लगता है, जबकि स्वप्ना-वस्था में वही जगत यथार्थ प्रतीत होता है। इसीप्रकार वैज्ञानिकों को परमाणु-जगत तथा उपपरमाणुजगत यथार्थ और स्वतन्त्र दिखाई दे रहा है, क्योंकि उनकी अन्तर्दृष्टि सीमित और सापेक्ष है और उनकी दृष्टि का जैसे-जैसे विकास होता जायेगा वैसे-वैसे एक के ऊपर एक सूक्ष्मलोक उन्हें दृष्टिगोचर होते जायेंगे। यही कारण है कि जेराल्ड फेनबर्ग की विकसित दृष्टि में उन्हें प्रतिपदार्थ जगत दिखाई दे रहा है। -इसीलिए मैक्सप्लैंक ने क्वान्टमवाद तथा आइन्स्टीन ने सापेक्षवाद के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, क्योंकि अन्य वैज्ञानिकों की तुलना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में उनकी दृष्टि बहुत अधिक थी। यह वैज्ञानिकों का मानसिक भ्रम है कि अपनी सीमित दृष्टि से वे प्रकृति के सभी रहस्यों को माप लेते हैं और उसी को सत्य की सीमा समझ बैठते हैं। आज के विज्ञान का यह सौभाग्य है कि क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद ने उसकी आँखें खोल दी हैं, लेकिन यूक्लिड और न्यूटन का महाभूत सहसा उतर जायेगा, ऐसा लक्षण दिखाई नहीं दे रहा है।

वास्तव में वैज्ञानिक स्वचेतना अथवा चेतन पुरुष के महत्त्व को समझ नहीं पाते और अपने अहंज्ञान के फलस्वरूप जड़पदार्थ तथा उस पदार्थ से बने हुए शरीर, इन्द्रियाँ एवं मस्तिष्क को ही सब कुछ मान लेते हैं। इस सन्दर्भ में सांख्य-दर्शन के सूक्ष्मशरीर (Astral body) का तो नाम भी नहीं जानते। आज पाश्चात्य देशों की प्रयोगशालाओं में आइन्स्टीन की खोपड़ी (Brain) पर अनुसन्धान चल रहा है। अपने अनुसन्धान में वैज्ञानिक आइन्स्टीन की जिस विशेषता को जानना चाहते हैं वह चेतनपुरुष अपने गुण-विकारों के साथ उस जड़ खोपड़ी से पृथक होकर कब का सूक्ष्मजगत (Astral world) में पहुँच चुका है और कुछ जानने के लिए उन्हें यह प्रयोग अब सूक्ष्मजगत में ही करना चाहिये। वह खोपड़ी अब तो मिट्टी का ढेर बन चुकी है, वह अब शुष्क परमाणुओं का ढाँचामात्र दिखाई देगी। जब देखने और अनुभव करने वाला नहीं है तो भला वह यन्त्र किस काम का होगा! इससे तो अच्छा था कि उसे शीशे में मढ़कर यादगार के रूप में रख दिया जाता जिससे कम से कम रोज दर्शन तो हो जाता। वैज्ञानिक नियमों पर आधारित इस दर्शन को ही भौतिकवाद कहते हैं, यूक्लिड और न्यूटन के भूत के नाम से सम्बोधित करते हैं। यह भूत जबतक नहीं उतरता तबतक हमारी दृष्टि भी वही बनी रहेगी।

आज पाश्चात्य देशों में योगविज्ञान पर भी अनेक प्रकार के अनुसन्धान चल रहे हैं, लेकिन उसकी प्रमुख विशेषता यह है कि वहाँ योग और भोग में कोई विशेष अन्तर नहीं समझा जाता। वहाँ योग को फ्रायड के सेक्सवाद का ही एक अंग विशेष मान लिया गया है। वहां दर्शन और विज्ञान सभी कुछ सेक्स के पैमाने से ही मापा जाता है। यही कारण है कि आज सेक्सवाद की लहर में कुछ भी अछूता नहीं रह गया है। कुछ लोग तो योग को केवल मतिभ्रम (Hallucination) समझते हैं जो उनकी दृष्टि में नशीली दवाओं (चरस, अफीम, एल० एस० डी० आदि) से भी प्राप्त हो सकता है। इस आपा-धापी में वैज्ञानिक भी अब योगी होने का दावा करने लगे हैं, चारों तरफ नये-नये आश्रम खुलते जा रहे हैं, करोड़ों के बजट बन रहे हैं; स्वयंसिद्ध योगियों की बाढ़-सी आ गई है, लोग अपनी तुलना शंकराचार्य और विवेकानन्द से करने लगे है, वेदान्त की नई व्याख्या हो रही है, सम्भोग से समाधि की तुलना की जा रही है, राष्ट्रसंघ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के माध्यम से असीम शक्ति कुंडलिनी को जगाने का वैज्ञानिक अभियान चल रहा है, पुनर्जन्म पर वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे हैं तथा यौगिक चमत्कारों से अपने को सर्वशक्तिमान परमात्मा सिद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है। लेकिन इन तथाकथित वैज्ञानिक प्रयोगों का भी मूल कारण अहंज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि इन प्रयोगों में हमारी दृष्टि और उद्देश्य क्या है; उन प्रयोगों से स्वयं हम प्राप्त क्या करना चाहते हैं।

परन्तु इन कृत्रिम प्रयोगों से सत्य पर कोई आँच नहीं आने वाली है। पीतल पर चढ़ा हुआ सोने का मुलम्मा बहुत दिनों तक नहीं टिक पाता, एक न एक दिन कलई खुल कर ही रहती है। हम करोड़ों प्रयोग करें, लेकिन सत्य को जानने का वही रास्ता है, वही साधन है जो वेदान्त और योगदर्शन के सूत्रों में बहुत पहले ही घोषित किया जा चुका है, अब उसमें कोई नई बात नहीं जोड़ी जा सकती। उसमें खींचतान करने से बुद्धि की कसरत हो सकती है, अपने अहं की तुष्टि हो सकती है, विज्ञान की तरह सिद्धान्तों का अम्बार लगाया जा सकता है, लेकिन इस वृत्तात्मक जगत में चारों ओर घूमकर देर-सबेर हमें फिर वहीं आना पड़ेगा जहाँ समुद्र में मस्तूल के उस पक्षी की भाँति आज का विज्ञान आ चुका है। यह जोड़-घटाना हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों द्वारा बहुत पहले ही लगा लिया गया था। परन्तु विज्ञान के उस महाअभियान का परिणाम क्या हुआ? बस इतना ही कि अब उसे एक अबोध बालक की भाँति नये सिरे से एक नया अध्याय शुरू करना पड़ रहा है। इसीलिए वेदान्त में आत्मसमर्पण (Self surrender) के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। इसीलिए रामकृष्ण परमहंस कहा करते थे कि मुझे तो केवल आम खाने से मतलब है, पेड़ पर कितनी हजार डालियाँ हैं, कितने करोड़ पत्ते हैं इससे मेरा कोई प्रयोजन नहीं। यह वही रामकृष्ण हैं जो वैष्णवसाधना, तन्त्रसाधना, अद्वैतसाधना, ईसाईसाधना तथा मुस्लिम साधना आदि अनेकप्रकार की यौगिक विधियों से प्रत्यक्षानुभूति प्राप्त कर परम सत्य के दर्शन का प्रतिपादन किया है। मानव इतिहास में दो अद्भुत् समन्वयवादी हुए हैं—प्राचीन काल में भगवान बुद्ध और आधुनिक युग में रामकृष्ण परमहंस जिन्होंने बिना किसी खण्डन-मण्डन के सभी धर्मों में सामंजस्य स्थापित किया। उसी रामकृष्ण का दर्शन प्राप्त कर कभी स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कहा था कि हमलोग इतना वेद-वेदान्त पढ़कर भी केवल मट्ठा पीते हैं, मक्खन तो ऐसे ही महापुरुष (रामकृष्ण) खाया करते हैं। ब्रह्मसमाजी केशवचन्द्र सेन भी भक्ति-भाव से उस आत्मदर्शी के चरणों की धूलि अपने सर-माथे लगाया करते थे। उसी महात्मा के प्रभाव से उनके परमप्रिय शिष्य स्वामी विवेकानन्द ने पाश्चात्य देशों में भ्रमण कर धर्म-विजय प्राप्त की थी। आज का विज्ञान गणित की भाषा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में असंख्य इलेक्ट्रान कण तथा असंख्य ताराओं के रूप में केवल पेड़ की डालियाँ और असंख्य पत्ते गिन रहा है, फल खाने की चेष्टा छोड़कर पत्तों की यह गणना भला बुद्धि की कसरत के सिवाय और क्या हो सकती है ! लेकिन उस गणना का महत्त्व भी तो समुद्र की एक बूदँ से कुछ ज्यादा नहीं हैं। क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद ने आज विज्ञान को इस तथ्य से परिचित करा दिया है।

जिसप्रकार प्रकृति और पुरुष के संयोग से सृष्टि होती है उसीप्रकार कारण-स्वरूप पत्नी और पति के सम्भोग से कार्यस्वरूप अनेक प्रकार के सांसारिक बन्धनों का जन्म होता है। ऋण और धन के संयोग से ही कारण और कार्य की शृंखला जुड़ जाती है जिसके फलस्वरूप सापेक्ष भ्रम, द्वन्द्ववाद,मोह-माया आदि अनेक बन्धन साथ लग जाते हैं। इसके विपरीत समाधि वह अवस्था है जहाँ कारण और कार्य की शृंखला टूट जाती है, त्रिविध गुण-विकारों का प्रभाव समाप्त हो जाता है, अहंकार लुप्त हो जाता है और मनुष्य सर्वदा के लिए प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो जाता है। सम्भोग और समाधि में एकरूपता स्थापित करना हास्यास्पद सी चीज हैं, जो किसी भी धर्म एवं सिद्धान्त द्वारा मान्य नहीं है। यह भी एक प्रकार का बुद्धिवादी प्रयोग ही कहा जा सकता है। अतः सम्भोग और समाधि में भी वही अन्तर है जो बन्धन और मुक्ति में होता है। सर्वस्व त्याग ही परम दर्शन है।

यह वस्तुजगत बाजीगर का एक ऐसा इन्द्रजाल है जिसमें हम एक-एक वस्तुओं को यथार्थ मानते हुए आगे बढ़ते हैं, अरस्तू की तरह सत्य को बाह्यजगत में ढूढ़ते फिरते हैं, ब्रह्म की असीम शक्तियों को बुद्धिवाद से मापने की चेष्टा करते हैं। लेकिन अपने अन्तस्थल में स्थित उस परम सत्य (अहम् ब्रह्मास्मि) की ओर देखने की कभी चेष्टा भी नहीं करते, उसे जानने-समझने का प्रयास भी नहीं करते। वायु की तरह चंचल इन्द्रियाँ एवं मन उस तरफ जाने ही नहीं देते, प्रकृतिरूपी अतृप्त कामिनी अपने मोहक प्रदर्शन द्वारा हमें मुग्ध कर लेती है, उस प्रदर्शनी में ही आसक्त बना देती है। हम मृग-मरीचिका की भाँति उस आकर्षण से खिचे चले जाते हैं और अद्वैतवादी संत कबीर की यह अमरवाणी पाठ्य पुस्तकों में बार-बार पढ़कर भी भूल जाते हैं—

सब घट मेरा साइयां, सूनी सेज न कोइ।
भाग तिनहुं का हे सखी, जिहि घट परगट होइ॥
ज्यों नैनंनि में पूतरी, त्यों खालिक घट माँहि।
मूरख लोग न जानंही, बाहरि ढूढ़न जाहि॥
भारी कहूँ तो बहु डरूँ, हरुवा कहूँ तो झूठ।
मैं का जांनूं राम कौं, नैंनां (इन्द्रिय) कबहूँ न दीठ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हेरत हेरत हे सखी, रहा कबीर हिराइ।
समुंद संमानाँ बूंद में, सो कत हेरा जाइ॥
पार ब्रह्म का तेज का, कैसा है उनमांन।
कहिबे को सोभा नहीं, देखें ही परवांन॥
पंजरि प्रेम प्रकासिया, जागी जोति अनंत।
संसै छूटा सुख भया, मिला पियारा कंत॥
कबीर देखा इक अगम, महिमा कही न जाइ।
तेज पुंज पारस धनीं, नैनंनि रहा समाइ॥
पारस रूपी नाम है, लौह रूप संसार।
पारस तैं पारस भया, परखि भयां टकसार॥

अद्वैतवादी उस परमशक्ति की खोज में ज्ञानमार्ग का आश्रय लेते हैं और परमत्याग द्वारा सच्चिदानन्दस्वरूप हो जाते हैं, राजयोगी उस पर ध्यान लगा कर अपने सूक्ष्मशरीर को पृथक कर लेते हैं, कर्मयोगी अनासक्त होकर अथवा निष्काम कर्मयोग द्वारा भोग-विलास में रहते हुए भी राजा जनक की तरह विदेह बन जाते हैं और भक्त उसे प्रियतम अथवा स्वामी मानकर उसीपर गोपियों की तरह समर्पित हो जाते हैं। ये सभी मार्ग देखने में नदियों की तरह भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं, लेकिन अन्त में सभी उस एक ही महासमुद्र में मिल जाते हैं। जगत का आकर्षण हमें आसक्त बनाता है और विकर्षण हमें मुक्त कर देता है। लेकिन तुलसी कहते हैं यह सब कुछ उसकी कृपा से ही होता है—

जासु कृपाँ अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोइ कृपाल रघुराई॥
आदि अंत कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा॥
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ बिधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी॥
तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहीं बरनी॥
जेहि इमि गावहिं बेद बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवान॥

अब हम मायापुरी के उस महाखण्ड में चलते हैं जो उपपरमाणुजगत (Sub-atomic world) के नाम से जाना जाता है और इसीलिए इस युग को 'इलेक्ट्रानिक युग' भी कहते हैं। अपने विशाल विज्ञान-महल को खड़ा रखने के लिए ही आज विज्ञान इस जगत को अन्तिम जगत कह रहा है और इन सूक्ष्म कणों को मूलभूत कण जिनसे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना हुई है। भौतिक सन्दर्भ में वस्तुतः यह जगत इतना सूक्ष्म है कि जिसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। इलेक्ट्रान पदार्थका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

इतना सूक्ष्म कण होता है कि उसे सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा भी नहीं देखा जा सकता। यह कण एक ग्राम का.०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,०००,००० भाग होता है जो परमाणु की नाभिक (Nucleus) के चारों ओर एक सेकण्ड के दस लाखवें भाग में लाखों बार चक्कर लगा लेता है। धनात्मक आवेश (Positive charge) से युक्त प्रोटोन कण ऋणात्मक आवेश (Negative charge) से युक्त इलेक्ट्रान कणों से १८३६ गुना अधिक भारी होते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि इतनी तीव्र गति से भागते हुए इन इलेक्ट्रान कणों द्वारा ही रेडियो, टेलीविजन, टेपरेकर्डर, कम्प्यूटर, राडार, सोनार आदि अनेक प्रकार के इलेक्ट्रानिक यन्त्र चलाये जाते हैं। क्या ये सूक्ष्म कण स्वतन्त्र हैं, जो अपनी स्वाधीन इच्छा (Free will) से इधर-उधर भागते हुए इस ब्रह्माण्ड में सभी वस्तुओं की रचना कर रहे हैं ? क्या इन सूक्ष्म कणों पर यूक्लिड और न्यूटन के वैज्ञानिक नियम लागू होते हैं ? इन प्रश्नों के उत्तर में अहंवाद एवं बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग करनेवाले अधिकांश वैज्ञानिक यह मानते हैं कि ये सूक्ष्म इलेक्ट्रान कण स्वतन्त्र हैं जो अपनी स्वाधीन इच्छा से भागते हुए सभी वस्तुओं की सुनियोजित रचना कर रहे हैं। इस विचारधारा को ही भौतिकवाद तथा निरपेक्षतावादी सिद्धान्त कहते हैं। इसके विपरीत कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार ये कण कभी स्वतन्त्र कण नहीं हो सकते और इसप्रकार ये कण अपनी स्वाधीन इच्छा से भागते हुए इस जगत की एक सुनियोजित एवं विवेकपूर्ण रचना नहीं कर सकते। इस आधार पर सर जेम्स जीन्स तथा आर्थर एडिंगटन जैसे वैज्ञानिकों का कहना है कि इन असंख्य इलेक्ट्रान कणों का सामंजस्य, नियमन एवं संयोजन एक मानसिक शक्ति (Cosmic mind) द्वारा हो रहा है और वही शक्ति सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना कर रही है, जीव-जन्तु एवं वनस्पति का क्रमविकास कर रही है। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन तो हजारों वर्ष पहले से ही इस मूल सिद्धान्त को मानते आ रहे हैं कि जब प्रकृति और पुरुष का संयोग होता है तो सर्वप्रथम बुद्धितत्व अथवा महत्तत्व (Universal mind) की उत्पत्ति होती है और उसी से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सुनियोजित, विवेकपूर्ण एवं 'कारण और कार्य' नियमों के अनुरूप निर्माण होता है। अगर बुद्धित्तत्व द्वारा निर्माण होता है तो स्वाभाविक है कि उसी शक्ति द्वारा इलेक्ट्रान कणों का सामंजस्य, नियमन एवं संयोजन भी होगा, क्योंकि अगर ऐसा न हो तो कोई भी सुनियोजित एवं विवेकपूर्ण निर्माण नहीं हो सकता।

अतः जब हम कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद को स्वीकार करते हैं, तो हमें यह भी मानना पड़ेगा कि इलेक्ट्रान कण अपने-आप अपनी स्वाधीन इच्छा (Free will) से नहीं भागते हैं, बल्कि त्रिविध गुणात्मक तरंगों (सत्व, रज,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तम) से युक्त फोटोन कणों की टक्कर से भगाये जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप भौतिकजगत का निर्माण होता है और इस प्रक्रिया में ही प्रकाश, ताप, विकिरण, विद्युत्, चुम्बकीय तरंगें, प्रेम, दया, करुणा, रंग, रूप, ध्वनि, स्वाद, गन्ध, नक्षत्र-पिण्ड, जीव-जन्तु तथा वनस्पति आदि सभी गुणात्मक तत्वों अथवा विभिन्न वस्तुओं का सृजन होता है। दूसरे शब्दों में कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) ही मानसिक शक्ति (Universal mind) द्वारा कार्यस्वरूप भौतिकजगत में परिवर्तित हो जाता है और इस प्रक्रिया में सार्वभौमिक मन वही कार्य करता है जो हम इस पृथ्वी पर विभिन्न इलेक्ट्रानिक यन्त्रों में करते हैं। दूसरे शब्दों में हमारा मन उस सार्वभौमिक मन का ही एक लघुरूप (Miniature form) है जो उसी की भाँति छोटे-छोटे इलेक्ट्रानिक यन्त्रों की रचना करता है। इस नियम के अनुसार आधुनिक विज्ञान का यह महत्वपूर्ण सिद्धान्त गलत है कि इलेक्ट्रान कण स्वतन्त्र हैं जो अपनी स्वाधीन इच्छा से इधर-उधर भागते हुए भिन्न-भिन्न वस्तुओं की रचना करते हैं। इसी प्रकार यह सिद्धान्त भी गलत है कि ताप या घर्षण के प्रभाव से इलेक्ट्रान कण भागते हैं, बल्कि तथ्य यह है कि इन कणों के भागने से ही प्रकाश, ताप, विद्युत्, चुम्बकत्व तथा रंग-रूप आदि विभिन्न गुणात्मक तत्वों की उत्पत्ति होती है, क्योंकि वे कारणस्वरूप त्रिगुणात्मक फोटोन कणों द्वारा एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए भगाये जाते हैं और इसप्रकार अनिश्चित दिशा की ओर उनका भागना ही भौतिकजगत का निर्माण है। अगर यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित आधुनिक विज्ञान से यह पूछा जाय कि जब इलेक्ट्रान कणों की गति एवं दिशा अनिश्चित (Indeterminate) है तो बाद के चलकर वह निश्चित कैसे हो जाती है जिसके फलस्वरूप इस जगत का एक सुनियोजित और विवेकपूर्ण निर्माण होता है, तो इस प्रश्न का कोई उत्तर आज विज्ञान के पास नहीं है। लेकिन जब यही प्रश्न कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद से किया जाता है तो यह निश्चित उत्तर प्राप्त होता है कि ऐसा कारणस्वरूप त्रिगुणात्मक फोटोन कणों के प्रभाव से होता है जिसके फलस्वरूप इलेक्ट्रान कणों को निश्चित गति एवं दिशा प्राप्त हो जाती है, क्योंकि अद्भुत इलेक्ट्रानिक यन्त्र सार्वभौमिक मन द्वारा उन असंख्य इलेक्ट्रान कणों का सामंजस्य, नियमन एवं संयोजन होता है। अतः सार्वभौमिक मन द्वारा इलेक्ट्रान कणों के क्रमगठन को ही हम भौतिकजगत कहते हैं और उस जगत में कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की गुणात्मक तरंगें निरन्तर प्रवाहित होती रहती हैं, जो 'कारण और कार्य' (Cause and effect) की अटूट श्रृंखला को जोड़ती हैं।

'इलेक्ट्रानिक्स' (Electronics) का अर्थ है कि किसी पदार्थ में सुप्त इले-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

क्ट्रान कणों को गतिशील बना देना और उन गतिशील कणों द्वारा ही नानाप्रकार के घटनाचित्र टेलीविजन की भाँति प्रदर्शित होने लगते हैं। यूक्लिडीयन विज्ञान कहता है कि इन कणों को हम (अहंज्ञान) चला रहे हैं, लेकिन कपिल और आइन्स्टीन का सापेक्षवाद कहता है कि इन गुणात्मक कणों को कोई दूसरी प्रबल शक्ति (Universal mind) चला रही है जिसके फलस्वरूप नानाप्रकार के मोहक दृश्य उपस्थित हो रहे हैं। जो वस्तुएँ स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों (Free electrons) को आबद्ध करती हैं उन्हें माध्यम या कन्डक्टर (Conductors) कहते हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि साभान्यतः इन इलेक्ट्रान कणों का परस्पर विनियम (Interchange) इधर-उधर स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों के रूप में बिखरा होता है, लेकिन अगर कन्डक्टर के सिरों (Ends) को किसी बैटरी से जोड़ दिया जाता है तो एक 'विद्युत् चुम्बकीय क्षेत्र' (Electromagnetic field) स्थापित हो जाता है जिसके फलस्वरूप असंख्य इलेक्ट्रान कण धनात्मक छोर (Terminal) की ओर तीव्र गति से दौड़ना शुरू कर देते हैं और ऋणात्मक छोर की ओर से जो खाली जगह होती है वह इस क्रिया द्वारा इलेक्ट्रान कणों से भर (Repleni-shed) जाती है। विज्ञान के अनुसार असंख्य इलेक्ट्रान कणों के इस सतत् प्रवाह Flow of electrons) को ही 'विद्युत्धारा' (Electric current) कहते हैं।

इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि जो स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कण पहले आवारा की तरह इधर-उधर भाग रहे थे, अब इस क्रिया द्वारा वे ही आवारा कण अनुशासित होकर तरंगों के रूप में तीव्र गति से एक निश्चित दिशा की ओर दौड़ने लगते हैं। इन सूक्ष्म इलेक्ट्रान कणों का यह चमत्कार ही हमारे घरों में बिजली का प्रकाश देता है, रेडियों और टेलीविजन पर मधुर ध्वनि एवं मनो-हारी छायाचित्र प्रदर्शित करता है तथा कम्प्यूटर, राडार एवं सोनार आदि विभिन्न इलेक्ट्रानिक यन्त्रों द्वारा राष्ट्र की बड़ी-बड़ी समस्याओं को हल करता है। यूक्लिडीयन विज्ञान कहता है कि यह चमत्कार हम (अहंज्ञान) स्वंय करते हैं। कपिल और आइन्स्टीन का सापेक्षवाद कहता है कि पदार्थ का पुतला होकर तुम तो स्ववं निमित्तमात्र हो, कन्डक्टर के समान हो, तो भला यह चमत्कार तुम्हारे द्वारा कैसे हो सकता है! यह तुम्हारा अहंज्ञान है और वस्तुतः इसका मूलकारण तुमसे बहुत दूर हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने उस मूलकारण को गीता (१८।६१) में स्पष्ट कर दिया है—

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुनः तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥

यहाँ ध्यान देने की बात यह हैं कि सापेक्षजगत की वृत्तात्मक रेखागणित में यह क्रिया यूक्लिडीयन आधार पर स्वतन्त्र या निरपेक्ष रूप से कभी नहीं हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सकती, बल्कि परस्पर विरोधी कणों अथवा शक्तियों के द्वन्द्वात्मक संघर्ष द्वारा ही आगे बढ़ सकती है और वह परस्पर विरोधी कण अथवा शक्ति ही आइन्स्टीन का गुणात्मक 'फोटोन' कण है जिसकी टक्कर इलेक्ट्रान कण से होती है तथा यही प्रक्रिया आगे बढ़ती हुई परमाणु, जीन, गुणसूत्र, कोशिका एवं जीवजगत तथा नक्षत्र-पिण्डों तक पहुँच जाती है। यह क्रिया तरंगमय होती है जिसमें चेतन पुरुष (आत्मा) का तेज प्रवाहित होता रहता है और उस आलोक से त्रिगुणात्मक प्रकृतिरूपी रील रजतपट पर छायाचित्रों के रूप में सर्वत्र प्रदर्शित होती है। परन्तु इस चमत्कार का प्रदर्शन करने वाली शक्ति को ही 'सार्वभौमिक मन' (Universal mind) कहते हैं। सर जेम्स जीन्स और एडिंगटन भी इसी तथ्य पर बल देते हैं। इसके पहले मैक्सवेल ने भी इसीप्रकार की शक्ति का सुझाव दिया था जिसे उस समय वैज्ञानिकों ने 'मैक्सवेल का शैतान'(Maxwell's demon) कहकर उसकी हँसी उड़ाई थी। परन्तु क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के पश्चात अब वैज्ञानिक इस सिद्धान्त को गम्भीरतापूर्वक ले रहे हैं। आज सम्भवत: कोई भी ऐसा वैज्ञानिक न हो जो सार्वभौमिक मन के अस्तित्व को स्वीकार न करता हो, क्योंकि इस सिद्धान्त के बिना अब विज्ञान की गाड़ी आगे नहीं बढ़ पाती है। लेकिन अपने बुद्धिवादी कौशल का प्रयोग कर वैज्ञानिक अभी भी इस सिद्धान्त को स्कूली पुस्तकों में नहीं आने देते, क्योंकि इससे उस भव्य विज्ञान-महल के ध्वस्त हो जाने का गम्भीर खतरा है, अरस्तू से लेकर आजतक उस भौतिकवादी विचारधारा के खंडित हो जाने का बहुत बड़ा खतरा है। यही कारण है कि विज्ञान मे 'स्वाधीन इच्छा' (Free will) का वह मोहक सिद्धान्त अभी उसीप्रकार चला आ रहा है और साथ ही साथ बुद्धिवादी प्रयोग भी चल रहे हैं कि सम्भवत: आगे चलकर कुछ बात बन जाय।

पुरातन विज्ञान ने कभी यह कल्पना की थी कि सृष्टि के आरम्भ में स्वतन्त्र परमाणु कण अपनी स्वाधीन इच्छा (Free will) से नृत्य करते रहते हैं और उस नृत्य में कुछ ऐसा चमत्कार होता है कि नक्षत्र-पिण्ड, जीव-जन्तु-वनस्पति एवं मन-बुद्धि-अहंकार तथा चेतना आदि उत्कृष्ट प्राकृतिक शक्तियां स्वत: निर्मित हो जाती हैं, मानो परमाणुओं का वह चमत्कारी नृत्य सत्य का दर्शन हो। इसीलिए तो बर्कले विश्वविद्यालय के डा० केप्रा अपने को योगी समझते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि आज का योगविज्ञान हमें वैज्ञानिक पुस्तकों में भी मिल सकता है और इस नवीन दर्शन के अनुसार अब विद्यार्थियों को गीता एवं पतंजलि योगसूत्र के गुप्त रहस्यों में अपना सर नहीं खपाना पड़ेगा, पर्वत, गुफा एवं जंगलों में जाकर कठोर योगसाधना करने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी। अब विज्ञान ने अपने प्रयोगों द्वारा सब कुछ उपलब्ध करा दिया है। इससे स्पष्ट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

होता है कि आज का विज्ञान चरम शिखर पर पहुँच गया है। परन्तु अभी विज्ञान उस मोहक कल्पना में ही उलझा हुआ था कि इसी बीच बीसवीं सदी के आरम्भ में क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद का एटमबम फूटकर जैसे बज्रपात हो गया और उस बज्रपात से एक भयानक शैतान 'सार्वभौमिक मन' का जन्म हो गया, जो विज्ञान की विशाल गाड़ी का रास्ता रोककर सामने खड़ा हो गया। अब वह पुरानी खटारा-गाड़ी न आगे बढ़ सकती है और न पीछे हट सकती है। उस गाड़ी में बैठे हुए भव्य लोगों की वही दशा हो गई है जो महासमुद्र में जहाज के मस्तूल पर बैठे हुए उस पक्षी की हो गई थी। वह पक्षी तो प्रभु की शरण में जाकर मुक्त हो गया था, किन्तु आधुनिक विज्ञान के सम्बन्ध में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। अब विज्ञान कपिल और आइन्स्टीन की पुस्तक का प्रथम अध्याय कब से शुरु करेगा इस विषय में भी अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

वैज्ञानिक कहते हैं कि एक अच्छे कन्डक्टर (Conductor) को अधिक स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों की आवश्यकता पड़ती हैं और अनेक प्रकार की धातुएँ इसके लिए उपयुक्त हैं। सोना, चाँदी, तांबा, आल्मुनियम आदि धातुएँ अच्छा माध्यम (Good conductor) मानी जाती हैं। यद्यपि सोना-चाँदी के तार बहुत अच्छे माध्यम हैं, लेकिन इनमें खर्च बहुत पड़ता है जिससे सामान्यत: इनका प्रयोग नहीं होता है। लेकिन इनका प्रयोग अन्तरिक्ष यानों (Space ships) में किया जाता है। चूँकि शीशा, रबड़, कपड़ा, प्लास्टिक आदि पदार्थों में स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कण नहीं होते हैं, इसलिए इनके परमाणुओं में इलेक्ट्रान कणों का परस्पर विनिमय (Interchange) नहीं हो पाता है। यही कारण है कि इन वस्तुओं को अवरोधक (Insulators) कहा जाता है। इन वस्तुओं के अतिरिक्त विद्युत-प्रवाह के लिए अर्ध-माध्यम (Semiconductors) भी होते हैं जिनका प्रयोग ट्रान्सिस्टरों में किया जाता है।

वैज्ञानिक कहते हैं कि जिसप्रकार ताप के प्रसारण के लिए वातावरण में विषमता आवश्यक है उसीप्रकार दो विन्दुओं के बीच विद्युतधारा (Electric current) प्रवाहित होने के लिए आवेश (Charge) में अन्तर होना आवश्यक है और इस अन्तर को विज्ञान में 'विभव अन्तर' (Potential difference) कहा जाता है। इस अन्तर को स्पष्ट करने के लिए 'वोल्टेज' (Voltage) शब्द का प्रयोग किया जाता है, जो विद्युत्धारा का एक मापदण्ड है और इस ईकाई को प्रमुख वैज्ञानिक वोल्टा के नाम पर वोल्ट (Volt) कहते हैं। वैज्ञानिकों का विचार है कि विद्युत्धारा का लगभग वही स्वरूप होता है, वैसा ही घटनाचित्र उपस्थित होता है जैसा हमें एक जलप्रपात (Waterfall) में दिखाई देता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस क्रिया में असंख्य इलेक्ट्रान कण परस्पर संयुक्त होकर एक अनुशासित सेना की भाँति तरंगों का रूप धारण कर लेते हैं जिसके फलस्वरूप एक गुणात्मक धारा प्रवाहित होने लगती है। वैज्ञानिक कहते हैं कि यह क्रिया हमारी बुद्धि द्वारा बनाये हुए यन्त्रों के कारण होती है, लेकिन वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल कहते हैं कि वह बुद्धि उस सार्वभौमिक बुद्धितत्व(Universal mind)का ही एक क्षुद्र अंशमात्र है। यह वही बुद्धितत्व अथवा महत्तत्व (Universal mind) है जिसके द्वारा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना हुई है और जिसके अन्तर्गत असंख्य ग्रहों पर असंख्य सभ्यताएँ फल-फूल रही हैं तथा उन्हीं असंख्य सभ्यताओं में से इस तुच्छ पृथ्वी की भी अपनी एक ऐसी वैज्ञानिक सभ्यता हैं जो अपने को सर्व-शक्तिमान समझ बैठी है। ऐसा समझने वालों कों पहले सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सन्दर्भ में अपनी तुच्छ पृथ्वी के अस्तित्व को समझ लेना चाहिये, जो रूस और अमेरिका के शक्तिशाली टेलीस्कोपों द्वारा स्पष्ट दिखाई देता है।

इलेक्ट्रान कणों की गति (Electron motion) की खोज से पहले विज्ञान में ऐसा विश्वास किया जाता था कि विद्युत्धारा उच्च धनात्मक ताप की ओर से निम्न ऋणात्मक स्तर की ओर आगे बढ़ती है, लेकिन इस सम्बन्ध में आश्चर्यजनक बात यह है कि हम विद्युत्धारा की कल्पना चाहे 'धनात्मक छोर' (Positive end) की ओर से करें, अथवा ऋणात्मक छोर (Negative end) की ओर से करें दोनों सिद्धान्तों का फल एक ही आता है। इससे स्पष्ट होता है कि यह अन्तर वास्तविक नहीं है, बल्कि प्रतीकमात्र है। परन्तु अधुनातन भौतिकशास्त्र में इलेक्ट्रान गति का प्रारम्भ पहले 'ऋणात्मक छोर' (Negative end) से होने के कारण अब इसी सिद्धान्त का प्रयोग अधिक होने लगा है। सापेक्षवाद के अन्तर्गत इस वैज्ञानिक खोज का तात्पर्य यह है कि विद्युत् तरंगों की कल्पना चाहे इलेक्ट्रान कणों की ओर से हो अथवा फोटोन कणों की ओर से दोनों एक ही बात है, क्योंकि कारणस्वरूप धनात्मक फोटोन कणों की टक्कर से कार्यस्वरूप ऋणात्मक इलेक्ट्रान कण भी उन गुणात्मक तरंगों से प्रभावित होकर स्वयं धनात्मक कणों में परिवर्तित हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप परमाणु की नाभिक (Nucleus) का सन्तुलन बिगड़ जाता है और वही द्वन्द्वात्मक संघर्ष कारण और कार्य शृंखला से भौतिकजगत के रूप में प्रकट होता है। इस-प्रकार तरंग-कण-तरंग की यह वृत्तात्मक प्रक्रिया सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों जगत को परस्पर जोड़ देती है। अतः सापेक्षवाद का यह सिद्धान्त प्रमाणित हो जाता है कि वृत्तात्मक प्रक्रिया में कारण ही कार्य हो जाता है और कार्य ही कारण अथवा सूक्ष्मजगत (Astral world) ही भौतिकजगत (Physical world) बन जाता है तथा भौतिक जगत ही सूक्ष्मजगत। परन्तु महर्षि कपिल कहते हैं कि सम्पूर्ण प्रक्रिया प्रकृति और पुरुष दो परस्पर विरोधी तत्वों के संयोग के बिना कभी नहीं

११

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

हो सकती। इसका अर्थ यह हुआ कि चेतन पुरुष का तेज ही कण-तरंगों के रूप में प्रतिबिम्बित (Projected) होता है जिसके फलस्वरूप त्रिगुणात्मक प्रकृति नानाप्रकार के छायाचित्रों में दिखाई देती है।

वैज्ञानिक कहते हैं कि विद्युत्धारा की प्रतिरोधकता (Resistivity) तापमान पर निर्भर करती है। सामन्यतः किसी पदार्थ के परमाणुओं में निरन्तर प्रकम्पन (Vibration) एवं हलचल होती रहती है, क्योंकि इलेक्ट्रान कण अपनी कक्षा में तीव्र गति से चक्कर लगाते रहते हैं और जैसे-जैसे तापमान बढ़ता जाता है वैसे-वैसे हलचल भी बढ़ती जाती है। लेकिन परमाणुओं में जितनी ही उग्र हलचल होती है इलेक्ट्रान कणों का प्रवाह उतना ही कठिन होता जाता है, क्योंकि उसी अनुपात में इलेक्ट्रान कणों को भागने के लिए अधिक ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। अगर तापमान गिर जाता है तो परमाणुओं की हलचल भी कम हो जाती है और तब इलेक्ट्रान कण आसानी से इधर-उधर दौड़ने लगते हैं जिसके फलस्वरूप प्रतिरोधकता (Resistivity) भी कम हो जाती है। विज्ञान कहता है कि जब किसी माध्यम से होकर इलेक्ट्रान कण आगे बढ़ते हैं तो वे सीधी रेखा में नहीं चल पाते, क्योंकि उनमें परस्पर टक्कर होती रहती है। इस क्रिया द्वारा उनकी तीव्र गतिशीलता में कमी आ जाती है, ऊर्जा में ह्रास हो जाता है, किन्तु माध्यम का निम्न तापमान क्रमशः उच्च ताप-स्तर की ओर बढ़ने लगता है। तापमान का यह क्रमिक उत्थान ताप के उत्पादन स्तर पर निर्भर करता है और इसी क्रिया द्वारा माध्यम (conductor) में ऊर्जा-शक्ति की मात्रा भी निर्भर करती है। इसप्रकार इस क्रिया द्वारा जिस शक्ति (Power) का उदय होता है उस शक्ति की ईकाई को प्रमुख वैज्ञानिक जेम्सवाट के नाम पर 'वाट'(Watt) कहा जाता है तथा एक हजार वाट को एक किलोवाट माना जाता है जिसका सम्बन्ध समय द्वारा निर्धारित होता है। विद्युत्धारा से जो चुम्बकीय प्रभाव उत्पन्न होता है, उसे अनेक प्रकार के यन्त्रों तथा बिजली के मोटरों द्वारा मापा जाता है। इसके अतिरिक्त विद्युत्धारा का प्रयोग भिन्न-भिन्न रासायनिक यौगिकों (chemical compounds) को अपने मूल तत्वों (constituent elements) में पृथक्-पृथक करने अथवा पुनः उन तत्वों को संयुक्त करने के काम में भी लाया जाता है। इसी आधार पर अगर विद्युत्धारा का प्रसारण हो सकता है तो उसका संचय भी हो सकता है।

भौतिक विज्ञान के इस सिद्धान्त पर भी यूक्लिड और न्यूटन के सिद्धान्तों की स्पष्ट छाप है। हम अपने सीमित इन्द्रिय ज्ञान द्वारा इस भौतिकजगत को ही अन्तिम शक्ति मान लेते हैं और वह अन्तिम शक्ति हमें इस जगत में ताप, ऊर्जा, विद्युत् तथा चुम्बकीय तरंगों आदि के रूप में दिखाई देती है। यूक्लिड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और न्यूटन का यह भूत ही सारे भ्रमों का कारण है, क्योंकि ताप अथवा ऊर्जा से परे किसी दूसरी उत्कृष्ट प्राकृतिक शक्ति के विषय में हम सोच ही नहीं पाते। उदाहरण के लिए उस भूत के प्रभाव से हम यह मान लेते हैं कि ताप अथवा ऊर्जा द्वारा ही इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, अहंकार तथा चेतना आदि उत्कृष्ट शक्तियों की उत्पत्ति हुई हैं, जबकि सापेक्षवाद के अनुसार तथ्य यह है कि त्रिगुणात्मक प्रकृति और चेतनपुरुष के संयोग से प्रकृति की सभी प्रक्रियाएँ शुरू होती हैं और उसी प्रक्रिया में सार्वभौमिक मन (universal mind) द्वारा ताप, ऊर्जा, प्रकाश, विद्युत्, चुम्बकीय तरंगें, गुरुत्वाकर्षण, गुणात्मक तरंगें, नक्षत्र-पिण्ड एवं जीव-जन्तुओं की उत्पत्ति होती है, जो हमें प्रतीकस्वरूप फोटोन एवं इलेक्ट्रान कणों में दिखाई देती हैं। अतः फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर ही सूक्ष्म एवं स्थूल जगत की परिधि है और वस्तुतः उस द्वन्द्वात्मक युद्धस्थल से ही भौतिकजगत की सभी प्रक्रियाएँ शुरू हो जाती हैं और उसी प्रक्रिया द्वारा ताप, ऊर्जा, प्रकाश, विद्युत्, चुम्बकीय तरंगें, गुरुत्वाकर्षण, गुणात्मक तरंगें, नक्षत्र-पिण्ड एवं जीव-जन्तु-वनस्पति आदि सभी भौतिक वस्तुएँ नियन्त्रित एवं संचालित होती हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि कारणस्वरूप फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर में ही इस भौतिकजगत का पूरा मानचित्र होता है और उसी मानचित्र के अनुसार ताप एवं ऊर्जा का उतार-चढ़ाव, परमाणुओं का दिशा-नियन्त्रण, कोशिकाओं का स्वचालित संचालन, वातावरण की विषमता, रासायनिक तत्वों का संयोजन तथा देश-काल-निमित्त (Space-time causation) का विस्तार आदि सभी भौतिक क्रियाएँ नियन्त्रित एवं संचालित होती हैं। सापेक्षवाद के अनुसार प्रकृति की यह वृत्तात्मक प्रक्रिया सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों जगत को एक में जोड़ देती है। अतः भौतिक सन्दर्भ में यूक्लिड की रेखागणित एक उल्टी और भ्रामक रेखागणित है जिसे आइन्स्टीन ने निर्विवाद रूप से सिद्ध कर दिया है। इस भ्रामक रेखागणित के परिणामस्वरूप हम प्रकाश, ताप एवं ऊर्जा को ही एक निरपेक्ष शक्ति (Absolute power) मान लेते हैं। यही कारण है कि उस रेखागणित से अत्यधिक सूक्ष्म शक्तियाँ (गुणात्मक तरंगें, मन, बुद्धि, अहंकार, चेतना) परे हो जाती हैं, क्योंकि वस्तुतः कारणस्वरूप उन्हीं शक्तियों द्वारा इस भौतिक जगत की सभी शक्तियों (ताप, ऊर्जा, चुम्बकत्व, गुरुत्वाकर्षण, देश-काल आदि) का निर्माण एवं दिशा-नियन्त्रण होता है।

अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त में आइन्स्टीन ने भी यही भारी भूल की कि उन्होंने प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) को ही एक निरपेक्षशक्ति (Absolute power) मान लिया, क्योंकि यही भौतिक विज्ञान की मर्यादा थी अथवा भौतिकवादी विचारधारा की सीमा थी। यही कारण है कि उस वृत्तात्मक रेखागणित से त्रिविध गुण-विकार; मन, बुद्धि, अहंकार तथा चेतना आदि अत्यधिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सूक्ष्म शक्तियाँ बाहर हो जाती हैं और आधुनिक विज्ञान इन उत्कृष्ट शक्तियों की कल्पनाभीनहीं कर पाता। इसीलिए आइन्स्टीन के महत्वपूर्ण समीकरण($E = mc^२$) में पदार्थ ही ऊर्जा बन जाता है और ऊर्जा ही पदार्थ। इस भौतिक प्रक्रिया में त्रिविध गुण-विकार, मन, बुद्धि, अहंकार एवं चेतना आदि उष्कृष्ट शक्तियों की झलक भी नहीं मिल पाती, क्योंकि दृष्टि के अनुरूप ही जगत का स्वरूप निर्मित होता है। यही कारण है कि एक वैज्ञानिक और योगी की अन्तर्दृष्टि में जमीन और आसमान का अन्तर हो जाता है, क्योंकि एक की दृष्टि भौतिकजगत तक ही सीमित है जिसमें पदार्थ ही ऊर्जा बन रहा है और ऊर्जा ही पदार्थ, जबकि योगी की दृष्टि असीम होती है जिसमें ब्रह्म ही जगत बन जाता है और जगत ही ब्रह्म। इसीलिए वेदान्त में कहा गया हैं कि मनुष्य स्वयं ब्रह्म है(अहम् ब्रह्मास्मि)। अतः आइन्स्टीन के अपूर्ण समीकरण ($E = Mc^2$) के अनुसार पदार्थ ही ऊर्जा है और ऊर्जा ही पदार्थ, जबकि महामुनि कपिल के पूर्ण समीकरण (प्रकृति-पुरुष संयोग) के अनुसार कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकार ही कार्यस्वरूप पदार्थ है और कार्यस्वरूप पदार्थ ही कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकार, लेकिन उस प्रक्रिया में द्रष्टा केवल चेतन पुरुष है और उसी के लिए प्रकृति का यह आवागमन चक्र (Circular geometry) चल रहा है। अतः आधुनिक विज्ञान द्वारा यह दावा करना हास्यास्पद है कि इस भौतिकजगत का सभी कुछ प्रकाश, ताप, ऊर्जा, विद्युत, चुम्बकत्व आदि भौतिक शक्तियों द्वारा ही हो रहा है, क्योंकि सापेक्षवाद के अन्तर्गत स्वयं इन भौतिक शक्तियों का अस्तित्व कारणस्वरूप परा-भौतिक शक्तियों पर निर्भर है। अब आधुनिक विज्ञान को अपने इस जड़ सिद्धान्त का परिमार्जन करना ही पड़ेगा।

भौतिक-जगत में कण-तरंगों द्वारा निर्मित असंख्य घटनाचित्रों की प्रक्रिया को समझने के लिए हमें इलेक्ट्रानिक यन्त्रों की प्रणाली के विषय में भी कुछ समझना पड़ेगा। इन इलेक्ट्रानिक यन्त्रों में माध्यम (Conductors)अवरोधक (Insulators) बैटरी, एरियल, फोटो-ट्यूब, तारों की कुण्डली (Inductors) आदि अनेक प्रकार के कल-पुर्जों का प्रयोग होता है। इस प्रक्रिया में रेडियो तरंगें (Radio waves) एवं चुम्बकीय तरंगें ३० करोड़ मीटर अथवा १८६,००० मील प्रति सेकन्ड की गति से चलकर रजतपट पर छायाचित्रों का निर्माण करती हैं जो हमें टेलीविजन से पर्दे पर दृष्टिगोचर होता है। इस तीव्र गति के फलस्वरूप विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र' (Electromagnetic field) उत्पन्न होता है और दाहिने कोणों पर 'विद्युत-स्थिरीय क्षेत्र' (Electrostatic field) भी स्वतः निर्मित हो जाता है। यह क्रिया अन्य क्रियाओं की भाँति आकर्षण और विकर्षण नियमों के अनुसार होती है जिसमें कुछ कण भागते हैं तो कुछ कण उनकी जगह लेने के लिए दौड़ पड़ते हैं। इस सम्बन्ध में 'तरंभ-दैर्घ्य' (Wavelength) या 'आवृत्ति'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Frequency) शब्दों का प्रयोग होता है। अगर तरंग धनात्मक आवेश से ऋणात्त्मक आवेश (Nagative charge) में परिवर्तित होकर एक सेकन्ड में तीन लाख बार वापस आती है तो एक तरंग के छोर से दूसरे तक एक हजार मीटर होता है। इसप्रकार एकहज़ार मीटर दूरी का तरंगदैर्घ्य (wavelength) बराबर होता है प्रति सेकन्ड तीन लाख वृत्तियों (cycles) की आवृत्ति के।

एक जर्मन भौतिकशास्त्री गोल्डस्टीन ने 'ट्यूब विद्युत' (Bottled electricity) को 'केथोड किरण' (cathode rays) नाम दिया, क्योंकि वह किरण ट्यूब के ऋणात्मक सिरे (Negative end) से चलती थी और धनात्मक सिरे (Positive end) की ओर सीधे बढ़ती थी। आज भी जब किसी ट्यूब से विद्युतधारा प्रवाहित होती है तो उसे केथोडकिरण कहा जाता है तथा टेलीविजन सेट में 'फोटो ट्यूब' (Picture tube) भी एक 'केथोडकिरण ट्यूब' ही होता है।

इसीप्रकार इलेक्ट्रान कणों के प्रसारण में टेलीविजन स्टेशन दो प्रकार के संकेत (Signals) प्रसारित करते हैं—पहला ध्वनि तरंगों (Sound waves) के रूप में और दूसरा 'दृश्य प्रकाश-तरंगों' (Vision light waves) के रूप में और इन दोनों तरंगों के लिए अलग-अलग अथवा एक ही रिसीवर तथा एरियल प्रयुक्त हो सकता है। रूपान्तरक (Transformer) द्वारा ध्वनितरंगों को दृश्य-तरंगों से पृथक किया जाता है और यह पृथक्करण इसलिए सम्भव हो पाता है, क्योंकि ध्वनि और दृश्य संकेतों (Signals) में भिन्न-भिन्न तरंग-दैर्घ्य (wavelength) अथवा आवृत्ति (Frequency) होती है। ट्रान्समीटर द्वारा प्रसारित संकेतों में दोनों प्रकार की तरंगें परस्पर मिश्रित होती हैं। टेलीविजन प्रक्रिया से इलेक्ट्रान कणों का मार्ग टेलीविजन ट्यूब में उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) द्वारा नियन्त्रित किया जाता है, क्योंकि आकर्षण द्वारा उनके प्रवाह में झुकाव आ जाता है। 'केथोड किरण ट्यूब' इलेक्ट्रान कणों की तीव्रता को नियन्त्रित करता है और उनके गुणात्मक प्रवाह को टेलीविजन के पर्दे पर छायाचित्रों के रूप में प्रदर्शित करता है। तारों के जाल में लिपटा ऋणात्मक छड़ केथोड में जब ताप उत्पन्न होता है तो इलेक्ट्रान कणों का प्रवाह (Stream of electrons) इलेक्ट्रान नली (Electron gun) से होकर विकिरण (Radiation) उत्पन्न करता हुआ एक सिलिन्डर के छिद्र से गुजरता है जहाँ उसकी तीव्रता नियन्त्रित हो जाती है। इस प्रक्रिया में एक उभरा हुआ दृष्टिगत लेन्स (optical lens) प्रकाश किरणों के समूह को एक विन्दु पर केन्द्रित कर फोकस फेंकता है और इसप्रकार इलेक्ट्रान कणों का प्रवाह उस केन्द्रविन्दु पर प्रवाहित होने लगता है। इलेक्ट्रान कणों की वह गुणात्मक धारा ट्यूब पर एक प्रकाशविन्दु (Spot of light) के रूप में झलकने लगती है। टेलीविजन ट्यूब के पर्दे पर जो नाम-रूपात्मक छाया-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

चित्र उभरते हैं वे सभी उसी एक प्रकाशविन्दु (Spot of light) के इधर-उधर घूमने से निर्मित होते हैं। इस क्रिया में तरंगों की तीव्रता में उतार-चढ़ाव के फलस्वरूप सफेद और काले छायाचित्र बनते-बिगड़ते रहते हैं। इस प्रक्रिया में एक ही क्षण में नियन्त्रित और क्रमिक रूप से प्रकाशविन्दु (Spot of light) द्वारा अनेक रेखाएँ एक के ऊपर एक बनती हैं जिसके फलस्वरूप टयूब के पर्दे पर छायाचित्र अंकित होते रहते हैं जिसे 'स्केनिंग' (Scanning) कहते हैं। टेलीविजन का पर्दा आलोकित (Fluorescent) होता है जो केथोड किरणों के प्रभाव से ही होता है और पर्दे पर एक क्षण में केथोड किरण एक बहुत छोटे अंश को ही प्रभावित करती है। प्रकाशविन्दु के गुजरने पर भी ट्यूब की पर्त्त पर कुछ समय के लिए आलोक बना रहता है जिससे सम्पूर्ण पर्दा आलोकित होता रहता है। इस सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण है कि इस क्रिया में अत्यधिक संख्या में रेखाओं का निर्माण होना चाहिये, क्योंकि अगर रेखाएँ कम होंगी तो विन्दुक्षेत्र (Spot area) बड़ा होगा जिसके परिणामस्वरूप छायाचित्रों में पूर्णता नहीं होगी। इसप्रकार छायाचित्रों के निर्माण में प्रकाविन्दु की गतिशीलता तथा टेलीविजन केमरा द्वारा प्रेषित 'चित्रसंकेतों' (Picture signals) में सामंजस्य होना चाहिये और इसकी पूर्ण व्यवस्था यन्त्र में होती है। रंगीन चित्रों को प्रसारित करने के लिए विशेष केमरों का प्रयोग होता है, जो विशेष रंगों के प्रति ग्रहणशील होते हैं और वे चित्र पर्दे पर प्रत्यारोपित (Reproduced) होते हैं।

टेलीविजन संयन्त्र में प्रयुक्त होने वाल केमरा 'विडियों संकेत' (Video signals) प्रेषित करता है और इस प्रक्रिया में ट्रान्समीटर उसे दीर्घाकार (Amplified) रूप देकर चुम्बकीय तरंगें (Magnetic waves) प्रसारित करता है। चूँकि सम्पूर्ण दृश्य को विद्युतीय संकेतों (Electrical Signals) में तत्क्षण (Simultaneously) नहीं परिवर्त्तित किया जा सकता, इसलिए उन्हें पहले नियमित रेखाओं में विभाजित कर (Scanning) चित्र का एक ढांचा (Frame) तैयार किया जाता है। इसप्रकार पर्दे पर चित्रों का ढाँचा क्रमिक रूप से और तीव्र गति से घूमता है जिससे विभिन्न दृश्यों का एक प्रवाह बना रहता है। इसप्रकार किसी भी टेलीविजन चित्र का निर्माण केथोड किरण के एक बहुत छोटे प्रकाशबिन्दु (Spot of light) द्वारा ही होता है, जो पर्दे पर तीव्र गति से इधर-उधर घूमता रहता हैं। इन चुम्बकीय तरंगों को टेपों में संचित कर भी कृत्रिम उपग्रहों (Artificial Satellites) के माध्यम से ट्रान्समीटर द्वारा प्रेषित किया जाता है जो टेलीविजन सेटों पर दिखाई देता है।

इसके अतिरिक्त रेडियों तरंगों द्वारा समाचारचित्र (News pictures) आदि भी संसार में एक कोने से दूसरे कोने तक भेजे जाते हैं। इस प्रक्रिया में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किसी चित्र को घूमने वाले एक ड्रम (Rotating drum) की सहायता से इलेक्ट्रानिक विधि द्वारा अनेक रेखाओं में विभाजित कर (Scanning) रेडियों संकेतों द्वारा छायाचित्र उत्पन्न किये जाते हैं। इसप्रकार उस ड्रम के अनेक बार घूमने से नियन्त्रित रेखाओं द्वारा सम्पूर्ण चित्र निर्मित हो जाता है। इन चित्रों के रेडियो संकेत पहले से ही रेकर्ड कर लिए जाते हैं, जो कार्यक्रम के अनुसार समय-समय पर प्रेषित किये जाते हैं। टेलीविजन प्रक्रिया में टेपरेकर्डिगं का प्रयोग होता है, जो विडियो (Video) या टेलीविजन चित्रों को अंकित कर लेता है। इसके अतिरिक्त कम्प्यूटर में सूचनाएँ एकत्र करने तथा दूसरे अन्य वैज्ञानिक कार्यों में इसका प्रयोग होता है। खाली टेपों में चुम्बकीय कण (Magnetic particles) होते हैं जो यान्त्रिक विधि द्वारा सक्रिय एवं संयुक्त होकर (By magnetic alignment) चुम्बकीय क्षेत्र निर्मित करते हैं जिसके फलस्वरूप ध्वनि अथवा गुणात्मक तरंगों में ताल-मेल स्थापित हो जाता है और इसप्रकार टेपों पर सूचनाएँ अंकित होती रहती हैं।

इसी प्रक्रिया द्वारा कृत्रिम उपग्रहों के माध्यम से संग्रहीत सूचनाओं को रेडियो संकेतों (Radio signals) द्वारा पृथ्वी पर निरीक्षण केन्द्रों में भेजा जाता है। इस क्रिया में विशेष केमरों (Orthicon Camera) का प्रयोग होता है और उनके द्वारा चित्र उतार कर टेपों में संचित कर लिया जाता है तथा जब कृत्रिम उपग्रह (Artificial satellite) रेडियो या टेलीविजन स्टेशनों की परिधि में आता है तो उन टेप किये हुए रेडियो संकेतों का चुम्बकीय तरंगों में प्रसारण होता है और वे ही गुणात्मक तरंगें पर्दे पर छायाचित्रों के रूप में प्रतिभासित होती हैं। इसके अतिरिक्त कृत्रिम उपग्रहों का उपयोग दूसरे वैज्ञानिक कार्यों में भी होता है। उदाहरण के लिए अन्तरिक्ष में गतिशील इलेक्ट्रान कणों के तापमान को अंकित करना, आकाशगंगाओं (Galaxies) के रेडियों संकेतों को पकड़ना, दूसरे देशों के विरूद्ध जासूसी करना तथा वायुमण्डल के रहस्यों की जानकारी प्राप्त करना आदि महत्वपूर्ण कार्य सन्पन्न होते हैं।

इसी सिद्धान्त के आधार पर कम्प्यूटर आदि सूक्ष्म इलेक्ट्रानिक यन्त्रों का निर्माण होता है। इस यन्त्र में हजारों 'तार्किक तत्वों' (Logic elements) का समावेश किया जाता है जिसमें 'और' (And) अथवा 'या' (Or) आदि प्रमुख हैं। इसप्रकार इन सर्किट ईकाईयों को एक मशीन द्वारा तीव्र गति से चला कर उनका स्वचालित ढ़ंग से परीक्षण किया जाता है और यह क्रिया उपयुक्त संकेतों के माध्यम से ही होती है। इस प्रक्रिया द्वारा जो अन्तिम फल प्राप्त होता है उसे अंकित कर लिया जाता है। इसप्रकार की गणना, नियन्त्रण तथा सूचनाओं का स्वचालित सम्प्रेषण अन्तरिक्ष यानों (Space ships) तथा कृत्रिम उपग्रहों में बड़ा सहायक सिद्ध होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

राडार प्रक्रिया (Radio detection and ranging) में भी ऐसा ही होता है। जब कोई वायुयान अथवा अज्ञात वस्तु (U F O) किसी एक रेडियों संकेत के मार्ग में आती है तो प्रतिध्वनि (Echo) के रूप में कुछ ऊर्जा प्रतिबिम्बित होती हुई ट्रान्समीटर की ओर लौट आती है। चूँकि रेडियो संकेतों की गति मालूम होती है, इसलिए उस प्रतिध्वनि के वापस लौटने में जितना समय लगता है उसके द्वारा उस अज्ञात वस्तु (Unidentified object) की दूरी माप ली जाती है। इस प्रक्रिया में जो अन्तर होता है वह पर्दे पर केथोड किरण के बाएँ से दाएँ दिशा में तीव्र गति से भागने की क्रिया द्वारा प्रदर्शित होता है। इस क्रिया में राडार संयन्त्र द्वारा अज्ञात वस्तु की दूरी ज्ञात हो जाती है और उसका छायाचित्र भी पर्दे पर अंकित हो जाता है। इसप्रकार केथोड किरण को बारबार प्रेषित कर अज्ञात वस्तु की दूरी, गतिशीलता एवं क्रियाशीलता आदि हलचलों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जिसप्रकार राडार का प्रयोग अन्तरिक्ष की वस्तुओं के लिए होता है उसीप्रकार 'सोनार' (Sound Navigation and Ranging) प्रक्रिया का उपयोग समुद्र क्षेत्र में होता है। इस प्रणाली में समुद्र के अन्दर 'उच्च आवृत्ति संकेतों' (High Frequency signals) को प्रेषित कर वस्तु की दूरी तथा स्थान आदि का पता लगाया जाता है।

अन्तरिक्ष में अन्य ग्रहों से सम्पर्क स्थापित करने के प्रयास में 'रेडियो खगोलशास्त्र' (Radio Astronomy) एक महत्वपूर्ण साधन है और इसमें भी इलेक्ट्रान कणों का ही योगदान होता है। सामान्य 'रिफ्लेक्टिंग टेलीस्कोपों' द्वारा जब सुदूर तारामण्डलों का प्रत्यक्ष निरीक्षण किया जाता है तो उनकी सीमा हमारी आँखों की दृष्टिगत (Visual) तरंगों एवं उनकी आवृत्तियों तक ही सीमित होती है। दूसरे शब्दों में हमारा इन्द्रियज्ञान सीमित होता है और जब इस सीमित दृष्टि से शक्तिशाली केमरा द्वारा उन ताराओं का चित्र लिया जाता है तो वे मद्धिम प्रकाश से युक्त छोटे-बड़े विन्दु से ही प्रतीत होते हैं, क्योंकि एक तो वे तारे हमसे बहुत दूर हैं और दूसरे अन्तरिक्ष का प्रकाश तथा अनेक प्रकार की चुम्बकीय तरंगें एवं वायुमण्डल में व्याप्त धूल के कण आदि सभी मिलकर धुन्ध के रूप में अवरोध उत्पन्न करते हैं। आज अमेरिका (२०० इंच व्यास) तथा रूस (२३८ इंच व्यास) के पास संसार के सबसे बड़े टेलीस्कोप विद्यमान हैं जिनसे हम पाँच से सात हजार प्रकाशवर्ष (एक प्रकाशवर्ष=६,०००,०००,००० मील) दूर तक देख सकते हैं। इन शक्तिशाली टेलीस्कोपों द्वारा जब हम अन्तरिक्ष की ओर देखते हैं तो अरबों-खरबों आकाश गंगाएँ (Galaxies) नजर आती हैं और उन प्रत्येक आकाश गंगाओं में अरबों-खरबों तारे दिखाई देते हैं जिनकी परस्पर दूरी लाखों-करोड़ों प्रकाशवर्षों में है। परन्तु रेडियों टेलीस्कोप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा जो 'रेडियों आवृत्ति विकिरण' (Radio frequency radiation) प्रसारित होता है उसका तरंगदैर्घ्य लम्बा होता है और उस पर किसी ऐसे अवरोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अनेक सुदूर आकाशगंगाओं तथा उनकी ग्रह प्रणालियों द्वारा रेडियो ध्वनि उत्पन्न होती है अथवा उनमें 'रेडियो आवृत्ति विकिरण' (Radio frequency radiation) उठता रहता है जिसे पृथ्वी पर यन्त्रों की सहायता से उसकी दिशा और स्थान का निर्धारण किया जाता है। एक तश्तरीनुमा रिफ्लेक्टर जिसका व्यास सैकड़ों फीट होता है उन रेडियो संकेतों को एरियल के माध्यम से पकड़ता है और वह उन संकेतों को भी पकड़ सकता है जो दृष्टिगत टेलीस्कोपों तथा फोटो केमरा द्वारा सम्भव नहीं है। दूसरे शब्दों में वह करोड़ों प्रकाशवर्ष दूर रेडियो संकेतों को भी पकड़ने में समर्थ है और यही दोनों में प्रमुख अन्तर है। रेडियो टेलीस्कोपों द्वारा ऐसी आकाश-गंगाओं का स्थान निर्धारण किया गया है जो हमारी पृथ्वी से ४ अरब ५० करोड़ प्रकाशवर्ष दूर हैं। यह भी इलेक्ट्रान कणों का ही एक चमत्कार है।

आज प्रमुख इलेक्ट्रानिक यन्त्रों में जिस यन्त्र का नाम आता है उसे 'इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप' कहते हैं और यह यन्त्र जीवशास्त्र के अनुसन्धान के लिए अत्यन्त उपयोगी है। सामान्य सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों द्वारा किसी वस्तु या कण को दो हजार गुना से अधिक बढ़ा कर नहीं देखा जा सकता, क्योंकि दृष्टिगत प्रकाश के तरंगदैर्घ्य (Wavelength) से कम करके सूक्ष्म कणों को नहीं देखा जा सकता। चूँकि प्रकाश किरणों के भी अनेक स्तर (बैंगनी, परा-बैंगनी, एक्स-रे, गामा-रे आदि) होते हैं और उन स्तरों के माध्यम से ही हम सूक्ष्मातिसूक्ष्म कणों का निरीक्षण एवं परीक्षण कर सकते हैं। यही कारण है कि फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर देखने के लिए हेसेनवर्ग को एक काल्पनिक सुपर माइक्रोस्कोप का आश्रय लेना पड़ा जो वर्त्तमान माइक्रोस्कोप से भी करोड़ों गुना अधिक सूक्ष्म था। चूँकि इलेक्ट्रान कणों का तरंग-दैर्घ्य दृष्टिगत प्रकाश (Visible light) से बहुत कम होता है, इसलिए १९२० में जब यह खोज की गई कि एक चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) का प्रयोग कर इलेक्ट्रान किरणों के समूह (Beams) द्वारा अत्यन्त सूक्ष्मकणों का निरीक्षण एवं परीक्षण किया जा सकता है तथा उस यन्त्र को एक लाख गुना तक बढ़ाया जा सकता है तो जीवविज्ञान के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्त्तन हुआ। आज इसी यन्त्र द्वारा जीवविज्ञानशास्त्री सूक्ष्म कोशिकाओं (Cells) का प्रत्यक्ष अध्ययन करता है। यद्यपि इस समय इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी यन्त्र (Electron microscope) द्वारा एक सूक्ष्म परमाणु को नहीं देखा जा सकता, किन्तु १० कार्बन परमाणुओं के समूह को इस यन्त्र द्वारा देखा जा सकता है। यही कारण है कि आज जीवशास्त्री कृत्रिम उत्परिवर्त्तन (Arti-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ficial mutation) का प्रयोग कर 'परखनली शिशु' (Test tube baby) उत्पन्न करने में भी सफल हो गये हैं और कोशिकाओं में DNA के जीव-रहस्य (Genetic code) को भी पढ़ने का प्रयास कर रहे हैं।

इस पृथ्वी पर हम इलेक्ट्रानिक प्रणाली द्वारा जो भी कार्य सम्पन्न करते हैं वह सार्वभौमिक मन (Universal mind) की बृहद् योजना एवं कार्य का ही एक क्षुद्र अंशमात्र है। इस सन्दर्भ में न तो हम किसी स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कण की कल्पना कर सकते हैं और न उन तथाकथित स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों के संयोग से किसी भी इलेक्ट्रनिक यन्त्र पर किसी स्वतन्त्र छायाचित्र का प्रदर्शन कर सकते हैं, क्योंकि हमारा भौतिक अस्तित्व एक छायाचित्र है और उस छायाचित्र द्वारा केवल छायाचित्रों की पुनरावृत्ति हो सकती है अथवा नाटकीय रिहर्सल हो सकता है। इस भौतिक तथ्य को जेम्स जीन्स और एडिंगटन ने पहचान लिया था। चूँकि सापेक्षवाद के अन्तर्गत कारण और कार्य अभिन्न हैं, इसलिए कार्यस्वरूप इस भौतिकजगत का कोई भी कर्म-व्यापार कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की तरंगों के बिना सम्भव नहीं है। यही कारण है कि फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से 'कारण और कार्य की शृंखला एकजुट हो पाती है। अतः हमारे टेलीविजन सेट पर इलेक्ट्रान कणों द्वारा जो छायाचित्रों का प्रदर्शन होता है वह स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों के नृत्य से नहीं होता, बल्कि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की तरंगों के अनुरूप होता है। दूसरे शब्दों में हम सूक्ष्मजगत के कारण का स्थूलजगत में पुनरावृत्ति करते हैं, उस जगत के नाटक का इस जगत के इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर प्रसारण करते हैं, प्रदर्शन करते हैं, लेकिन अहंकारवश हम स्वयं अपने को कर्त्ता मान लेते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि सार्वभौमिक मन भो कोई स्वतन्त्र या निरपेक्ष शक्ति नहीं है, बल्कि सापेक्ष प्रकृति के अन्तर्गत वह इलेक्ट्रानिक यन्त्र भी किसी दूसरी परस्पर विरोधी शक्ति द्वारा संतुलित एवं नियन्त्रित है। सार्वभौमिक मन सिर्फ वही कार्य कर सकता है जो कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। यह एक ऐसी वृत्तात्मक प्रक्रिया है जिसमें एक ही वस्तु या शक्ति असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित हो रही है। उदाहरण के लिए हम अपनी टेलीविजन प्रणाली में एक ही समय में एक ही दृश्य को असंख्य स्थानों से देख सकते हैं, क्योंकि चुम्बकीय तरंगें एक ही क्षण में सम्पूर्ण पृथ्वी को आवृत्त कर लेती हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि यह क्रिया भौतिकजगत और सूक्ष्मजगत की परिधि पर हो रही है जहाँ समय का कोई व्यवधान नहीं पड़ता। चूँकि प्रकाश का यह उच्च स्तर सूक्ष्मजगत के निम्न स्तर से मिला हुआ है, इसलिए हम अपने विकसित इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर सूक्ष्मजगत की ध्वनि तरंगों एवं गुणात्मक तरंगों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आसानी से पकड़ सकते हैं। यही कारण है कि हमारे टेपरेकर्डरों पर कभी-कभी मृतात्माओं की आवाज़ें भी अंकित हो जाती हैं। इसीप्रकार विकसित इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर हमें अपने भविष्य का आभास भी मिल सकता है, क्योंकि भविष्य के रूप में कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत ही कार्यस्वरूप स्थूलजगत में परिवर्त्तित होता है। दूसरे शब्दों में हमारा भविष्य ही समय के चक्र में वर्त्तमान और भूत बन जाता है। यही कारण है कि सिद्ध योगी अपने भविष्य को देख लेते हैं।

अतः सापेक्षवाद के इस नियम के अनुसार भौतिकजगत में सार्वभौमिक मन से हम कभी पृथक नहीं हो सकते, क्योंकि इस भौतिकजगत के निर्माण के लिए प्रकृति का वही एजेन्ट है जो कारण को कार्य में परिवर्त्तित करता है। इसीलिए वेदान्त में कहा गया है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मन के अन्दर ही है और यदि हम मन को नियन्त्रित कर उसे वश में कर लेते हैं तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का ज्ञान स्वतः प्राप्त हो जायेगा। भौतिक सन्दर्भ में गति जितनी बढ़ती जायेगी मन का विस्तार (देश-काल) उतना ही संकुचित होता जायेगा। अगर हम सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का चक्कर एक क्षण में लगा लें तो मन का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। लेकिन योगी आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा इस अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं। इसी नियम के अनुसार एक जैविक कण (Biological atom) जीन (Gene) द्वारा एक ही मनुष्य के असंख्य प्रतिरूप (Counterparts or cloaning) उतारे जा सकते हैं, क्योंकि वह मानचित्र इस भौतिकजगत को फोटोन और इलेक्ट्रान कणों के टक्कर से ही प्राप्त हो जाता है जो इलेक्ट्रान कणों से होता हुआ जैविक कणों (जीन, गुणसूत्र, कोष) तक पहुँच जाता है। यह चमत्कारी क्रिया सांख्यदर्शन के इस महत्वपूर्ण सिद्धान्त पर आधारित है कि जो पिण्ड में है वही ब्रह्माण्ड में भी है (यथापिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। इसीलिए अद्वैत वेदान्त कहता है कि ब्रह्म स्वयं अपने को ही असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित कर रहा है (एकम् ब्रह्म द्वितीयो नास्ति)। अगर इसी दर्शन का वैज्ञानिक भाषा में प्रस्तुत किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि इस भौतिक-जगत में हम कोई नई चीज नहीं कर सकते, कोई नया घटनाचित्र नहीं उपस्थित कर सकते, बल्कि जो कुछ सूक्ष्मजगत में हो रहा है हम इस भौतिकजगत में उन घटनाचित्रों की पुनरावृत्ति करते हैं, नाटकीय रिहर्सल करते हैं। यह सब कुछ एक सापेक्ष भ्रम है। इस सन्दर्भ में महर्षि रमण एक दृष्टान्त दिया करते थे कि जिसप्रकार किसी रेडियो को देख कर कोई मनुष्य भ्रमवश यह मान ले कि इसके भीतर बैठ कर कोई आदमी गाना गा रहा है उसीप्रकार अहंकार (Ego) इस जगत में अपने को कर्त्ता मान लेता हैं। लेकिन जिसप्रकार रेडियो में कोई आदमी नहीं होता, तो भी भ्रमवश ऐसा प्रतीत होता है उसीप्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अहंकार का भी कोई अस्तित्व नहीं होता, लेकिन भ्रमवश ऐसा प्रतीत होता है। इसीप्रकार आधुनिक विज्ञान की सभी उलझनों का कारण यह है कि वह स्वयं अपने को ही कर्त्ता मान कर आगे बढ़ता है। अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त प्रत्यक्ष ज्ञान को ही सत्य समझ लेता है जिसके फलस्वरूप उसके सिद्धान्तों में भौतिकवाद एवं यथार्थवाद की प्रधानता हो जाती है। लेकिन जब वह शुद्ध विचारों (Pure thoughts) का आश्रय लेता है तथा परा-इन्द्रिय ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता है तो उसके सभी सिद्धान्त सीमित, सापेक्ष और दोषपूर्ण प्रतीत होने लगते हैं। क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद उसे यही शिक्षा प्रदान करते हैं।

अब हम मायापुरी के उस खण्ड में चलते हैं जो स्वयं अपने में एक बड़ा तिलस्म है। इस खण्ड में सैकड़ों कक्ष हैं जिनमें तरह-तरह के रासायनिक पदार्थ एवं यान्त्रिक उपकरण विद्यमान हैं। इन कक्षों में जीवशास्त्री ब्रह्मलोक के देवर्षियों की भाँति अपने भिन्न-भिन्न कार्यों में लीन दिखाई देंगे। जब आप इस तिलस्म में प्रवेश करेंगे तो आपको यह भ्रम हो सकता है कि यही वह ब्रह्मलोक है जहाँ जीवजगत की रचना होती है। अगर ऐसा भ्रम हो जाय तो उस व्यक्ति को वेदमन्त्र (अहम् ब्रह्मास्मि) का जाप करना चाहिये अथवा गीता के अध्याय २ का पाठ कर लेना चाहिये। इस क्रिया द्वारा उस तिलस्म के जादू का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। यद्यपि आधुनिक विज्ञान का यह तिलस्म बड़े कौशल द्वारा तैयार गया है, लेकिन जब मनुष्य स्वयं अपने को आत्मस्थित कर लेता है तो उसके लिए उस तिलस्म का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है, क्योंकि वस्तुतः उस तिलस्म का आधार मायावाद है। जब सापेक्ष भ्रम होता है तो यह मायावाद ही यथार्थ प्रतीत होता है, किन्तु जब भ्रम दूर होकर सत्य का बोध होता है तो उस मायापुरी का वह तिलस्म भी लुप्त हो जाता है।

आधुनिक युग में जब भौतिकविज्ञान का विकास हुआ तो जीवशास्त्र को भी एक प्रमुख आधार प्राप्त हो गया। चूँकि भौतिकविज्ञान यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित तथा न्यूटन के 'मशीनी ब्रह्माण्डवाद' पर आधारित था, इसलिए जीवशास्त्र ने भी उसी सिद्धान्त को अपना आधारस्तम्भ मान लिया। लेकिन क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद से जब यूक्लिडीयन भौतिकविज्ञान ध्वस्त हो गया तो उसपर आधारित जीवशास्त्र भी स्वतः ध्वस्त हो गया। लेकिन जीवशास्त्री अब भी यह दावा करते हैं कि वे कृत्रिम जीव-निर्माण करने में समर्थ हैं। इस ज्ञानभ्रम का प्रमुख कारण अहंज्ञान है और दूसरा कारण यह भी है कि वे जीव को भौतिक एवं रासायनिक तत्वों का योग समझ लेते हैं। लेकिन रासायनिक तत्वों का वह योग सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में कहीं नहीं टिक पाता। उदाहरण के लिए अत्यधिक तापमान पर अथवा प्रकाश की गति (प्रतिसेकन्ड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१८६,००० मील) पर न तो कोई रासायनिक तत्व है और न ही भौतिक सन्दर्भ में कोई जीव । इस उच्च तापमान अथवा अन्तिम भौतिक गति पर अगर कोई परमतत्व बच रहता है तो वह है कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकारों से युक्त चेतन पुरुष अथवा जीवात्मा जिसे सांख्यदर्शन की वृत्तात्मक रेखागणित का अनुसरण करना पड़ता है और 'कारण-कार्य' की वह शृंखला तभी टूटती है जबकि जीव प्रकृति के वन्धन से मुक्त हो जाता है। अतः महर्षि कपिल के महाविज्ञान के अनुसार चेतना + त्रिविध गुण-विकार ही जीव है और जब गुण-विकार लुप्त हो जाते हैं तो केवल शुद्ध आत्मा अथवा मुक्त आत्मा ही बच रहता है । यद्यपि सांख्यदर्शन में इस मुक्त आत्मा पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया है, क्योंकि यह दर्शन सापेक्ष प्रकृति के विवेचन तक ही सीमित है । लेकिन वेदान्त और योगदर्शन में इस विषय पर अच्छा प्रकाश डाला गया है, क्योंकि दोनों अद्वैतवादी दर्शन हैं । इसप्रकार विज्ञान और वेदान्त में सबसे बड़ा अन्तर यही है कि एक जड़ पदार्थवादी है जबकि दूसरा आत्मवादी दर्शन है ।

जीवशास्त्र के नियमों का आधार भौतिकविज्ञान के कुछ प्रमुख सिद्धान्त हैं जो तार्किक शृंखला में परस्पर गुंथे हुए हैं । इस सन्दर्भ में एक प्रमुख सिद्धान्त आता हैं जिसे 'तापवैगिकी' (Thermodynamics) का सिद्धान्त कहते हैं। इस नियम के अनुसार विज्ञान ने यह मान लिया कि ताप के प्रसारण से ही सभी निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं का निर्माण होता है। चूंकि पृथ्वी के वातावरण में गर्म और ठंडा दोनों क्षेत्र होते हैं, इसलिए उस विषमता के फलस्वरूप अणुओं (Molecules) में भी परस्पर संयोजन एवं सामंजस्य होता रहता है । इसी क्रिया द्वारा ताप का प्रसारण तथा उसके स्तर में उतार-चढ़ाव होता रहता है जिसके फलस्वरूप अनेक प्रकार के भौतिक एवं रासायनिक परिवर्त्तन होते हैं और विज्ञान के अनुसार इस रासायनिक परिवर्त्तन से ही जीव की उत्पत्ति हुई है। दूसरे शब्दों में जड़ पदार्थ ही जीव की उत्पत्ति का कारण है। लेकिन यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित भौतिकविज्ञान तथा जीवशास्त्र ने इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार नहीं किया कि उस ताप का प्रसारण क्यों और कैसे होता है ? वास्तव में इसका शुद्ध ज्ञान केवल इन्द्रियों से परे होकर ही प्राप्त हो सकता है । इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करते हुए अपने सापेक्षवाद के सिद्धान्त में आइन्स्टीन ने यह उत्तर दिया कि ताप का प्रसारण, उतार-चढ़ाव तथा भौतिक एवं रासायनिक परिवर्त्तन केवल कारणस्वरूप फोटोन कणों तथा कार्यस्वरूप इलेक्ट्रान कणों के टक्कर से ही हो सकता है, क्योंकि इलेक्ट्रान या परमाणु स्वतन्त्र कण नहीं होते, बल्कि इन कणों पर सापेक्षवाद का नियम लागू होता है । इसके अतिरिक्त आइन्स्टीन ने यह भी कहा कि चेतना से पृथक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इलेक्ट्रान, परमाणु, ताप तथा रासायनिक तत्त्वों का भी कोई अस्तित्व नहीं है, क्योंकि इस भौतिकजगत पर यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित कभी लागू नहीं हो सकती। दूसरे शब्दों में आइन्स्टीन के अनुसार चेतना जड़ पदार्थ से सर्वथा पृथक तत्त्व है। अगर चेतना पृथक तत्त्व है तो यह मान लेना कि उसकी उत्पत्ति भौतिक एवं रासायनिक परिवर्त्तन द्वारा हुई हैं वस्तुतः इन्द्रियों द्वारा प्राप्त एक भ्रामक निष्कर्ष है। इस सन्दर्भ में वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल का यह निष्कर्ष है कि चेतनपुरुष (जीवात्मा) के संयोग से कारणस्वरूप त्रिगुणात्मक तरंगें (सत्व, रज, तम) ही कार्यस्वरूप भौतिकजगत के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं और चेतनपुरुष से पृथक इन तरंगों का भी कोई अस्तित्व नहीं है, क्योंकि कपिल के सापेक्षवाद में कारण ही कार्य है और कार्य ही कारण।

अतः ताप की गतिशीलता के भौतिकविज्ञान को ही 'तापवैगिकी' (Thermodynamics) कहते हैं। इस सिद्धान्त का यह प्रथम नियम (First law of thermodynamics) है कि कोई भी ताप अथवा ऊर्जा न तो शून्य से उत्पन्न हो सकती है और न ही शून्य में विलीन हो सकती है। दूसरे शब्दों में पदार्थ एवं ऊर्जा का केवल नाम-रूप परिवर्त्तन हो सकता है और इसी सिद्धान्त को 'ऊर्जा का संरक्षण' (conservation law) कहते हैं। इस नियम का तात्पर्य यह है कि किसी भी निर्जीव या सजीव पदार्थ में परमाणुओं के रूप में ऊर्जा अथवा भौतिकशक्ति की मात्रा निश्चित अथवा स्थिर (constant) है और विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा उसे ऊर्जा एवं वस्तुओं के रूप में परिवर्त्तित किया जा सकता है। इसी नियम के अनुसार बर्फ ही जल है और जल ही भाप अथवा ऊर्जा और फिर भाप अथवा ऊर्जा ही बर्फ है। लेकिन यदि परा-इन्द्रियज्ञान पर आधारित सांख्यदर्शन के अत्यन्त व्यापक दृष्टिकोण से विचार किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि सूक्ष्मजगत (Astral world) ही स्थूलजगत (Physical world) है और स्थूलजगत ही सूक्ष्मजगत, सूक्ष्म शरीर (Astral body) ही स्थूलशरीर (Physical body) है और स्थूल शरीर ही सूक्ष्मशरीर, कारण ही कार्य है और कार्य ही कारण, त्रिविध गुणात्मक तरंगें ही भौतिक एवं रासायनिक परिवर्त्तन हैं और रासायनिक परिवर्त्तन ही त्रिविध गुणात्मक तरंगें। इसी सिद्धान्त को अगर अद्वैत वेदान्त की भाषा में व्यक्त किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि जीव का अहंकार ही माया है और माया ही अहंकार। परन्तु इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात यह है कि चेतनपुरुष (जीवात्मा) के बिना कहीं कुछ नहीं है। दूसरे शब्दों में इस भौतिकजगत पर यूक्लिडीयन रेखागणित कभी लागू नहीं हो सकती। अतः इस रेखागणित पर आधारित सभी वैज्ञानिक सिद्धान्त पूर्णतया भ्रामक और तथ्यों से परे हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अतः अपने तथाकथित स्वतन्त्र प्रयोगों के आधार पर आधुनिक विज्ञान में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि किसी निश्चित अथवा बन्द प्रक्रिया (closed system) में वातावरण में विषमता के फलस्वरूप ताप का प्रवाह (Flow of heat) तत्काल गर्म क्षेत्र से ठंडे क्षेत्र की ओर होगा और इसी को 'तापवैगिकी' का दूसरा नियम (second law of thermodynamics) कहते हैं। इसप्रकार विज्ञान के अनुसार पहले नियम से यह स्पष्ट होता है कि किसी वस्तु में वर्त्तमान सम्पूर्ण ऊर्जा से अधिक कोई निचोड़ नहीं सकता और दूसरे नियम से यह प्रमाणित होता है कि किसी निश्चित वस्तु में वर्त्तमान ऊर्जा से अधिक काम लेना असम्भव है और उस वस्तु में वर्त्तमान ऊर्जा सम्पूर्ण ऊर्जा से निश्चित रूप से कम होगी और वह कर्म-व्यापार तभी तक चल सकता है जबतक कि तापमान 'निरपेक्ष शून्य' (Absolute zero) तक नहीं पहुँच जाता। आधुनिक जगत के कल-कारखानें 'ऊर्जासिद्धान्त' के इसी नियम पर आधारित हैं। लेकिन ये सभी नियम तब पूर्णतया खण्डित हो जाते हैं जब सापेक्षवाद के अनुसार स्वचेतना एवं कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) का प्रश्न उपस्थित हो जाता है। यद्यपि सांख्यदर्शन के सन्दर्भ में आधुनिक विज्ञान का यह निष्कर्ष सही है कि प्रकृति या पदार्थ में जब तक विषमता नहीं होगी तब तक किसीप्रकार की कोई हलचल अथवा ऊर्जा उत्पन्न नहीं हो सकती, लेकिन यह सब कुछ अनायास नहीं होता है, बल्कि गुणात्मक परमाणुओं का संयोजन, नियमन एवं संचालन एक अदभुत् इलेक्ट्रानिक यन्त्र सार्वभौमिक मन (Universal mind) द्वारा ही होता हैं।

अनेक वैज्ञानिक अनुसंधानों के आधार पर एक जर्मन वैज्ञानिक रुडोल्फ क्लासियस (१८२२–१८८८) ने एक वैज्ञानिक रहस्य 'एण्ट्रोपी' (Entropy) की खोज की जिसका उद्देश्य अनुत्पादित ऊर्जा (unavailable energy) को तापमान में विभक्त करना था और इसके विभिन्न स्तरों को 'केलोरी' (calories) कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार नक्षत्र-पिण्डों के रूप में इस ब्रह्माण्ड की समस्त ऊर्जा (Total energy) स्थिर (constant) है और इसप्रकार ब्रह्माण्ड की समस्त 'एन्ट्रोपी' निरन्तर बृद्धि की ओर है। इसी प्रक्रिया द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड में ताप, ऊर्जा, प्रकाश, विकिरण तथा अनेक प्रकार की चुम्बकीय तरंगें निरन्तर प्रवाहित हो रही हैं, क्योंकि ठोस नक्षत्र-पिण्डों के रूप में वह अनुत्पादित अथवा संचित या सुप्त ऊर्जा विकिरण के रूप में निकल रही है और यह क्रिया तभी तक सम्भव है जब तक कि इस ब्रह्माण्ड में विषमता बनी हुई है। जब यह विषमता समता में बदल जायेगी अथवा निरपेक्ष शून्य (Absolute zero) के स्तर तक पहुँच जायेगी तो परमाणुओं की हलचल समाप्त हो जायेगी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसके फलस्वरूप ऊर्जा को सभी प्रक्रियाओं का अन्त हो जायेगा तथा जीवजगत का अस्तित्व भी समाप्त हो जायेगा। सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन में इसी अवस्था को साम्यावस्था कहते हैं जो प्रकृति और पुरुष (पत्नी और पति) के संयोग से शुरू होती है और त्रिविध गुण-विकारों के प्रभाव से विषमता की अवस्था में अरबों वर्षों तक विद्यमान रहती है तथा महावृत्त (Great circle) को पूर्णकर फिर साम्यावस्था में पहुँच जाती है। इसके विपरीत आधुनिक विज्ञान की परिकल्पना यह है कि वह वृत्त एक स्वतन्त्र भौतिक शक्ति ऊर्जा से शुरू होता है और चैतन्य की उत्पत्ति कर अथवा जीवजगत की रचना कर फिर ऊर्जा में ही विलीन हो जाता है। इस प्रक्रिया में गुणात्मक तत्व, मानसिक शक्ति, विचार शक्ति, अहंकार तथा चेतना आदि अमूर्त्त शक्तियां कहीं नहीं दिखाई देतीं, क्योंकि आधुनिक विज्ञान का निष्कर्ष यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित इन्द्रियों द्वारा प्राप्त भ्रामक ज्ञान पर निर्भर है।

अतः प्रकृति में ऊर्जा के क्रमिक प्रसार द्वारा जो तापमान का सन्तुलन स्थापित होता रहता है तथा नानाप्रकार की हलचलें होती रहती हैं उसी प्रक्रिया को विज्ञान में विषमता का नियम अथवा 'अव्यवस्था का नियम' (Law of disorder) कहते हैं जिसका मूलकरण परमाणुओं की हलचल है। इसके विपरीत प्रकृति में व्यवस्था अथवा समता (order) वह गुण है जो प्रकृति की इसी विषमता द्वारा अपने आप स्थापित हो जाती है। दूसरे शब्दों में ताप का उत्कर्ष ही विषमता है, हलचल है, जीवन और स्पन्दन है तथा ताप का लोप ही समता अथवा व्यवस्था (order) है। लेकिन कपिल और आइस्न्टीन कहते हैं कि स्वचेतना के बिना यह सब कुछ बकवास है। दूसरे शब्दों में 'चरम एन्ट्रोपी' (Maximum entropy) की सम्पूर्ण प्रक्रिया को देखने और अनुभव करनेवाला जड़-पदार्थ से सर्वथा भिन्न कोई चेतन अस्तित्व होना चाहिये और तभी पदार्थ की यह प्रक्रिया सार्थक रूप ग्रहण कर सकेगी। प्रकृति की यह विषमता अथवा हलचल तबतक चलती रहेगी, जगत में यह नाम-रूप परिवर्त्तन तब तक होते रहेंगे, जीवन और मृत्यु का यह खेल तब तक घटित होता रहेगा जब तक प्रकृति की इस प्रक्रिया को उलट नहीं दिया जाता अथवा कालचक्र को रोक नहीं दिया जाता। लेकिन ऐसा बहिर्गत प्रक्रिया (objective process) द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि प्रकृति एक सगुण और साकार शक्ति है जो आदि चेतनपुरुष (परमात्मा) का संयोग पाकर ही क्रमविकसित हो सकती है और इस क्रमविकास को कभी नहीं रोका जा सकता। योगी कहते हैं कि जीव इस वृत्तात्मक प्रक्रिया से केवल मुक्त हो सकता है और वह भी सिर्फ यौगिक प्रक्रिया अथवा आभ्यन्तरिक प्रक्रिया (subjective process) द्वारा जिसमें मन एवं वासना-तरंगों को नियन्त्रित कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः) चेतना का उत्कर्ष (unfoldment of consciousness) किया जाता है। जीव के लिए वही प्रक्रिया मुक्ति का एकमात्र साधन है। यद्यपि मृत्यु के समय कालचक्र की यह प्रक्रिया उलट जाती है, लेकिन कारण और कार्य की अटूट शृंखला जो मूलद्रव्य कारणस्वरूप त्रिविध गुण-विकारों से बँधी हुई है नहीं टूट पाती। इस अटूट शृंखला को केवल निर्विकल्प समाधि में ही तोड़ा जा सकता है।

वास्तव में सूक्ष्मजगत की हलचल भौतिकजगत में प्रकट होती है। सुप्रसिद्ध अमेरिकी भौतिकशास्त्री जार्ज गेमोव ने अपनी पुस्तक (one Two Three…… Infinity) में इस हलचल का एक रोचक विवरण प्रस्तुत किया है। अगर जल से भरा हुआ गिलास मेज पर स्थिर रख दिया जाय तो हमें दिखाई देता है कि जल की अवस्था शान्त एवं स्थिर है, लेकिन गेमोव के अनुसार यह समता अथवा स्थिरता केवल बाह्य रूप से ही दिखाई दे रही है। अगर इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप द्वारा देखा जाय तो उस जल में दाने (Grains) के आकार में पृथक-पृथक अणुओं (Separate molecules) का ढाँचा दिखाई देगा। उस दीर्घाकार अवस्था में यह भी दिखाई देगा कि जल शान्त या स्थिर नहीं है, उल्कि उसके असंख्य अणु तेजी से चारों ओर गतिशील एवं अपने कर्म-व्यापार में लीन हैं! असंख्य अणु परस्पर एक दूसरे से उसीप्रकार धक्का-मुक्की कर रहे हैं जिसप्रकार किसी भीड़ भरे हाल में अचानक आग लग जाने पर लोग धक्का-मुक्की करते हैं। गेमोव के अनुसार अणुओं की इस अनिश्चित उछल-कूद से ही इन्द्रियों द्वारा शरीर में एक हलचल उत्पन्न होती है जिसके फलस्वरूप शरीर में जो उत्तेजनाएँ अथवा संवेदनाएँ (Sensations) उठती हैं उसीको शरीर का तापमान (Temperature) कहते हैं। इस प्रक्रिया में जीवाणु (Bacteria) तथा विषाणु (Viruses) जैसे अत्यन्त छोटे-छोटे जीव इधर-उधर धक्का-मुक्की खाते रहते हैं। सूक्ष्मजगत के इस रोचक कर्म-व्यापार को विज्ञान में 'ब्राउन का नियम' (Brownian motion) कहते हैं। तापमान के अध्ययन से यह पता चलता है कि जब तापमान का स्तर–२७३° सेण्टीग्रेड अथवा–४५९° फारेनहाइट होता है तो उस पदार्थ की तापीय हलचल पूर्णतया लुप्त हो जाती है, क्योंकि तब उस पदार्थ के सभी अणु स्थिर हो जाते हैं अथवा जड़वत हो जाते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि यही पदार्थ का निम्नतम (Lowest) तापमान है और वैज्ञानिक भाषा में इसीको चरम शून्य (Absolute zero) कहते हैं अथवा इसी अवस्था को निरपेक्ष स्थिरता (Absolute rest) भी कहते हैं। इसका कारण यह है कि इस अवस्था में किसीप्रकार की कोई हलचल नहीं होती, कोई जीवन और स्पन्दन नहीं होता। लेकिन कपिल का सापेक्षवाद कहता है कि इस चरम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शून्य (Absolute zero) से परे सूक्ष्मजगत (Astral world) में इसीप्रकार की हलचल होती है और चेतनपुरुष के संयोग से जीवन तथा स्पन्दन होता है और त्रिविध गुण-विकारों की यह हलचल तभी समाप्त होती है अथवा जीव को चरम स्थिरता (Absolute rest) तभी प्राप्त होती है जबकि कारण और कार्य की शृंखला टूट जाती है और जीव प्रकृति के बन्धन में मुक्त हो जाता है। यहाँ अन्तर केवल दृष्टि का है, क्योंकि विज्ञान का निष्कर्ष इन्द्रियजनित ज्ञान पर आधारित है जबकि सांख्यदर्शन का निष्कर्ष परा-इन्द्रियज्ञान (Extra sensory perception) पर आधारित है।

जार्ज गेमोव का कहना है कि जब तापमान लाखों डिग्री पहुँच जाता है तो परमाणुओं का अस्तित्व समाप्त हो जाता है और पदार्थ के सभी इलेक्ट्रानिक आवरण छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। उस अवस्था में पदार्थ का स्वरूप केवल नाभि अथवा केन्द्रक (Nuclei) तथा स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों के समिश्रण के के रूप में शेष रह जाता है जिनमें परस्पर टक्कर होती रहती है। अतः गेमोव की दृष्टि में यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि परमाणुओं के इस विखंडन एवं लोप के बाद भी पदार्थ का मूलभूत रासायनिक अस्तित्व विद्यमान होता है, क्योंकि परमाणुओं की नाभि (Nuclei) उसीप्रकार बनी रहती है। जब तापमान गिर जाता है तो नाभि स्वतन्त्र इलेक्ट्रान कणों को फिर अपनी ओर खींच लेती हैं और इसप्रकार परमाणुओं की अवस्था पूर्ववत हो जाती है। पदार्थ के सम्पूर्ण तापीय विघटन (Disintegration) के लिए स्वयं नाभिकों (Nuclei) का विखंडन होना आवश्यक है और यह अवस्था तभी हो सकती है जबकि तापमान अरबों डिग्री पहुँच जाय। लेकिन गेमोव के अनुसार सम्भवतः इतना तापमान ताराओं में भी नहीं होता।

अतः इस प्रक्रिया में नाभिकों (Nuclei) का अस्तित्व इसलिए बना रह जाता है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार उनका सम्बन्ध कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) से भी है। इन विशिष्ट नाभिकों में ही विशिष्ट उप-परमाणु कणों का संचय होता है जो विशिष्ट फोटोन कणों के टक्कर से सक्रिय होकर विशिष्ट कर्म-व्यापार सम्पन्न करते हैं। यही कारण है कि तापमान गिर जाने पर नाभिक उप-परमाणु कणों को फिर अपनी ओर खींच लेती है, क्योंकि सम्पूर्ण प्रक्रिया का सम्बन्ध त्रिविध गुणात्मक तरंगों से है जो परस्पर कारण और कार्य की शृंखला से जुड़ी हुई हैं। यही कारण है कि सभी जीवों के चेतन-स्तर तथा उनके गुण-विकार भिन्न-भिन्न हो जाते हैं, क्योंकि उनमें गुणात्मक परमाणुओं का संयोजन भिन्न-भिन्न रूप से होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि परमाणु स्वयं अपने में स्वतन्त्र कण नहीं होते, बल्कि भिन्न-भिन्न गुणात्मक समिश्रण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के वाहक होते हैं जो एक-एक कर अद्भुत इलेक्ट्रानिक यन्त्र सार्वभौमिक मन (universal mind) द्वारा नानाप्रकार की निर्जीव एवं सजीव वस्तुओं के रूप में सजाये जाते हैं। लेकिन प्रकृति की इस प्रदर्शनी का अस्तित्व केवल छाया-चित्रों के रूप में ही होता है जिसका कोई स्थायी महत्त्व नहीं है। इसप्रकार अणुओं (Molecules) की यह हलचल अथवा धक्का-मुक्की अनिश्चित नहीं होती, बल्कि पूर्णतया नियोजित एवं नियन्त्रित होती है, क्योंकि तभी कारण और कार्य की शृंखला जुड़ सकती है।

सन् १७९६ ई० एक फ्रांसीसी गणितज्ञ लेपलेस ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि एक विशाल गैस का गोला जो गतिशील अवस्था में था और समय के प्रवाह में वह गैस-पुञ्ज वातावरण के प्रभाव से क्रमशः ठंडा होता गया जिसके फलस्वरूप असंख्य नक्षत्र-पिण्डों एवं उनकी ग्रह प्रणालियों की उत्पत्ति हुई तथा उनकी गतिशीलता से ही गुरुत्वाकर्षण, आकर्षण-विकर्षण एवं चुम्बकीय तरंगों की भी उत्पत्ति हुई। बाद में चलकर इस सिद्धान्त में यह संशोधन प्रस्तुत किया गया कि नक्षत्र-पिण्डों में परस्पर टक्कर अथवा विस्फोट के फलस्वरूप सूर्यमण्डल तथा विभिन्न ग्रहों की उत्पत्ति हुई और इसी क्रम में हमारी पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों का जन्म लगभग पाँच अरब वर्ष पहले हुआ। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए इमेनुवल वेलीकोवोस्की ने अपनी पुस्तक (worlds in collision-1950) में लिखा है कि एक विशालकाय धूमकेतु (comet) से मंगल ग्रह की टक्कर हो गई जिसके परिणामस्वरूप शुक्रग्रह (Venus) का निर्माण हुआ। इस खोज का आधार सिद्धान्त रूप से लगभग वही था जो एतिहासिक तथा पुरातत्व अवशेषों की खोज और काल निर्धारण के सम्बन्ध में किया जाता है। परमाणु विज्ञान के विकास से इस अनुसन्धान को भी और बल मिला जिसके फलस्वरूप अनेक नई विधियों की खोज की गई। नोबेल पुरस्कार प्राप्त अमेरिकी वैज्ञानिक हेराल्ड उरे (१८९३—) ने एक मौलिक विधि की खोज की जिसका आधार आक्सीजन के सूक्ष्म रासायनिक कण (oxygen isotopes) होते हैं। इस विधि के अन्तर्गत पुरातत्व अवशेषों में आक्सीजन के रासायनिक कणों की मात्रा का निर्धारण कर उनके समय का निर्णय किया जाता है। इसप्रकार पृथ्वी के विभिन्न अवशेष तापमापक यन्त्रों (Thermameter) का कार्य करते हैं। इसीप्रकार रेडियोधर्मी तत्वों (Radioactive elements) द्वारा पृथ्वी तथा भिन्न-भिन्न वस्तुओं का काल निर्धारण किया गया है। इस सन्दर्भ में यह ध्यान रखना चाहिये कि आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार इन गुणात्मक कणों का यह संयोजन स्वचेतना में केवल घटनाचित्रों का क्रममात्र हैं। यही कारण है कि रूसी वैज्ञानिक डा० कोजीरेव के अनुसार भिन्न-भिन्न वस्तुओं में समय का अस्तित्व भिन्न-भिन्न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है, क्योंकि सांख्यदर्शन के अनुसार उन वस्तुओं में त्रिविध गुण-विकारों का सामंजस्य भी भिन्न-भिन्न होता है। इन सभी वैज्ञानिक सिद्धान्तों में मूल बात यही है कि वातावरण में विषमता से तापशक्ति के संचारण, संयोजन एवं क्रमिक परिवर्त्तन के फलस्वरूप पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों पर अनेक प्रकार के भौतिक तथा रासायनिक परिवर्त्तन हुए और जीव-जन्तु तथा वनस्पति आदि का क्रमविकास सम्भव हो सका। चूँकि इस पृथ्वी के भिन्न-भिन्न स्थलों में ताप का स्तर भिन्न-भिन्न होता है, इसलिए उन स्तरों का गुणात्मक प्रभाव भी भिन्न-भिन्न रूप से प्रकट होता है, क्योंकि सांख्यदर्शन के अनुसार उन स्तरों का अभिन्न सम्बन्ध कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत की गुणात्मक तरंगों से ही होता है। इस पृथ्वी पर भी सूर्य एवं ताराओं की भाँति उच्च तापमान कृत्रिम रूप से उत्पन्न किया जा सकता है। अभी कुछ समय पहले यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि प्रिन्स्टन विश्वविद्यालय में 'प्लाज्मा भौतिकशास्त्री' (Plasma Physicists) अपनी प्रयोगशाला में भारी हाइड्रोजन के मिश्रित रासायनिक कणों (Mixture of heavy hydrogen isotopes) को लगभग ६ करोड़ डिग्री सेन्टीग्रेड तक ताप का स्तर उत्पन्न करने में सफल हो गये हैं। यह तापमान सूर्य के आन्तरिक तापमान (Interior temperature) से तीनगुना अधिक है। लेकिन इस तापमान को स्वचालित प्रक्रिया (chain reaction) की भाँति बहुत समय तक कायम नहीं रखा जा सकता। अगर ऐसा किया जा सके तो संसार में ऊर्जा की समस्या सर्वदा के लिए हल हो जायेगी।

अमेरिकी वैज्ञानिक डा० हेराल्ड क्लेटन ऊरे के अनुसार पृथ्वी का आदिम वातावरण (Primitive atmosphere) वर्त्तमान वातावरण की तुलना में अन्तरिक्ष की परा-बैंगनी किरणों (Ultra-Violet rays) के प्रति अत्यधिक ग्रहणशील था। इस सिद्धान्त के अनुसार सूर्य द्वारा प्रसारित परा-बैंगनी किरणों की प्रतिक्रिया से पृथ्वी के वातावरण में व्याप्त जल के सूक्ष्मकण, मिथेन, अमोनिया आदि तत्वों के सूक्ष्मकणों के समिश्रण द्वारा एक भिन्न प्रकार के जटिल अणुओं (Molecules) का निर्माण हुआ। ऊरे के अनुसार प्रत्येक अणु सम्भवतः २० या ३० पृथक परमाणुओं से युक्त था जिसके फलस्वरूप 'एमिनो अम्ल' (Amino acids) बनता है। चूँकि उन अणुओं में परा-बैंगनी किरणों से प्राप्त आन्तरिक ऊर्जा विद्यमान थी, इसलिए उन अणुओं से संचित ऊर्जा द्वारा इस पृथ्वी पर अनेकप्रकार के रासायनिक परिवर्त्तन हुए और इस परिवर्त्तन के फलस्वरूप प्रोटीन, ग्लूकोज, सुक्रोज, कार्बन, नाइट्रोजन आदि विभिन्न तत्वों के मिश्रण द्वारा 'जीवद्रव्य' (Protoplasm) की सृष्टि हुई। इसप्रकार पदार्थ के इन विभिन्न तत्वों के संयोग से इस पृथ्वी पर आदिम जीव का जन्म हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रक्रिया द्वारा एक रासायनिक वृत्त (Chemical cycle) का उदय हुआ जो समय के प्रवाह में क्रमविकसित होता गया और असंख्य अणुओं के जटिल संयोग द्वारा इस पृथ्वी पर नानाप्रकार के जीव-जन्तुओं का प्रादुर्भाव हुआ। जड़ पदार्थ के अणुओं के समूह किस सीमा पर जाकर 'जीवद्रव्य' (Protoplasm) में परिवर्तित हो जाते हैं, विज्ञान के अनुसार इसका उत्तर वातावरण में व्याप्त असंख्य विषाणुओं (Viruses) द्वारा प्राप्त होता है। विषाणु एक अत्यन्त सूक्ष्म कण होता है जो प्रोटीन और न्यूक्लिक अम्ल (Protein and nucleic acid) का बना होता है। जीवशास्त्री कहते हैं कि इन सूक्ष्म वाइरसों को बोतल में भर कर यदि वर्षों तक सुरक्षित रखा जाय तो भी इनमें जीवन का कोई लक्षण प्रकट नहीं होता। दूसरे शब्दों में बोतलों में बन्द ये वाइरस केवल रासायनिक मिश्रण मात्र होते हैं। लेकिन जब इन वाइरसों को किसी जीव की कोशिकाओं (cells) में प्रविष्ट करा दिया जाय तो ये रासायनिक कण सक्रिय एवं सजीव होकर स्वतः प्रजनन (Reproduction) करने लगते हैं। इसप्रकार इनकी संख्या में वृद्धि होने लगती है जिसके फलस्वरूप सम्बद्ध कोशिका रोगग्रस्त होकर नष्ट हो जाती है। इस क्रिया द्वारा निर्जीव वाइरस सजीव कोशिका में पहुँच कर स्वयं निर्जीव से सजीव रूप ग्रहण कर लेता है। अतः इस आधार पर वैज्ञानिक इन वाइरसों को निर्जीव और सजीव के बीच का तत्व मानते हैं। लेकिन कपिल के सापेक्षवाद के अनुसार ये वाइरस भी स्वयं अपने में स्वतन्त्र रासायनिक कण नहीं हो सकते, बल्कि इन सूक्ष्म कणों से भी त्रिविध गुण-विकार युक्त चेतन पुरुष का संयोग होता है तथा कारण और कार्य शृंखला के अनुरूप ही इन कणों को भी वृत्तात्मक रेखागणित का अनुसरण करना पड़ता है। दूसरे शब्दों यह कर्म-व्यापार सार्वभौमिक मन द्वारा नियन्त्रित ढ़ंग से होता है।

इस अनुसन्धान के क्रम में सन् १९५३ ई० में डा० हेराल्ड ऊरे के सहयोगी जीवरसायनशास्त्री (Bio-chemist) स्टेनले मिलर ने एक प्रयोग आरम्भ किया जिसका उद्देश्य यह पता लगाना था कि विकिरण से युक्त आदिम वातावरण (Primitive atmosphere) में जीवन के लिए आवश्यक तत्व 'एमिनो अम्ल' Amino acids) का निर्माण सम्भव है अथवा नहीं? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मिलर ने अपनी प्रयोगशाला में ही एक कृत्रिम आदिम वातावरण तैयार किया। उस कृत्रिम वातावरण में आदिम वातावरण की भाँति चुम्बकीय तरंगों, तूफानों तथा विकिरण आदि विशेष प्राकृतिक वातावरण की व्यवस्था की गई और इन प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित हुआ कि उस कृत्रिम आदिम वातावरण में भी 'एमिनो अम्ल' (Amino acids) विद्यमान था जो जीवन के विकास के लिए आवश्यक तत्व होता है। पहले वैज्ञानिक समझते थे कि जीवन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विकास के लिए पृथ्वी जैसा वातावरण होना आवश्यक है, किन्तु अधुनातन प्रयोगों द्वारा यह स्पष्ट होता है कि जीवन के लिए पृथ्वी जैसा वातावरण होना आवश्यक नहीं है, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड के भिन्न-भिन्न वातावरण में जीवन भिन्न-भिन्न हो सकता है। मिलर की तरह डा० सीगेल ने भी अपनी प्रयोग-शाला में ही वृहस्पति ग्रह के समान कृत्रिम वातावरण उत्पन्न किया और उसी वातावरण में सूक्ष्म जीवाणुओं (Bacteria) तथा कीटाणुओं (Mites) का विकास किया। उन जीवों की खुराक तथा आवश्यकताएँ पृथ्वी के अन्य जीवों की आवश्यकताओं से भिन्न थीं। उन सूक्ष्म जीवों पर अमोनिया, मिथेन, हाइड्रोजन आदि गैसों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। ब्रिस्टल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक हिन्टन और ब्लम तथा जर्मनी के गेरहार्ड ब्राम द्वारा भी इसीप्रकार के अनेक प्रयोग किये गये जिनसे यह प्रमाणित हुआ कि अत्यधिक सर्द तथा गर्म क्षेत्रों में भी जीवन सम्भव है। इसके अतिरिक्त यह भी प्रमाणित हुआ कि जल और आक्सीजन के बिना भी जीवन का विकास हो सकता है और स्वयं हमारी पृथ्वी पर भी कुछ ऐसे जीवाणु (Anaerobic bacteria) हैं जिन्हें आक्सीजन की आवश्यकता नहीं पड़ती।

इसप्रकार के असंख्य प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ कि निर्जीव और सजीव पदार्थों के बीच कोई निश्चित सीमारेखा नहीं है। वास्तव में निर्जीव पदार्थ (Inorganic matter) ही चेतना और कारणस्वरूप गुणात्मक तरंगों के संयोग से देश-काल के आयाम में सजीव पदार्थों में परिवर्त्तित हो जाते हैं। महान भारतीय वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस ने चेतना और पदार्थ के अभिन्न संयोग को बीसवीं सदी के आरम्भ में प्रमाणित कर दिया था। यही तथ्य क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद द्वारा भी निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है। आधुनिक जीवशास्त्र को अपने वर्त्तमान यूक्लिडीयन सिद्धान्त में समुचित संशोधन करने के लिए महामुनि कपिल के सापेक्षवाद का गहन अध्ययन करना पड़ेगा। जीवशास्त्र जिन रासायनिक तत्वों की कल्पना करता है वे तत्व कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) से धनात्मक फोटोन कण तथा ऋणात्मक इलेक्ट्रान कणों की टक्कर से होकर ही कार्यस्वरूप भौतिक जगत में प्रकट होते हैं। अतः वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में भी वही निष्कर्ष आयेगा जो कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) में पहले ही सिद्ध हो चुका है। दूसरे शब्दों में सूक्ष्मजगत की तरंगें ही भौतिक-जगत के छायचित्रों के रूप में टेलीविजन की भाँति प्रदर्शित होती हैं और यह प्रदर्शन अद्भुत् इलेक्ट्रानिक यन्त्र सार्वभौमिक मन द्वारा सम्पन्न होता है। इसका कारण यह है कि प्रकृति की सभी प्रक्रियाएँ तथा जगत का सभी कर्म-व्यापार कारण और कार्य की अटूट श्रृंखला में बँधा हुआ है। अतः इस जगत में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई भी सर्वथा नवीन घटनाचित्र नहीं उपस्थित हो सकता, क्योंकि स्वयं सार्वभौमिक मन (Universal mind) भी उसी अटूट श्रृंखला में बँधा हुआ है। यही वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल के सापेक्षवाद का सारतत्व है। अगर आधुनिक जीवशास्त्री यह समझते हैं कि उनकी प्रयोगशालाओं में कोई सर्वथा नई घटना घटित होती है अथवा वे कोई नवनिर्माण करने में समर्थ हैं तो यह उनका मानसिक भ्रम है, अहंज्ञान हैं, यूक्लिड और न्यूटन के महाभूत का प्रभाव है। ऊर्जा सिद्धान्त (Conservation law) द्वारा भी यही सिद्ध होता है कि इस भौतिकजगत में केवल नाम-रूप परिवर्त्तन हो सकता है, लेकिन वह क्रिया भी कारण और कार्य श्रृंखला में सार्वभौमिक मन द्वारा ही सम्पन्न होती है।

आधुनिक जीवशास्त्र का सिद्धान्त 'क्रमविकासवाद' (Theory of Evolution) पर आधारित है। यद्यपि पदार्थ और जीव के 'क्रमविकासवाद' का सिद्धान्त हमें अरस्तू तथा अन्य दार्शनिक लेखों से भी प्राप्त होता है, किन्तु इसका वैज्ञानिक विवेचन उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में सर्वप्रथम लेमार्क (१७४४-१८२९) चार्ल्स डार्विन (१८०९-१८८२) तथा अल्फ्रेड रसेल वालेस (१८२३-१९१३) के लेखों द्वारा प्राप्त होता है। इस सम्बन्ध में लेमार्कवाद (Lamarchism), डार्विनवाद (Darwinism) तथा नव-डार्विनवाद (Neo-Darwinism) ही तीन प्रमुख वैज्ञानिक सिद्धान्त कहे जाते हैं। लेमार्क ने अपने सिद्धान्त का विस्तृत विवेचन अपनी पुस्तक (Philosophic Zoologique) में किया है जो १८०९ ई० में प्रकाशित हुई। चार्ल्स डार्विन की प्रसिद्ध पुस्तक 'जीवों की उत्पत्ति' (Origin of species) १८५९ ई० में प्रकाशित हुई और उसी समय वालेस के लेख भी प्रकाशित हुए। कुछ विचारकों ने डार्विन की पुस्तक को न्यूटन की वैज्ञानिक महत्ता के समकक्ष रखने का प्रयत्न किया है। जो कुछ भी हो इसमें सन्देह नहीं कि अपने कुछ दोषों के बावजूद इस महत्वपूर्ण पुस्तक ने विज्ञान को एक नई दिशा दी। जीव के क्रमविकासवाद (Theory of Evolution) को सिद्ध करने के लिए इस पुस्तक में तथ्यों एवं प्रमाणों का अम्बार सा लगा दिया गया है। डार्विन का कहना था कि मनुष्य के पूर्वज बन्दर थे और एक ही जीव क्रमविकसित होकर असंख्य जीवों में परिवर्त्तित हो गया तथा इसी क्रम में मन-बुद्धि एवं व्यवहार आदि गुणात्मक तत्वों का विकास हुआ। इस सिद्धान्त में कोई नई बात नहीं है। वेदान्त भी यही कहता है कि एक ही ब्रह्म से सभी कुछ उत्पन्न हुआ है। लेकिन दोनों में अन्तर यह है कि जहाँ आधुनिक जीवशास्त्र यूक्लिड की रेखागणित पर आधारित है वहीं वेदान्त और योगदर्शन कपिल के सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित पर आधारित हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि जीव पदार्थ नहीं है, बल्कि त्रिविध गुण-विकार युक्त चेतना का ही एक विशिष्ट स्तर है और वह जीव स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों जगत से सम्बद्ध हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डार्विन के विचारों पर माल्थस के नियमों का भी प्रभाव पड़ा था जिनके अनुसार अकाल, भूचाल, महामारी, बाढ़, तूफान आदि प्राकृतिक प्रकोपों द्वारा जीव का क्रमविकास नियन्त्रित होता है। डार्विन का कहना था कि स्वयं प्रकृति योग्यतम जीव को ग्रहण कर अयोग्य जीवों को तिरस्कृत कर देती है। डार्विन के अनुसार प्रकृति के प्रहारों को वही झेल पाते हैं जो शारीरिक एवं मानसिक रूप से समर्थ होते हैं और जो अयोग्य तथा असमर्थ होते हैं उन्हें स्वयं प्रकृति चुन-चुन कर अपने क्रमविकास के मार्ग से हटा देती है। दूसरे शब्दों में स्वयं प्रकृति के लिए निर्जीव तथा सजीव में कोई भेद नहीं है। उसके लिए प्रेम, दया करुणा, सत्य, अहिंसा आदि गुणात्मक भावों का कोई महत्व नहीं है। परन्तु वेदान्त कहता है कि यह भेद तो जीव के सापेक्षभ्रम द्वारा उत्पन्न होता है, क्योंकि जीव पदार्थ नहीं है, बल्कि गुणात्मक तत्वों के योग से अविनाशी चेतना अथवा आत्मा का ही एक विशिष्ट स्तर है। जब सापेक्ष भ्रम दूर होता है तभी इस परम सत्य का बोध होता है। अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में डार्विन कहता है कि स्वयं प्रकृति चुनाव कर (Natural selection) विभिन्न जीव-जातियों की उस आकृति अथवा स्वरूप को अभिव्यक्ति देती है जो प्रकृति के उस विशिष्ट वातावरण को झेलने अथवा जीवित रहने में समर्थ होते हैं। इसके विपरीत प्रकृति के इस चुनाव में जो तत्व आवश्यक तथा समयानुकूल नहीं होते वे समय के प्रवाह में प्रकृति द्वारा लुप्त कर दिये जाते हैं। जीव-जातियों और उप-जातियों के इस प्राकृतिक परिवर्त्तन में सैकड़ों-हजारों वर्ष लग सकते हैं। प्राकृतिक चुनाववाद (Natural selection) का यह सिद्धान्त दो प्रमुख तथ्यों पर आधारित हैं—पहला यह कि एक ही जाति के विभिन्न जीवों में अन्तर होता है और दूसरा यह कि उनमें अस्तित्व के लिए परस्पर संघर्ष (Struggle for existence) होता है। यह भी कोई नया सिद्धान्त नहीं है। सांख्यदर्शन कहता है कि प्रकृति के सभी नाम-रूपों में द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद की नींव वस्तुतः प्रकृति और पुरुष दो परस्पर विरोधी तत्वों के संयोग द्वारा ही पड़ जाती है और वही संघर्ष स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों जगत में परिलक्षित होता है। डार्विन के सिद्धान्त से यह स्पष्ट होता है कि सभी जीव-जन्तु तथा उनकी शाखाएँ अपने मूलरूप में एक ही थीं, किन्तु समय के प्रवाह (लाखों वर्ष) में प्राकृतिक चुनाव द्वारा एक से असंख्य हो गईं। इस नियम के अनुसार पदार्थ का जीव के रूप में यह परिवर्त्तन प्रकृति की अपनी स्वाभाविक शक्ति द्वारा सम्पन्न हुआ और क्षुद्र जीव इस क्रमविकास को रोकने में निःसहाय एवं असमर्थ था। इस सिद्धान्त को डार्विन ने 'योग्यतम की अभिव्यक्ति' (Survival of the fittest) नाम दिया जो पहले स्पेन्सर द्वारा प्रयुक्त हुआ था। इस शब्द से डार्विन का तात्पर्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सबसे बलवान जीव से नहीं था, बल्कि प्रकृति के अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने को ढ़ालने से था। डार्विन के इस सिद्धान्त का उस समय योरप में घोर विरोध किया गया और इसे बाइबिल के पवित्र उपदेशों पर प्रत्यक्ष प्रहार समझा गया। लेकिन डार्विन ने इन मुसीबतों का बड़ी धीरता से सामना किया। अनेक पूँजीपतियों तथा अधिनायकों ने इस नियम का प्रयोग गरीबों के शोषण तथा असहायों को दबाने में किया। शक्ति ही सब कुछ है (Might is right) का बोलबाला हो गया। परन्तु अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए लोगों ने डार्विन के सिद्धान्त का दुरुपयोग किया। वैज्ञानिक जगत में आज भी डार्विन के इस सिद्धान्त को बड़ा महत्व दिया जाता है।

डार्विन के पश्चात् इस विषय पर फिशर, हाल्डेन तथा सीवाल राइट आदि वैज्ञानिकों द्वारा यथेष्ट प्रकाश डाला गया और यह प्रमाणित किया गया कि प्राकृतिक चुनाव (Natural selection) ही 'क्रमविकासवादी परिवर्त्तनों' का प्रधान कारण है। सन् १९३० ई० में आर० ए० फिशर ने अपनी पुस्तक (The Genetical basis of natural selection) प्रकाशित कर वैज्ञानिक क्रमविकासवाद के सिद्धान्त को और पुष्ट आधार प्रदान किया। इसी परम्परा को हाल्डेन और सीवाल राइट ने और आगे बढ़ाया। अपनी पुस्तक में फिशर ने गणित के आधार पर न केवल यह प्रमाणित किया कि किसप्रकार 'प्राकृतिक चुनाव' छोटे-छोटे उत्परिवर्त्तनों (Mutations) तथा प्रकृति के अन्तर्गत वे सामयिक घटना-क्रम क्रमिक एवं आविरल (Continuous) रूपान्तरण कर सकते हैं, बल्कि उसने यह भी सिद्ध किया कि क्रमविकासवादी रूपान्तरण 'समिश्रित वंश-परम्परा' (Blending inheritance) के आधार पर नहीं हो सकता, जैसाकि डार्विन तथा अन्य वैज्ञानिकों ने प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है। इसके विपरीत इस रूपान्तरण के लिए एक विशिष्ट मशीनी प्रक्रिया (Mechanism) की आवश्यकता पड़ेगी। दूसरे शब्दों में प्राकृतिक चुनाव (Natural selection) द्वारा उत्परिवर्त्तन अथवा रूपान्तरण स्वतः निरपेक्ष ढंग से अथवा किसी स्वतन्त्र प्रक्रिया द्वारा नहीं हो सकता, बल्कि उसके लिए जीव में परमाणु, जीन, कोष, हृदय, मस्तिष्क, इन्द्रियाँ आदि जैविक कणों तथा एक मशीनी प्रक्रिया आवश्यक है। लेमार्कवाद के विरुद्ध फिशर ने यह भी प्रमाणित किया कि 'अर्जित गुण' (Acquired characters) जीव की इच्छा, वासना अथवा आन्तरिक प्रेरणा द्वारा क्रमविकासवादी एवं वंश-परम्परागत नियमों द्वारा संचारित होना सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त इस सिद्धान्त को आगे बढ़ाने में जार्ज गेलार्ड सिम्सन, अर्न्स्ट मायर तथा थियोडोर दोबजेन्स्की आदि वैज्ञानिकों को भी प्रमुख योगदान रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विज्ञान के अनुसार जब एक तत्व (Element) किसी दूसरे तत्व में परिवर्तित हो जाता है तो इस क्रिया को वैज्ञानिक भाषा में उत्परिवर्त्तन (Transmutation) कहते हैं। सामान्यतः किसी पदार्थ के असंख्य परमाणु अपने स्वाभाविक गुणों द्वारा अणुओं (Molecules) के छोटे-छोटे समूह बनाते रहते हैं और किसी विशिष्ट तत्व के प्रत्येक अणु में एक ही तरह के कई परमाणु होते हैं, किन्तु यौगिक या मिश्रित तत्वों में दो या अधिक किस्म के भी परमाणु होते हैं। जो पदार्थ एक ही प्रकार के परमाणुओं से बने होते हैं उन्हें मौलिक पदार्थ या रासायनिक तत्व (Elementary substance) कहते हैं। इसके विपरीत जिन पदार्थों के अणु दो या अधिक तत्वों के परमाणुओं के योग से बनते हैं उन्हें 'यौगिक पदार्थ' (Compound substance) कहते हैं। रसायनशास्त्र के नियमों के अनुसार पदार्थ के तत्वों में किसी भी परिवर्त्तन को जिसके द्वारा ठोस पदार्थ को द्रव अथवा द्रव पदार्थ को गैस में बदल दिया जाता है और इस परिवर्त्तन में उस तत्व के अणु अपने मौलिक स्वरूप में उसीप्रकार बने रहते हैं तो विज्ञान में इस परिवर्त्तन को भौतिक परिवर्त्तन (Physical change) कहते हैं। इस परिवर्त्तन में पदार्थ का बाह्य स्वरूप, रंग-रूप तथा गुण आदि बदल जाते हैं, किन्तु पदार्थ का आन्तरिक स्वरूप अथवा मौलिक अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है। उदाहरण के लिए बर्फ, जल और भाप के परस्पर परिवर्त्तन को 'भौतिक परिवर्त्तन' कहा जायेगा, क्योंकि इस प्रक्रिया में आक्सीजन और हाइड्रोजन के अणुओं का अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है जो फिर घूमकर अपने मौलिक स्वरूप में वापस आ जाते हैं। इसके विपरीत जब किसी पदार्थ के अणुओं (Molecules) का विखंडन होकर एक तत्व (Element) किसी दूसरे तत्व में परिवर्तित हो जाता है (जैसे जल के अणु, हाइड्रोजन और आक्सीजन में बदल जाते हैं) और उसे सरलता से पुनः परिवर्तित नही किया जा सकता तो विज्ञान में उस क्रिया को रासायनिक परिवर्त्तन' (Chemical Change) कहते हैं। यह एक स्थायी परिवर्त्तन होता है जिसमें पदार्थ का आन्तरिक स्वरूप एक दूसरे तत्व में परिवर्तित होकर एक सर्वथा नई वस्तु का रूप ग्रहण कर लेता है लेकिन सांख्यदर्शन कहता है कि स्थूलशरीर वस्तुतः सूक्ष्मशरीर (Astral body) अथवा स्थूल वस्तु वस्तुतः सूक्ष्मवस्तु का ही प्रतिरूप होता है और कारणस्वरूप इस सूक्ष्मशरीर (Astral body) में सामान्यतः कोई परिवर्त्तन नहीं होता, क्योंकि यह त्रिविध गुणात्मक तरंगों अथवा कारण और कार्य की श्रृंखला से बंधा हुआ है। लेकिन सांख्य यह भी कहता है कि चेतन पुरुष के बिना किसीप्रकार का कोई परिवर्त्तन सम्भव नहीं है, क्योंकि पदार्थ के विकास के लिए यह संयोग आवश्यक है।

जीवशास्त्री कहते हैं कि 'जीवद्रव्य' (Protoplasm) का एक निश्चित स्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूप होता है जिससे सभी जीवों का शरीर निर्मित होता है। यद्यपि वैज्ञानिक जगत में लगभग १०५ प्रकार के रासायनिक तत्व पाये जाते हैं, किन्तु इनमें से लगभग २० तत्व ही जीवद्रव्य के लिए आवश्यक माने जाते हैं। उदाहरण के लिए कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, केल्शियम, फास्फोरस, पोटेशियम, सल्फ़र, क्लोरीन, मेग्नीशियम, सोडियम, लौह, आयोडिन आदि प्रमुख तत्व ही 'जीवद्रव्य' के लिए आवश्यक हैं, परन्तु सांख्यदर्शन के अनुसार त्रिविध गुण-विकार (सत्व, रज, तम) ही मूल तत्व हैं और इन्हीं तत्वों के सामंजस्य से असंख्य तत्वों, शक्तियों एवं वस्तुओं का क्रमविकास होता है। लेकिन प्रकृति की यह प्रदर्शनी स्वयं उसके लिए नहीं है, बल्कि चेतन पुरुष के हितार्थ है और इस संयोग में दोनों का परस्पर लाभ निहित है। इस नियम के अनुसार आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रतिपादित विभिन्न तत्व एवं पदार्थ उस प्रदर्शनी के केवल साधन मात्र हैं अथवा कण-तरंगों के रूप में असंख्य घटनाचित्रों को प्रदर्शित करनेवाले तत्व हैं। दूसरे शब्दों में जीवद्रव्य प्रदर्शनी का साधन है, जबकि चेतनपुरुष उस प्रदर्शनी का द्रष्टा है। अगर द्रष्टा नहीं है तो प्रदर्शनी भी नहीं है, यह जगत और ब्रह्माण्ड भी नहीं है। अतः कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के समक्ष जीवशास्त्र के सभी नियम बौना सा प्रतीत होने लगते हैं, बच्चों के प्रथम पाठ सा दिखाई देने लगते हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि प्रत्येक जीव का शरीर कोष अथवा कोशिकाओं (cells) द्वारा निर्मित होता है। सन् १६६५ ई० में राबर्ट हुक ने कोशिका शब्द का प्रयोग किया था। लेकिन उन्नीसवीं सदी के दशक में दो जर्मन वैज्ञानिक मैथियस श्लीडन तथा थियोडोर श्वान ने सर्वप्रथम 'कोशिका सिद्धान्त' (cell theory) का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी जीव का शरीर एक या अनेक कोशिकाओं का बना होता है। एक कोशिकीय जीव को प्रोटोजोवा (Protozoa) और बहुकोशिकीय जीव को मेटाजोवा (Metazoa) कहते हैं। जीव की प्रत्येक कोशिका दो भागों में विभक्त होती है, जिसे साइटोसोम (cytosome) तथा नाभिक (Nucleus) कहते हैं। परमाणुओं की तरह जीव की कोशिकाओं में भी द्वन्द्वात्मक संघर्ष चलता रहता है, क्योंकि प्रकृति और पुरुष के संयोग का यही स्वाभाविक परिणाम है। अगर इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप से देखा जाय तो एक कोशिका एक बड़ी झील के समान प्रतीत होगी। विज्ञान के अनुसार इन सूक्ष्म कोशिकाओं में जीवन के सभी आवश्यक तत्व विद्यमान होते हैं। इन कोशिकाओं का कर्म-व्यापार स्वयं अपने में इतना जटिल, सुनियोजित और व्यापक होता है कि वैज्ञानिक इनकी तुलना स्वचालित कारखाना (Automatic factory) से करते हैं। जिसप्रकार विशाल कारखाने में भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए अलग-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अलग विभाग होते हैं उसीप्रकार भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए इन सूक्ष्म कोशिकाओं में भी अलग-अलग विभाग होते हैं जिन्हें सहायक अंग (organelles) कहते हैं और प्रत्येक सहायक अंग अपने विशिष्ट कार्य का विशेषज्ञ होता है। इन पृथक-पृथक विभागों अथवा सहायक अंगों द्वारा ही जीव सभीप्रकार की शारीरिक एवं मानसिक क्रियाएँ करने में समर्थ होता है। इन कोशिकाओं द्वारा ही जीव-रसायन (Life substance) समस्त शरीर में प्रवाहित होता रहता है। स्वचालित कारखाना के सदृश्य इन सूक्ष्म कोशिकाओं में सदैव प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल, चर्बी, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, लवण, जल तथा अनेक प्रकार के तेजाव मौजूद होते हैं। प्रोटीन में आधे से ज्यादा कार्बन होता है तथा शेष आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, सल्फर, फास्फोरस तथा अन्य धातुएँ होती हैं। प्रोटीन के अणु (Molecule) हजारों परमाणुओं (Atoms) द्वारा बने होते हैं और उनके अणु 'एमिनो अम्ल' (Amino acids) के मिश्रण द्वारा निर्मित होते हैं। रूसी वैज्ञानिक ए० एम्मी का कहना है (The clock of Living Nature) कि मानव शरीर में एक लाख प्रकार के प्रोटीन्स होते हैं जो केवल बीस विभिन्न प्रकार के 'एमिनो एसिड' द्वारा बनते हैं। कोशिकाओं में वर्त्तमान प्रोटीन्स का लगभग आधा भाग 'एन्जाइम' (Enzymes) होता है जो कोशिकाओं की रासायनिक प्रक्रियाओं को लाखों गुना अधिक तीव्र बना देता है। इन कोशिकाओं में एन्जाइम भी हजारों प्रकार के होते हैं और अपने भिन्न-भिन्न कार्यों के अनुसार उन्हें १९ भागों में विभक्त किया जाता है। प्रत्येक कोशिका लगभग एक लाख एन्जाइम अणुओं का समूह होती है और उनमें परस्पर सामंजस्य होता रहता है। इस प्रक्रिया में पूर्ण विखण्डन होने पर प्रोटीन्स के अणु एक विशेष प्रकार के समान अणुओं में खण्डित हो जाते हैं जिन्हें 'एमिनो अम्ल' (Amino acids) कहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रोटीन्स 'एमिनो अम्ल' का ही समिश्रण अथवा यौगिक (compound) होता है और वह अम्ल छोटी-छोटी ईकाइयों (units) द्वारा ही प्रोटीन्स अणुओं का निर्माण करता है। जीवनस्वरूप इन एन्जाइम तत्वों के अन्य सहायक तत्व भी होते हैं जिन्हें विटामिन्स तथा हारमोन्स कहते हैं। इसके अतिरिक्त मेग्नीशियम, क्लोरीन तथा अन्य तत्वों के 'विद्युत-कण' (ions) भी विद्यमान होते हैं। जिसप्रकार ताप के प्रभाव से अणुओं का विखण्डन होता रहता है उसीप्रकार शरीर के अणुओं का भी गठन और विघटन हुआ करता है।

इस रासायनिक प्रक्रिया द्वारा जीव के भौतिक अस्तित्व को ही जीवनप्रवाह अथवा वैज्ञानिक भाषा में 'मेटाबोलिज्म' (Metabolism) कहते हैं। इसके दो पहलू होते हैं—पहला 'ऐनाबोलिज्म' (Anabolism) और दूसरा 'केटाबोलिज्म' (Catabolism)। ऐनाबोलिज्म कोशिकाओं की रचनात्मक प्रक्रिया (Constru-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ctive phase) होती है जिसमें ऊर्जा द्वारा वृद्धि, विकास एवं संचय आदि शरीर की रचनात्मक क्रियाएँ होती हैं, जबकि केटाबोलिज्म एक ध्वंसात्मक प्रक्रिया (Destructive phase) होती है जिसमें अणुओं का विखण्डन होकर कर्म-व्यापार के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है। वैज्ञानिक कहते हैं कि जीव की कोशिकाओं में विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाएँ जितनी तीव्र गति से तथा नियन्त्रित ढंग से होती हैं उतनी प्रयोगशाला के परीक्षण यन्त्रों में सम्भव नहीं है। शरीर की असंख्य कोशिकाओं में अनेक रासायनिक परिवर्त्तन तत्काल अन्य कोशिकाओं से संयुक्त हो जाते हैं। विज्ञान में इस क्रिया को ए०टी०पी० (A.T.P.) और ए०डी०पी० (A.D.P.) के नाम से सम्बोधित करते हैं।

कोष-केन्द्रक (Nucleus) में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रसायन पाया जाता है जिसे 'न्यूक्लिक अम्ल' (Nucleic acids) कहते हैं। इस अम्ल के अणु प्रोटीन्स के अणुओं से भी बड़े और जटिल होते हैं। जिसप्रकार प्रोटीन्स के अणु 'एमिनो अम्ल' (Amino acids) द्वारा निर्मित होते हैं उसीप्रकार 'न्यूक्लिक अम्ल' की मूलभूत ईकाइयों को 'न्यूक्लियोटाइड्स' (Nucleotides) कहते हैं जो अनेक प्रकार के होते हैं। विज्ञान के अनुसार जीव का भौतिक अस्तित्व (Meta bolism) प्रमुख रूप से 'न्यूक्लिक अम्ल' तथा प्रोटीन्स के संयोजन पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त जीवनप्रवाह को बनाये रखने में वनस्पति का भी हाँथ होता है। शरीर में न्यूक्लिक अम्ल' द्वारा ही जटिल आनुवंशिकी प्रक्रियाओं (Hereditary processes) का निर्धारण होता है। 'न्यूक्लियोटाइड्स' नामक कणों के संगठन में पाँच आधारभूत तत्वों का क्रम, (Sequence of bases)—ऐडीनीन (Adenine—A), ग्वानीन (Guanine—G), साइटोसीन (Cytosine—C), थाइमीन (Thymine—T) तथा यूरेसिल (Uracil—U) एवं समिश्रण में ही सभीप्रकार के जीवन की उत्पत्ति का गुप्तज्ञान (Genetic code) निहित है। इस वैज्ञानिक खोज द्वारा ही आज जीवन के रहस्य का महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सका है। 'न्यूक्लिक एसिड' (Nucleic acids) के दो भाग होते हैं—RNA (ribosenucleic acid) और DNA (Deoxyribosenucleic acid)। कोशिकाओं में प्रोटीन्स के संश्लेषण (Synthesis) के लिए RNA और DNA दोनों तत्व आवश्यक होते हैं। प्रोटीन्स का निर्माण २० एमिनो एसिड द्वारा होता है तथा प्रोटीन्स के अणुओं में एमिनो एसिड का व्यवस्थित क्रम DNA के पाँच मूलभूत तत्वों (Bases) के क्रम पर निर्भर करता है। इसी प्रक्रिया को वैज्ञानिक भाषा में जीव की उत्पत्ति का रहस्य अथवा गुप्तज्ञान (Genetic code) कहते हैं। वैज्ञानिक कहते हैं कि २० एमिनो एसिड ही सभीप्रकार के जीवन का वाहक (Bearer) होते है और प्रोटीन्स के अणुओं में उनका संयोजन ही जीवन का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहस्य है। RNA में न्यूक्लियोटाइड्स नामक कड़ियों की एक शृंखला (Chain) होती है, जबकि DNA में कुण्डलीनुमा (Helical) दो कड़ियों की शृंखला होती है। विज्ञान के अनुसार DNA एक ऐसा ज्ञानकोष है जिसमें जीव-रहस्य के सभी सूत्र क्रमबद्ध रूप से लिखित हैं और उन्हीं सूत्रों के अनुसार जीव के शरीर का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त उस ज्ञानकोष में सभी आनुवंशिकी (Hereditary) नियम तथा कारक (Factors) भी लिपिबद्ध होते हैं और उसी के अनुकूल क्रमविकास होता है। DNA एक ऐसा गुप्त रहस्य है जिसमें सभी जीव-जन्तुओं के क्रमविकास का सम्पूर्ण भावी इतिहास एवं योजना अंकित है तथा इसी योजना पर मनुष्य का कर्म-व्यापार भी निर्भर है। दूसरे शब्दों में DNA जीवजगत की जन्मपत्री है जिसमें केवल प्राकृतिक तत्वों का रहस्य ही नहीं छिपा है, बल्कि कम्प्यूटर की भाँति प्रोटीन्स कड़ियों (Chains) का क्रम तथा आदि, मध्य और अन्त भी लिखित है। इसके साथ ही कोशिकाओं में DNA कड़ियों की कार्यप्रणाली का निरीक्षण एवं नियन्त्रण करने की व्यवस्था भी विद्यमान है। DNA की जटिल और गूढ़ भाषा को पढ़ने में आज वैज्ञानिक जी-जान से जुटे हुए हैं और क्रमशः इस रहस्य पर से आवरण हटता जा रहा है।

DNA की गुप्त भाषा को पढ़ने में जिन प्रसिद्ध वैज्ञानिकों को सर्वप्रथम अपूर्व सफलता प्राप्त हुई उनमें हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जेम्स डी० वाटसन तथा उनके सहयोगी वैज्ञानिक फ्रांसिस एच० सी० क्रिक तथा मारिस एच० एफ० विल्किन्स प्रमुख थे। वाटसन ने अपनी खोज का क्रमबद्ध विवरण अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The double Helix) में दिया है। इस सम्बन्ध में उनका एक लेख भी 'नेचर' (Nature) नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। इस खोज पर उन्हें तथा उनके सहयोगियों को १९६२ ई० में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। वाटसन का कहना है कि DNA अणुओं का समूह 'कुण्डलीकार सीढ़ीनुमा ढ़ाँचे' (Bizzare spiral staircase) के समान होता है और कोशिका विभाजन की प्रक्रिया में एकरूपता बनाये रखने के लिए DNA अणुओं की प्रतिमूर्ति (duplication) स्वतः निर्मित होती रहती है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत एक से दो तथा दो से असंख्य DNA अणुओं का स्वचालित निर्माण चलता रहता है। इसीप्रकार जीव में विद्यमान विशेष गुणात्मक तत्व, चरित्र एवं व्यवहार उसकी सन्तान में भी वंश-परम्परा द्वारा संचारित (Transmitted) होता है। इस विषय पर आगे चलकर प्रोफेसर कोर्नबर्ग तथा मेसेल्सन (Meselson) आदि वैज्ञानिकों ने यथेष्ट प्रकाश डाला है। इस क्रिया में केन्द्रक अथवा नाभिक (Nucleus) कोशिका की सभी प्रक्रियाओं को नियन्त्रित करती है। कोशिका का विकास तथा एन्जाइम तत्वों का परस्पर संयोजन बिना इस केन्द्रविन्दु के सम्भव नहीं है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अतः जीव के शरीर में प्रत्येक कोशिका (cell) समय के प्रवाह में दो समान जोड़ों अथवा स्वयं अपनी प्रतिलिपि (Two identical daughter cells) उतार लेने में समर्थ होती है। इस प्रक्रिया में विशेष कोशिका द्वारा शरीर के विशेष अंगों का ही विकास होता है। इसप्रकार इन कोशिकाओं में शरीर के विकास की सम्पूर्ण योजना, उसका मानचित्र, आकार-प्रकार एवं रंग, रूप आदि गुणात्मक तत्व पूर्व निश्चित (Predetermined) होते हैं। जीवशास्त्र के इस सिद्धान्त से सांख्यदर्शन का यह सिद्धान्त प्रमाणित होता है कि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत ही कार्यस्वरूप स्थूलजगत में परिवर्त्तित होता है। लेकिन वह मूल कारण स्वयं परमाणु- जीन अथवा कोशिकाओं में नहीं होता, बल्कि चेतन पुरुष का संयोग पाकर उन त्रिविध गुण-विकारों में होता है जो फोटोन तथा इलेक्ट्रान कणों के चक्कर से परमाणु, जीन तथा कोशिकाओं में आ जाता है, क्योंकि जीव के भौतिकशरीर के साथ उसका सूक्ष्म शरीर (Astral body) भी लगा हुआ है और आवागमन के चक्र का (वृत्तात्मक रेखागणित) वही मूलकारण बन जाता है। अतः यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित जीवशास्त्र का यह सिद्धान्त गलत है कि भौतिकशरीर का मानचित्र स्वयं कोशिकाओं में ही अंकित होता है। यद्यपि कोशिकाओं का कर्म-व्यापार पूर्व निश्चित होता है, लेकिन वह पूर्व-निश्चयवाद कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) से आता है और वेदान्त में इसी को कर्मविधान कहते हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि कोशिका विभाजन (Cell division) की तीन विधियाँ (Amitotic, mitotic, meiotic) होती हैं। एक कोशिकीय जन्तु (Protozoa) का शरीर दो सन्तति जन्तुओं में स्वतः विभाजित होता रहता है और बहुकोशिकीय (Metazoa) जीव में एक कोशिका, दो, चार, आठ, सोलह, बत्तीस आदि क्रमसंख्याओं में स्वतः विभाजित होती चलती है। सन् १८५८ ई० में प्रमुख वैज्ञानिक एडोल्फ विर्चाउ ने प्रमाणित किया कि शरीर में नई कोशिकाओं का निर्माण पूर्ववर्त्ती कोशिकाओं द्वारा ही होता है और कोशिका विभाजन द्वारा जीव का आकार-प्रकार, रंग-रूप एवं गुण-विकार आदि तत्व दूसरे जीवों में संचारित होते हैं। शरीर के कोष-विभाजन की प्रक्रिया में समान रूप से निर्मित, संगठित तथा कार्यरत कोशिकाओं के समूह द्वारा विभिन्न ऊतकों (Tissues) का निर्माण होता है और इसी प्रक्रिया में आगे चलकर विभिन्न ऊतकों के समूह द्वारा जीव का शरीर बनता है। इसी प्रक्रिया में 'तन्त्रिका तन्त्र' (Nervous system) का विकास होता है जिससे जीव को संवेदनात्मक अनुभूति प्राप्त होती है। नर और मादा कोशिकाओं के संयोग से जो नई कोशिकाएँ बनती हैं उन्हें विज्ञान में 'जाइगोट' (Zygote) कहते हैं और असंख्य कोशिकाओं की इस स्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चालित प्रक्रिया को 'माइटोसिस' (Mitosis) के नाम से सम्बोधित करते हैं।

वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि विद्युत्धारा का प्रवाह केवल निर्जीव पदार्थों में ही नहीं होता, बल्कि अनेक प्रकार की रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा तन्त्रिकातन्त्र एवं नाड़ियों (nervous system) के माध्यम से मानव-शरीर, जीव-जन्तु तथा वनस्पति में भी अनेक स्तरों में प्रवाहित होता रहता है। सजीव वस्तुओं में इस शक्ति का सम्बन्ध शरीर तथा केन्द्रस्थल मस्तिष्क से जुड़ा होता है जो विद्युतीय धड़कनों (Electrical Pulses) के रूप में नाड़ियों एवं तन्तुओं द्वारा एक से सौ मीटर प्रति सेकन्ड की गति से चलती हैं। एक बड़ी मछली (Electric eel) अपने शिकार को विद्युत् तरंगों का झटका देकर स्तम्भित कर देती है। उस मछली के नाक का छोर ऋणात्मक होता है तथा पूंछ का छोर धनात्मक और जब दोनों छोर मिल जाते हैं तो विद्युत् तरंगों का उदय हो जाता है। शरीर के ऊतकों (Tissues)में रासायनिक प्रक्रिया द्वारा जो दूसरी प्रतिक्रिया होती है उसे शीतलप्रकाश अथवा विकिरण (Cold Radiation) कहते हैं। रात में जुगनू (Firefly) इसी प्रक्रिया द्वारा विद्युत्-आलोक का प्रदर्शन करते हैं, क्योंकि उनके शरीर का रासायनिक तत्व वातावरण में आक्सीजन से मिलकर प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं।

कीर्लियन फोटोग्राफी द्वारा भी इस शीतल विकिरण (cold Radiation) का प्रमाण मिलता है।

अमेरिकी वैज्ञानिक आइजक एसीमोव ने अपनी पुस्तक (The Human Brain) में लिखा है कि भौतिकशास्त्री कोशिका में विद्यमान विद्युत शक्ति (electric potential) को मापने में सफल हुए हैं। यद्यपि कोशिका में विद्युत-शक्ति लगभग ०.०७ वोल्ट (७० मि० वो०) होती है, लेकिन इतनी सूक्ष्म कोशिका के लिए यह शक्ति भी आश्चर्यजनक है। एसीमोव का कहना है कि मस्तिष्क तरल पदार्थ (fluid) में तैरता रहता है जो निश्चलताशक्ति (Inertia) के प्रभाव का प्रतिरोध करता है। एसीमोव के अनुसार 'सेरेब्रल कारटेक्स' (cerebral cortex) में लगभग दस अरब (10 billion) तन्तु कोशिकाएँ (Nerve cells) होती हैं जो रासायनिक एवं विद्युतीय परिवर्त्तन करने में समर्थ होती हैं। नाड़ी-तन्त्र के माध्यम से इन्द्रियजनित संवेदनात्मक अनुभूतियाँ मस्तिष्क (eerebrum) को निरन्तर प्रेषित होती रहती हैं। अतः जाग्रत तथा निद्रा दोनों अवस्थाओं में मस्तिष्क की विद्युत-तरंगें प्रवाहित होती रहती हैं। इन तरंगों की खोज सर्वप्रथम एक अंग्रेज वैज्ञानिक (Physiologist) रिचर्ड केटन द्वारा १८७५ ई० में की गई। १९२४ ई० में आस्ट्रिया के एक वैंज्ञानिक हन्स बर्जर ने मनुष्य की खोपड़ी में विद्युत छड़ (electrodes) का प्रयोग कर मस्तिष्क में इस शक्ति का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पता लगाया। इन प्रयोगों के आधार पर एक विद्युत यन्त्र का निर्माण किया गया जिसे 'इलेक्ट्रोइनसेफ्लोग्राफी' (electroencephalography or electric brain-writing) कहते हैं। संक्षेप में इसी मशीन को EEG भी कहते हैं। मस्तिष्क की इन विद्युतीय तरंगों को मिलीवोल्ट (एक वोल्ट का हजारवाँ भाग) और माइक्रोवोल्ट (एक वोल्ट का लाखवाँ भाग) आदि स्तरों पर मापा जाता है। बर्जर ने यह पता लगाया था कि इन तरंगों की गति तथा उनमें उतार-चढ़ाव लयात्मक ढंग (Rhythmic fashion) से होता हैं और उन तरंगों की गति सरल न होकर जठिल हैं तथा अनेक प्रकार की तरंगों में मिश्रित होती है। बर्जर ने उन तरंगों में से एक प्रमुख निर्धारित (pronounced) तरंग को 'अल्फा तरंग' (alpha wave) नाम दिया जो प्रतिसेकन्ड दस वृत्त पूर्ण कर लेती है। जब जीव की आँखें बन्द हों तो इन तरगों का स्पष्ट आभास होता है। जब दृश्यजगत दिखाई देता है तो इन तरंगों की जगह दूसरी तरंगें प्रभावी हो जाती हैं। लेकिन थोड़ी देर पश्चात जब नयापन लुप्त हो जाता है तो अल्फा तरंगें पुनः प्रकट हो उठती हैं। एसीमोव के अनुसार अगर मनुष्य को लम्बे समय तक बिना इन्द्रियजनित ज्ञान (without sensory stimulation) के रखा जाय तो उसकी सोचने-समझने की शक्ति क्षीण होती हैं तथा उस मनुष्य को मतिभ्रम (Hallucinations) भी हो सकता है। सन् १९६३ ई० में प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि यदि मनुष्य को दो सप्ताह तक ऐसे वातावरण में रखा जाय जहाँ इन्द्रियजनित संवेदनायें नहीं के बराबर प्राप्त हों तो E E G मशीन पर अपेक्षाकृत छोटी अल्फा तरंगें (Smaller alpha waves) दृष्टिगोचर होंगी। अल्फा तरंगों के अतिरिक्त 'वेटा तरंगें' (beta waves) भी होती हैं जिनका वृत्त १४ से ५० प्रति सेकण्ड होता है। इनके अतिरिक्त 'डेल्टा तरंगें' (delta waves) तथा असामान्य 'थेटा तरंगें' (theta waves) भी होती हैं। एसीमोव के अनुसार E E G पर जिन तरंगों का अंकन होता है उनमें से अधिकांश तरंगों की व्यख्या करने में वैज्ञानिक अथवा चिकित्सक अभी तक असमर्थ हैं। इसका उदाहरण प्रस्तुत करते हुए एसीमोव कहते हैं कि मशीन पर उन तरंगों द्वारा किसी निष्कर्ष पर पहुँचना वैसा ही है जैसे अन्तरिक्ष से समस्त संसार के शोरगुल के बीच किसी विशिष्ट आवाज को पकड़ना। लेकिन इस सम्बन्ध में अब विशेष रूप से निर्मित कम्प्यूटर का भी प्रयोग होने लगा है जिसकी सहायता से मशीन द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है। परन्तु जब मस्तिष्क रोगग्रस्त होता है तो EEG मशीन उसका पता लगाने में सहायक होती है।

इस सन्दर्भ में एसीमोव विचारहीनता (Thoughtlessness) की अवस्था में जिस मतिभ्रम (Hallucinations) का उल्लेख करते हैं वह वस्तुतः आधार-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हीन है, क्योंकि पतंजलि-योगसूत्र के अनुसार विचार-तरंगों (Thought waves) का निरोध करना (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः) ही योग है। रामकृष्ण परमहंस तथा महर्षिरमण ने भी अपने परा-इन्द्रिय प्रयोगों (Extra sensory perception) द्वारा इसी सिद्धान्त का अनुमोदन किया है। वास्तव में इस यौगिक प्रक्रिया (Subjective process) से मानसिक भ्रम अथवा सापेक्ष भ्रम दूर होकर परम सत्य का दर्शन होता है, निरपेक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। अतः एसीमोव जिसे वास्तविक ज्ञान समझते हैं वह आर्थर एडिंगटन तथा वेदान्त के शब्दों में छायाज्ञान (Shadow knowledge) है और शुद्ध तथा निरपेक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिए एसीमोव कों गीता तथा योगसूत्र का गहन अध्ययन कर उस यौगिक प्रक्रिया (Subjective process) से गुजरना पड़ेगा। महर्षि रमण के अनुसार मस्तिष्क में ही टेलीविजन की भांति वस्तुजगत प्रतिबिम्बित (Projected) होता है। दूसरे शब्दों में वस्तुजगत के रूप में हम केवल छायाचित्रों को ही देखते हैं। अगर सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो मस्तिष्क एक अद्भुत इलेक्ट्रानिक यन्त्र के समान है और उस रजतपट पर सारा दृश्यजगत क्रमबद्ध होकर दृष्टिगोचर होता है। लेकिन मृत्यु के बाद जब यह यन्त्र नष्ट हो जाता है तो चेतनपुरुष के पास एक दूसरा सूक्ष्म यन्त्र (Astral brain) तैयार होता है और उसी यन्त्र द्वारा चेतनपुरुष सूक्ष्मलोक (Astral world) का दर्शन करता है। हमें वस्तुजगत में छायाचित्र इसलिए दिखाई देते हैं, क्योंकि चेतनपुरुष अथवा आत्मा से पदार्थ के गुणात्मक कण-तरंगों का संयोग है और उस संयोग से जो छायाचित्र सार्वभौमिक मन द्वारा निर्मित होते हैं उन्हें हम अपनी इन्द्रियों के माध्यम से देखकर भ्रमवश यथार्थ समझ लेते हैं।

मस्तिष्क की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए नाड़ीतन्त्र विशेषज्ञ (Neurologist) ग्रे वाल्टर अपनी पुस्तक (The living Brain) में कहते हैं कि मस्तिष्क की यान्त्रिक प्रणाली (Mechanism) ही मनुष्य और बन्दर के बीच अन्तर का प्रधान कारण है। अगर मानवकृत उच्च कर्मों को आत्मा की संज्ञा दी जाय तो अन्य जीव-जन्तुओं में वह प्रेरणा-श्रोत एक क्षीण प्रकाश-विन्दु है। मनुष्य के सर्वाधिक निकट जो जीव वनमानुष (Chimpanzee) है वह भी मनुष्य की समानता नहीं कर सकता, चाहे उस जीव को अभ्यास द्वारा कितना भी दक्ष क्यों न बना दिया जाय। ग्रे वाल्टर के अनुसार बन्दर तथा अन्य जीव-जन्तु अपनी भावनाओं को योजनाबद्ध ढंग से नियंन्त्रित करने की कला नहीं सीख सकते और यह कला प्राकृतिक वातावरण (Environment) को नियंन्त्रित करने के लिए आवश्यक है। इसीप्रकार शेर, चीता, गैंडा (Rhinoceros) आदि शक्तिशाली जीव-जन्तुओं में भी कल्पनाशक्ति (Imagination) का अभाव होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। चूँकि वे जीव-जन्तु प्राकृतिक वातावरण के विषय में सोच नहीं सकते, उस वातावरण को परिवर्तित करने का विचार नहीं कर सकते, इसीलिए वे जीव-जन्तु प्रकृति को नियन्त्रित करने में असमर्थ होते हैं। ग्रे वाल्टर का मत है कि मन की कल्पनाशक्ति अथवा मानस चित्र (Imagination) मनुष्य के अतिरिक्त अन्य जीव-जन्तुओं में नहीं होता है। अन्य जीव-जन्तुओं के लिए शरीर की स्वचालित प्रक्रिया का अर्थ है स्वयं अपना अस्तित्व, जबकि मनुष्य के लिए उस प्रक्रिया का अर्थ है मुक्ति। अगर वाल्टर के इस विश्लेषण को सांख्य दर्शन की भाषा में व्यक्त किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि चेतनपुरुष के हाँथ में अन्य जीव-जन्तुओं की तुलना में मानव-मस्तिष्क एक सबसे कीमती और शक्तिशाली इलेक्ट्रानिक यन्त्र है। इसी सन्दर्भ में तुलसी ने लिखा है—

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा॥

अधुनातन अनुसन्धान के आधार पर अब वैज्ञानिक इस तथ्य को मानने लगे हैं कि मानव-मस्तिष्क की कार्यप्रणाली एक अदभुत कम्प्यूटर के समान है। कम्प्यूटर का मस्तिष्क एक केन्द्रविन्दु (central core) के समान होता है जिसमें लाखों सूचना ईकाईयाँ (Information units or bits) संग्रहीत होती हैं। मानव-मस्तिष्क में भी 'स्मृति अणुओं' (molecular memory) द्वारा तन्तुओं (Nerves) के माध्यम से क्रमबद्ध सूचनायें एकत्र होती हैं। वह चेतन मस्तिष्क से होकर अवचेतन अंश में संचित होती रहती हैं। विचार तरंगों (Thought waves) से जब संवेदनाएँ उठती हैं तो मस्तिष्क का वह सम्बद्ध सुप्त ज्ञान जाग्रत हो जाता है। इसप्रकार की अरवों-खरबों सुप्त सूचनायें मस्तिष्क की कोशिकाओं में केन्द्रित होती हैं जिन्हें विचारशक्ति अथवा कल्पनाशक्ति द्वारा एक-एक कर जाग्रत किया जा सकता है। लेकिन यौगिक प्रक्रिया में जब मन पूर्णतया एकाग्र हो जाता है तो सम्पूर्ण ज्ञान एक क्षण में ही प्राप्त हो सकता है, क्योंकि उस अवस्था में स्वचेतना सार्वभौमिक मन (Universal mind) से संयुक्त हो जाती है अथवा उससे भी परे होकर समत्व बुद्धियोग प्राप्त कर लेती है। हमारे व्यक्तिगत मन अथवा मस्तिष्क की सीमा यह है कि वह एक समय में एक ही विचार अथवा वस्तु की धारणा कर सकता है, जबकि कम्प्यूटर एक समय में नानाप्रकार की लाखों समस्याओं को हल कर सकता है, क्योंकि उस यन्त्र की विद्युत् चुम्बकीय तरंगें (Electromagnetic waves) सभी सूचनाओं को एक ही समय में गतिशील बना देती हैं। अदभुत इलेक्ट्रानिक यन्त्र मानव-मस्तिष्क को भी यौगिकविधि (Subjective process) द्वारा कम्प्यूटर की भाँति जाग्रत किया जा सकता है। अगर ऐसा सम्भव हो जाय तो दुनियाँ के सभी कम्प्यूटर मिलकर मानव-मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकते। ऐसा तभी हो सकता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जबकि हम देश-काल (Space-time) से परे हो जांय। भौतिक सन्दर्भ में देश-काल से परे होने का अर्थ है प्रकाश की गति प्राप्त कर लेना अथवा बहिर्गत रूप से (Objective process) मृत्यु को प्राप्त हो जाना जहाँ समय का प्रवाह उल्टा हो जाता है।

आज विज्ञान द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि जीवजगत का कर्म-व्यापार, चरित्र एवं व्यवहार सूक्ष्मजगत की तरंगों तथा प्रतिबिम्बों पर निर्भर करता है। विश्वविख्यात रूसी वैज्ञानिक पेवलोव ने अनेक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया है कि मस्तिष्क अपने परीक्षण यन्त्रों (Analyzers) की सहायता से बाह्य एवं आन्तरिक उत्तेजनाओं (Stimuli) का प्रत्युत्तर देता है। इस खोज पर १९०४ ई० में उसे नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। इन यन्त्रों में प्रेषक और प्रापक अंग (Transmitting and Receiving) तथा केन्द्रस्थल शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए मनुष्य के दृष्टि परीक्षण यन्त्र (Optic Analyzer) में आँख का चक्षु-चित्रपट (Retina), दृष्टि शिराएँ (optic nerves) तथा केन्द्र-स्थल 'सेरेब्रल कारटेक्स' (cerebral cortex) को मिलाकर ही एक दृष्टिक्षेत्र (optic fields) बनता है। नाड़ीतन्त्र (Nervous system) के गहन अध्ययन द्वारा पेवलोव ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रत्येक नाड़ी-कोशिका (Nerve cell) निरन्तर एक सापेक्ष अवस्था (Dual state) में होती है और उस अवस्था में एक ओर निरन्तर उद्दीपन अथवा उत्तेजना (Excitation) होती रहती है तो वहीं दूसरी ओर अवरोध (Inhibition) भी बना रहता है। पेवलोव का विचार है कि इन दोनों सापेक्ष अवस्थाओं के बीच सम्भवतः एक तटस्थ अवस्था (Neutral state) भी होनी चाहिये। पेवलोव के अनुसार चूँकि हमारा जीवन पदार्थ के कण-तरंगों द्वारा निरन्तर गठन और विघटन का ही परिणाम है, इसलिए उस तटस्थ अवस्था का ज्ञान प्राप्त करना कठिन है।

अपने जीवशास्त्र के सिद्धान्त में पेवलोव जिस तटस्थ अवस्था की ओर संकेत करता है वह अपनी चेतना अथवा आत्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, क्योंकि प्रकृति की हलचल तथा द्वन्द्वात्मक संघर्ष में वह एक स्थिर, निष्क्रिय और अविनाशी तत्व है। इसीलिए वेदान्त में उसे द्रष्टा एवं साक्षी कहा गया है, क्योंकि वह पदार्थ एवं मन-बुद्धि की तरह चंचल तथा परिवर्त्तनशील नहीं है, बल्कि सर्वज्ञ, सर्वव्यापी और अनन्त है। इसी के प्रकाश से प्रकृति या पदार्थ भी प्रकाशित होता है, तरंगित होकर चैतन्य के समान प्रतीत होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। इस तटस्थ अथवा निरपेक्ष अवस्था को प्राप्त करना ही मनुष्य का परम उद्देश्य है, क्योंकि उसी प्रक्रिया (Subjective process) द्वारा प्रकृति के बन्धन अथवा जगत की सापेक्ष अवस्था से मुक्ति मिलती है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आवागमन के चक्र से छुटकारा होता है। अतः पेवलोव के इस सिद्धान्त पर भी यूक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित की स्पष्ट छाप दिखाई देती है।

पीछे कहा जा चुका है कि जीव-जन्तुओ के शरीर में जो विभिन्न ऊतक (Tissues) होते हैं उनमें भी एक दूसरे प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है जिसे विज्ञान में 'शीतल प्रकाश' अथवा 'शीतल विकिरण' (cold light or radiation) कहा जाता है। यह तथ्य रूसी वैज्ञानिक कीर्लियन के प्रयोगों द्वारा भी प्रमाणित हो चुका है जो विज्ञान में 'कीर्लियन फोटोग्राफी' के नाम से प्रसिद्ध है। इस प्रणाली की महत्वपूर्ण बात यह है कि 'उच्च विद्युतीय क्षेत्र' (High frequency electric current) में जब निर्जीव तथा सजीव वस्तुएँ आती हैं तो उनमें नानाप्रकार की बहुरंगी प्रकाश-किरणें फूट पड़ती हैं और उन प्रकाश-तरंगो का गुणात्मक स्वरूप भिन्न-भिन्न वस्तुओं में भिन्न-भिन्न रूप से प्रकट होता है। अनेक प्रकार की वस्तुओं में विद्युत-तरंगों का वह चित्रमय प्रवाह नीला, पीला, हरा, वैगनी, लाल, नारंगी, सुनहला आदि विभिन्न रंगों में मिश्रित नानाप्रकार के छायाचित्रों में प्रदर्शित होता है। उन दृश्य-तरंगों में कहीं फुलझड़ियाँ, कहीं ज्वाला, कहीं गुफाएँ, कहीं असंख्य ताराओं का जमघट तथा कहीं स्थिर ज्योति तरंगें आदि अनेकप्रकार के मनोहारी दृश्य दिखाई देते हैं। इस फोटोग्राफी की विशेषताओं पर अमेरिकी अन्वेषक शीला आस्ट्रेन्डर तथा लिन श्रोडर ने अपनी लोकप्रिय पुस्तक (Psychic Discoveries Behind the Iron curtain) में अच्छा प्रकाश डाला हैं तथा रूस एवं चेकोस्लोवाकिया में इस विषय से सम्बन्धित अनेकप्रकार के अनुसन्धानों की रूपरेखा प्रस्तुत की है। वैज्ञानिक कहते हैं कि कीर्लियन फोटोग्राफी द्वारा उन घटनाचित्रों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी अदभुत् लोक में पहुँच गये हैं जिसे शब्दों में व्यक्त करना सम्भव नहीं है। इन्हीं घटनाचित्रों को वैज्ञानिक 'शीतल आलोक' (cold luminescence) अथवा 'प्रभामण्डल' (Human Aura) कहते हैं। इस सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण वात यह है कि इन आलोक किरणों, तेजपुञ्जों अथवा प्रभामण्डलों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मनुष्य के भावनात्मक विचारों, संवेगों (Emotions) तथा अनेकप्रकार की मानसिक अवस्थाओं से है। जब भावनाओं अथवा विचारों में परिवर्त्तन होता है तो कीर्लियन फोटोग्राफी के उन तरंगों में भी परिवर्त्तन हो जाता है। दूसरे शब्दों में विचार-तरंग एवं पदार्थ-तरंगों में अभिन्न सम्बन्ध है। इससे सांख्यदर्शन का यह सिद्धान्त प्रमाणित होता है कि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की गुणात्मक तरंगें ही कार्यस्वरूप भौतिक पदार्थ की तरंगों में प्रदर्शित होती हैं और यह क्रिया वृत्तात्मक रेखागणित के अनुसार होती है। प्रसिद्ध आत्मदर्शिनी एलिन गेरेट ने भी अपनी पुस्तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Awareness) में लिखा है कि उन्हें संसार के प्रत्येक जीव-जन्तु तथा वनस्पति में एक धुंधला प्रभामण्डल (Human Aura) दिखाई देता है। इसीप्रकार एक अंग्रेज डाक्टर वाल्टर किल्नर ने भी यह दावा किया है कि शीशे पर कुछ विशेष घोल चढ़ाने पर जब मानव शरीर को देखा जाता है तो उसके चारों ओर एक प्रभामण्डल सा दिखाई देता है। इन तथ्यों से यह संकेत मिलता है कि 'कीर्लियन फोटोग्राफी' द्वारा जो अदभुत् दृश्य दिखाई देता है वह सूक्ष्मलोक (Astral world) का ही छायाचित्र है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार स्थूल और सूक्ष्म जगत अभिन्न हैं, कारण और कार्य (cause and effect) शृंखला द्वारा परस्पर जुड़े हुए हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि शरीर की कोशिकाएँ असंख्य जैविक कणों (Biological particles) में विभक्त होती हैं जिन्हें 'गुणसूत्र' (Chromosomes or DNA Molecules) कहते हैं। ये जैविक कण जीव के गुण-विकारों का वाहक होते हैं जो प्रकृति की द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया द्वारा संचारित होते हैं। जीवजगत की विभिन्न जातियों-उपजातियों के अंगों में वर्त्तमान प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्रों की एक विशिष्ट संख्या होती है और उनमें कुछ अन्तर भी पाया जाता है, किन्तु मनुष्य जाति की प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या ४६ होती है। दूसरे शब्दों में प्रत्येक कोशिका में २३ गुणसूत्रों के जोड़े होते हैं। इसीप्रकार मधुमक्खी की कोशिका में ८ जोड़े, भेड़ की कोशिका में २७ जोड़े होते हैं। गुणसूत्रों की संख्या पर जीव की बुद्धिमता निर्भर नहीं करती, क्योंकि कुछ अन्य जन्तुओं में इनकी संख्या सैकड़ों में होती है। इससे स्पष्ट है कि जीव की मानसिक क्षमता इलेक्ट्रान या परमाणु कणों पर निर्भर नहीं है, बल्कि कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) की त्रिगुणात्मक तरंगों पर निर्भर है और उन तरंगों के सामंजस्य से ही जीव का चेतन-स्तर निर्मित होता है। इसके अतिरिक्त गुणसूत्र उनसे भी अधिक सूक्ष्म जैविककणों में विभाजित होते हैं जिन्हें जीन (Genes) कहते हैं और विज्ञान के अनुसार यही जैविक कण (Biological atoms) निर्जीव तथा सजीव पदार्थों को पृथक करते हैं। दूसरे शब्दों में ये कण निर्जीव और सजीव के बीच सीमारेखा हैं। ये जैविक कण जीव के क्रमविकास तथा आनुवंशिकता (Hereditary) की मूलभूत ईकाई हैं और ये कण एक निश्चित क्रम से गुणसूत्रों (Chromosomes) में विद्यमान होते हैं। इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण वात यह है कि प्रत्येक जीव में गुणसूत्र कुछ अपवादों को छोड़कर युग्मों (Pairs) में ही मिलते हैं। मनुष्य की कोशिका में प्रत्येक गुणसूत्र तथा जीन दो समान जोड़ों के समूह में होते हैं जिसका एक जोड़ा माता से प्राप्त होता है और दूसरा पिता से। माता-पिता के संयोग द्वारा प्राप्त गुणसूत्रों के दोनों जोड़े जटिल आनुवंशिकी गुणात्मक तत्वों (Here-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ditary Properties) के वाहक (Bearer) होते हैं जो रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा एक सन्तान से दूसरे में प्रविष्ट होते रहते हैं। सांख्यदर्शन के प्रकृति और पुरुष के संयोग की भाँति जीन, गुणसूत्र तथा कोशिका स्तर पर भी हमें वही संयोग दिखाई देता है (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। यह संयोग ही बन्धन है, कर्म-व्यापार है और इससे परे हो जाना ही मुक्ति है।

कोषरूपी स्वचालित कारखाने में गुणसूत्र (Chromosomes) ही आनुवंशिक परम्परा को आगे बढ़ाते हैं और सम्पूर्ण कोशिका इस क्रिया से अछूता रहती है। इसी प्रक्रिया द्वारा कोष-केन्द्रों में नई कोशिकाओं का जन्म होता है जिससे क्रम-विकास (Evolution) आगे बढ़ता है। शरीर में कुछ ऐसी सुरक्षित कोशिकाएँ भी होती हैं जिनके गुणसूत्र 'जननप्रक्रिया' (Reproductive process) में माता-पिता की दो विभिन्न कोशिकाओं को एक होने में सहायता प्रदान करते हैं जिन्हें गैमीटिस (Gametes) या वैवाहिक कोष (Marrying cells) कहते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न संयुक्त कोशिका को जाइगोट (Zygote) कहते हैं। जीव-शास्त्र के अनुसार किसी जीव का लिंग पिता के शुक्राणु (Sperm) द्वारा निर्धारित होता है, माता के अण्डाणु (Ovum) द्वारा नहीं, क्योंकि माता के गुणसूत्र का प्रत्येक जोड़ा एक्स (x) होता है और पिता में एक्स तथा वाई (x and y) दोनों होते हैं। यही कारण है कि स्त्री और पुरुष की निषेचित क्रिया (Fertilization) में माता के एक्स तथा पिता के वाई गुणसूत्र के संयोग से लड़का पैदा होता है, जबकि माता के एक्स तथा पिता के एक्स गुणसूत्रों द्वारा लड़की पैदा होती है।

अनेक जीवशास्त्री कहते हैं कि किसी जीव-जन्तु तथा वनस्पति का गुण-विकार अथवा चरित्र वंश-परम्परा और प्राकृतिक वातावरण दोनों के संयुक्त प्रभाव द्वारा निर्मित होता हैं और जब इनमें से किसी एक में भी यथेष्ट परि-वर्त्तन होता है तो इसके परिणामस्वरूप जीव के चरित्र में भी परिवर्त्तन हो हो जाता है। आनुवंशिकी नियमों के अनुसार कोई भी मनुष्य अभ्यास द्वारा अर्जित अपनी शारीरिक एवं मानसिक योग्यता, क्षमता तथा गुण-विकारों को अपनी सन्तान में संचारित नहीं कर सकता, क्योंकि उस मनुष्य की कोशिकाओं में विद्यमान असंख्य जीन-कणों (Genes) में परिवर्त्तन लाने का कोई उपाय नहीं है। परन्तु कुछ जीवशास्त्री इस निष्कर्ष से सहमत नहीं हैं और उनके अनुसार परिवर्त्तन के लिए जीव की इच्छा-वासना, व्यवहार एवं अभ्यास ही प्रमुख कारक (Factors) होते हैं। उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में लेमार्क ने यह तर्क प्रस्तुत किया था कि प्रत्येक जीव समय के प्रवाह में परिवर्त्तित होता आया है और शरीर के विभिन्न अंगों के क्रमिक प्रयोग से उनमें वृद्धि हुई है तथा कुछ अंगों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निष्प्रयोग से वे लुप्त हो गये हैं। अतः लेमार्क के अनुसार मनुष्य द्वारा अर्जित गुण (Acquired characters) वंश-परम्परा द्वारा (By Inheritance) एक से दूसरे मनुष्य में संचारित होते हैं। यह क्रमविकासवादी सिद्धान्त सामान्यतः लेमार्कवाद (Lamarchism) के नाम से विख्यात है। रूसी वैज्ञानिक लाइसेन्को तथा माइचुरिन संशोधित लेमार्कवाद के नियमों से सहमत हैं। परन्तु कपिल के सापेक्षवाद के अनुसार जीन कणों में स्वतन्त्र रूप से कोई परिवर्त्तन हो जाना सम्भव नहीं है, क्योंकि उस परिवर्त्तन का मूलकारण त्रिगुणात्मक सूक्ष्मशरीर (Astral body) में निहित है जो कारण और कार्य श्रृंखला द्वारा बंधा हुआ है।

यह ठीक है कि वातावरण में परिवर्त्तन द्वारा शारीरिक परिवर्त्तन हो सकता है, लेकिन वह वातावरण भी सूक्ष्मजगत (Astral world) की तरंगों पर निर्भर है। दूसरे शब्दों में भौतिक जगत की सम्पूर्ण योजना एवं मानचित्र सूक्ष्मजगत में पहले ही तैयार (Predetermined) हो जाता है और उसी के अनुरूप कण-तरंगों द्वारा जीवजगत का क्रमविकास होता है। जब भौतिकजगत में कोई परिवर्त्तन होता है तो इसका अर्थ है कि वह परिवर्त्तन सूक्ष्मजगत (Astral world) से होकर हीं आता है, क्योंकि पदार्थ द्वारा निर्मित शरीर, मस्तिष्क, मन, बुद्धि, अहंकार आदि प्राकृतिक तत्व अद्वैत वेदान्त के अनुसार वास्तविक सत्ता नहीं हैं। वास्तव में जीवशास्त्र के सभी नियम यूक्लिडीयन रेखागणित पर ही आधारित हैं जो कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के नियमों के प्रतिकूल हैं। सापेक्षवाद में किसी स्वतन्त्र कण की कल्पना करना हास्यास्पद सी चीज है, क्योंकि जब तक हम किसी निरपेक्ष शक्ति (Absolute power) का दर्शन नहीं कर लेते तब तक सापेक्षभ्रम तथा अहंकार (Ego) से छुटकारा पाना सम्भव नहीं है। यही कारण है कि हमें वेदान्त और योगदर्शन के सिद्धान्तों को मानना पड़ता है; क्योंकि उनका आधार ऋषि-मुनियों की प्रत्यक्षानुभूति है। वास्तव में यूक्लिडीयन दृष्टिकोण रखने वाले वैज्ञानिक प्रकृति और पुरुष (आत्मा) अथवा पदार्थ और चेतना के रहस्य को समझ नहीं पाते, क्योंकि अहंज्ञान का यही स्वाभाविक परिणाम है। जब तक अहंकार (Ego) रहेगा तब तक परम सत्य का बोध कभी नहीं हो सकता। यही अद्वैत वेदान्त का अन्तिम निष्कर्ष है। उदाहरण के लिए सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री जुलियन हक्सले अद्वैत आश्रम के स्वामी रंगनाथनन्द से भारतीय विद्याभवन द्वारा प्रकाशित अपने पत्रव्यवहार में यह विचार व्यक्त करते हैं कि D N A अणुओं में ही जीव-रहस्य का गुप्तज्ञान निहित है, लेकिन उन्हें यह पता नहीं हैं कि उस गुप्त ज्ञान का मूलकारण क्या है। उन्हें यह भी पता नहीं है कि आत्मा के बिना प्रकृति या पदार्थ का कोई भी क्रमविकास सम्भव नहीं है। हक्सले इस स्तर के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैज्ञानिक थे जिनका यह विश्वास था कि यौगिक अनुभूति वस्तुतः एक मतिभ्रम (Hallucinations) है जो नशीली दवाओं (LSD 25) द्वारा भी प्राप्त हो सकती है।

डार्विन युग के बाद क्रमविकासवाद की नवीन व्याख्या करते हुए सर जुलियन हक्सले अपनी एक पुस्तक (Evolution after Darwin) में कहते हैं कि मनुष्य का क्रमविकास जैविक (Biological) नहीं है, बल्कि वह मनः सामाजिक (Psycho-social) है जो सांस्कृतिक परम्परा की प्रक्रिया द्वारा क्रियान्वित होता है और उस प्रक्रिया में मानसिक क्रियाओं-प्रक्रियाओं का स्वप्रजनन (Self-reproduction) तथा रूपान्तरण होता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत मानसिक शक्तियाँ प्रधान बन जाती हैं और पदार्थ का स्वरूप भी गुणप्रधान बन जाता है। इसके फलस्वरूप मनुष्य का दृष्टिकोण एवं उद्देश्य अत्यन्त व्यापक बन जाता है। अपने एक लेख में भी हक्सले जैविक विकास तथा मानसिक विकास में अन्तर मानते हैं। हक्सले का यह विचार यूनिवर्सिटी के एक क्लास लेक्चर के समान है जिसमें परस्पर विरोधी तथ्यों का समावेश है। सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में यह कैसे सम्भव है कि जैविक विकास और मानसिक विकास दोनों पृथक-पृथक हो जांय। अगर इन्हें पृथक माना जाय तो जैविककण स्वतन्त्र कण हो जायेंगे जो क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के नियमों के प्रतिकूल है। हक्सले की इस प्रक्रिया में पदार्थ और चेतना का पृथकत्व कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता और बिना परस्पर विरोधी तत्वों के कोई भी क्रमविकास (Evolution) सम्भव नहीं है। हक्सले जीव के सम्बन्ध में कभी चेतना के महत्व को नहीं समझ पाये। सापेक्षवाद के अनुसार चेतना से पृथक पदार्थ का कोई अस्तित्व ही नहीं है। दूसरे शब्दों में चेतना और गुणात्मक पदार्थ के संयोग से ही कोई क्रमविकास हो सकता है, जबकि हक्सले DNA अणुओं को ही जीव-रहस्य (Genetic code) मानते हैं। दूसरी तरफ मानसिक शक्तियों के विकास को भी प्रधानता देते हैं। जब मानसिक शक्ति प्रधान हो जायेगी तो स्वतन्त्र DNA अणु अथवा स्वतन्त्र इलेक्ट्रान या परमाणु कणों की कल्पना करना निरर्थक है जो स्वयं अपने अहंज्ञान का द्योतक है। जीवशास्त्री अपने सिद्धान्तों के प्रतिपादन में DNA अणुओं को स्वयं इलेक्ट्रान और परमाणु कणों से भी पृथक कर लेते हैं और भ्रमवश स्वयं अपने को ही कर्त्ता मान लेते हैं, जीन उत्परिवर्त्तन (Transmutation) तथा कृत्रिम जीवनिर्माण को ही सृष्टि समझ लेते हैं। इस यूक्लिडीयन दृष्टिकोण के अनुसार सबसे हास्यास्पद चीज तो यह है कि चेतना को भी पदार्थ की उत्पत्ति मान लेते हैं। वास्तव में अब समय आ गया है कि जीवशास्त्रियों को भी क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद तथा सर जेम्स जीन्स और आर्थर एडिंगटन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के सिद्धान्तों का गहन अध्ययन करना पड़ेगा और इसके पश्चात् महामुनि कपिल के अद्भुत् सापेक्षवाद का प्रथम अध्याय शुरू करना पड़ेगा। जब यह अध्याय शुरू होगा तो भौतिक जीवशास्त्र भी परा-भौतिक जीवशास्त्र में परिवर्त्तित हो जायेगा।

आधुनिक जीवशास्त्र का यह तिलस्म अनेक प्रकार के प्रयोगों, रासायनिक प्रक्रियाओं तथा भ्रामक निष्कर्षों पर आधारित है। इन भ्रामक निष्कर्षों की नींव पर ही जीवशास्त्र का तिलस्म खड़ा किया गया है। उन्नीसवीं सदी के मध्य में जान मेन्डल ने मटर की फलियों पर कुछ प्रयोग कर एक नियम बनाया जिसे 'मेन्डल का नियम' कहते हैं ऊौर इस सन्दर्भ में उन विशिष्ट कारकों (Factors) को जीन कहते हैं। इस नियम के अनुसार परिवर्त्तन दो अवस्थाओं पर निर्भर करता है—पहली अवस्था को 'प्रबल जीन' (Dominant Gene) और दूसरी अवस्था को 'सुप्त जीन' (Recessive Gene) कहते हैं। प्रबल जीन वह क्रिया है जिसका विशेष गुण-विकार दूसरे जीन के साथ युग्म (Pairs) बनाने पर प्रमुख रहेगा, जबकि इसके विपरीत सुप्त जीन वह क्रिया है जिसका विशेष गुण-विकार प्रबल जीन के साथ युग्म बनाते समय लुप्त रहेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि सापेक्षवाद का द्वन्द्वात्मक संघर्षवाद यहाँ भी लागू है (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)। इस नियम के अनुसार यद्यपि वंशानुक्रम की इस प्रक्रिया में जीन कण पृथक ईकाई के रूप में कार्य करते हैं, किन्तु सन्तान के चरित्र गठन अथवा गुणात्मक तरंगों के सामंजस्य में एक अनुशासित सेना के समान कार्य करते हैं। यह उसी प्रकार कार्य करते हैं जिसप्रकार सांख्यदर्शन के दृष्टान्त में तेल, बत्ती और अग्नि परस्पर विरोधी तत्व होते हुए भी सभी एक ही उद्देश्य की पूर्ति करते हैं और यह चमत्कार किसी प्रबल मानसिक शक्ति (महत्तत्त्व) द्वारा ही हो सकता है। अपने बाह्यस्वरूप में जीन कण किसी सूत्र में मणियों के समान गुंथे हुए (मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव) छोटे-छोटे दाने (Granules) के सदृश्य होते हैं, किन्तु भिन्न-भिन्न होते हुए भी अभिन्न होते हैं और अपनी जटिल कार्यप्रणाली द्वारा एक ही उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। जीवशास्त्र में असंख्य जीन कणों की इस स्वचालित एवं अनुशासित कार्यप्रणाली को 'जीन समिश्रण' (Gene complex) कहते हैं। इससे सांख्यदर्शन का यह सिद्धान्त स्पष्ट हो जाता है कि वस्तुतः कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत ही कार्यस्वरूप भौतिकजगत में परिवर्तित होता है।

आधुनिक जीवशास्त्री यह मानते हैं कि वस्तुतः सभी वंशानुगत परिवर्त्तन (Variations) का मूल श्रोत उत्परिर्त्तन (Mutation) में ही निहित है और इसी प्रक्रिया द्वारा जीवजगत का क्रमविकास होता है। उत्परिवर्त्तन जीन तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुणसूत्र दोनों में हो सकते हैं जो कई प्रकार के होते हैं। जीवशास्त्र के अनुसार उच्च श्रेणी के जीव-जन्तुओं में जीन कण हजारों प्रकार के होते हैं तथा उनके स्वरूप में भी कुछ भिन्नता पाई जाती है जिन्हें एलीलिज (Alleles) कहते हैं। जीन कणों में भिन्नता के फलस्वरूप जीव-जन्तुओं पर इनका प्रभाव भी भिन्न-भिन्न होता है और यह भिन्नता तथा परिवर्तन एक ही जीन के उत्परिवर्त्तन (Mutation) से होता है। इस प्रक्रिया द्वारा सभी जीव-जन्तुओं में विद्यमान सार्वभौमिक गुणात्मक तत्व 'यौनशक्ति' (Sex urge) के प्रभाव से विभिन्न जातियों-उपजातियों तथा उनकी शाखाएँ-प्रशाखाएँ प्रस्फुटित होती रहती हैं। इस सिद्धान्त से स्पष्ट है कि इस पर यूक्लिडीयन रेखागणित का प्रभाव है, जबकि सापेक्षवाद के अनुसार चेतना और समय के अभिन्न आयाम के बिना ऐसी कोई भी प्रक्रिया सम्भव नहीं है। डा० कोजीरेव ने भी अपने नियन्त्रित प्रयोगों द्वारा समय के महत्व को स्पष्ट कर दिया है। आज वैज्ञानिक जीन प्रक्रिया को एक सार्वभौमिक नियम (Universal law) मानते हैं। लेकिन इस सन्दर्भ में महत्व-पूर्ण बात यह है कि कोई भी उत्परिवर्त्तन (Mutation) जीव-जन्तुओं की कोशिकाओं में स्थित विशेष गुणसूत्रों तथा जीन कणों (जो स्वप्रजनन क्रिया में समर्थ होते हैं) द्वारा उत्प्रेरित होकर एक विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा ही सम्भव हो पाता है और उस प्रक्रिया में सभी जीन कण एक अनुशासित सेना की भाँति वंशानुक्रम (Heredity) को आगे बढ़ाते हैं। जीवशास्त्र के इसी स्वतन्त्र सिद्धान्त को क्रमविकासवाद (Theory of Evolution) कहते हैं। लेकिन इस सिद्धान्त में सापेक्षवाद के एक अभिन्न आयाम समय की कोई महत्ता नहीं है, क्योंकि जीवशास्त्री अहंकारवश स्वयं अपने को ही कर्त्ता मान लेते हैं, जो अपनी स्वाधीन इच्छा से सृष्टि करने में समर्थ हैं।

सन् १९२७ ई० में सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक जोसेफ मूलर ने मार्गन तथा ब्रिजेज आदि वैज्ञानिकों के सहयोग से अनेक प्रकार के प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित किया कि एक्स-रे (X-ray) की सूक्ष्म किरणों द्वारा शरीर के जीन कणों को प्रयोग-शाला में कृत्रिम ढंग से उत्परिवर्त्तित किया जा सकता है। विज्ञान में जीन प्रक्रिया के इस कृत्रिम उत्परिवर्त्तन को CIB विधि के नाम से जाना जाता है। इस अनुसन्धान पर मूलर को १९४६ ई० में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त यह महत्त्वपूर्ण खोजें भी हुई कि एक्स-रे के अतिरिक्त पराबैंगनी विकिरण (Ultraviolet radiation) तथा सरसों की गैस (Mustard gas) आदि भौतिक एवं रासायनिक तत्व भी उत्परिवर्त्तन में सहायक होते हैं। जोसेफ मूलर ने यह दावा किया कि प्रयोगशाला में विकिरण (Radiation) के प्रभाव से वैसा ही कृत्रिम उत्परिवर्त्तन हो सकता है जैसाकि प्रकृति द्वारा निरन्तर होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता है। इसके अतिरिक्त विकिरण की तीव्रता को बढ़ा कर प्राकृतिक उत्परिवर्त्तन को कई गुना अधिक बढ़ाया जा सकता है। इसप्रकार के अनेक प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित हुआ कि विकिरण द्वारा जीन कण उत्परिवर्त्तन की प्रक्रिया की ओर अग्रसर होते हैं और लगभग सभी कृत्रिम उत्परिवर्त्तन (Artificial mutations) हानिप्रद होते हैं, क्योंकि यह प्रकृति की स्वाभाविक प्रक्रिया द्वारा न होकर कृत्रिम ढंग से किया जाता है जिसमें जीन कणों में निहित गुण-विकारों का निर्धारण करना एक अत्यन्त जटिल कार्य है। इस प्रक्रिया में प्रबलजीन (Dominant Gene) और सुप्तजीन (Recessive Gene) के अन्तर को समझना भी कठिन है। इसके अतिरिक्त गुणात्मक जीन कणों पर विकिरण की मात्रा एवं स्तर को नियन्त्रित करना भी एक अत्यन्त जटिल कार्य है और इसमें थोड़ी सी भी असावधानी से लाभ की अपेक्षा हानि की ही अधिक सम्भावना है, क्योंकि इस प्रक्रिया से विकृत सन्तानें उत्पन्न हो सकती हैं। इसीलिए जोसेफ मूलर ने यह चेतावनी दी कि इस प्रक्रिया के दुरुपयोग से भविष्य में भयंकर परिणाम सामने आ सकते हैं। यद्यपि जोसेफ मूलर की इस सफलता से जीवविज्ञान में कृत्रिम जीव-निर्माण की आधारशिला रख दी गई, लेकिन इसी सफलता ने जीवशास्त्रियों के अहंज्ञान को भी कई गुना अधिक बढ़ा दिया। इन सफलताओं से उन्हें यह विश्वास हो गया कि अब इस जगत में ईश्वर की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन उनकी इस महत्वाकांक्षा एवं अहंज्ञान पर क्वान्टमवाद तथा सापेक्षवाद ने तुषारापात कर दिया, क्योंकि उनमें यह सन्देह उत्पन्न हो गया कि सब कुछ कृत्रिम ढंग से बनाया जा सकता है, किन्तु सम्भवतः चेतना का निर्माण कृत्रिम ढंग से नहीं हो सकता। सापेक्षवाद के अनुसार वह आश्चर्यजनक तत्व (चेतना) तो प्रकाश की गति एवं विकिरण आदि प्राकृतिक शक्तियों से भी अधिक सूक्ष्म और परे दिखाई देता हैं। यह एक तथ्य है कि अधिकांश वैज्ञानिक सापेक्षवाद के रहस्य को समझ नहीं पाते और इस सन्दर्भ में कपिल का अद्भुत सापेक्षवाद तो बहुत दूर की वस्तु है। वास्तव में इसके रहस्य को समझने के लिए वैज्ञानिकों को अहंज्ञान का चोला उतारना पड़ेगा।

यद्यपि बीसवीं सदी के मध्य से ही वैज्ञानिक कृत्रिम जीव के निर्माण में जी-जान से जुटे हुए हैं, लेकिन इसका स्पष्ट संकेत संसार को तब मिला जब १९६५ ई० में इलिनायस विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सोल स्पीगेलमैन ने एक विषाणु (Virus) को निर्दिष्ट कर उसे अलग करने में सफलता प्राप्त की। इसके पश्चात् १९६७ ई० में केलीफोर्निया में स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में कृत्रिम ढंग से जीव उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त की। DNA अणुओं के ढांचे के सम्बन्ध में वाटसन तथा उनके सहयोगियों ने जिस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था उसे आगे बढ़ाते हुए नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफेसर कोर्नबर्ग तथा उनके सहयोगियों ने Phi × 174 के जीव रहस्य (Genetic code) की गुत्थियों को सुलझाने में सफलता प्राप्त की। इन वैज्ञानिकों ने जैविक अणुओं(DNA molecules)में से एक कण(Nucleotide) को निर्मित कर लिया और कृत्रिम वाइरस (Synthetic virus) की नाभिक को दूसरे प्राकृतिक वाइरस की कोशिका से संयुक्त कर दिया। इस क्रिया द्वारा कृत्रिम वाइरस कोशिका में सक्रिय हो उठा तथा उसमें स्वप्रजनन (Self reproduction) क्रिया आरम्भ हो गई जिसके फलस्वरूप D N A अणुओं का अनुसरण करती हुई कोशिकाएँ 'एमिनो एसिड' के संयोग से लाखों प्रोटीन अणुओं को स्वतः निर्मित करने लगीं। इसप्रकार कोशिकाओं का प्रत्येक नया संयोजन पूर्वनियोजित कार्यक्रम के अनुसार एक से लाखों-करोड़ों में विभाजित होने लगा। सफलताओं के इसी क्रम में १९७० ई० में अमेरिका के विस्कान्सिन विश्वविद्यालय में नोबेल पुरस्कार विजेता भारतीय प्रोफेसर हरगोबिन्द खुराना ने प्रयोगशाला में ही कृत्रिम जीन (Gene) के निर्माण का दावा कर संसार को आश्चर्यचकित कर दिया। इस अनुसन्धान के दौरान १९७६ ई० में उन्होंने एक नया जीन कण कृत्रिम रूप से तैयार किया जो परखनली (Test tube) के अलावा जीवाणु (Bacteria) में भी सक्रिय होकर अपनी प्रतिलिपि (Duplicate) बनाने में समर्थ था। खुराना की यह खोज जीव-रहस्य (Genetic code) को अनावृत्त करने की दिशा में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम था। जीव के शरीर में जीन-समिश्रण (Gene complex) एक गुप्त ज्ञानकोष (Genetic code) हैं, जो कोषरूपी स्वचालित कारखाने में चार मूलभूत तत्वों (Nucleotides) की भाषा में अंकित है और उस गुप्त भाषा का अनुवाद २० एमिनो अम्ल (Amino acids) द्वारा किया जाता है। इस गूढ़ भाषा का वैज्ञानिक अर्थ समझने के लिए यह जानना पड़ता है कि 'न्यूक्लियोटाइड्स' की कौन सी एक शृंखला एक विशेष एमिनो अम्ल (Amino acid) को आकर्षित करती है और उस ज्ञानसूत्र को 'कोडोन' (Codon) कहते हैं जिसमें तीन न्यूक्लियोटाइड अणु भाग लेते हैं।

कृत्रिम जीव-निर्माण के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के प्रयोग किये गये। इसी क्रम में १९४० ई० में डॉ० जान रॉक ने शरीर से बाहर परखनली (Test tube) में शुक्राणु तथा अण्डाणु का संयोग कराने में सफलता प्राप्त की। इसके पश्चात् कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डॉ० लैंडम बी० शेट्ल्स ने भी इसीप्रकार का सफल प्रयोग किया। प्रयोग के दौरान शेट्ल्स ने सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा देखा कि पूरा शुक्राणु (Sperm) डिम्बाणु (ovum) में प्रविष्ट हो गया और इस निषेचित क्रिया (Fertilization) के तीस घण्टे बाद एक से दो कोशिकाएँ निर्मित हुई, पचास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

घण्टे बाद दो से चार, ६० घण्टे बाद चार से आठ और इसी क्रम से कोशिकाओं का स्वप्रजनन बढ़ता गया। इसके अतिरिक्त अमेरिकी वैज्ञानिक राबर्ट ब्रिग्स, थामस किंग तथा आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के डा० जे० बी० गर्डन ने मेढकों पर सफल प्रयोग किया था। इसीप्रकार कार्नेल विश्वविद्यालय के डा० एफ०सी० स्टीवर्ड ने गाजर पौध की कोशिकाओं को विकसित कर हूबहू उनका प्रतिरूप (Duplicate) उतारने में सफलता प्राप्त की। कृत्रिम गर्भाधान के इन सफल प्रयोगों द्वारा उपलब्ध उच्च तकनीक जीवविज्ञान के रहस्यों तथा उसके जटिल अनुसन्धान में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई। इटली के एक वैज्ञानिक डा० डेन्जिली पेट्रूसी द्वारा यह दावा किया गया कि १९६१ से १९७३ ई० के बीच इटली में लगभग ५० परखनली शिशुओं (Test tube babies) का जन्म कराया गया, लेकिन कैथोलिक चर्च की तीव्र सम्भावित प्रतिक्रिया को देखते हुए इनकी सार्वजनिक घोषणा नहीं की गई। इसीप्रकार कलकत्ता के तीन वैज्ञानिक डा० एस० के० भट्टाचार्य, डा० सुभाष मुखर्जी तथा डा० सुनीत मुखर्जी ने भी यह दावा किया है कि ३ अक्टूबर १९७८ को कलकत्ता के एक नर्सिङ्ग होम में ३१ वर्षीया श्रीमती बेला अग्रवाल को परखनली विधि द्वारा कृत्रिम ढंग से गर्भाधान कराया गया। इससे एक लड़की का जन्म हुआ जिसका नाम दुर्गा रखा गया है (अमृत बाजार पत्रिका)। लेकिन एक विशेषज्ञ समिति ने इस प्रयोग में सन्देह व्यक्त किया है और सरकारी तौर पर अभी इसकी पुष्टि नहीं की गई है।

परन्तु खोज में लगी हुई मानव बुद्धि प्रकृति के रहस्यों को कुरेद ही लेती है। चन्द्रमा पर मनुष्य के पदार्पण के बाद दूसरा सबसे बड़ा चमत्कार २५ जुलाई १९७८ को भारतीय समयानुसार सुबह ५ बजकर १७ मिनट पर ही प्रदर्शित हुआ, जबकि इंगलैंड के ओल्डहम नगर के एक अस्पताल में विश्व के प्रथम एवं प्रामाणिक 'परखनली शिशु' (Test tube baby) का जन्म हुआ। इस चमत्कार को साकार रूप देने वाले डाक्टरों का नाम है पेट्रिक स्टेप्टो और राबर्ट एडवर्ड्स तथा जिस भाग्यशाली माता की कोख से इस अद्भुत् लड़की का जन्म हुआ वह है ३२ वर्षीया लेस्ली ब्राउन जो निःसन्तान थी, क्योंकि उसकी डिम्बवाही नलिका (Fallopian tubes) पूर्णतया अवरुद्ध थी। नीली आँखों वाली उस सुन्दर-सलोनी बालिका का नाम रखा गया लुइजे ब्राउन जो सामान्य और पूर्णतया स्वस्थ है। गर्भाधान के पहले श्रीमती लेस्ली ब्राउन को विगत नवम्बर में हारमोन्स के इन्जेक्शन दिये गये और जब डिम्बाशय की कोशिकाओं में डिम्बाणु परिपक्व हो गये तो डाक्टर स्टेप्टो ने लेप्रोस्कोप नामक एक यन्त्र को डिम्बाशय तक प्रविष्ट करके उसका सूक्ष्म निरीक्षण किया और उसी से लगी हुई एक सूई द्वारा डिम्ब को बाहर निकाल लिया। इसके साथ ही परखनली (Test tube)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में स्त्री के गर्भाशय (womb) की भाँति प्राकृतिक ढंग से अनेक रासायनिक तत्वों का समिश्रण भी पहले से ही तैयार रखा हुआ था। इसप्रकार लेस्ली ब्राउन के डिम्बाणु (ovum) को उसके पति जान ब्राउन के शुक्राणु (Sperm) से निषेचित कराके तीन दिन तक तो परखनली में ही पोषित किया गया और जब भ्रूण में जीवन का संचार हो गया अर्थात् कोशिकाएँ सक्रिय हो उठीं तो चौथे दिन श्रीमती ब्राउन के गर्भाशय में भ्रूण को स्थापित कर दिया। लेस्ली ब्राउन के गर्भाशय में अनुकूल वातावरण अथवा स्वाभाविक अवस्था बनाये रखने के लिए अनेक इन्जेक्शन भी दिये गये जिससे गर्भस्राव का खतरा न हो। इस अत्यन्त जटिल और सूक्ष्म तकनीकी प्रयोग को जनहित की दृष्टि से विश्वविख्यात डाक्टरों ने तब तक गुप्त रखा था जब तक कि सफलतापूर्वक शिशु का जन्म नहीं हो गया। गुणसूत्रों (chromosomes) की वैज्ञानिक जाँच से डाक्टरों को यह भी पता चल गया था कि परखनली में पलता हुआ कृत्रिम जीव एक लड़की है।

प्रकृति के क्रमविकास में कुछ ऐसे भी असाधारण दृष्टान्त मिलते हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि यद्यपि किसी शिशु का विकास गर्भाशय के बिना भी हो सकता है, लेकिन सामान्यतः उस शिशु का ढाँचा विकृत होगा। अभी पिछले दिनों पटना जिले के फजिल्लापुर गाँव के निवासी जमादार बालेश्वर के छह वर्षीय पुत्र विनोद के पेट का आपरेशन कर डाक्टरों ने एक अविकसित शिशु को बाहर निकाल लिया है। उस मांस-पिण्ड में पैर, दाँत तथा २० से० मी० लम्बे काले बाल भी विकसित हो चुके थे। कुछ दिनों बाद विनोद की अवस्था सामान्य हो गई। इस असाधारण प्रक्रिया द्वारा जो असामान्य गुणात्मक तत्व विकसित होता है वैज्ञानिक उसे 'टेराटोमा' कहते हैं। इस प्रक्रिया में निषेचित क्रिया द्वारा दो डिम्बाणु सक्रिय हो उठते हैं जिनमें से एक शिशु में ही प्रवेश कर विकसित होने लगता है अथवा सुप्तावस्था में पड़ा रहता है। बाद में अनुकूल वातावरण प्राप्त कर विकसित होने लगता है। इसी असाधारण क्रमविकास को वैज्ञानिक 'टेराटोमा' कहते हैं। टेराटोमा का विकास शिशु के विकास के अनुरूप होता है, क्योंकि वह उसके शारीरिक अंगों का ही एक अभिन्न अंग बन जाता है, जबकि गर्भाशय का शिशु माता से पृथक एक भिन्न अस्तित्व के रूप में पलता है। लेकिन इस असाधारण दृष्टान्त पर भी युक्लिड की स्वतन्त्र रेखागणित नहीं लागू हो पाती। इसके विपरीत सापेक्षवाद के अनुसार इसका कारण भी मूलरूप से कारण और कार्य श्रृंखला से ही जुड़ा हुआ है, क्योंकि इस वृत्तात्मक रेखागणित में हम कार्य अथवा फल को कभी भी कारण से पृथक नहीं कर सकते और इसी को वेदान्त में 'कर्मविधान' कहते हैं।

वैज्ञानिक कहते हैं कि प्रत्येक सामान्य स्त्री का डिम्बाशय लाखों डिम्ब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोशिकाओं से युक्त होता है, किन्तु उसके जीवनकाल में लगभग ५०० कोशिकाएँ ही परिपक्व डिम्ब बनकर गर्भाशय में उतरती हैं। दूसरी ओर एक बार के संयोग में ही पुरुष के करोड़ों शुक्राणु निकलकर अग्रसर होते हैं और यदि प्रत्येक शुक्राणु का कृत्रिम गर्भाधान कराया जाय तो एक साथ करोड़ों बच्चे पैदा हो सकते हैं। परन्तु गर्भवाही नलिकाओं के तीक्ष्ण रासायनिक प्रभाव (गुण-विकार) से अधिकांश शुक्राणु नष्ट हो जाते हैं। प्रत्येक स्त्री में दो डिम्बाशय होते हैं जिनमें डिम्बरूपी जैविक कण पलते हैं और हर महीने इन दोनों में से एक परिपक्व डिम्ब दोनों में से किसी एक डिम्बवाही नली में चलकर पुरुष के शुक्राणुरूपी जैविक कण की प्रतीक्षा करता है। इसप्रकार डिम्ब और शुक्राणु का यह अपूर्व संयोग होता है और इस प्रक्रिया द्वारा-माता-पिता के आधे-आधे (२३ + २३) गुणसूत्रों (chromosomes) के योग (४६ गुणसूत्र) द्वारा एक सर्वथा नये जीव का सूत्रपात होता है तथा इसप्रकार वह जीव त्रिविध गुण-विकारों के प्रभाव से कारण और कार्य की शृंखला में बँधकर गीता के शब्दों में निमित्तमात्र बन जाता है। परन्तु यहाँ पर महर्षि कपिल का अद्भुत् सापेक्षवाद कहता है कि चेतन पुरुष के विना डिम्बाणु एवं शुक्राणु का यह अपूर्व संयोग हो ही नहीं सकता और आइन्स्टीन का भौतिक सापेक्षवाद भी इसी सिद्धान्त का अनुमोदन करता है। इस सन्दर्भ में हमें शुक्राणु को चेतन पुरुष तथा डिम्बाणु को प्रकृति मान लेना चाहिये और इसप्रकार प्रकृति और पुरुष के अभिन्न संयोग से प्रकृति का क्रम-विकास आगे बढ़ता है। प्रकृति और पुरुष का यह अभिन्न संयोग सांख्यदर्शन के अनुसार सूक्ष्म लोकों (Astral planes) तथा अति सूक्ष्मलोकों में भी विद्यमान होता है, क्योंकि उन देवलोकों में भी कारण और कार्य की अटूट शृंखला विद्य-होती है (यथापिण्डे तथा ब्रह्माण्डे)।

जो कुछ अण्डाणु और शुक्राणु गुणात्मक कणों में है वही प्रकृतिरूपी स्त्री और पुरुषरूपी चेतन पुरुष के भौतिक स्वरूप में है। लेकिन कपिल और आइन्स्टीन के अनुसार उस भौतिक स्वरूप का मानचित्र कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत (Astral world) से फोटोन और इलेक्ट्रान कणों के द्वन्द्वात्मक संघर्ष से होकर ही आता है, न कि पाश्चात्य देशों की तथाकथित स्वतन्त्र प्रयोगशालाओं में तैयार होता है। अगर ऐसा मानसिक भ्रम अभी भी वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में बचा रह गया है तो उसे तत्काल बाहर निकाल देना चाहिये। इस मायापुरी के तिलस्म में भ्रमण करते हुए जिज्ञासुओं में भी मोहवश यदि यह सापेक्षभ्रम उत्पन्न हो गया हो तो उन्हें भी वेदमन्त्र (अहम् ब्रह्मास्मि) का जाप अवश्य कर लेना चाहिये और इस क्रिया से उनमें शुद्ध ज्ञान का तेज स्वतः प्रवाहित होने लगेगा।

डा० स्टेप्टो तथा एडवर्ड्स की इस अद्भुत् सफलता पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए ब्रिटिश मेडिकल एसोसिएशन के एक प्रवक्ता ने कहा कि यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधुनिक विज्ञान का एक चमत्कार है। लेकिन यह प्रतिक्रिया वैज्ञानिकों के अहंकार के सिवाय और कुछ नहीं है। दूसरी ओर रोमन कैथोलिक चर्च ने अपना विचार व्यक्त किया कि यह क्रिया ईश्वर की रचना में हस्तक्षेप है। परन्तु जबकि स्वयं डा० स्टेप्टो, उनकी परखनली तथा उनका लेप्रोस्कोप वेदान्त एवं एडिगंटन के शब्दों में छायाचित्र हैं, परम चेतनशक्ति के हाथों केवल निमित्तमात्र हैं, तो कैथोलिक चर्च की यह प्रतिक्रिया कुछ समझ में नहीं आती कि यह चमत्कार ईश्वर की रचना में हस्तक्षेप कैसे है? स्वयं ईसा मसीह ने भी अपने को उसी सर्वशक्तिमान ईश्वर का पुत्र घोषित किया तथा प्रकृति और पुरुष के संयोग से क्रमविकसित उसी वैज्ञानिक परम्परा को अरस्तू, न्यूटन, डार्विन, वाटसन तथा स्टेप्टो भी आगे बढ़ाते आ रहे हैं। इस अटूट प्रक्रिया में अगर कोई महापुरुष अहंकारवश अपने को सर्वथा पृथक और स्वाधीन समझ लेता है तो वेदान्त और योगदर्शन के शब्दों में इसी मानसिक भाव को सापेक्षभ्रम कहते हैं, माया कहते हैं। अगर ईश्वर को सर्वशक्तिमान कर्त्ता माना जाता है तो हमें यह भी मानना पड़ेगा कि आधुनिक विज्ञान के रूप में हस्तक्षेप भी वही कर सकता है। सम्पूर्ण प्रक्रिया में बीच का कोई और रास्ता नहीं है।

कुछ लोगों का कहना है यह तकनीक बाँझ स्त्रियों के लिए वरदान सिद्ध होगी। लेकिन लगभग सभी वैज्ञानिकों का यह विचार है कि यह क्रिया इतनी जटिल और खतरनाक है कि सामान्यतः इसका प्रयोग नहीं हो सकता। कुछ लोगों का कहना है कि इस प्रक्रिया से मानव समाज का मशीनीकरण हो जायेगा जिसके फलस्वरूप मानव जीवन में गुणात्मक तत्वों का लोप हो जायेगा, संस्कृति का ह्रास होगा तथा इस क्रिया से अनेक प्रकार की कानूनी उलझनें एवं सामाजिक विकृतियाँ उत्पन्न होंगी। लोग अपना प्रतिरूप (Cloaning) उतरवाने की ओर प्रोत्साहित होंगे। 'क्लोनिंग' (Cloaning) वह वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति की एक कोशिका (Cell) से उस व्यक्ति का हूबहू प्रतिरूप अथवा प्रतिकृति (Duplicate) अपने सभी गुण-विकारों के साथ हजारों की संख्या में उतारा जा सकता है, मानो गुलाब की हजारों कलमें लगाई जा रही हों। एक अमेरिकी पत्रकार लेखक डेविड रोर्विक ने अपनी पुस्तक (In his image) में यह दावा किया है कि एक अमेरिकी करोड़पति ने अपना 'क्लोन' (Cloan) तैयार करवाया है। लेकिन प्रामाणिक रूप से अभी इसकी पुष्टि नहीं हुई है। परन्तु विज्ञान की इस अपूर्व सफलता से बहुत से लोग चिन्तित हैं कि इस वैज्ञानिक जगत का भविष्य क्या होगा? पता नहीं लोग सारे संसार की चिन्ता को अपने सर क्यों उठा लेते हैं। इस सम्बन्ध में चिन्ता करने वाला तो कोई और है, किन्तु अहंकारवश हम अपने को ही क़र्त्ता मान लेते हैं। ऐसे लोगों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को गीता का यह श्लोक ध्यान में रखना चाहिए—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥

तुलसीदास ने भी कह दिया है—

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा॥
उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत राम गोसाईं॥
होइहि सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढ़ावै साखा॥
सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ॥

अद्वैतवादी सन्त कबीर ने भी ऐसा ही कहा है—

कीया कछू न होत है, अनकीया सब होइ।
जौं कीएँ ही होत है, तौ करता औरे कोइ॥
माया दीपक नर पतंग, भ्रमि-भ्रमि माँहि पड़ंत।
कहै कबीर गुर ग्यांन तैं, एक आध उबरंत॥

यद्यपि कृत्रिम जीव-निर्माण की सामाजिक उपयोगिता पर अभी वैज्ञानिक एक मत नहीं हो पाये हैं, तो भी अनेक वैज्ञानिकों एवं विचारकों ने स्वर्णिम भविष्य का चित्रण प्रस्तुत किया है। कुछ वर्षों पहले अमेरिका के नोबेल पुरस्कार विजेता डा० जेम्स डी० वाटसन ने कहा था कि अगर हम बालहत्या का खतरा उठाने को तैयार हैं तो इसप्रकार की योजना को कार्यरूप दे सकते हैं। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के नोबेल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक डा० मैक्स पेरुट्ज का कहना है कि मनुष्य की प्रत्येक कोशिका में ४६ गुणसूत्र होते हैं और उन गुणसूत्रों (Chromosomes) में लगभग १० करोड़ जीनसमूह (Nucleotide bases) अपने जोड़ों (Pairs) के साथ फैले हुए हैं। इनकी विशाल संख्या को देखते हुए किसी विशेष गुणसूत्र से अनेक प्रकार के गुण-विकारों से युक्त उन असंख्य जीन-समूहों में से किसी एक जीन कण को हटाना-बढ़ाना तथा क्रमिक रूप से नियन्त्रित करना अत्यन्त कठिन कार्य है। उनके विचार से इस क्रिया में बहुत बड़ा जोखिम है, क्योंकि इस तकनीक द्वारा यदि कोई असामान्य बच्चा उत्पन्न हुआ तो उसका शेष जीवन विकृत और दुःखदायी हो जायेगा। जार्ज रेट्रें टेलर ने अपनी पुस्तक (The Biological Time Bomb) में पेरुट्ज के इन विचारों को उद्धृत किया है। इसी पुस्तक के अनुसार एक दूसरे नोबेल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक प्रोफेसर मार्शल नीरेनबर्ग का कहना है कि प्रश्न केवल समय का है और निकट भविष्य में हम इस समस्या पर विजय प्राप्त कर लेंगे। केलीफोर्निया के स्टेन-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फोर्ड विश्वविद्यालय में जीनशास्त्र (Genetics) के प्रोफेसर जोसुआ लीडरबर्ग को यह पूर्ण विश्वास है कि विज्ञान अगले १०-१५ वर्षों में आनुवंशिकी रहस्यों का ज्ञान प्राप्त कर व्यवहारिक जीवन में सफलतापूर्वक उस ज्ञान का प्रयोग कर सकेगा।

इसीप्रकार एक अन्य पुस्तक (You will live to see it) में न्यूयार्क महानगर के हडसन संस्थान के संचालक हरमन कान तथा उनके सहयोगी एन्थोनी जी० वीनर का विचार है कि जीव-रहस्य (Genetic code) की मीमांसा द्वारा निकट भविष्य में अद्भुत फल प्राप्त होने वाले हैं। इन वैज्ञानिकों के अनुसार अगले कुछ वर्षों में यह सम्भव हो जायेगा कि कोई स्त्री बाजार में जाकर रासायनिक दवाओं का एक ऐसा पैंकेट खरीद लायेगी जिसके प्रयोग से वह अपना मन-पसन्द बच्चा उत्पन्न करने में समर्थ होगी और उस पैंकेट पर छपे निर्देशों (Directions) के द्वारा वह यह भी जान सकेगी कि उस कृत्रिम बच्चे का रंग-रूप, आकार-प्रकार, नाक-नक्श तथा शरीर के विभिन्न अंगों की बनावट कैसी होगी। इसके अतिरिक्त उस निर्देश-पत्र पर गारण्टी के रूप में यह पूर्व आश्वासन भी लिखा होगा कि उसका बच्चा अपने पैतृक विकारों तथा रोग-व्याधि आदि चिन्ताओं से सर्वथा मुक्त होगा। यह मानव जीवन के भावी इतिहास का एक रोचक प्रसंग है जो आज वैज्ञानिक बड़े विश्वासपूर्वक प्रस्तुत कर रहे हैं और इस ज्ञान-रहस्य की कुंजी DNA के उस कोष में है जिसका पूर्ण अनुवाद एवं स्पष्ट व्याख्या अब वैज्ञानिकों के लिए असम्भव नहीं रह गया है। लेकिन सापेक्षवाद के अनुसार जो गुप्त ज्ञानकोष (Genetic code) DNA में है वही ज्ञानकोष परमाणु, इलेक्ट्रान, फोटोन कणों तथा तरंगमय सूक्ष्मजगत में भी है (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे), क्योंकि कारण और कार्य अभिन्न हैं। अगर कारण-स्वरूप फोटोनकणों तथा कार्यस्वरूप इलेक्ट्रान कणों के बीच आकर्षण एवं विकर्षण नियमों के अनुसार टक्कर न हो, द्वन्द्वात्मक संघर्ष न हो तो वह गुप्त ज्ञान-कोष DNA में किसप्रकार संचित हो सकता है? दूसरे शब्दों में कारण के बिना कार्य कैसे हो सकता है? इससे स्पष्ट है कि आज भी जीवशास्त्र के सभी नियमों पर यूक्लिड और न्यूटन का महाभूत सवार है जो अहंज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अगर आज भौतिकविज्ञान को किसी नये ढाँचे तथा नवीन रेखागणित की आवश्यकता है तो आधुनिक जीवशास्त्र के लिए भी वही ढाँचा तथा वही रेखागणित आवश्यक है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार जीवशास्त्र एवं भौतिकविज्ञान भी अभिन्न हैं, परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। जीवशास्त्र कभी भी भौतिकविज्ञान से पृथक् और स्वतन्त्र नहीं हो सकता।

परन्तु आज कुछ ऐसे भी अन्वेषक हैं जिनकी यह मान्यता है कि प्राचीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

काल में अन्तरिक्ष से अन्य ग्रहों के बुद्धिमान एवं विकसित प्राणियों का आगमन इस पृथ्वी पर हुआ और उन्हीं द्वारा मानव सभ्यता की नींव रखी गई। उन्हीं विचारकों में एक स्विस अन्वेषक एरिक वान डेनिकेन का नाम भी आता है। इस सम्बन्ध में डेनिकेन ने अनेक पुस्तकें लिखी हैं और संसार के विभिन्न देशों में भ्रमण कर प्राचीन कला-कृतियाँ, पुरातत्व अवशेषों तथा गुफाचित्रों आदि का गहन अध्ययन कर अनेक प्रकार के सूत्रों का संकलन किया है और उनका सचित्र तथा प्रामाणिक विवरण अपनी पुस्तकों (Chariots of the Gods ? 1961 and In search of Ancient Gods–1973) में प्रस्तुत किया है। इसी विषय पर अपना विचार व्यक्त करते हुए डेनिकेन अपनी एक दूसरी पुस्तक (Return to the stars) में कहते हैं कि अपने इस विचार में मैं अकेला नहीं हूँ, वल्कि आज पूर्व और पश्चिमी देशों में अनेक वैज्ञानिक भी इस सिद्धान्त को गम्भीरतापूर्वक ले रहे हैं। उदाहरण के लिए प्रोफेसर चार्ल्स हैपगुड (जो आइन्स्टीन के मित्र थे) का कहना है कि आइन्स्टीन भी इसप्रकार के विचारों से पूर्ण सहानुभूति रखते थे। रूसी परा-भौतिकशास्त्री एवं खगोलशास्त्री जोसेफ सेम्युलोविच शखलोवस्की ने डेनिकेन को एक बार आश्वस्त किया था कि अन्तरिक्ष से बुद्धिमान प्राणी इस पृथ्वी पर कम से कम एक बार अवश्य आये थे। प्रख्यात अमेरिकी अन्तरिक्ष जीवशास्त्री (Space Biologist) कार्ल सैगन के अनुसार भी अन्य ग्रहों के सभ्य लोग कम से कम एक बार इस पृथ्वी पर आये। अपनी पुस्तक (The cosmic connection) में कार्ल सैगन का कहना है कि पृथ्वी से परे जीव (Extra-terrestrial life) के सम्बन्ध में सन् १९७१ ई० में रूस के आर्मेनिया प्रदेश में रूसी एवं अमेरिकी वैज्ञानिकों की एक संयुक्त बैठक हुई जिसमें सैगन अमेरिकी प्रतिनिधिमण्डल के अध्यक्ष थे। इस बैठक में विज्ञान की अनेक शाखाओं के पण्डित विद्यमान थे। इस सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया कि अन्य ग्रहों पर विकसित सभ्यताओं की सम्भावनायें अत्यधिक हैं और हमारा वर्त्तमान तकनीकी ज्ञान उनसे सम्पर्क स्थापित करने में समर्थ है। लेकिन इस दिशा में गम्भीर अनुसन्धान की आवश्यकता है। कार्ल सैगन की दृष्टि में अब इस खोज का उपयुक्त समय आ चुका है। डेनिकेन के अनुसार राकेट विज्ञान के संस्थापक प्रोफेसर हरमन ओबर्थ का विचार है कि पृथ्वी परे भिन्न लोक के मनुष्यों का पदार्पण इस पृथ्वी पर हुआ। सुप्रसिद्ध अंग्रेज जीनशास्त्री फ्रांसिस हेरी क्रिक जिन्हें १९६२ ई० में अपने अनुसन्धान (Chemical bases of Heredity—DNA) पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ, का कहना है कि इस पृथ्वी पर जीवन का विकास पृथ्वी से परे ब्रह्माण्डीय जीनकणों द्वारा सक्रिय हुआ। लेकिन इस पृथ्वी पर अन्य जीव-जन्तुओं से पृथक मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानसिक क्षमता असीम है और वैज्ञानिक इसका प्रधान कारण मानव मस्तिष्क को देते हैं। अमेरिका में पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय के शरीरविज्ञानशास्त्री (Anthropologist) प्रोफेसर लोरेन एसली का विचार है कि यद्यपि मनुष्य जाति को इस पृथ्वी पर अन्य जीव-जन्तुओं से क्रमशः पृथक होने में लाखों वर्ष लग गये, लेकिन यह एक अपवाद है कि मानव शरीर के अन्य अंगों की तुलना में उसके मस्तिष्क का विकास अत्यन्त तीव्र गति से हुआ। डेनिकेन ने अपनी एक अन्य पुस्तक (Miracles of the Gods) में रविवार ५ मई १९७४ को सुप्रसिद्ध अमेरिकी भविष्यवक्ता जीन डिक्सन से वाशिंगटन में अपने एक साक्षात-कार का उल्लेख किया है। जीन डिक्सन कहती हैं कि उड़न तश्तरियों (UFos) के बारे में उन्हें बचपन से ही ज्ञात है जो सूर्यमण्डल के एक अज्ञात ग्रह से आती हैं। वह ग्रह वृहस्पति के आसपास है जिसका पता विज्ञान को जल्द लग जायेगा। डिक्सन के अनुसार इन उड़न तश्तरियों (Flying Saucers) को स्त्रियाँ चलाती हैं जिनका कम्पन (Vibrations) उन्हें महसूस होता है। सन् १९६७ ई० में यू० एफ० ओ० अनुसन्धानकर्त्ताओं की सातवीं अन्तर्राष्ट्रीय बैठक के अवसर पर अन्तरिक्षविज्ञान के विशेषज्ञ प्रोफेसर हरमन ओबर्थ का कहना था कि अज्ञात उड़न-वस्तुएँ विज्ञान के लिए एक पहेली हैं और ओबर्थ के विचार से उड़न तश्तरियाँ सम्भवतः दूसरे लोक के अन्तरिक्ष यान हैं। अब रूस में भी इस विषय को गम्भीरतापूर्वक लिया जा रहा है। जार्ज एडमस्की मानते थे कि उड़न तश्तरियाँ अन्तरिक्ष यान हैं और इनमें बैठ कर अन्य ग्रहों के बुद्धिमान प्राणी पृथ्वी पर आते हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक (Flying Saucers have landed) में नवम्बर १९५२ में केलीफोर्निया में एक ऐसे आदमी से अपनी मुलाकात का वर्णन किया है जो उड़न तश्तरी में बैठ कर शुक्रलोक से आया था और उसने संकेतों के माध्यम से बात की। एक पुस्तक (Flying Saucer from Mars) के अनुसार सेडरिक अलिंगहम ने भी स्काटलैंड में एक ऐसे व्यक्ति से (फरवरी १९५४ ई०) भेंट का जिक्र किया है जो मंगल ग्रह से आया था और उसने एक सन्देश भी दिया था जिसका चित्र इस पुस्तक में छपा है। हार्वड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा० जार्ज वाल्ड के अनुसार हमारी आकाश-गंगा में ऐसे एक अरब और लोक हैं जहाँ प्राणियों का अस्तित्व सम्भव है। अन्तरिक्ष यान से सम्बन्धित एक अन्य वैज्ञानिक डा० ओवन का भी ऐसा ही मत है। अमेरिका के मेरीलैंड विश्वविद्यालय के रसायनशास्त्री पोन्ने-म्परूमा का भी ऐसा ही मत है। उड़न तश्तरियों का सम्बन्ध बरमूडा त्रिकोण (Bermuda Triangle) की घटनाओं से भी जोड़ा जाता है। इस सम्बन्ध में अमेरिका के चार्ल्स बर्लिट्ज ने अपनी पुस्तक (Bermuda Triangle)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में उन विचित्र घटनाओं का विशद विवेचन किया है। इस पुस्तक तथा कई अन्य पुस्तकों के अनुसार बरमूडा के पास एक ऐसा समुद्री त्रिकोण है जिसके आसपास पिछले तीस वर्षों से लगभग सौ से ऊपर वायुयान तथा समुद्री जहाज लुप्त हो चुके हैं तथा एक हजार से ज्यादा लोग गायब हो चुके हैं, किन्तु व्यापक सरकारी खोज के बावजूद आजतक उनका कोई चिह्न नहीं मिल सका। कुछ लोगों का विश्वास है कि अन्य ग्रहों के विकसित प्राणी भूलोक पर आते हैं और चुम्बकीय क्षेत्र (Magnetic field) बनाकर अथवा समय के आयाम (Dimension) को लुप्त कर पृथ्वी के मनुष्यों तथा जहाजों को किसी अज्ञात लोक में अपहरण कर ले जाते हैं।

इस पृथ्वी पर देवताओं के आगमन के सम्बन्ध में अन्य विचारकों ने भी अनुसन्धान किया हैं। उन्हीं विचारकों में प्रमुख रूसी अन्वेषक निकोलाई रोयरिख (१८७४–१९४७) का नाम भी आता है जो अपनी अनेक पुस्तकों (Heart of Asia; Himalyas, Abode of Light etc.) मे इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है कि हिमालय के उच्च शिखरों पर देवताओं का वास है तथा वह केन्द्र आध्यात्मिक ज्ञान का भण्डार है। प्रसिद्ध रूसी आत्मदर्शिनी मैडम ब्लेवाट्स्की ने भी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (The Secret Doctrine) में इसीप्रकार के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया हैं। लेकिन यह कोई नया सिद्धान्त नहीं है। इसप्रकार के असंख्य उदाहरण हमें रामायण, महाभारत तथा पौराणिक ग्रन्थों में मिलते हैं जबकि देवताओं का आगमन इस पृथ्वी पर अनेकों वार हुआ है, क्योंकि वे अपने सूक्ष्मशरीर (Astral body) को स्थूलशरीर (Physical body) में परिवर्तित कर लेने की विद्या में प्रवीण होते हैं। देवता तथा राक्षस दोनों अपना मायावी रूप ग्रहण करने में समर्थ होते हैं। आखिर हम सभी परमपिता ईश्वर की ही सन्तान हैं, चाहे वह ईश्वर राम के रूप में प्रकट हुआ अथवा रावण के रूप में। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि देवताओं के आगमन से ही इस पृथ्वी पर जीन कणों का उत्परिवर्त्तन (Transmutation) हो सकता है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार सूक्ष्म और स्थूलजगत की यह प्रक्रिया कारण और कार्य शृंखला से जुड़ी हुई है जिसका एक अभिन्न अंग सूक्ष्मशरीर (Astral body) होता है। अतः इस सन्दर्भ में विज्ञान का क्रमविकासवादी सिद्धान्त तथा अनेक प्रकार की महत्वपूर्ण खोजों को गलत नहीं कहा जा सकता, किन्तु वह सिद्धान्त अहंज्ञान पर आधारित होकर एक स्वतन्त्र सिद्धान्त बन गया है जो सापेक्षवाद के नियमों के प्रतिकूल है।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं सदी के आरम्भ में वैज्ञानिक जगत में जो अनेक बड़े धमाके हुए उनमें क्वान्टमवाद और सापेक्षवाद के अतिरिक्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक ऐसा धमाका भी था जो महान भारतीय वैज्ञानिक सर जगदीशचन्द्र बोस (१८५८–१९३७) द्वारा योरप में किया गया। अपने प्रयोगों द्वारा बोस ने यह सिद्ध कर दिया कि चेतना का संयोग पदार्थ के कण-कण से है तथा निर्जीव और सजीव पदार्थों के बीच वस्तुतः कोई सीमारेखा नहीं है। दूसरे शब्दों में बाह्य रूप से जो हमें जड़ दिखाई देता है वह आन्तरिक रूप से पूर्णतया चेतन है। यद्यपि इन्द्रियों द्वारा पदार्थ हमें जड़ दिखाई देता है, लेकिन इन्द्रियों से परे वह पूर्णतया चैतन्य है—वेदान्त का यह सिद्धान्त बोस द्वारा प्रमाणित हो गया। सन् १९०० ई० में पेरिस के अन्तर्राष्ट्रीय भौतिकी कांग्रेस में उन्हें सादर आमन्त्रित किया गया और उस कांग्रेस में उनके द्वारा जो शोधपत्र पढ़ा गया उसका शीर्षक इसप्रकार था—"निर्जीव और सजीव पदार्थों के प्रत्युत्तर में समानता" (on the similarity of responses in Inorganic and Living matter)। बोस का यह सिद्धान्त भौतिकवादी विचारधारा पर एक प्रत्यक्ष प्रहार था। इस सिद्धान्त से यह प्रमाणित होता है कि चेतना से ही पदार्थ प्रतिभासित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। अपना पत्र पढ़ते हुए बोस ने अन्त में कहा कि निर्जीव और सजीव पदार्थों के बीच कोई सीमारेखा खींचना कठिन है, क्योंकि हम यह नहीं कह सकते कि अमुक सीमा पर भौतिक प्रक्रिया समाप्त होती है और उसी सीमा से जैविक प्रक्रिया शुरु होती है। दूसरे शब्दों में निर्जीव और सजीव वस्तुतः एक ही तत्व हैं जो परस्पर एक में ही (प्रकृति और पुरुष) गुंथे हुए हैं (मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव)। बोस ने इस तथ्य पर जोर दिया कि हमें प्रकृति की भिन्नता में मूलभूत एकता का दर्शन होता है। पेरिस की उस सभा में उस समय स्वामी विवेकानन्द भी मौजूद थे जो बोस के इस आविष्कार से अत्यन्त प्रभावित हुए। वह वैज्ञानिक सभा इस घोषणा से आश्चर्यचकित रह गई। उस कांग्रेस के सचिव ने तो यहाँ तक कहा कि मैं इस शोधपत्र से स्तब्ध रह गया हूँ।

अपने इस आविष्कार से उत्साहित होकर बोस ने पौधों तथा धातुओं पर अनेक प्रकार के प्रयोग किये जिनसे यह ज्ञात हुआ कि पौधे, जन्तु एवं विभिन्न धातुओं के सूक्ष्म तन्तु (Tissues) एक ही प्रकार का प्रत्युत्तर देते हैं और जब पौधों एवं जन्तुओं को हल्का क्लोरोफार्म दिया जाता है तो उनके तन्तुओं से वह प्रत्युत्तर गायब हो जाता है। बोस ने विभिन्न धातुओं पर भी यही प्रयोग किया और जब धातुओं पर विभिन्न रासायनिक द्रव छिड़के जाते थे तो उनमें भी यही प्रत्युत्तर प्राप्त होता था। बोस के जीवनीकार शचीन्द्रनाथ बसु के अनुसार १० मई १९०१ ई० में रायल सोसाइटी की एक सभा को सम्बोधित करते हुए बोस ने कहा, "मैंने आपके समक्ष यह प्रस्तुत किया कि किसप्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्जीव और सजीव पदार्थों की संवेदनात्मक अनुभूतियों में एक समानता है। हम देखते हैं कि निर्जीव और सजीव दोनों पदार्थों में थकान (Fatigue) के क्षणों में वह प्रत्युत्तर (Response) डूबने सा लगता है और उत्तेजक द्रवों के प्रभाव से वह प्रत्युत्तर बढ़ जाता है तथा विष का प्रयोग करने से वह प्रत्युत्तर नष्ट हो जाता है। ऐसी स्थिति में हम यह कैसे निर्णय कर सकते हैं कि किसी पदार्थ में निर्जीव की सीमा कहाँ समाप्त होती है और सजीव की सीमा कहाँ से शुरू होती है, क्योंकि सम्पूर्ण प्रक्रिया एक में ही जुड़ी हुई है। वास्तव में निर्जीव और सजीव के बीच ऐसी कोई निरपेक्ष सीमारेखा है ही नहीं। क्या इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि पदार्थ की भौतिक और रासायनिक प्रक्रियाओं में एक ही तत्त्व प्रवाहित हो रहा है? क्या यह सिद्ध नहीं होता कि निर्जीव और सजीव को जोड़ने वाली एक ही क़ड़ी है? अगर यह सही है तो हम कह सकते हैं कि प्रकृति के विभिन्नत्व में एकत्व विद्यमान है और यह प्रक्रिया एक ही नियम द्वारा संचालित हो रही है। बोस ने यह भी कहा कि ये वैज्ञानिक तथ्य उस महान सन्देश की ओर संकेत कर रहे हैं जो आज से तीन हजार वर्ष पहले हमारे पूर्वजों ने गंगा के सुरम्य तट पर दिया था कि इस ब्रह्माण्ड के असंख्य नाम-रूपों में एक ही शक्ति विद्यमान है।"

उस सभा में बोस के इस वक्तव्य की बड़ी प्रशंसा हुई और प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर विलियम क्रुक्स ने बोस से यह आग्रह किया कि जब यह वक्तव्य रायल सोसाइटी द्वारा प्रकाशित किया जाय तो उन्हें देखना चाहिए कि उसके अन्तिम शब्दों को कहीं निकाल न दिया जाय। यद्यपि शुरू में कुछ जीवशास्त्री तथा शरीरविज्ञान शास्त्रियों ने बोस के प्रयोगों तथा उनके निष्कर्षों की खिल्ली उड़ाई, क्योंकि इससे स्वयं उन वैज्ञानिकों का महत्व कम होता था। इसके अतिरिक्त बोस एक भारतीय थे और उन तथाकथित वैज्ञानिकों की दृष्टि में ज्ञान का उदय केवल योरप में ही हो सकता था। लेकिन बाद में उन्हें बोस के ज्ञान का लोहा मानना पड़ा। बोस की इस सफलता पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उस समय धातु-विज्ञान के सबसे बड़े विशेषज्ञ सर रावर्ट आस्टिन ने कहा कि मैंने अपना सारा जीवन धातु-विज्ञान के अध्ययन में लगा दिया और मुझे यह जानकर खुशी हुई कि धातुओं में भी जीवन होता है। रावर्ट आस्टिन ने बाद में यह भी स्वीकार किया कि उनके विचार भी बोस के विचारों से मिलते-जुलते हैं, लेकिन उन्होंने उन विचारों को रायल सोसाइटी के भय से कभी सार्वजनिक रूप से व्यक्त नहीं किया। एक दैनिक पत्र (The globe) ने परिहास में लिखा कि अपने वक्तव्य में जब बोस धातुओं पर प्रहार कर रहे थे तो उनकी आँखों में आँसू आ गए थे। सन् १९०२ ई० में बोस ने एक पुस्तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Response in the living and Non-living) प्रकाशित की और उसमें उन्होंने अपने प्रयोगों एवं अनुभवों को लिपिबद्ध किया। भौतिकवादी दार्शनिक हरबर्ट स्पेन्सर ने भी इस पुस्तक को सहर्ष स्वीकार किया। यह बिचित्र संयोग है कि लगभग इसी समय क्वाण्टमवाद और सापेक्षवाद के सिद्धान्तों का भी प्रादुर्भाव हुआ जिनके द्वारा यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित आधुनिक विज्ञान ध्वस्त हो गया।

अपने जीवनकाल में बोस को कई बार विदेशों में जाने का अवसर प्राप्त हुआ और उन्होंने विभिन्न यन्त्रों के माध्यम से अपने सिद्धान्त को प्रत्यक्ष प्रदर्शित करके दिखला दिया। उन प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ कि पौधों में कार्बन-डाई-आक्साइड द्वारा घुटन होती हैं, जबकि आक्सीजन द्वारा उन्हें पुनर्जीवन मिलता है तथा क्लोरोफार्म उन्हें बेहोशी की स्थिति (Narcotic effect) में डाल देता है और ओजोन गैस (Ozone) द्वारा वे अत्यधिक उत्तेजित हो जाते हैं। बिजली के झटके से उनके तन्तुओं में सिकुड़न होने लगती है। जब किसी आघात से पौधों को उत्तेजित किया जाता है तो उनकी तरंगें कुछ दूर तक जाती हैं। इसीप्रकार बोस द्वारा निर्मित क्रेस्कोग्राफ यन्त्र द्वारा पौधों में क्रमिक वृद्धि दिखाई देती थी जो प्रति सेकण्ड १/१००,००० इन्च के बराबर होती थी तथा उस यन्त्र में पौधों के सूक्ष्म तन्तुओं का आकार १०,००० गुना बड़ा हो जाता था। इस यन्त्र द्वारा यह पता चलता था कि यद्यपि पौधों की वृद्धि निरन्तर नहीं होती, लेकिन वह वृद्धि लयात्मक धड़कनों (Rhythmic pulses) के रूप में आगे बढ़ती रहती है। यही नहीं, बल्कि वह यन्त्र पौधों पर स्पर्श ताप, प्रकाश, विद्युत्-तरंग, गुरुत्वाकर्षण तथा रासायनिक तत्वों के प्रभाव को भी मापने में समर्थ था। पौधों में हल्की मात्रा में विष देने पर उनकी वृद्धि जल्द होती थी और उससे कीड़े-मकोड़ों का प्रभाव भी कम हो जाता था।

उन यन्त्रों द्वारा यह स्पष्ट बोध हो जाता था कि निर्जीव पदार्थों में भी सचेतन प्राणी की भाँति नानाप्रकार की संवेदनात्मक अनुभूतियाँ उठती हैं, किन्तु वे अनुभूतियाँ इतना सूक्ष्म होती हैं कि उन्हें आँखों द्वारा नहीं देखा जा सकता। इसीप्रकार इंग्लैण्ड की 'रायल सोसाइटी आफ मेडिसिन' की एक सभा में चार्ल्स डार्विन के एक सहयोगी सर लाडर ब्रण्टन ने कहा कि वनस्पति और जन्तुओं की प्रतिक्रिया में कितनी आश्चर्यजनक समानता है! प्रसिद्ध दार्शनिक ए०जे० बालफोर तथा साहित्यकार जार्ज बर्नार्ड शा भी इन प्रदर्शनों से बहुत प्रभावित हुए। वियना और जर्मन वैज्ञानिकों ने भी यह स्वीकार किया कि विज्ञान के इस क्षेत्र में कलकत्ता हमलोगों से बहुत आगे है। बोस ने अमेरिका की अनेक संस्थाओं को भी अपने क्रान्तिकारी विचारों से अवगत कराया। प्रसिद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमेरिकी पत्र (The scientific American) ने लिखा कि कृषिजगत के लिए बोस के क्रेस्कोग्राफ (Crescograph) यन्त्र का महत्व अलाद्दीन के चिराग से भी अधिक है। न्यूयार्क टाइम्स ने पौधों की प्रशस्ति में एक गीत प्रकाशित किया। ३० नवम्बर १९१७ को कलकत्ता में बोस संस्थान की स्थापना हुई और इसके उद्घाटन पर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने एक विशेष गीत लिखा।

बोस के जीवनीकार शचीन्द्रनाथ बसु के अनुसार प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् जब सेक्रेटरी आफ स्टेट के सादर आमन्त्रण पर बोस इंगलैण्ड गए तो उनका हार्दिक स्वागत किया गया। ब्रिटेन के प्रमुख पत्रों में अनेक वैज्ञानिकों तथा विशिष्ट व्यक्तियों ने उनकी बड़ी प्रशंसा की। विज्ञान में मौलिक योगदान के लिए उन्हें मई १९२० ई० में रायल सोसाइटी का फेलो चुना गया। पेरिस में बोस से मिलने के बाद विश्वविख्यात दार्शनिक हेनरी लुई बर्गसां ने कहा कि इनके आविष्कार द्वारा मूक पौधों ने भी अपना अज्ञात जीवन-इतिहास खोलकर रख दिया है और इस प्रयोग द्वारा आखिर प्रकृति को भी अपना गुप्त रहस्य खोलने के लिए बाध्य होना पड़ा। बेल्जियम के राजा ने बोस को 'कमाण्डर आफ दी आर्डर आफ लियोपोल्ड' की उपाधि से विभूषित किया। जेनेवा विश्व-विद्यालय की सभा में जिन विशिष्ट वैज्ञानिक महारथियों ने उनका वक्तव्य सुना उनमें डा० अलबर्ट आइन्स्टीन और लोरेन्ट्ज भी विद्यमान थे। एक गौरव-शाली जीवन व्यतीत करते हुए इसप्रकार २३ नवम्बर १९३७ ई० में भारत के इस जाज्वल्यमान नक्षत्र का निधन हो गया। लेकिन सापेक्षवाद के अनुसार बोस अपने सूक्ष्मशरीर (Astral body) में अब भी सूक्ष्मजगत में विद्यमान हैं और वर्त्तमान विज्ञान को जड़पदार्थवाद से मुक्त करने के लिए अब भी उसी-प्रकार उत्प्रेरित कर रहे हैं।

अध्यात्म के क्षेत्र में जो कार्य स्वामी विवेकानन्द ने किया, विज्ञान के क्षेत्र में वही कार्य सर जगदीशचन्द्र बोस द्वारा सम्पन्न हुआ। मैक्सप्लैंक और आइ-न्स्टीन ने आधुनिक विज्ञान को यूक्लिडीयन रेखागणित में मुक्त किया और बोस ने कण-कण में चेतना के अस्तित्व को प्रमाणित कर वैज्ञानिकों के वैज्ञानिक महर्षि कपिल के इस सिद्धान्त को पुनर्जीवित कर दिया कि प्रकृति और पुरुष (आत्मा) के संयोग से ही सृष्टि का क्रमविकास हो सकता है। अतः जीव जड़ पदार्थ नहीं है, बल्कि त्रिगुणात्मक पदार्थ के आवरण में अविनाशी चेतना अथवा आत्मा का ही एक विशिष्ट स्तर है। उस आवरण अथवा स्तर से ही प्रकृति अपना खेल रचती हैं, हाव-भाव और प्रदर्शन करती है, चेतन पुरुष को लुभाती है, लेकिन जब शुद्धज्ञान होता है तो वह हाव-भाव और प्रदर्शन भी समाप्त हो हो जाता हैं, मन, बुद्धि एवं अहंकार आदि सभी प्राकृतिक शक्तियाँ हवा हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाती हैं। यही वेदान्त का अमिट सन्देश है।

अधुनातन प्रयोगों से यह ज्ञात हुआ है कि वनस्पतिजगत हमारे विश्वास से भी कहीं अधिक संवेदनशील होता है। वनस्पतिजगत के रहस्यों को अनावृत्त करने में बेक्सटर के साथ एक इलेक्ट्रानिक विशेषज्ञ पियरे पाल साबिन का भी नाम लिया जाता है। एक बार बेक्सटर ने अपने एक रेडियो भेंट में कहा था, "आप एक खिलौने की ट्रेन को किसी पेड़ द्वारा पटरियों पर आगे-पीछे दौड़ा सकते हैं। इस चमत्कार के लिए आवश्यक है कि अपने आन्तरिक संवेग को किसी तरह उस पेड़ या पौधे पर केन्द्रीभूत कर दिया जाय।" बेक्सटर के इस कथन से साबिन को एक महत्वपूर्ण सूत्र प्राप्त हुआ और वह स्वयं इस ओर अनुसन्धान में जुट गया। उसने एक खिलौनानुमा विद्युत्-ट्रेन बनाई और अपने संवेगों अथवा विचारशक्ति (Thought waves) को एक पौधे पर केन्द्रीभूत कर उस ट्रेन को पटरियों पर आगे-पीछे दौड़ाने में सफल हो गया। न्यूजर्सी में हजारों दर्शकों के समक्ष उसने इस प्रयोग का प्रदर्शन सफलतापूर्वक किया और दृश्य को टेलीविजन पर भी दिखाया गया। इस प्रयोग में कुछ इसप्रकार की यान्त्रिक व्यवस्था थी कि जब ट्रेन आगे बढ़ती थी तो साबिन को बिजली का एक तेज झटका महसूस होता था। इस सफलता से उत्साहित होकर साबिन ने मनुष्यों और पेड़-पौधों के बीच वर्तमान भावनात्मक सम्बन्धों पर और आगे अनुसन्धान करने का निश्चय किया।

अपने प्रयोगों के दौरान साबिन को यह ज्ञात हुआ कि मनुष्यों की भाँति पेड़-पौधों के चारों ओर भी एक विद्युत् चुम्बकीय क्षेत्र (Electromagnetic field) का अस्तित्व होता है। साबिन को ऐसा विश्वास हुआ कि इन चुम्बकीय तरंगों के माध्यम से मनुष्य और पेड़-पौधों के बीच सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है। बेक्सटर की भाँति साबिन को भी यह पता चला कि मनुष्यों की तरह पेड़-पौधे भी संवेदनशील होते हैं और मनुष्यों के हर्ष एवं विषाद में उन परिस्थितियों के अनुरूप अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त करते हैं। अनेक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ कि इसप्रकार की भावनात्मक प्रतिक्रिया कई मील दूर स्थित पेड़-पौधों पर भी सूक्ष्म यन्त्रों के माध्यम से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इन प्रयोगों द्वारा यह भी प्रमाणित हुआ कि अगर पेड़-पौधों से भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित कर लिया जाय तो मूक पेड़-पौधे एक स्वामिभक्त चौकीदार की तरह अपने मालिक के दोस्त और दुश्मन को भी पहचान लेते हैं। अगर इलेक्ट्रानिक विधि से उन पेड़-पौधों का सम्बन्ध घर के दरवाजों से जोड़ दिया जाय तो किसी दोस्त के आगमन पर दरवाजा स्वतः खुल जायेगा और किसी दुश्मन के आगमन पर दरवाजा नहीं खुलेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसप्रकार के समाचारों को पढ़कर जापान के एक मनोवैज्ञानिक हाशीमोतो अत्यन्त प्रभावित हुआ। वह भी बेक्सटर की भाँति अपराधियों से सत्य उगलवाने वाले यन्त्र पर प्रयोग कर रहा था। उसने यन्त्रों को अपने मकान में स्थित केक्ट्स के पौधों से संयुक्त कर प्रयोग शुरू किया। वह इस यन्त्र पर अंकित धड़कनों तथा चुम्बकीय तरंगों को ध्वनितरंगों में परिवर्त्तित कर हेडफोन की सहायता से उन संवेदनात्मक अनुभूतियों को सुना करता था। इसप्रकार हाशीमोतो दम्पत्ति उन पौधों की संवेदनाओं को अंकित कर लिया करते थे। उन ध्वनि तरंगों में उन्हें कभी बजबजाहट सुनाई देती थी और कभी संगीत का पुट लिए मधुर ध्वनि आती थी तथा उस ध्वनि से कभी हर्ष का आवेग प्रकट होता था और कभी उल्लास का उतार-चढ़ाव स्पन्दित होता था।

इन प्रयोगों से प्रभावित होकर जान फ्रांसिस डोहर्टी नामक अमेरिकी वैज्ञानिक ने स्वयं जापान जाकर इन प्रयोगों का निरीक्षण किया और पत्र-पत्रिकाओं द्वारा उसका प्रचार किया। अपनी रिपोर्ट में डोहर्टी ने लिखा है कि हाशीमोतो दम्पत्ति उन केक्ट्स पौधों से इतना घुल-मिल गये थे तथा उनका इतना भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित हो गया था कि उन पौधों को अभ्यास कराकर एक से बीस तक गिनती गिनना भी सिखा दिया था। पौधों के सामने जब प्रश्न रखा गया कि दो और दो कितना होता है तो ध्वनितरंगों के माध्यम से चार संख्या का स्पष्ट संकेत प्राप्त हुआ। हाशीमोतो दम्पत्ति ने उन संकेतों को ग्राफ-पेपर पर अंकित करके दिखाया। हाशीमोतो के अनुसार इस घटनाचित्र का कोई स्पष्ट वैज्ञानिक कारण नहीं बताया जा सकता। उनका विश्वास है इस भौतिकजगत से परे कोई दूसरा सूक्ष्म संसार है और हमारा भौतिक संसार उसी की प्रतिछाया है। हसारा जगत उसी सूक्ष्मजगत द्वारा नियन्त्रित है, प्रतिभासित है। कुछ लोग इसे मन की शक्ति कहते हैं और कुछ लोंग इसे दैवी शक्ति बतलाते हैं।

परन्तु यह आश्चर्यजनक है कि मनुष्य का भावनात्मक सम्बन्ध केवल सजीव पदार्थों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उस सम्बन्ध का विस्तार निर्जीव पदार्थों तक भी है। इसका कारण यह है निर्जीव पदार्थ ही सजीव पदार्थ बनता है, कारणस्वरूप त्रिगुणात्मक कण-तरंगें ही देश-काल के आयाम में भौतिक कण-तरंगों में बदलकर कार्यस्वरूप भौतिकजगत बन जाती हैं और यह क्रमविकास प्रकृति और पुरुष (आत्मा) के संयोग से ही सम्भव हो पाता है। इससे स्पष्ट है कि निर्जीव और सजीव के बीच कोई सीमारेखा नहीं है, क्योंकि वस्तुतः पदार्थ स्वयं अपने में कोई शक्ति नहीं है, बल्कि आत्मा के प्रकाश से ही सब कुछ प्रकाशित होता है। कोई पदार्थ जड़ अथवा निर्जीव इसलिए प्रतीत होता है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि अपनी इन्द्रियों द्वारा उस पदार्थ के अन्तस्थल में विद्यमान चैतन्य अथवा आत्मा को हम देख नहीं पाते और सापेक्षभ्रम के फलस्वरूप जड़ पदार्थ को ही एक वास्तविक शक्ति मान लेते हैं। लेकिन जब इन्द्रियों से परे होकर हम जड़ पदार्थ के अन्तस्थल में प्रवेश करेंगे तो हमें भी चैतन्य महाप्रभु तथा रामकृष्ण परमहंस की भाँति पत्थर की मूर्ति भी चैतन्य बन जायेगी और कण-कण में भगवान दृष्टिगोचर होंगे। इस अहंकारयुक्त मानसिक भ्रम को ही वेदान्त में अविद्या और अज्ञान कहा गया है, क्योंकि हम इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान को ही प्रमाण समझ लेते हैं, उसीको अन्तिम सत्य मान लेते हैं। आधुनिक संसार के लिए विभिन्न इलेक्ट्रानिक यन्त्र वरदानस्वरूप हैं, क्योंकि इन यन्त्रों की सहायता से हम कुछ हद तक इन्द्रियों से परे हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप इन यन्त्रों द्वारा हम सूक्ष्मजगत (Astral world) की कुछ तरंगों को पकड़ने में समर्थ हैं। कुछ विशेष इलेक्ट्रानिक यन्त्र प्रकाश की गति (प्रति सेकन्ड १८६,००० मील) द्वारा विभाजित सूक्ष्म और स्थूल जगत की सीमारेखा पर सक्रिय होते हैं जिसके फलस्वरूप सूक्ष्मजगत की कुछ तरंगे इन यन्त्रों पर अंकित हो जाती हैं, जबकि भौतिक इन्द्रियों के माध्यम से हमें उन तरंगों का आभास तक नहीं होता। इससे स्पष्ट हैं कि हमारी इन्द्रियाँ सूक्ष्मजगत (Astral world) के सूक्ष्मज्ञान में बाधक हैं और विडम्बना यह है कि उस इन्द्रियजनित ज्ञान को ही हम वैज्ञानिक प्रमाण समझ कर चारों तरफ सत्य के दर्शन का अथवा तथाकथिक यथार्थवाद का ढ़िढ़ोरा पीटते हैं। इसीलिए योगी सत्य का दर्शन प्राप्त करने के लिए इन्द्रियों से परे होकर गीता के शब्दों में आत्मस्थित हो जाते हैं।

आधुनिक विज्ञान अध्यात्मवादियों को अन्धविश्वासी कहता है, उनकी यौगिक अनुभूतियों को मतिभ्रम अथवा इन्द्रजाल (Hallucinations) समझता है। लेकिन इस सन्दर्भ में वह स्वयं सबसे बड़ा अन्धविश्वासी है, हठी है जो अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त सापेक्ष ज्ञानभ्रम को ही सत्य मान कर जड़पदार्थवाद का ढ़िढ़ोरा पीटता है और समस्त संसार को यही परम शिक्षा देता आ रहा है। भला इससे बड़ा और अन्धविश्वास क्या हो सकता है कि वह परम चेतनशक्ति के स्थान पर जड़ पदार्थ को ही सत्य मान लेता है और अहंकारवश स्वयं अपने को ही कर्त्ता समझ वैठता हैं। मैक्स प्लैंक, आइन्स्टीन, जेम्स जीन्स, एडिगंटन तथा जगदीशचन्द्र वोस जैसे महान् वैज्ञानिकों ने विज्ञान की इस महान् भूल की ओर स्पष्ट संकेत किया था, लेकिन अहंवादी वैज्ञानिकों ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया, क्योंकि यूक्लिड और न्यूटन के महाभूत का ऐसा ही प्रभाव होता है। लेकिन अब वह समय आ गया है जबकि उस भूत को उतरना होगा और परम सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भौतिकवादी वैज्ञानिकों को अपने अहंज्ञान का चोला उतारना ही पड़ेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योगी कहते हैं कि वास्तव में जड़ और चेतन में कोई अन्तर नहीं है, बल्कि स्वचेतना की कुछ विशेष अवस्थाओं (अहंज्ञान, सापेक्ष भ्रम आदि) में स्वयं चेतन शक्ति ही जड़ सा प्रतीत होने लगती है, क्योंकि वह शक्ति सत भी है और असत भी है, कारण भी है और कार्य भी है, सापेक्ष भी हैं और निरपेक्ष भी है, ज्ञान भी है और अज्ञान भी है। जो कोई उस शक्ति को जिस रूप में भजता है वह शक्ति उसी रूप में प्रकट होती है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता (४।११) में कहा है कि हे अर्जुन ! जो मुझे जिसप्रकार भजते हैं मैं भी उनको उसीप्रकार भजता हूँ। अतः बुद्धिमान मनुष्य सभीप्रकार से मेरे मार्ग का ही अनुसरण करते हैं। आधुनिक विज्ञान ने उस परम चेतनशक्ति का भजन जड़ पदार्थ के रूप में किया, इसलिए उसका अन्तिम फल भी जड़ पदार्थ के रूप में ही प्रकट हुआ, क्योंकि सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित का यही स्वाभाविक परिणाम होता है। वास्तव में कपिल का सांख्यदर्शन पूर्णतया एक वैज्ञानिक दर्शन है तथा उसका आधार सापेक्षवाद है (प्रकृति और पुरुष संयोग), इसीलिए उसका अन्तिम निष्कर्ष अद्वैत वेदान्त के अन्तिम निष्कर्ष से भिन्न हो जाता है। इसका अर्थ यह नहीं कि कपिल को यह रहस्य ज्ञात नहीं था, बल्कि उसे प्रामाणिक ढ़ंग से प्रस्तुत करने के लिए ही कपिल ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया और आत्मा एवं परमात्मा की कोई समीक्षा तथा गुणगान नहीं किया। भगवान् बुद्ध ने भी कपिल के मार्ग का ही अनुसरण किया।

आधुनिक जापान में एक रहस्यमय घटना से वहाँ के वैज्ञानिक, डाक्टर, विशेषज्ञ तथा सामान्य जनता भी आश्चर्यचकित रह गई है। वह रहस्य चीनी मिट्टी की बनी हुई एक सुन्दर-सलोनी गुड़िया है जिसके सर पर कई वर्षों से निरन्तर मानवीय बाल क्रमशः उगते आ रहे हैं। वह गुड़िया एक छोटी सी बालिका की थी जो तीन साल की उम्र में ही अचानक मृत्यु को प्राप्त हो गई। मृत्यु के बाद उसकी राख गुड़िया के पास ही रख दी गई। पहले उस गुड़िया के बाल उसके कानों तक ही सीमित थे, लेकिन अब वे बाल क्रमशः बढ़कर सवा दस इन्च के हो गये हैं। वे बाल अब बढ़ते हुए गुड़िया के घुटनों तक पहुँच गये हैं। उन बालों का परीक्षण करने के बाद वैज्ञानिकों का कहना है कि वे बाल मनुष्य के ही हैं। वह गुड़िया उत्तरी जापान के एक छोटे से बौद्ध मन्दिर में रखी हुई है और पूरे जापान से भक्तगण उस गुड़िया के दर्शन के लिए आते रहते हैं। लोगों का विश्वास है कि उस गुड़िया पर भगवान बुद्ध की कृपा है, लेकिन शुद्ध वैज्ञानिक (यूक्लिडीयन) इस सिद्धान्त को मानने के लिए तैयार नहीं, क्योंकि उन्हें अपनी इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होना चाहिये। उस मृत बालिका को जानने वाले मन्दिर के वृद्ध पुजारी जूनियर इमागावा का विश्वास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि गुड़िया में नन्हीं बालिका की आत्मा निवास करती है। वह सुन्दर गुड़िया उस नन्हीं बालिका किकू सुसूकी को १९१८ ई० में उसके जन्मदिवस पर भेंट की गई थी जबकि उसकी उम्र सिर्फ दो साल की थी। उस छोटी बच्ची को गुड़िया से बहुत प्यार था। वह प्रतिदिन उसके छोटे बालों को कंघी से संवारा करती थी और स्नेहवश उस गुड़िया को अपनी बाहों में भरकर सोया करती थी। भक्त कहते हैं कि प्रेम के वशीभूत होकर भगवान भी साकार हो उठता है। गीता (९।३०) में भगवान कहते हैं कि यदि दुराचारी भी प्रेमपूर्वक्र अनन्य भाव से उनका भजन करता है तो उसे साधु ही समझना चाहिये। गुड़िया और बालिका के बीच प्रेम तथा अटूट भावनात्मक सम्बन्ध ही वह गुणात्मक कारण है जिससे जड़ गुड़िया का एक अंग विशेष भी चैतन्य हो उठा है। यहाँ बालिका की स्वचेतना अभी भी गुड़िया के स्थूल बालों में स्थित है जिससे पदार्थ के कण-तरंगों को सीधा एवं अनुकूल माध्यम (Conductor) प्राप्त हो जा रहा है और जब माध्यम कट जायेगा तो बालों का बढ़ना भी रुक जायेगा। जापान के सप्पोरो नगर से ४२ मील दूर मोनजी-सैवाई नामक गांव का छोटा बौद्ध मन्दिर इस चमत्कारी घटना के बाद अब तीर्थस्थल में बदल चुका है।

भक्त अथवा संत-समुदाय के लिए जीवजगत तथा अन्य वस्तुओं से अटूट भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित करना कोई नई चीज नहीं है। सच तो यह है कि जब यह अलौकिक सम्बन्ध पूर्णावस्था को पहुँच जाता है तो स्वयं भगवान और भक्त दोनों एक हो जाते हैं। भौतिक सन्दर्भ में भाव का सम्बन्ध मन से होता है और जब किसी वस्तु से भावनात्मक सम्बन्ध होता है तो उस वस्तु पर मन भी केन्द्रित हो जाता है। जब तक मन केन्द्रित नहीं होगा तब तक किसी वस्तु से भावनात्मक सम्बन्ध भी स्थापित नहीं हो सकता। यही कारण है कि भक्तों को भावसमाधि में कण-कण में भगवान नजर आते हैं, क्योंकि जब मन केन्द्रित हो जाता है तो पदार्थ का बाह्य ढाँचा अथवा कण तरंगों का आवरण भी लुप्त हो जाता है तथा नाम-रूपात्मक जग़त का अस्तित्व भी समाप्त हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि वस्तुजगत में मन का अस्तित्व केवल यन्त्र के समान है, जो चेतन पुरुष को अपने चरम लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायता प्रदान करता है। परन्तु यदि हम मन को एक वास्तविक शक्ति मान लेते हैं तो वह वैसा ही बन जाता है, क्योंकि अद्वैत वेदान्त के अनुसार जड़ और चेतन में कोई अन्तर नहीं है और सापेक्षवाद के अनुसार भी कारण ही कार्य है तथा कार्य ही कारण, सूक्ष्म ही स्थूल है और स्थूल ही सूक्ष्म। मृत्यु के बाद जब मन समाप्त हो जाता है तो वस्तुजगत भी सूक्ष्मजगत में परिवर्त्तित हो जाता है, क्योंकि जीवात्मा सूक्ष्मशरीर (Astral body) में स्थित होता है और वासना-तरंगें अथवा विचार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तरंगों (Thought waves) का अस्तित्व उसीप्रकार बना रहता है। उन तरंगों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध कारण और कार्य शृंखला से है। इस शृंखला को तोड़ने के लिए हमें इच्छावृत्तियों अथवा विचार-तरंगों का निरोध करना पड़ेगा (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः) अथवा भक्तों की तरह असत् वृत्तियों को सत् वृत्तियों (सत्वगुण) में परिवर्त्तित करना पड़ेगा। आधुनिक विज्ञान अपने कठोर नियमों एवं सिद्धान्तों के आधार पर योगदर्शन के इस रहस्य को कभी समझ नहीं सकता, क्योंकि उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध जड़ पदार्थ और उसके कण-तरंगों से है, चेतना अथवा आत्मा से नहीं। अतः आइन्स्टीन के अनुसार यदि हमारा वर्त्तमान भौतिकज्ञान यूक्लिड की गलत रेखागणित का परिणाम है, तो अद्वैत वेदान्त के अनुसार वह भौतिक ज्ञान हमारे सापेक्षभ्रम, अविद्या एवं अज्ञान का परिणाम है। इन दोनों सिद्धान्तों में कोई मूलभूत अन्तर नहीं है, क्योंकि गलत रेखागणित, सापेक्षभ्रम अथवा अज्ञान का प्रत्यक्ष सम्बन्ध पदार्थ-मिश्रित स्वचेतना से है और सही रेखागणित तथा शुद्ध ज्ञान का सम्बन्ध भी स्वचेतना के उस विशिष्ट स्तर से ही है। अतः परिवर्त्तन केवल गुणात्मक पदार्थ के आवरण एवं स्तर में होता है, न कि स्वयं अविनाशी चेतना में और जब वह आवरण पूर्णतया हट जाता है (Unfoldment of consciousness) तो वह ज्ञान निरपेक्ष (Absolute) हो जाता है।

इस मायापुरी में इतना घूमने के बाद भी कहीं सत्य का दर्शन नहीं हो सका। चारों तरफ केवल द्वन्द्वात्मक संघर्ष तथा पदार्थ के कण-तरंगों की भाग-दौड़ ही दिखाई दी। हो सकता है सत्य कहीं छिप गया हो जो कुछ और आगे बढ़ने पर दिखाई दे जाय। इस आशा और विश्वास पर ही जाने-अनजाने मनुष्य अबतक आगे बढ़ता रहा है। यही मनुष्य का वास्तविक सम्बल है। इसी पर विज्ञान और दर्शन दोनों का अस्तित्व निर्भर है। लेकिन दोनों मार्गों द्वारा सत्य की खोज केवल चेतन पुरुष द्वारा ही हो सकती है। अगर अस्तित्व एक है तो भिन्न-भिन्न मार्ग भी अन्त में एक ही हो जायेंगे।

आधुनिक विज्ञान एक ऐसी स्वतन्त्र रेखागणित पर आधारित है जिसमें मानसिक शक्ति, विचार शक्ति तथा आत्मा या परमात्मा जैसी परा-भौतिक शक्तियों के लिए कोई समुचित स्थान नहीं रह गया है। यद्यपि मानसिक शक्ति को वैज्ञानिक पुस्तकों में नहीं मानते, क्योंकि उसे नियन्त्रित प्रयोगों द्वारा सिद्ध नहीं किया जा सकता, लेकिन उस शक्ति को अपने भीतर महसूस जरूर करते हैं। परन्तु योगदर्शन के अनुसार जब मानसिक शक्ति ही पदार्थ बन गई है तो सापेक्षवाद के अनुसार पदार्थ को ही मानसिक शक्ति क्यों न मान लिया जाय। दूसरे शब्दों में पदार्थ और मन दोनों अभिन्न हैं, त्रिविध गुण-विकारों से युक्त हैं तथा सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में कारण और कार्य की शृंखला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से सम्बद्ध हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पदार्थ अथवा मन एक सापेक्ष शक्ति है, निरपेक्ष नहीं और सांख्यदर्शन के अनुसार वह कारण और कार्य दोनों है। अगर कारण और कार्य दोनों है तो वस्तुजगत की रचना एवं नाम-रूप परिवर्त्तन भी उसी शक्ति द्वारा होता है। हमारे शरीर का ढाँचा भी उसी द्वारा बनाया जाता है, क्योंकि सूक्ष्मजगत की तरंगों को कणों के रूप में वही सजाता है तथा जीवजगत को असंख्य नाम-रूपों में विभाजित करता है। चूँकि आधुनिक विज्ञान उस शक्ति को गले लगाने से परहेज करता है, इसलिए वह शक्ति भी उसकी पकड़ में नहीं आ पाती। यह संकोच उसके अहंज्ञान का परिचायक है। सर आर्थर एडिंगटन अपनी पुस्तक (Science and the unseen world) में कहते हैं कि जब तक हम सबसे आगे बढ़कर सत्य की खोज नहीं करते हैं तब तक न तो सच्चे विज्ञान की आत्मा को समझ सकते हैं और न ही सच्चे धर्म की। लेकिन आज का विज्ञान सबसे आगे तभी बढ़ सकता है जबकि वह लक्ष्मण रेखा से बाहर हो जाय। एक प्रमुख वैज्ञानिक चार्ल्स शेरिंगटन ने (Man on his nature) मन की तुलना एक भूत से की है जो गुप्त रूप से वस्तुजगत में प्रवेश करता है। इसका अस्तित्व इन्द्रियों से परे है तथा वह शक्ति अदृश्य रूप से विद्यमान रहती है। शेरिंगटन की दृष्टि में प्रकृतिरूपी मशीन आंशिक रूप से एक मानसिक संयन्त्र है और चूँकि मनुष्य भी उस यन्त्र से सम्बद्ध है, इसलिए वह मशीन भी मानसिक गुणों से युक्त है। लेकिन वह मशीन एक ऊर्जाप्रवाह है जिसमें शारीरिक एवं मानसिक शक्ति संचारित हो रही है और जो मनुष्य द्वारा निर्मित मशीन से भिन्न मानवीय संवेगों द्वारा संचालित होती है।

सामान्यतः मन को परिभाषित करना और शब्दों में बाँध लेना कठिन है, क्योंकि मन का विस्तार, उसके पहलू तथा स्तर आधुनिक विज्ञान की कल्पना से भी परे की वस्तु है। गीता (६।३४-३५) में कहा गया है कि मन वायु की तरह चंचल है और दृढ़, हठीला एवं शक्तिशाली है जिसे वश में करना अत्यन्त कठिन है। परन्तु भगवान के अनुसार अभ्यास और वैराग्य द्वारा उसे नियन्त्रित किया जा सकता है। रामकृष्ण परमहंस का कहना है, "शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि और आत्मा एक ही वस्तु है। सब कुछ मन पर निर्भर है। मन ही से बद्ध है है और मन ही से मुक्त। मन पर जैसा रंग चढ़ाओगे उसी से वह रंग जायेगा। एक ओर स्त्री है और एक ओर सन्तान। स्त्री को एक भाव से और सन्तान को दूसरे भाव से प्यार करता है, किन्तु है एक ही मन।" योगदर्शन के अनुसार जो सम्बन्ध ऊर्जा का स्थूल पदार्थ से है वही सम्बन्ध मन का ऊर्जा अथवा प्राणशक्ति (Vital force) से है। मन का बोध तभी हो सकता है जबकि उसमें विचार उत्पन्न हों। जब कोई विचार नहीं है तो मन का भी कोई अस्तित्व

१५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। इसीलिए मन को विचारों का समूह (Bundle of thoughts) भी कहते हैं। महर्षि रमण का कहना है, "शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि और आत्मा एक ही वस्तु है। मन विचारों का समूह मात्र है। सुख और दुःख मन के पहलू हैं। मनुष्य शरीर एवं मन को ही यथार्थ समझता है और वह अपने सत्यस्वरूप आत्मा को भूल गया है जिसके फलस्वरूप सभीप्रकार के दुःखों की उत्पत्ति होती है। रमण के अनुसार मन को नियन्त्रित करने के दो उपाय हैं—पहला यह देखना कि मन क्या है? तब वह लुप्त हो जायेगा। दूसरा उपाय यह है कि मन को किसी वस्तु पर केन्द्रित कर ध्यान लगाया जाय और तब वह शान्त हो जायेगा।" एक अन्य योगी अरविंद घोष ने उस शक्ति को अतिमानस (Supermind) के रूप में देखा है और उसका विस्तृत विवेचन अपनी पुस्तक (The life Divine) में किया है। उनके अनुसार पदार्थ, जीवन और मन एक ही शक्ति हैं, जो त्रिविध नाम-रूपों में विभक्त हैं। ब्रह्म अतिमानस (Supermind) से होकर जगत के रूप में प्रकट हो उठा है। अरविंद के अनुसार मन समय और दूरी के एक निश्चित क्रम तथा अवस्था को ही ग्रहण कर पाता है जो सीमित है, किन्तु दैवी अतिमानस (Divine Supermind) देश-काल के सम्पूर्ण विस्तार को देखता है जिसमें किसी प्रकार का कोई भ्रम, सन्देह एवं सीमा नहीं होती। यहाँ अरविंद का तात्पर्य भगवान बुद्ध और रामकृष्ण परमहंस के उच्चतम चेतन-स्तर अथवा मानसिक अवस्था से है जहाँ कोई सीमा नहीं है। अरविंद कहते हैं कि ब्रह्म सभी वस्तुओं में है और सभी वस्तुएँ ब्रह्म में हैं तथा सभी वस्तुएँ स्वयं ब्रह्म हैं। उनके विशाल अतिमानस का यही त्रिविध सूत्र (Triple Formula) है जो आत्मविस्तार के एक सत्य को तीन पहलुओं में गठित किये हुए है और मूलभूत ज्ञान को अभिन्न रूप से स्थापित कर ब्रह्माण्ड के खेल में प्रयुक्त है। अरविंद के अनुसार जगत और ब्रह्म में जो जमीन और आसमान का अन्तर है उसकी कड़ी (Link) अतिमानस (Supermind) में ही निहित है जिसे सत्य-चेतना (Truth-consciousness) भी कहते हैं और जो मनुष्य के वर्त्तमान मानसिक स्तर से बहुत ऊँचा है।" स्वामी विवेकानन्द ने मन की तुलना निर्मुक्त बन्दर (Unchained monkey) से की है जो डाल-डाल पर उछलता फिरता है। इसीप्रकार एक अन्य संत स्वामी शिवानन्द ने अपनी पुस्तक (Mind-Its Mysteries And Control) में लिखा है, "जो शक्ति मनुष्य और ईश्वर के बीच अवरोध बन कर खड़ी है उसे मन कहते हैं। अगर इस दीवार को हटा दिया जाय तो ईश्वर से साक्षात्कार हो जायेगा। मन का सम्बन्ध सर्वदा किसी वस्तु से होता है और पदार्थ से पृथक उसका कोई अस्तित्व नहीं है। मन की तुलना हम विद्युत शक्ति से कर सकते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो एक ही क्षण में सर्वत्र विद्यमान होती है। शिवानन्द के अनुसार मन और कुछ नहीं, बल्कि इच्छा-वृत्तियों, विचार-तरंगों एवं संस्कारों का समूह मात्र है। मन की तीन भौतिक अवस्थायें होती हैं—सक्रिय (Active), निष्क्रिय (Passive) और तटस्थ (Neutral)। मन में सदैव परिवर्त्तन होता रहता है और उसमें नित्य नई-नई इच्छा-वृत्तियाँ उत्पन्न होती रहती हैं। मन के तीन पहलू होते हैं—चेतन (Conscious), अवचेतन (Sub-conscious) और अतिचेतन (Super conscious)। भौतिक शरीर मन का वाह्य स्वरूप है, जबकि शक्ति के रूप में स्वयं मन उसका आन्तरिक अथवा सूक्ष्म रूप। मन कर्त्ता और कर्म तथा द्रष्टा और दृश्य दोनों है। मन ही कभी भँवरा, कभी फूल, कभी पहाड़ और कभी हाथी-घोड़े तथा कभी नदियों का रूप धारण करता रहता है। सुख और दुख मन में ही हैं और यदि मन को उनसे पृथक कर दिया जाय तो सुख और दुख का भी कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है।"

योगदर्शन के इस विश्लेषण द्वारा हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मन और पदार्थ एक ही शक्ति के दो नाम-रूप हैं। अगर शक्ति एक ही है तो इलेक्ट्रान, परमाणु, अणु, जीन तथा कोशिका आदि गुणात्मक कण तथा देश-काल, गुरुत्वाकर्षण, ताप और विकिरण तथा सभीप्रकार की चुम्बकीय तरंगें वस्तुतः मन की ही तरंगें हैं। वास्तव में स्वयं मन ही असंख्य नाम-रूपों में प्रकट हो रहा है, क्योंकि चेतनशक्ति और प्रकृति के संयोग से सर्वप्रथम इसी सक्रिय शक्ति की उत्पत्ति होती है और इसी शक्ति से कण-तरंगें क्रमबद्ध होकर मूर्त्त रूप ग्रहण करती हैं। चूँकि चेतनपुरुषों के विचार भिन्न-भिन्न होते हैं, इसलिए उन पुरुषों के नाम-रूप भी भिन्न-भिन्न रूप से प्रकट होते हैं, क्योंकि कारण और कार्य शृंखला एवं सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित का यही स्वाभाविक परिणाम है। अतः यह पदार्थ का क्रमविकास (Evolution) नही हो रहा है, बल्कि मानसिक शक्ति का क्रमविकास हो रहा है और वह शक्ति एक सूक्ष्म इलेक्ट्रान कण से लेकर सभी नक्षत्र-पिण्डों में विद्यमान है। इसीलिए वेदान्त कहता है कि सभी कुछ मन के गर्भ से ही निकला है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि गुरुत्वाकर्षण किसी वस्तु में नहीं था, बल्कि मन में विद्यमान था और विश्व का असीम पुस्तकालय तुम्हारे मन में ही है। लेकिन वह मन है कहाँ ? मन का भौतिक स्वरूप अथवा स्थूल रूप ही तो हमारा मस्तिष्क (Brain) हैं, जो वाह्यजगत से इन्द्रियों एवं असंख्य संवेदनशील नाड़ियों (Nerve cells) द्वारा जुड़ा हुआ है और उसी इलेक्ट्रानिक यन्त्र में सभी कुछ टेलीविजन की भाँति चित्रित होता है। मन के उच्चतम स्तर (Supermind) को प्राप्त करना ही मनुष्य का पुरुषार्थ है और उस स्तर को प्राप्त करने वालों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में हम राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसामसीह, शंकराचार्य, रामकृष्ण, रमण आदि महापुरुषों की गिनती करते हैं।

एडिंगटन के शब्दों में मस्तिष्क अणुओं अथवा कोशिकाओं का भण्डार प्रतीत होता है, लेकिन वे अणु अथवा कोशिकाएँ स्वयं अपने में विशाल ब्रह्माण्ड हैं, क्योंकि सांख्यदर्शन के अनुसार जो पिण्ड में है वही ब्रह्माण्ड में भी है। इसीलिए आज विज्ञान को भी मानव मस्तिष्क अद्भुत् कम्प्यूटर के समान प्रतीत होता है, क्योंकि वही मन का भौतिक स्वरूप है। मस्तिष्करूपी स्थूल पिण्ड में ज्ञान का असीम भण्डार उसीप्रकार छिपा हुआ है जिसप्रकार स्थूल पदार्थ में आणविक ऊर्जा (Atomic energy)। मन की उच्चतम अवस्था को प्राप्त कर मनुष्य उस अलौकिक अवस्था को प्राप्त हो सकता है और उन सभी विधियों की कुंजी हमें गीता तथा पतंजलि–योगसूत्र द्वारा प्राप्त होती है।

भौतिकजगत में उस मानसिक शक्ति की अभिव्यक्ति असंख्य जीव-जन्तुओं में असंख्य तरीकों से होती है। किसी में वह शौर्य के रूप में प्रकट होती है, किसी में पांडित्य के रूप में और किसी में कला के रूप में तथा किसी में वह शक्ति पशुता का रूप ग्रहण कर लेती है। लेकिन कुछ ऐसे भी महापुरुष होते हैं जो उस शक्ति की अन्तिम अवस्था को प्राप्त कर प्रकृति के बन्धन से सर्वदा के लिए मुक्त हो जाते हैं। रामकृष्ण परमहंस ने उसी महाशक्ति को काली अथवा महामाया के नाम से सम्बोधित किया हैं और उसी परम्परा का निर्वाह करते हुए आज भी बंगाल में शक्तिपूजा का बड़ा महत्व है। लेकिन रामकृष्ण के शब्दों में यह सभी कुछ चेतनपुरुष के अपने विश्वास पर निर्भर करता है। अगर विश्वास हो गया तो सब कुछ हो गया। इस नियम के अनुसार अगर किसी ने प्रकृति या पदार्थ को भोग-विलास की वस्तु मान लिया तो वह मृगमरीचिका की भाँति पीछे-पीछे भागता फिरेगा, उसके तीव्र आकर्षण से खिंचता चला जायेगा। रावण और दुर्योधन जैसे प्रतापीं राजाओं को भी तृष्णा की उस आग में जलकर राख हो जाना पड़ा। लेकिन जो मनुष्य प्रकृति से इस रहस्य को समझ जाता है वह कपिल और बुद्ध की तरह ज्ञानी हो जाता है। उस प्रकृति का सम्बन्ध जब राजसत्ता, वैभव एवं शौर्य से जुड़ जाता है तो लोग अर्जुन, कर्ण, सिकन्दर तथा नैपोलियन बन जाते हैं। उस शक्ति का सम्बन्ध जब बुद्धि से जुड़ जाता है तो लोग शंकराचार्य, विवेकानन्द, अरस्तू और कान्ट हो जाते हैं। उसी प्रकृति को जिसने विज्ञान मान लिया वह न्यूटन और आइन्स्टीन हो गया और जिसने प्रस्तर-प्रतिमा को ही माँ काली मान लिया वह निश्चय ही रामकृष्ण परमहंस हो गया। उस प्रकृति को जिसने आदर्श मान लिया वह मर्यादा पुरुषोत्तम राम हो गया और उसी प्रकृति से जिसका संयोग हो गया वह योगिराज कृष्ण बन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया । गीता (१४|३–४) में कहा गया है कि हे अर्जुन ! मैं मातास्वरूप प्रकृति की योनि में पितास्वरूप चेतनशक्ति (बीज) की स्थापना करता हूँ और उसी संयोग से सृष्टि होती है । यही प्रकृति और पुरुष के संयोग का रहस्य है और यही सांख्यदर्शन का सारतत्व भी ।

लेकिन अगर मनुष्य के विश्वास में इतना गुण है तो उसके अविश्वास में भी कम गुण नहीं हैं, क्योंकि प्रकृति का अस्तित्व सापेक्ष है अर्थात् जहाँ विश्वास रहेगा वहीं अविश्वास भी रहेगा, जहाँ सत रहेगा वहीं असत् भी रहेगा, जहाँ कारण रहेगा वहीं कार्य भी रहेगा तथा जहाँ जड़ रहेगा वहीं चेतन भी रहेगा । अगर अविश्वास और सापेक्ष भ्रम नहीं होते तो अरस्तू, न्यूटन, डार्विन और आइन्स्टीन भी नहीं होते तथा आधुनिक विज्ञान का यह ताम-झाम भी नहीं होता, आज दुनियाँ में एटम और हाइड्रोजन बम भी नही होते, वस्तुजगत में नानाप्रकार के कर्म-व्यापार भी नहीं होते, कला और संस्कृति तथा सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की अभिव्यक्ति भी नहीं होती । जब अहंकार (Ego) नहीं रहता तो कर्म-शक्ति की उत्पत्ति कैसे हो सकती थी ? उस शक्ति के अनेक स्तर हैं । गीता (३/४२) में भी कहा गया है कि इन्द्रियों से परे मन है, मन से परे बुद्धि है और बुद्धि से भी जो अत्यन्त परे है वह आत्मा है । इसका वैज्ञानिक अर्थ यह हुआ कि इन्द्रियों की गति प्रकाश की गति के भीतर है, जबकि मन एवं बुद्धि की गति असीम है । यह उस मानसिक शक्ति का ही परिणाम है कि हम शक्तिशाली टेलीस्कोपों (२०० इंच तथा २३८ इंच) द्वारा पाँच से सात हजार प्रकाशवर्ष दूर तक देख सकते हैं, जबकि इन्द्रियों (आँखों) से केवल पाँच हजार तारे दिखाई देते हैं, क्योंकि इन्द्रिज्ञान उच्च आवृत्ति प्रकाश-तरंगों (High frequency light waves) द्वारा सीमाबद्ध हो जाता है । इसीलिए हमें एक्स-रे तथा गामा-रे आदि सूक्ष्य प्रकाश-तरंगें नहीं दिखाई देतीं । दूसरे शब्दों में टेलीस्कोप अथवा इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप हमारी मानसिक शक्ति का ही एक विशेष नाम-रूप है, क्योंकि स्वयं मन पदार्थ के भिन्न-भिन्न नाम-रूपों में प्रकट हो रहा है । सापेक्षवाद के अनुसार जिसप्रकार प्रकाश की गति पर सभी भौतिक शक्तियाँ (ताप, प्रकाश, विद्युत, चुम्बकत्व, देश-काल, गति आदि) परस्पर मिल कर एक हो जाती हैं उसीप्रकार उस भौतिक परिधि से परे इन्द्रियाँ, मन एवं बुद्धि आदि शक्तियाँ भी परस्पर मिलकर सूक्ष्मजगत (Astral world) की परा-भौतिक शक्तियों में समाहित हो जाती हैं, क्योंकि सभीप्रकार की प्राकृतिक शक्तियाँ कारण और कार्य की शृंखला में बंधी हुई हैं । इससे स्पष्ट है कि भौतिक शक्तियाँ वास्तविक नहीं हैं, बल्कि परम चेतनशक्ति के हाथों मिमित्त-मात्र हैं । अतः भौतिक जगत में हमें मन को एक सर्वोच्च शक्ति मानना ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ेगा और इसी शक्ति द्वारा पदार्थ के कण-तरंगों का संयोजन, नियमन एवं संञ्चालन होता है।

सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन के परिप्रेक्ष्य में जब हम आधुनिक विज्ञान के सिद्धान्तों की समीक्षा करते हैं तो वे सभी सिद्धान्त बौना सा प्रतीत होते हैं, क्योंकि यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित विज्ञान की दृष्टि अभी तक इन्द्रियों से परे नहीं जा पाई है। वैज्ञानिक मानसिक शक्ति से कतराते हैं, लेकिन जब उस शक्ति का कहीं प्रदर्शन होता है तो उसे देखने के लिए सबसे पहले तैयार हो जाते हैं। सुप्रसिद्ध निरीश्वरवादी वैज्ञानिक डेविड बोहम क्वान्टमवाद के विशेषज्ञ माने जाते हैं। २१ जून १९७४ को वरवेक कालेज लन्दन में एक इजराइली नवयुवक यूरी गेलर ने अपनी मानसिक शक्ति का प्रदर्शन किया। उस प्रदर्शन में डेविड बोहम के अतिरिक्त प्रसिद्ध वैज्ञानिक जान हेस्टेड, कीथ बर्किन्सा, टेड बेस्टिन तथा जैक सरफत्ती आदि प्रमुख थे। कहा जाता है कि यूरी गेलर अपनी मानसिकशक्ति (PK) से धातु के चम्मच, चाभियाँ तथा छड़ें आदि टेढ़ा कर देता है। अमेरिका के स्टेनफोर्ड अनुसन्धान संस्थान के दो प्रमुख वैज्ञानिक हेराल्ड पुथोफ और रसेल टार्ग ने उसका वैज्ञानिक परीक्षण कर उसकी मानसिक शक्ति (Psychokinesis) को स्वीकार किया है तथा इस सम्बन्ध में नवम्बर १९७४ ई० में एक पत्रिका (Nature) में लेख भी प्रकाशित करवाया। लन्दन में किंग्स कालेज के एक भौतिकशास्त्री जान टेलर ने भी अपनी पुस्तक (Superminds–1975) में यूरी गेलर की मानसिक शक्ति का अनुमोदन किया है। टेलर ने यह भी दावा किया है कि सैकड़ों नौजवान ऐसा कर सकते हैं और अनेक सम्भावनाओं पर विचार करते हुए उन्होंने उसे 'चुम्बकीय शक्ति' (Electromagnetism) बतलाया है। उस प्रदर्शन के बाद प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री सरफत्ती का कहना है कि यूरी गेलर की वह शक्ति वास्तविक थी जिसे मानसिक ऊर्जा-शक्ति (Psycho-energetic ability) कहा जा सकता है। उनका यह भी कहना है कि वह प्रदर्शन सन्देह से परे था और भली-भाँति नियन्त्रित तथा वैज्ञानिक प्रयोगों के अनुकूल था।

अमेरिका के परा-भौतिक शास्त्रियों के बीच सरफत्ती एक प्रमुख सिद्धान्तवादी हैं। कुछ वर्ष पहले उन्हें विलक्षण उच्च अनुभव (odd subliminal experiences) प्राप्त होना शुरु हुआ। इसका कारण उन्होंने स्वचेतना (Self consciousness) के भिन्न आयामों से सम्बद्ध होना बतलाया। उन्हें अनुभव हुआ कि वह 'स्वलेखन क्रिया' (Automatic writing) में समर्थ हैं और अनेक वैज्ञानिक पत्र उन्होंने इसी क्रिया द्वारा तैयार किया है। उन्होंने खोज की कि उनके अन्दर एक प्रकार का सामूहिक मानसिक अनुभव (collective mind experience)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का ज्ञान विद्यमान है। इसप्रकार की खोज में उनके सहायक का नाम फ्रेड वोल्फ हैं जो एक भौतिकशास्त्री हैं। सन् १९७५ ई० में उन्होंने प्रसिद्ध जादूगर जेम्स रेन्डी को एक पत्र लिखा था जिसमें यह जिक्र किया गया था कि उन्हें इस बात की गम्भीर सूचना है कि दूसरे ग्रहों से सम्पर्क स्थापित किया जा रहा है। जेम्स रेन्डी भी यूरी गेलर की तरह मानसिक शक्ति का प्रदर्शन करता है। इसप्रकार के विचार विश्वविख्यात वैज्ञानिक जेम्स एलेन हाइनेक आदि वैज्ञानिकों द्वारा भी अनुमोदित हैं। हाइनेक आजकल उड़न तश्तरियों पर अनुसन्धान कर रहे हैं।

सरफत्ती का मानसिक शक्ति (Psi) से सम्बन्धित सिद्धान्त डेविड बोहम के क्वान्टमवाद के तार्किक निष्कर्ष पर आधारित है। क्वान्टमवाद के अनुसार देश-काल' (Space-time) के विस्तार में बिना किसी ऊर्जा प्रसार (Without any transmission of energy) के एक घटनाचित्र (Phenomenon) दूसरे घटनाचित्र को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए एक घटना अ विन्दु पर घटित होती है तथा दूसरी ब विन्दु पर, किन्तु इस सिद्धान्त के अनुसार इन दोनों घटनाचित्रों के बीच कोई ऊर्जा प्रवाहित नहीं होती, जबकि आधुनिक विज्ञान का यह प्रमुख सिद्धान्त है कि बिना ऊर्जा के कोई भी हलचल, घटना-चित्र अथवा कर्म-व्यापार नहीं हो सकता। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ऊर्जा अथवा भौतिकशक्ति से परे कोई ऐसी शक्ति अवश्य है जो इन हलचलों अथवा घटनाचित्रों को प्रभावित करती है। परन्तु भौतिकविज्ञान के लिए वह परा-शक्ति अभी भी अज्ञात है। इस सम्बन्ध में आइन्स्टीन का विचार था कि ईश्वर जगत के साथ पासा नहीं खेल रहा है और भविष्य में एक दिन 'कारण और कार्य' (cause and effect) का अटूट नियम फिर से स्थापित होगा। लेकिन निरीश्वरवादी वैज्ञानिक डेविड बोहम के लिए विज्ञान की यह विषम स्थिति कल्पनातीत है।

क्वान्टम विशेषज्ञ डेविड बोहम के विचार से यह ब्रह्माण्ड असीम स्तरों में रचा हुआ एक ढाँचा है और वह ढाँचा एक महासमुद्र के समान है जो बिना किसी तली (Without a bottom) के है। बोहम के अनुसार उस महासमुद्र के प्रत्येक स्तर में पृथक-पृथक अथवा अविरल अस्तित्व हैं जो दूसरे स्तर के सन्दर्भ में लुप्त हो जाते हैं (यहाँ बोहम का परोक्ष तात्पर्य पुराणों में वर्णित असंख्य सूक्ष्म लोकों से है जो चेतन पुरुष की एक अवस्था में एक ही दिखाई देता है)। बोहम के विचार से क्वान्टमवाद के अस्तित्व से परे और पृथक एक 'उप-क्वान्टमवाद' का भी अस्तित्व है जिसे हम अभी तक नहीं समझ पाये हैं। बोहम के अनुसार जो अस्तित्व हम जानते हैं वह मानो बर्फ के बहते हुए पहाड़ों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का किनारा अथवा छोरमात्र हो। हम उन बिखरे हुए सूत्रों को वैज्ञानिक नियमों से जोड़ने की कोशिश करते हैं, किन्तु हम नहीं जानते कि उन सूक्ष्म गहराईयों में वे सूत्र परस्पर किसप्रकार जुड़े हुए हैं। जब हम उन गहराईयों में प्रवेश करते हैं तो वहाँ भी हमें पृथक-पृथक अस्तित्वों का आभास होता है तथा जादुई ढंग से 'कारण और कार्य' (cause and effect) नियमों का उलंघन होता है और ऐसा प्रतीत होता है कि उन रहस्यों का उद्घाटन और अधिक गहराईयों में ही निहित है। इसप्रकार हम जो कुछ जानते हैं उससे यही प्रतीत होता है कि उन स्तरों की कोई सीमा नहीं है, वे असीम हैं, अथाह समुद्र हैं।" इसीलिए तुलसी ने बहुत पहले ही लिख दिया था—

हरि अनंत हरि कथा अनंता। कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता॥

वेद-वेदान्त में भी कहा गया है कि आज तक कोई उसका अन्त नहीं पा सका। हो सकता है कि विज्ञान के अहँवाद एवं बुद्धिवादी कौशल द्वारा कभी उसका अन्त मिल जाय, लेकिन तब वह अनन्त और निरपेक्ष नहीं रह जायेगा। यह भी हो सकता है कि इस खोज में स्वयं वर्त्तमान विज्ञान का अस्तित्व ही समाप्त हो जाय।

डेविड बोहम के इस सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए सरफत्ती का कहना है कि यदि हम बोहम द्वारा प्रस्तुत ब्रह्माण्ड अथवा महासमुद्र के चित्र को देखेंगे जिसे स्वयं बोहम ने 'अटूट सम्पूर्णता' (unbroken wholeness) का नाम दिया है तो उसका अर्थ इसप्रकार होगा, "इस ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत प्रत्येक कण प्रत्येक दूसरे कण से जुड़ा हुआ है, प्रत्येक घटनाचित्र प्रत्येक दूसरे घटनाचित्र से जुड़ा हुआ है, चाहे देश-काल के अपरिमित विस्तार में उनकी परस्पर दूरी कुछ भी क्यों न हो, वे परस्पर एक दूसरे से चाहे कितना भी पृथक क्यों न हो। इस नियम के अनुसार अगर आप अपनी अंगुली को हिलाते हैं तो आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को हिला देते हैं। अगर आप किसी वस्तु को इधर-उधर हटाते हैं तो उसके साथ सभी वस्तुएँ हिलने लगती हैं। जहाँ सरफत्ती डेविड बोहम के विचारों से मतभेद रखते हैं वह—'उपक्वान्टम स्तर' (Sub–quantum level) है। चूँकि बोहम एक भौतिकवादी हैं और उनपर भी यूक्लिड एवं न्यूटन का महाभूत सवार है, इसलिए वह उस सूक्ष्मतम स्तर को कोई नाम नहीं दे पाते, स्तब्ध खड़े देखते रहते हैं। लेकिन जैक सरफत्ती पर वह महाभूत सवार नहीं है, इसीलिए वह उस सूक्ष्मतम स्तर को चेतना (consciousness) नाम देते हैं।"

सरफत्ती ने अपने दार्शनिक सिद्धान्त को प्रमाणित करने के लिए विज्ञान के अनेक महारथियों के सिद्धान्तों का समावेश किया है तथा स्थूल एवं सूक्ष्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शक्तियों को एक सूत्र में पिरोने का अथक प्रयास किया है। संक्षेप में उनका सिद्धान्त अद्वैत वेदान्त का भौतिक संस्करण है—"यह विशाल ब्रह्माण्ड एक अदभुत नृत्यशाला है जिसमें पड़ी हुई असंख्य कठपुतलियों में अलग-अलग डोरियाँ बंधी हुई हैं और उन डोरियों (कारण और कार्य श्रृंखला) के सहारे बाजीगर (ईश्वर) सभी को नचा रहा है (उमा दारु जोषित की नाईं। सबहि नचावत राम गोसांईं ।। भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।।)। हम उस कठपुतलीकार को ईश्वर कहें, प्रकृति कहें अथवा एक निरपेक्ष सत्ता कहें सब एक ही बात है। सरफत्ती के अनुसार इस तालबद्ध नृत्य द्वारा ही कारण और कार्य की श्रृंखला जुड़ गई है। सरफत्ती यह तर्क देते हैं कि इस सामूहिक नृत्य से सापेक्षवाद के नियमों का उलंघन नहीं होता है, क्योंकि वह कठपुतलीकार प्रकृति की सभी शक्तियों से परे है। सरफत्ती के इस सिद्धान्त को एक 'परा-भौतिकविज्ञान' (Superluminal information transfer) कहा जाता है।" यद्यपि इसप्रकार के अनेक परा-भौतिकवादी वैज्ञानिक यूक्लिडीयन विज्ञान को वेदान्त अथवा परा-भौतिक शक्तियों से जोड़ने की कोशिश करते हैं, लेकिन अहंवादी एवं घोर भौतिकवादी वैज्ञानिक उन्हें पागल समझ कर इसप्रकार के सिद्धान्तों की खिल्ली उड़ाते हैं। इस सन्दर्भ में पागल कौन हैं इस विषय पर कपिल और आइन्स्टीन ने अच्छी तरह प्रकाश डाला है।

इसप्रकार के मानसिक चमत्कार केवल पाश्चात्य देशों में ही नहीं होते हैं, बल्कि अब तो घोर भौतिकवादी साम्यवादी देशों में भी ऐसे प्रदर्शन दिखाई देने लगे हैं। सोवियत रूस में नेल्या मिखाइलोवा नामक एक प्रसिद्ध महिला हैं जिनके अन्दर असाधारण चुम्बकीय शक्ति विद्यमान है। जब वह महिला ध्यान लगाकर किसी वस्तु या वस्तुओं की ओर घूरती (Gazing) है तो कम्पास की सूई घिरनी की तरह नाचने लगती है तथा सिगरेट-माचिस, कलम,प्लास्टिक का खोल, चमड़े का फीता, छोटा सिलीन्डर और शीशे का गिलास आदि छोटी-छोटी वस्तुएँ अनायास चक्कर काटने लगती हैं, मानो कोई चुम्बकीय शक्ति उन्हें नचा रही हो। यही नहीं, बल्कि मेज पर पड़ी हुई डबल रोटी नेल्या के मुँह में अनायास चली जाती है तथा अण्डे का सफेद भाग पीले भाग से स्वतः अलग हो जाता है और फिर जुट जाता है। विकसित देश रूस के वैज्ञानिकों को भीं यह पहेली समझ में नहीं आती, लेकिन रूस में उन चमत्कारी दृश्यों का चलचित्र जरूर लिया गया है जिन्हें लाखों दर्शकों ने देखा है। उसी रूस में एक दूसरी असाधारण महिला रोसा कुलेशोवा भी हैं जो आँखों पर पट्टी बाँध कर अपनी अंगुलियों द्वारा केवल पत्र-पत्रिकाओं को ही नहीं पढ़ लेती, बल्कि विभिन्न रंग-रूपों तथा चित्रों पर अंकित मनोभावों (हँसना-रोना आदि) को स्पष्ट बता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देती है। रोसा का कहना है कि यह असाधारण शक्ति अभ्यास द्वारा सम्भव है। रोसा का विधिवत परीक्षण सोवियत विज्ञान अकादमी द्वारा भी हुआ है। रूस में विज्ञान संस्थाओं के प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि विभिन्न रंगों में सूक्ष्मग्राही संवेदनात्मक गुण-विकार (Sensations) भी पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए हल्का नीला में चिकनापन; पीला में फिसलन; लाल, हरा तथा गहरे नीले रंग में चिपचिपापन और नारंगी में कड़ापन एवं खुरदुरापन होता है। इसके अतिरिक्त यह भी ज्ञात हुआ है कि विभिन्न रंगों में विभिन्न स्तरों की ऊर्जा प्रवाहित होती रहती है तथा उनमें विभिन्न स्तरों में संवेदनात्मक गुण भी पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए लाल रंग जलता हुआ, नारंगी हलका गर्म, पीला बहुत कम गर्म, हरा तटस्थ होता है, हलका नीला ठंडा, नेत्री ब्ल्यू बर्फ के समान, बैंगनी ठंडा, किन्तु चिकोटी काटने जैसा आभास होता है। रूस की अन्य कई महिलाओं में से एक नीना कुलेगिना भी है· जो दूर से ही वस्तुओं को गतिशील बना देती है और पिंग-पांग गेंद को आकाश में ही रोक देती है तथा अपनी अंगुलियों की पोरों से प्रावदा को पढ़ लेती है। इसीप्रकार अमेरिका में भी एक महिला है फेलिसिया पेराइस जो अपनी मानसिक शक्ति द्वारा वस्तुओं को गतिशील बना देती है। इंगलैंड के फारेस्ट सेल ससेक्स में एम्मा नामक एक बालिका है। जब वह खाने की मेज पर बैठती है तो छुरी, कांटे, चम्मच आदि धातु की वस्तुएँ उसके कोमल हाँथों में आते ही मुड़ जाते हैं। वह इस क्रिया को रोक नहीं पाती। इस प्रदर्शन को यूरी गेलर और भौतिकशास्त्री जान टेलर ने भी देखा है। इसप्रकार के अनेक मानसिक चमत्कारों का विस्तृत उल्लेख सुप्रसिद्ध परा-भौतिक एवं परा-मनोवैज्ञानिक अमेरिकी लेखक शीला आस्ट्रेन्डर तथा लिन श्रोडर ने अपनी पुस्तक (Psychic Discoveries behind the iron curtain) में किया है, जो उनकी व्यापक खोजों एवं भ्रमण पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए इन्होंने साम्यवादी देश चेकोस्लोवाकिया में एक ऐसी मशीन(Psychotronic generator) देखी जो मानसिक शक्ति द्वारा उत्पन्न संचित ऊर्जा (Psychotronic energy) द्वारा चलाई जा सकती है। दूसरे शब्दों में कुछ यौगिक चमत्कार इस मशीन द्वारा भी दिखाये जा सकते हैं। जे० गैथर प्राट ने भी अपनी पुस्तक (The Psychic Realm) में इसीप्रकार के चमत्कारों उल्लेख किया है। आजकल अमेरिका तथा योरोपीय देशों में परा-भौतिकशास्त्र एवं परा-मनोवैज्ञानिक विषयों पर हर साल सैकड़ों पुस्तकें लिखी जा रही हैं, क्योंकि उन विकसित देशों के लोग सभी कुछ और यहाँ तक कि ईश्वर-दर्शन भी बुद्धिवादी कौशल द्वारा ही प्राप्त कर लेना चाहते हैं। वे लोग भारतीय दर्शनधारा के विपरीत त्याग(Renunciation) में विश्वास नहीं रखते और आत्मसमर्पण (Self-surrender) का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का तो नाम भी नहीं जानते। लेकिन इतना जरूर है कि वे लोग परम सत्य की खोज करना चाहते हैं, तथ्यों की गहराई में जाना भी जानते हैं तथा अपनी धुन एवं लगन के पक्के होते हैं, किन्तु प्राचीन ऋषि-मुनियों की भाँति हिमालय की कन्दराओं में बैठकर ध्यान लगाना पसन्द नहीं करते। वे लोग कुछ बीच का रास्ता निकालना चाहते हैं जिसमें भोग और योग दोनों एक हो जाँय। परन्तु उनकी नकल करते हुए आजकल भारतीय भी किसी से पीछे नहीं हैं। ऐसे लोगों को साँख्य, वेदान्त और योगदर्शन का गहन अध्ययन करना चाहिए!

स्विस अन्वेषक एरिकवान डेनिकेन ने भी अपनी लोकप्रिय पुस्तक (Miracles of the Gods) में अनेक प्रामाणिक दैवी चमत्कारों का वर्णन किया है जो वस्तुतः मानसिक शक्ति का प्रदर्शन है। इस भौतिकजगत में कोई भी ऐसा चमत्कार नहीं हो सकता जो मानसिक शक्ति से पृथक एवं स्वतन्त्र हो, क्योंकि कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार मन और पदार्थ अभिन्न हैं तथा परस्पर कारण और कार्य श्रृंखला द्वारा जुड़े हुए हैं। अतः इस नियम के अनुसार दुनियाँ का कोई भी चमत्कार विना किसी कारण के नहीं हो सकता, क्योंकि इस जगत का कोई भी सगुण और साकार नाम-रूप अथवा घटनाचित्र सार्वभौमिक मन (Universal mind) द्वारा ही नियन्त्रित एवं संचालित होता है। डेनिकेन कहते हैं कि १९१७ ई० में पुर्तगाल के एक गाँव फातिमा (Fatima) में कुछ छोटे-छोटे गड़ेरिये बच्चों को ईसाईयों की पवित्र देवी मेरी के अलौकिक दर्शन प्राप्त होने लगे। यह साक्षातकार पहले हर महीने १३ ता० को होता था। इसे देखने के लिए लोगों की भीड़ जुटने लगी। इसके फलस्वरूप १३ अक्टूबर १९१७ को लगभग ७०-८० हजार व्यक्ति एकत्र होकर उस चमत्कार का इन्तजार करने लगे। उस समय घनघोर वर्षा हो रही थी, किन्तु अचानक बादल फट गये आकाश साफ हो गया और सूर्य देदीप्यमान हो उठा। इसी समय फातिमा में सूर्य का चमत्कार घटित हुआ जिसका लिखित प्रमाण आज भी विद्यमान है। अचानक सूर्य में कम्पन होने लगा, वह इधर-उधर चक्कर काटने लगा तथा कभी बाएँ और कभी दाहिने घूमने लगा और अन्त में अपनी किली पर ही तेजी से चक्कर काटने लगा। चारों ओर हरा, लाल तथा बैंगनी रोशनी फूट पड़ी। हजारों लोगों ने इस चमत्कारी दृश्य को देखा और प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है कि सूर्य में यह क्रिया कई बार हुई। कभी सूर्य इधर-उधर चक्कर काटने लगता, कभी उसमें से मोहक रंगों की फुलझड़ियाँ छूटने लगतीं। यह क्रिया लगभग १२ मिनट तक हुई और लगभग २५ मील के दायरे में दृष्टिगोचर हुई। लोगों का कहना है कि उस दृश्य का वास्तविक चित्रण नहीं हो सकता। आज भी फातिमा एक बहुत बड़ा तीर्थस्थान है। वास्तव में इसप्रकार की घटनाओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा परमपिता परमेश्वर कभी-कभी लोगों के अहंज्ञान को झटका देकर धर्म की ओर उन्मुख होने के लिए प्रेरित करता है, ऐसा भारतीय दर्शनशास्त्र में कहा गया है।

इस सन्दर्भ में एरिकवान डेनिकेन का कहना है कि चमत्कार एवं साक्षात-कार (Visions) सम्बन्धी सैकड़ों सरकारी अभिलेखों (Records) का अध्ययन करने के बाद यह स्पष्ट होता है कि किसी चमत्कार को स्वीकार या अस्वीकार करना सिर्फ कैथोलिक चर्च का ही एकाधिकार है, जबकि चमत्कार तथा देवी-देवताओं से साक्षात्कार का दावा अनेक धर्मों तथा सम्प्रदायों में पाया जाता है। डेनिकेन के अनुसार कैथोलिक चर्च बराबर यह दावा करता रहा है कि उसके द्वारा प्रमाणित चमत्कार ही वास्तविक कहे जा सकते हैं। डेनिकेन के इस कथन का अर्थ यह होगा कि भारत के प्राचीन ऋषि-मुनियों को ईश्वर का साक्षातकार नहीं हुआ था और उनके द्वारा रचित वेद-वेदान्त आधारहीन हैं, केवल कल्पना की उड़ान मात्र हैं। इस नियम के अनुसार रामकृष्ण परमहंस को भी माँ काली के दर्शन नहीं होते थे। अगर ऐसा कोई दावा करता है तो यह उसका अहंज्ञान है, सापेक्षभ्रम है। दुनियाँ का कोई भी चमत्कार कभी वास्तविक नहीं हो सकता, चाहे उसे कोई भी पवित्र संस्था मान्यता क्यों न प्रदान करे। अद्वैत वेदान्त के अनुसार वास्तविक शक्ति तो केवल एक ही है जिसे निर्गुण और निराकार ब्रह्म कहा गया है और बाकी सब कुछ केवल मायारूप है, सिर्फ छायाचित्र हैं। गीता, ब्रह्मसूत्र एवं उपनिषदों पर आधारित इस परम सिद्धान्त की स्पष्ट व्याख्या आज से सैकड़ों वर्ष पहले जगद्गुरु शंकराचार्य ने कर दी थी और कपिल तथा आइन्स्टीन के सापेक्षवाद से भी यही स्पष्ट होता है। डेनिकेन यह भी कहते हैं, "मैं चर्च के इस दावे को स्वीकार नहीं करता कि ईसाई धर्म ही मोक्ष (Salvation) प्रदान करने का एकमात्र साधन है, क्योंकि मैं बुद्ध और मुहम्मद के धार्मिक सिद्धान्तों को किसी भी तरह कम महत्वपूर्ण नहीं समझता।" इस सम्बन्ध में डेनिकेन ने डा० राबर्ट केहल (Robert Kehl) का उद्धरण प्रस्तुत किया है। केहल के अनुसार ईसाई धर्म के अधि-कांश सिद्धान्त एवं परम्परायें प्राचीन धर्मों से ही ली गई हैं। बाईविल में कोई भी ऐसा धार्मिक या नैतिक विचार नहीं है जो समकालीन अथवा पूर्ववर्ती धर्मों एवं धार्मिक ग्रन्थों में नहीं पाई जाती। दूसरे शब्दों में बाईविल के धार्मिक सिद्धान्त मौलिक नहीं कहे जा सकते।

पहले कहा गया है कि सांख्यदर्शन एक मूलदर्शन है और महाभारत के अनुसार संसार को बन्धन और मोक्ष तथा अन्य दार्शनिक सिद्धान्तों का ज्ञान इसी दर्शन से प्राप्त हुआ। इसी दर्शन के मूल सिद्धान्तों पर वेदान्त और योग-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दर्शन भी आधारित हैं। इस दर्शन के अनुसार प्रत्येक चेतनपुरुष, प्रत्येक जैविक कण अथवा प्रत्येक जीव त्रिविध गुण-विकारों के प्रभाव से कारण और कार्य की शृंखला से बंधा हुआ है, क्योंकि वह प्रकृति की प्रदर्शनी में आसक्त बना रहता है, मोहवश अथवा सापेक्षभ्रम से उसी को यथार्थ मान लेता है और अहंकारवश अपने को ही कर्त्ता समझ लेता है जिसके परिणामस्वरूप उसे आवागमन का चक्र अथवा सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) का अनुसरण करना पड़ता है। इस चक्र से मुक्त होने का केवल एक ही रास्ता है—सर्वस्व त्याग (Renunciation) और पूर्ण आत्मसमर्पण (Self surrender) जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण भगवान बुद्ध, रामकृष्ण परमहंस तथा रमण आदि महात्माओं ने प्रस्तुत किया है। जब तक मनुष्य में कामना रहेगी, इच्छा-वासना, तृष्णा अथवा आसक्ति रहेगी तब तक वह कभी प्रकृति के बन्धन से मुक्त नहीं हो सकता, उसे निर्वाण प्राप्त नहीं हो सकता। अपने शुभ कर्मों से उसे स्वर्गलोक, देवलोक अथवा ब्रह्मलोक प्राप्त हो सकता है, लेकिन वह कारण और कार्य शृंखला से परे नहीं हो सकता, कारण-शरीर (Causal body) से छुटकारा नहीं पा सकता। इसके लिए निर्विकल्प समाधि का निरपेक्ष ज्ञान आवश्यक है। अतः वेदान्त के अनुसार वह मोक्ष अथवा कैवल्य सिर्फ मनुष्य के अपने पुरुषार्थ द्वारा ही प्राप्त होता है, किसी व्यक्ति अथवा संस्था के व्यापार अथवा ठेका द्वारा नहीं। अगर ठेका-प्रथा द्वारा यह सम्भव हो जाय तो सभी एक साथ मुक्त हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में भला प्रकृति बेचारी क्या करेगी? वह अपना नृत्य-गान, हाव-भाव तथा मोहक प्रदर्शनी किसको दिखलायेगी?

डेनिकेन ने इसी पुस्तक में एक दूसरे बड़े तीर्थस्थल का भी रोचक चित्रण प्रस्तुत किया है। फ्रांस के एक प्रदेश में लूर्डीज (Lourdes) नामक स्थान है जो विश्व के सर्वोत्तम तीर्थस्थलों में एक माना जाता है। यहाँ लगभग ५० लाख तीर्थयात्री प्रतिवर्ष आते हैं जो अपने तरह-तरह के दुखों के निवारण के लिए तथा अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए देवी मेडोना (Madonna) से प्रार्थना करते हैं। यहाँ चमत्कारों का व्यापार पिछले लगभग १२५ वर्षों से फल-फूल रहा है। यहाँ की प्रत्येक निर्मित वस्तुओं पर मेडोना का चित्र अंकित होता है। यहाँ हमेशा मेला सा लगा रहता है और तरह-तरह के रोगों से पीड़ित सैकड़ों लोगों की लम्बी कतार लगी रहती है। तीर्थयात्री यहाँ के पवित्र एवं चमत्कारी जल को प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहते हैं। यहाँ हजारों जलती हुई मोमबत्तियों की आभा तथा सुगन्धित द्रव्यों की भीनी महक चारों ओर फैलती रहती है। ऐसे वातावरण में हजारों लोग तरह-तरह की प्रार्थनायें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा मन्त्रोचारण करते रहते हैं। यहाँ प्रवेशद्वार के समीप देवी मेरी की सफेद संगमरमर की मूर्त्ति स्थापित है। यहाँ १८५८ ई० से निरन्तर अखण्ड ज्योति जलती रहती है और वातावरण पवित्र बना रहता है। कहा जाता है कि इस स्थल पर एक १४ वर्षीय लड़की को देवी मेडोना ने १८ बार दर्शन दिये थे तथा कुछ सन्देश एवं आदेश भी दिये थे। सन् १८५८ ई० में यहाँ १०० से ऊपर चमत्कारों का उल्लेख है जिनमें से ७ को पवित्र चर्च द्वारा मान्यता प्राप्त है। कैथोलिक परिभाषा के अन्तर्गत चमत्कार का अर्थ होता है कि जो घटना प्रकृति के नियमों से परे की हो। यहाँ घटित हजारों चमत्कारों में से डेनिकेन के अनुसार सिर्फ ६३ चमत्कारों को ही पवित्र चर्च की मान्यता प्राप्त है।

डेनिकेन के इस विवरण से यह स्पष्ट होता है कि जो संस्था चमत्कारों को मान्यता प्रदान करती है उसके सभी लोगों को ईश्वर दर्शन हो चुका है अथवा उन्हें उस परमशक्ति का पूर्ण ज्ञान है। इसके विपरीत वेदान्त कहता है कि उस परमशक्ति को आज तक कोई जान नहीं सका (नेतिनेति जेहि वेद निरूपा····), उसकी विभूतियों का कोई अन्त नहीं है। अगर चमत्कार उसी शक्ति द्वारा होता है तो उनमें यह भेद हम कैसे कर सकते हैं? यह भी कैसे सम्भव है कि कोई भी चमत्कार प्रकृति के नियमों से परे हो जाय अथवा कारण और कार्य श्रृंखला से पृथक हो जाय? प्रकृति से परे तो केवल निर्गुण और निराकार ब्रह्म है जिसकी कोई परिभाषा नहीं है, उसे किसी की मान्यता की अपेक्षा नहीं है। वास्तव में किसी भी चमत्कार की केवल इतनी ही उपयोगिता है कि इससे मनुष्य का किसी परा-शक्ति में विश्वास दृढ़ हो जाय और उसकी सुप्त चेतना जाग्रत हो उठें। जब चेतना (आत्मा) जाग्रत होती हैं तो यौगिक प्रक्रिया द्वारा वह प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो जाती है। चमत्कार का सम्बन्ध शरीर और मन से हैं, चाहे वह शरीर स्थूल हो या सूक्ष्म। लेकिन वेदान्त और योगदर्शन कहते हैं कि मनुष्य शरीर नहीं हैं, मन-बुद्धि और अहंकार (Ego) नहीं हैं, बल्कि निर्गुण और निराकार आत्मा है (अहम् ब्रह्मास्मि)। तो निर्गुण और निराकार आत्मा का भला चमत्कार से क्या सम्बन्ध हो सकता है? यह शुद्ध और निरपेक्ष ज्ञान ही मोक्ष है, निर्वाण है।

सनातन धर्म अथवा हिन्दू धर्मग्रन्थों में दिव्य चमत्कारों की असंख्य कहानियाँ भरी पड़ी हैं, सिद्ध योगी भी अनेक प्रकार के चमत्कार दिखलाया करते हैं, आधुनिक विज्ञान भी ऐसे चमत्कार दिखला रहा है। लेकिन किसी भी चमत्कार, वैज्ञानिक तथा सिद्ध योगी को हम ईश्वर नहीं कह सकते, क्योंकि जो शब्दों या विचारों द्वारा परिभाषित होता है वह कभी स्वयं ईश्वर नहीं हो सकता। अगर ऐसा किया जाता है तो यह हमारा सापेक्ष भ्रम है। इस क्रिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा हम सर्वशक्तिमान ईश्वर को सीमाबद्ध कर देते हैं, जो स्वयं अपने अहंज्ञान एवं सापेक्ष भ्रम का परिचायक है। अनन्त ब्रह्म को कभी भी सीमाबद्ध नहीं किया जा सकता। जो कुछ भी चमत्कार हो सकता है, वह सभी प्रकृति और मानसिक शक्ति के अन्तर्गत ही हो सकता है, उससे परे नहीं। स्वामी विवेकानन्द ने भी इसप्रकार के चमत्कारों को प्रत्यक्ष देखकर उनका विवरण प्रस्तुत किया है जो अद्वैत आश्रम द्वारा प्रकाशित पुस्तक (The complete works of Swami Vivekananda, Vol,II, 1971ed. PP. 10—23) में संचित हैं।

८ जनवरी १९०० को लास एंजिल्स केलिफोर्निया में भाषण देते हुए स्वामी विवेकानन्द ने कहा कि जब वे एक बार अपने कुछ मित्रों के साथ एक ऐसे आदमी के पास पहुँचे जो सबके मन की बात बता देता था। इन लोगों ने अपने मन की बात प्रश्नों के रूप में लिखकर पहले से ही अपनी जेबों में रख लिया था और वहाँ पहुँचते ही उस व्यक्ति ने उन प्रश्नों तथा उनका उत्तर देना शुरू कर दिया। फिर उस मनुष्य ने कागज पर कुछ लिखा, उसे मोड़ा और उसके पीछे उनसे हस्ताक्षर करने के लिए कहा और बोला, "इसे पढ़ो मत, जेब में रख लो, जबतक कि वह इसे फिर न माँगे।" इसप्रकार उसने सभी से कहा। फिर उसने कहा, "अब किसी भी भाषा का कोई शब्द या वाक्य तुम लोग अपने मन में सोच लो।" विवेकानन्द ने संस्कृत का एक लम्बा वाक्य सोच लिया। वह मनुष्य संस्कृत बिलकुल नहीं जानता था। उसने कहा, "अब अपने जेब का कागज निकालो।" कैसा आश्चर्य! वही संस्कृत का वाक्य उस कागज पर लिखा था। और नीचे यह भी लिखा था कि 'जो कुछ मैंने इस कागज पर लिखा है, वही यह मनुष्य सोचेगा।' और यह बात उसने एक घण्टा पहले ही लिख दी थी। इसीप्रकार उनके मित्र ने अरबी भाषा का एक वाक्य सोचा जो 'कुरान शरीफ' से लिया गया था, लेकिन वह वाक्य भी इसीप्रकार कागज पर लिखा हुआ था। उनके दूसरे वैद्य मित्र ने जर्मन भाषा का एक वाक्य सोचा था और वह भी उसीप्रकार कागज पर लिखा हुआ था। कई दिनों के बाद विवेकानन्द अपने दूसरे मित्रों के साथ फिर वहाँ गये और इस बार भी वैसा ही घटित हुआ।

विवेकानन्द ने एक दूसरी घटना का विवरण दिया है। एक बार हैदराबाद में उनकी भेंट एक ऐसे व्यक्ति से हुई जो अदृश्य वस्तुओं को साकार कर देता था। ठण्ड के दिन थे और वह व्यक्ति केवल एक दुपट्टा पहने था तथा कम्बल ओढ़े था। पचास आँखे उसकी ओर घूर रही थीं। उसने कहा, "अब आपलोगों को जो कुछ चाहिए, वह कागज पर लिखिये।" उन सब लोगों ने उन फलों के नाम लिखे, जो उस प्रान्त में पैदा तक नहीं होते थे—अंगूर के गुच्छे, सन्तरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यादि। कैसा आश्चर्य ! उसके कम्बल में से अंगूर के गुच्छे तथा सन्तरे आदि इतनी संख्या में निकले जो उस आदमी के वजन से लगभग दुगने थे। वे फल चखने पर वास्तविक जान पड़े। इसके पश्चात् उसने ढ़ेर सा ताजे गुलाब का फूल निकाल दिया जिनपर ओस की बूँदें चमक रही थीं। पूछने पर उसने बताया कि यह सिर्फ हाथ की सफाई है। विवेकानन्द की दृष्टि में इसमें केवल हाँथ की सफाई नहीं हो सकती। उनका कहना है कि उन्होंने इसप्रकार के अनेक चमत्कार देखे हैं जो सभी देशों में हुआ करते हैं।

इन भौतिक चमत्कारों की समीक्षा करते हुए स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि इस प्रकार की सभी असाधारण शक्तियाँ (Extraordinary powers) मनुष्य के मन में ही स्थित हैं। मनुष्य का मन सार्वभौमिक मन (Universal mind) का अंश मात्र है। प्रत्येक मन दूसरे मन से जुड़ा हुआ है। और प्रत्येक मन, वह चाहे जहाँ स्थित हो, समस्त संसार के कर्म-व्यापार से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है (Is in actual communication)। अगर इस कथन को वैज्ञानिक भाषा में व्यक्त किया जाय तो यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कण-तरंगों का बना हुआ है, जो सार्वभौमिक मन की असीम तरंगों द्वारा असंख्य नाम-रूपों में प्रदर्शित हो रहा है और उस प्रदर्शन में कोई विशिष्ट शरीर, वस्तु एवं मन प्रकृति की सम्पूर्ण प्रक्रिया से कभी पृथक नहीं हो सकते, क्योंकि सभी कारण और कार्य की शृंखला में बँधे हुए हैं। स्वामी विवेकानन्द का यह कथन महामुनि कपिल के सांख्यदर्शन पर आधारित है। इस सन्दर्भ में दृष्टान्त प्रस्तुत करते हुए विवेकानन्द कहते हैं कि विचार सम्प्रेषण (Thought transference) द्वारा यह स्पष्ट होता है कि मन स्वतन्त्र नहीं है, वल्कि उसका अस्तित्व सापेक्ष है। विवेकानन्द के अनुसार सामान्य प्रक्रिया में विचारों का प्रसारण, गठन और विघटन प्रक्रिया द्वारा होता है, किन्तु टेलीपेथी (Telepathy) में वह प्रत्यक्ष होता है। इससे स्पष्ट है कि मन एक अखण्ड वस्तु है, अविरल अस्तित्व है, जैसाकि योगी कहते हैं। मन विश्वव्यापी है। तुम्हारा मन, मेरा मन, ये सब विभिन्न मन उस सार्वभौमिक मन के अंश मात्र हैं, मानो समुद्र पर उठनेवाली छोटी-लोटी लहरें हैं; और इस अखण्डता के फलस्वरूप ही हम अपने विचारों का प्रसारण परस्पर एक-दूसरे से कर लेते हैं। अतः हम देखते हैं कि मानवजीवन में स्वाधीन इच्छा (Free will) का सिद्धान्त एक भ्रामक सिद्धान्त है, जो जीव के अहंज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह अहंज्ञान ही वन्धन है और इसका त्याग ही मुक्ति।

जब से इस जगत में आधुनिक विज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ तब से क्रमशः अहंज्ञान में वृद्धि होती गई। लोग इन्द्रियजनित ज्ञान अथवा प्रत्यक्ष ज्ञान को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही यथार्थ समझने लगे। अब केवल इस लोक की ही बातें की जाती हैं, भोग-विलास को ही अन्तिम उद्देश्य माना जाता है, क्योंकि यूक्लिडीयन विज्ञान के अनुसार मृत्यु के बाद जीव ऊर्जा अथवा जड़ पदार्थ बन जाता है। इसीलिए आजकल आत्मा या परमात्मा की बातें पागलपन की बातें समझी जाती हैं। पता नहीं ऐसे लोग मन्दिर, मस्जिद और गिरिजाघरों में क्यों जाते हैं? कभी-कभी धर्मग्रन्थ कैसे पढ़ लिया करते हैं? शायद मानसिक शान्ति के लिए अथवा अपने को धोखा देने के लिए कि वे धर्म पर आचरण कर रहे हैं। लेकिन ऐसे लोग नहीं जानते कि जबतक मन शुद्ध और सात्विक नहीं होगा तबतक उन्हें वास्तविक सुख और शान्ति नहीं प्राप्त हो सकती। अगर वर्त्तमान अवस्था को ही वास्तविक सुख और शान्ति माना जाय तो आज संसार में हिंसा और संघर्ष चरम सीमा पर क्यों हैं? आज एटम और हाइड्रोजन बमों का अम्बार किसलिए लगाया जा रहा है? जब सभी एक हैं, एक ही मानसिक शक्ति द्वारा जुड़े हुए हैं, सबमें एक ही परम चेतनशक्ति का तेज प्रवाहित हो रहा है तो परस्पर इतना भेद और अविश्वास क्यों है? कपिल कहते हैं कि यह कारण और कार्य की शृंखला में फँसे हुए त्रिविध गुण-विकारों के कारण हो रहा है जिसके फल-स्वरूप जीव अहंकारवश अपने को सम्पूर्ण प्रक्रिया से पृथक कर लेता है और भ्रमवश अपने को ही कर्त्ता मान बैठता है।

अगर हम इस रेखागणित को मानते हैं और अपने भौतिक लोक को भी मानते हैं तो कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार हमें मृत्यु के बाद पराभौतिक लोक अथवा परलोक को भी मानना पड़ेगा, क्योंकि इस नियम के अनुसार कारण और कार्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और लोक तथा परलोक (कार्य और कारण) को बिना जोड़े हुए वह वृत्त (Circle) पूर्ण नहीं हो सकेगा। अगर इस सम्बन्ध में हम यूक्लिडीयन रेखागणित को मानेंगे तो हमारा अस्तित्व स्वतन्त्र या निरपेक्ष बन जायेगा। जिसप्रकार यूक्लिडीयन रेखागणित पर आधारित आधुनिक विज्ञान को आइन्स्टीन ने ध्वस्त कर दिया उसीप्रकार भौतिक विचारधारा पर आधारित भौतिकजगत अथवा लोक का तथाकथित स्वतन्त्र सिद्धान्त भी स्वतः ध्वस्त हो जाता है। अतः मृत्यु के बाद जब भौतिक-शरीर का विनाश हो जाता है तो वृत्तात्मक रेखागणित का अनुसरण करने के लिए जो कारणस्वरूप तत्व शेष रह जाता है उसी को सांख्यदर्शन में सूक्ष्मशरीर (Astral body) कहते हैं जिसमें चेतनपुरुष अपने संस्कारों (गुण-विकारों) के साथ स्थित होकर द्रष्टा बना रहता है।

आप योगियों को आकाश में उड़ते हुए बहुत सुन चुके होंगे, लेकिन वैज्ञा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निकों को उड़ते हुए शायद ही कभी देखे होंगे। तो आइये चलें भौतिकवादी इंगलैण्ड में जहाँ कभी यह घटना साकार रूप ग्रहण कर चुकी है। सन् १८८२ ई० में इंगलैड में 'ब्रिटिश सोसाइटी फार साइकिकल रिसर्च' नामक एक आध्यात्मिक अनुसन्धान समिति का गठन किया गया जिसमें अनेक योरोपीय देशों के विद्वानों एवं वैज्ञानिकों का भी सहयोग था। इस समिति ने मरणोत्तर जीवन, परलोक, पुनर्जन्म तथा मनुष्य की अद्भुत् शक्तियों पर महत्वपूर्ण अनुसन्धान किया। इस सम्बन्ध में केरिंगटन, क्रुकहाल, कानन डायल, स्टीवेन्सन, सर विलियम क्रुक्स, गर्नें, मायर्स, पोडमोर, वालेस, आक्सफाक्, रिचर्ड हडसन, सर ओलीवर लाज, जान रेले तथा विलियम जेम्स का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस सम्बन्ध में अनेक ग्रन्थ प्रकाशित किये गये जिनमें तथ्यों को प्रामाणिक ढंग से प्रस्तुत किया गया। इनमें से श्रेनेक, सर क्रुक्स, कानन डायल तथा कुछ अन्य लोगों ने मृतात्माओं के चित्र उतारने में भी सफलता प्राप्त की। इस अनुसन्धान के प्रभाव से इंगलैंड, अमेरिका, फ्रांस तथा जर्मनी आदि देशों में मृतात्माओं का आवाहन भी किया जाता था। इन अन्वेषकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि मनुष्य की मृत्यु उसका अन्त नहीं है, बल्कि उसका अस्तित्व सूक्ष्मलोक में विद्यमान रहता है और उसका पुनर्जन्म होता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य में असाधारण मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति होती है जो सूक्ष्म दृष्टि, अतीन्द्रिय अनुभव (ESP), टेलीपेथी तथा दूरदर्शन (Clair Voyance) आदि के रूप में प्रकट होती है। इस सम्बन्ध में मैडम ब्लेवाट्स्की, डा० एनीबेसेन्ट, लीडबीटर तथा अन्य थियोसोफी विचारकों ने भी महत्वपूर्ण कार्य किया। मैक्स मूलर, रोमांरोंला तथा सिस्टर निवेदिता जैसे पाश्चात्य विचारक भी वेदान्त के सिद्धान्तों से अत्यन्त प्रभावित थे।

सुप्रसिद्ध अंग्रेज भौतिकशास्त्री एवं रसायनशास्त्री सर विलियम क्रुक्स मृतात्माओं के आवाहन तथा प्रेतविद्या पर अनुसन्धान के लिए विख्यात हैं। उन्होंने अपनी प्रयोगशाला में एक माध्यम डेनियल डगलस होम पर अनेक प्रकार के प्रयोग किये। क्रुक्स का विश्वास है कि कोई ऐसी अदृश्य शक्ति है जो अज्ञात साधनों द्वारा मानव शरीर से सम्पर्क स्थापित करती है। अपने प्रयोगों के दौरान क्रुक्स ने माध्यम डगलस होम को जमीन से हवा में अनेकों फीट ऊपर उठाकर उस अदृश्य शक्ति के अस्तित्व को प्रमाणित कर दिया। सर विलियम क्रुक्स ने लिखा है कि यह आश्चर्यजनक घटना सिर्फ एक या दो बार ही नहीं घटित हुई, बल्कि विभिन्न परिस्थितियों में अनेक प्रत्यक्षदर्शियों के समक्ष सैकड़ों बार घटित होती हुई दिखाई गई। एक बार डगलस होम ७० फीट ऊँचे हवा में तैरते हुए एक खिड़की से दूसरी खिड़की में प्रविष्ट हो गया। इसीप्रकार की एक घटना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंग्रेज माध्यम कोलिन इवान्स के साथ १९३८ ई० में तीन सौ दर्शकों के समक्ष घटित हुई जो हवा में तैरता रहा और उस घटना का अनेक स्तरों में चित्र भी लिए गये हैं।

वह अदृश्य शक्ति कभी-कभी विनाशलीला भी उपस्थित कर देती है। विख्यात साप्ताहिक पत्र 'टाइम' में २४ अप्रेल १९४४ के अंक में एक घटना का विवरण प्रकाशित हुआ। १९४४ ई० में वसंत ऋतु की एक सुहानी सुबह अमेरिका के उत्तरी डकोटा क्षेत्र के रिचर्डटन नामक नगर में 'वाइल्ड प्लम' स्कूल की शिक्षिका श्रीमती पॉलिन रेबेलै अपनी कक्षा के आठ विद्यार्थियों को पढ़ा रही थीं। अचानक कमरे में रखी हुई अंगीठी के कोयले अपने-आप बड़ी तेजी से जलने लगे। कुछ क्षण बाद ये कोयले अंगीठी से निकल कर दीवारों तक जाने लगे और फिर दीवारों से टक्कर खाकर अंगीठी में वापस आने लगे। फिर जैसे कोई विस्फोट सा हुआ और अंगीठी उल्टी हो गई। पुस्तकों का एक शेल्फ अपने-आप धूं-धूं करके जलने लगा। शेल्फ में रखा एक मोटा शब्दकोष अपने आप शेल्फ से नीचे उतर आया। कमरे की खिड़कियाँ अपने-आप झुलसने लगीं। स्कूल के अन्य लोग भी दौड़ते आये और इस लीला को प्रत्यक्ष देखते रहे। फायर ब्रिगेड को फोन किया गया और जब वह पहुँचा तो यह ताँडव-नृत्य शान्त हो चुका था। इसकी सरकारी जाँच की गई, किन्तु कुछ भी असाधारण बात नहीं मालूम हो सकी। मालूम भी कैसे हो सकती है जबकि विज्ञान के अनुसार पदार्थ ही ऊर्जा है और ऊर्जा ही पदार्थ।

इसीप्रकार की एक घटना मध्यप्रदेश के होशंगाबाद शहर में घटित हुई। जिला परिवार नियोजन के लिपिक सुमेर चंद जैन अपने परिवार तथा वृद्ध माता-पिता के साथ रहते थे। ५ जुलाई सन १९७३ को श्री जैन की माँ की चारपाई में अचानक आग लग गई तथा रजाई, चादर, गद्दा और साड़ी जलने के बावजूद शरीर पर आँच या झुलसने का एक भी चिह्न नहीं था। ऐसी घटना दो-तीन बार घटित हुई तो उन लोगों ने मकान बदल दिया। लेकिन वहाँ भी आग ने पीछा न छोड़ा। दो-तीन मकान बदलने के बाद भी अग्नि का प्रकोप शान्त नहीं हुआ। लोगों ने उन्हें अपने घर में शरण देने से इन्कार कर दिया, तो इन लोगों को जैन मन्दिर में शरण मिली। कई प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार देखते-देखते किसी भी वस्तु में आग लग जाती थी। यद्यपि बुझाने पर बुझ जाती थी, लेकिन फिर किसी अन्य वस्तु में आग लग जाती थी। दिन में ३-३, ४-४ बार तक यह घटना हुई और लगातार होती रही। यह आग गीले कपड़ों, दीवारों, अचार की भरनियों, दाल के डब्बों, अटैचियों आदि में भी लग जाती थी और उसकी लपटें दो-दो, तीन-तीन फीट तक उठती थीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनवरी १९६९ ई० में इसीप्रकार की एक अलौकिक घटना नई दिल्ली में लगातार कई हफ्तों तक घटित हुई। केरोलबाग स्थित एक पुराने मकान में अचानक कोई अदृश्य शक्ति (Imp) दाल, चना, मिष्ठान्न, कोयला, प्याज, टमाटर, माचिस, सिक्के तथा नोटों की वर्षा करने लगी जिसे आश्चर्यचकित सैकड़ों लोगों ने देखा। पहले यह क्रिया सवेरे और शाम दो-दो घन्टे होती रही और बाद में वह दिनभर होने लगी। वैसे यह क्रिया १८ नवम्बर १९६८ से ही शुरू हो गई, लेकिन जनवरी में चरम सीमा पर पहुँच गई। इस पैशाचिक घटना को दिल्ली के पत्रकारों ने भी देखा और एक प्रतिष्ठित दैनिक पत्र (Indian Express) के १४ जनवरी के अंक में इस घटना का चित्र भी प्रकाशित हुआ था।

इसीप्रकार की एक दूसरी अलौकिक घटना नई दिल्ली में ही घटित हुई। राजधानी के उत्तरी भाग में शुक्रवार १७ मार्च १९७८ को अचानक एक भयानक बवंडर आंया। देखते ही देखते दो मिनट में ६ किलोमीटर का हिस्सा दर्दनाक तबाही की कहानी बन गया। सरकारी तौर पर २८ लोगों की मृत्यु हो जाने की पुष्टि की गई, लगभग एक हजार लोग घायल हो गये, पक्के, सुन्दर भवन कुरूप हो गये....दीवारें ढह गईं, मकानों की छतें कपड़ों की तरह उड़ गईं, बसें यात्रियों सहित चरखी की तरह घूम गईं, स्कूटर-मोटर साइकिलें हवा में तैरती नजर आईं, बिजली और टेलीफोन के खम्भें धराशायी हो गये तथा विशाल-काय मजबूत पेड़ कहीं से कहीं पहुँच गये। अनुमान है कि इस विनाशलीला में लगभग दो करोड़ रुपये की क्षति हुई। बवंडर भी विचित्र था, उत्तर दिल्ली विश्वविद्यालय क्षेत्र के केवल ६ कि० मी० हिस्से में ही आया। दिल्ली के और भागों में इसका कोई प्रभाव नही पड़ा। इस बवंडर के सम्बन्ध में दिल्ली विश्व-विद्यालय में भौतिकी विभाग के व्याख्याता स्वदेश कुमार त्रिखा का विचार है कि तथ्यों के आधार पर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह विनाशलीला किसी 'उड़न तश्तरी' के कारण हुई है जो अत्यधिक तीव्र गति से और सामान्यतः कम ऊँचाई पर उड़ रही थी और जिसके साथ परमाणु ऊर्जा भट्ठी की शक्ति कार्य कर रही थी। इसके परिणामस्वरूप वातावरण में रेडियो सक्रियता बढ़ गई। दिल्ली विश्वविद्यालय के ही संगीत एवं कला विभाग के रीडर डा० एस० शुक्ल ने उस उड़नतश्तरी को देखने का भी दावा किया है। भारत के अन्य भागों से भी इसीप्रकार के दावे किये गये हैं। अहमदाबाद की भौतिक अनु-सन्धानशाला में उड़न तश्तरियों पर हो रही खोज का कुछ प्रामाणिक विवरण वहीं के वैज्ञानिक डा० ज्योतींद्र देसाई, अरुणा तथा डा० देवेन्द्रलाल द्वारा प्रस्तुत किया गया है—४ अप्रेल १९७८ को टाइम्स आफ इंडिया के अहमदाबाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संस्करण ने एक समाचार प्रकाशित किया, 'शहर के ऊपर से यू० एफ० ओ० उड़ी'। बाद में समाचार मिला कि वह अज्ञात उड़न ज्वाला उदयपुर, अजमेर, इंदौर, खंडवा, अहमदाबाद, बड़ौदा, बम्बई, पुणे, औरंगाबाद, अहमदनगर, परमणी, सतारा और बीच के कई स्थानों पर दिखाई दी थी। १० मार्च १९७८ को भी इसी तरह की वस्तु को देखने का समाचार मिला और ३ अप्रेल से १७ अप्रेल के बीच भी कई दिन ऐसी अग्नि ज्वालाएँ देखी गईं। ३ अप्रेल १९७८ को श्री घुनकरकरिया ने आकाश में उड़ती हुई एक अग्निज्वाला का चित्र अपने केमरे से खींचा था। कहा जाता है कि वह अज्ञात वस्तु लगभग १०० कि० मी० की ऊँचाई पर उड़ रही थी ओर उसकी गति लगभग १० कि०मी० प्रति सेकन्ड थी।

उड़न तश्तरियों (UFO) की भी अपनी एक बिचित्र कहानी है। पाश्चात्य देशों में तो इन्हें हजारों वार देखा गया है, इन पर सैकड़ों लेख तथा पुस्तकें (चित्रों सहित) प्रकाशित हो चुकी हैं और यहाँ तक कि इन पर अनेक फिल्में भी बनाई जा चुकी हैं। लेकिन यूक्लिडीयन विज्ञान इन्हें अभीतक दृष्टिभ्रम ही मानता आ रहा है। २९ जनवरी १९६५ को अमेरिका के मेरीलैण्ड हवाई अड्डे पर दो आपरेटरों ने राडार के पर्दे पर दो अज्ञात वस्तुओं (UFO) को उड़ते हुए पाया। उनकी गति ४,३५० मील प्रति घन्टे थी और ऊँचाई ३० मील थी। अचानक अज्ञात वस्तुएँ मुड़ीं और पर्दें से गायब हो गईं। ३ मई १९६४ को केनबरा (आस्ट्रेलिया) में अनेक लोगों ने एक बड़ी और चमकदार वस्तु को आकाश में उड़ते देखा। वह वस्तु बिचित्र ढंग से लुढ़कती हुई सी प्रतीत हो रही थी और उसके पीछे एक छोटी वस्तु उस बड़ी वस्तु की ओर तेजी से बढ़ी। छोटी वस्तु में लाल रोशनी चमक रही थी और थोड़ी देर बाद वह आँखों से ओझल हो गई। २३ नवम्बर १९५३ को मिशीगन में किनरास हवाई अड्डे पर एक अज्ञात वस्तु राडार के पर्दे पर दृष्टिगोचर हुई। फ्लाइट लेफ्टिनेन्ट आर० विल्सन को जो एक जेट जहाज F—86 के प्रशिक्षण उड़ान पर था, उस वस्तु का पीछा करने का आदेश दिया गया। राडार विशेषज्ञों ने पर्दे पर १६० मील तक उस अज्ञात वस्तु का पीछा करते हुए विलसन के जहाज को स्वयं देखा, किन्तु अचानक तेजी से उड़ती हुई दोनों वस्तुएँ आपस में मिल गईं, ऐसा राडार के पर्दे पर दिखाई दिया। विल्सन के जेट जहाज से रेडियो सम्पर्क टूट गया। लेकिन आश्चर्यजनक बात यह थी कि बहुत खोज करने के बाद भी विल्सन और उसके जहाज का कोई निशान नहीं मिल सका। न्यूहैम्प-शायर (अमेरिका) के एक स्थान पर १३ सितम्बर १९६५ के दिन भोर में पुलिस सर्जेन्ट यूजीन बट्रेन्ड की भेंट एक बदहवास सी महिला से हुई। उस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महिला ने सर्जेन्ट को बताया कि एक विशाल उड़ती हुई वस्तु जिसमें से लाल रंग की आभा निकल रही थी, लगभग १० मील तक रूट न० १०१ पर उसकी कार का पीछा करती हुई आ रही थी, जो अचानक जंगल में लुप्त हो गई। पुलिस सर्जेन्ट को इस सूचना पर विश्वास नहीं हुआ, किन्तु थोड़ी देर बाद उसके सहयोगी जीन टौलेन्ड द्वारा भी यही सूचना प्राप्त हुई जिसे एक दूसरे आदमी ने बताया था। पेट्रोल दस्ता उस बिचित्र वस्तु को खोजने में व्यस्त था कि अचानक एक खेत में खड़े हुए ६ घोड़े पागलों की तरह इधर उधर भागने लगे। इसी समय वह क्षेत्र चारों ओर लाल रोशनी से जगमगा उठा और उसके साथ ही वह विशाल लाल वस्तु धीरे-धीरे उनकी ओर बढ़ती हुई दिखाई दी जो पेड़ों की ऊँचाई तक ही थी। जाँच द्वारा भी इस रहस्य पर से पर्दा नहीं उठ सका। १५ फरवरी १९६७ को लुफ्तहंसा का एक जहाज जब सेनफ्रांसिस्को जा रहा था तो उसके कप्तान तथा चार अन्य सहयोगियों को उस जहाज के समानान्तर उड़ती हुई एक अज्ञात वस्तु दिखाई दी जिसका व्यास (Diameter) ३३ फीट था। वह वस्तु चकाचौंध पैदा कर रही थी और कुछ समय बाद लुप्त हो गई।

सन् १९६७ ई० में यू० एफ० ओ० अनुसन्धानकर्त्ताओं की सातवीं अन्त-र्राष्ट्रीय बैठक के अवसर पर अन्तरिक्ष विज्ञान के विशेषज्ञ प्रोफेसर हरमान ओबर्थ (Hermann Oberth) का कहना था कि अज्ञात उड़न-वस्तुएँ (UFOs) एक ऐसी समस्या है जो अभीतक विज्ञान की पहुँच के बाहर है। उनका कहना है कि ये उड़न-तश्तरियाँ सम्भवतः दूसरे लोक के अन्तरिक्ष यान हैं। जिन लोगों द्वारा यह संचालित होता है वे निश्चय ही हमसे अधिक उन्नत हैं। ओबर्थ के अनुसार हमें काल्पनिक वस्तुओं तथा समस्याओं को टाल नहीं देना चाहिए, बल्कि उन्हें गम्भीरता पूर्वक लेना चाहिए। अमेरिका में १९५२ तथा १९६६ में दो जाँच आयोग बैठाये गये, किन्तु इन आयोगों ने अधिकांश घटनाओं को दृष्टिभ्रम बतलाया। लेकिन १९६७ ई० में उल्का विशेषज्ञ जेम्स ई० मैकडो-नाल्ड तथा विश्वविख्यात अन्तरिक्ष विशेषज्ञ जे० एलेन हाइनेक का विश्वास है कि दूसरे ग्रहों के अन्तरिक्ष यात्री पृथ्वी पर आते हैं। परन्तु १९६९ ई० में अमेरिका के कोंडोन रिपोर्ट प्रोजेक्ट का निष्कर्ष भी निराशाजनक रहा। डोनाल्ड मेंजेल, पी० एम० मिलमैन, एस० तोलांसकी, एम० डी० वेर्नान आदि वैज्ञानिकों ने इस विषय पर विस्तार से चर्चा की है।

पिछले कई वर्षों तक रूस में उड़न तश्तरियों के समाचारों पर हँसी उड़ाई जाती थी, किन्तु जब रूसी वैज्ञानिकों से इनका प्रत्यक्ष सामना हुआ तो इसे गम्भीरता से लिया जाने लगा। इसके परिणामस्वरूप रूस में एक ऐसी कमेटी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का गठन कर दिया गया जिसका उद्देश्य अज्ञात उड़न वस्तुओं की खोज करना था। इस कमेटी का संचालक हवाई सेना के एक उच्चाधिकारी को बनाया गया जिसका नाम अनातोल्यी स्टोल्याकोव (Anatolyi Stolyakov) है। इस सम्बन्ध में पश्चिमी देशों के समाचार पत्रों ने टिप्पणी करते हुए कहा कि बिना किसी ठोस प्रमाण के रूस में ऐसी कमेटी की स्थापना नहीं होती। रूस के साइबेरिया क्षेत्र में ३० जून १९०८ ई० को सुबह ७.१७ बजे एक ऐसी महत्वपूर्ण तथा आश्चर्यजनक घटना घटित हुई जिससे सारा संसार दहल उठा। अचानक आग का एक विशाल गोला धूमकेतु की तरह प्रकट हुआ और जमीन में धंसकर लुप्त हो गया। इस विस्फोट के फलस्वरूप एक भयंकर गर्जना हुई, बिजली सी गड़गड़ाहट उठी और उस भयंकर गर्जना को लगभग ६ सौ मील के दायरे (Radius) में सुना गया। इस विस्फोट की जाँच-पड़ताल के लिए अनेक अभियान दल भेजे गये। १९६१ और १९६३ में भी दो अभियान दल भेजे गये। १९६३ के अभियान दल का नेतृत्व प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री सोलोटोव ने किया और यह दल आधुनिकतम यन्त्रों से सुसज्जित था। वह अभियान दल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वह विस्फोट अवश्य ही एक पारमाणविक विस्फोट रहा होगा। उस विस्फोट से अत्यधिक मात्रा में विकिरण उत्पन्न हुआ जिससे कई मील के दायरे में वनस्पति आदि जल गये। कुछ लोगों ने इसे एक बड़ा उल्कापात बतलाया। मार्च १९६४ में लेनिनग्राड के एक पत्र स्वेस्दा में यह रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिसमें यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया कि यह एक अन्य ग्रह द्वारा पृथ्वी से सम्पर्क स्थापित किया गया। प्रख्यात अमेरिकी खगोलशास्त्री कार्ल सैगन और रूसी खगोलशास्त्री श्लोवस्की ने अपनी पुस्तक (Intelligent Life in the Universe), जो १९६६ में प्रकाशित हुई, में स्वीकार किया है कि चन्द्रमा का उपग्रह (Phobos) एक कृत्रिम (Artificial satellite) है। सैगन का विचार है कि फोबोस अवश्य खोखला (Hollow) होना चाहिये और खोखला चन्द्रमा प्राकृतिक नहीं हो सकता। कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि मंगल ग्रह पर कभी उत्कृष्ट सभ्यता विद्यमान थी। प्रश्न यह है कि उस सभ्यता का क्या हुआ? क्या वे समुन्नत लोग किसी अन्य ग्रह पर चले गये अथवा किसी ग्रह की टक्कर से नष्ट हो गये? डा० इमेनुअल वेलीकोवोस्की ने अपनी पुस्तक (Worlds in collision–1950) में यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि एक विशालकाय धूमकेतु (Comet) से मंगल ग्रह की टक्कर हो गई और इस टक्कर से वीनस (Venus) ग्रह का निर्माण हुआ। हो सकता है इसी टक्कर में मंगलवासियों का विनाश हो गया।

अगर यूक्लिडीयन विज्ञान से इन चमत्कारी घटनाओं का कारण पूछा जाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो वह मौन हो जायेगा अथवा इन्हें दृष्टिभ्रम घोषित कर छुट्टी पा लेगा। लेकिन सापेक्षवाद के विश्लेषण में पीछे हम भलीभाँति देख चुके हैं कि दृष्टिभ्रम किसे होता है। वास्तव में दृष्टिभ्रम अथवा सापेक्षभ्रम उसी को होता है जिसमें अहं-ज्ञान अपनी चरम सीमा पर होता है, क्योंकि वह अहंज्ञान अपने इन्द्रियजनित ज्ञान द्वारा उत्पन्न होता है और चंचल मन उस जीव को यह भलीभाँति समझा देता है कि वह इन्द्रियजनित ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है, एक स्वतन्त्र और प्रामाणिक ज्ञान है। इस ज्ञान से परे और कोई ज्ञान नहीं होता है। अगर ज्ञान होता है तो वह दिखाई क्यों नहीं देता? इस सन्देह, भ्रम और अविश्वास को ही अहंज्ञान कहते हैं। लेकिन यदि अविश्वास न हो, अहंज्ञान न हो तो यह वैज्ञानिक खोज भी नहीं हो सकती। यही अन्तर है एक वैज्ञानिक और योगी में। अगर इसका कारण महामुनि कपिल से पूछा जाय तो वे कहेंगे कि इन चमत्कारी घटनाओं का कारण सूक्ष्मजगत में विद्यमान है, जो सार्वभौमिक मन द्वारा वस्तुजगत में प्रतिबिम्बित होता हैं, क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य हो ही नहीं सकता। हो सकता है कि अहंवादी विज्ञान की आँखें तब खुलें जबकि अन्य ग्रहों के विकसित लोगों द्वारा यह पृथ्वी विजित कर ली जाय।

यद्यपि पाश्चात्य जगत को भौतिकवादी कहा जाता है, लेकिन वहाँ परा-भौतिकवादी भी कम नहीं हैं। इस सन्दर्भ में पाश्चात्य देशों में जो अनुसन्धान चल रहे हैं उन पर डेनिकेन ने अपनी पुस्तक (Miracles of the Gods) में प्रकाश डाला है। लेखक के अनुसार मृत्यु के बाद मानवीय चेतना (ऊर्जा के रूप में) सूक्ष्मलोक में एक समयविहीन अवस्था (Timeless State) को प्राप्त होती है (लेखक ने उस वाहन का नाम नहीं लिया है जिसे सांख्यदर्शन के अनुसार सूक्ष्मशरीर कहते हैं और चेतना को हम ऊर्जा नहीं कह सकते)। उस लोक में वह जो दृश्य देखता है उसका अभिन्न सम्बन्ध भौतिकजगत में घटित होने वाली भविष्य की घटनाओं से है, लेकिन उसे यह ज्ञान नहीं होता कि प्रकृति ने उस घटना को भविष्य में घटित होने के लिए कौन सा समय (Deadline) निश्चित किया है। परन्तु सूक्ष्मलोक के जीवात्मा का भावनात्मक सम्बन्ध भौतिकजगत में अपने प्रियजनों से भी होता है और वह भविष्य की उन विपत्तियों से उन्हें साव-धान करना चाहता है। लेकिन सूक्ष्मलोक की समयविहीन चेतना को स्थूलजगत की समयवद्ध चेतना से सम्पर्क स्थापित करने का कोई साधन नहीं है जिससे सामान्यतः यह सम्पर्क स्थापित नहीं हो पाता। यही कारण है कि सूक्ष्म लोक के प्राणी किसी माध्यम (Medium) द्वारा ऐसा सम्पर्क स्थापित कर लेते हैं। डेनिकेन के अनुसार चेतनशक्तियाँ (Conscious energies) अनुकूल माध्यम प्राप्त कर भविष्य में होने वाली घटनाओं का संकेत देती हैं। उदाहरण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिए डा० जस्टिनस कर्नर जिन्होंने वर्षों तक दूरदर्शन (Clairvoyance) तथा भविष्यदर्शन पर अनुसन्धान किया था और अपने अनुभव को पुस्तक के रूप में प्रकाशित कराया। कर्नर ने एक महिला माध्यम द्वारा अनेक गुप्त रहस्यों को भी प्रकट करवाया जिनका सम्बन्ध न्यायालय में मुकदमों से था।

इस पुस्तक में डेनिकेन ने सम्मोहन विद्या में पारगंत म्यूनिक के एक युवा थोरवाल्ड डिथलेफसेन का उद्धरण दिया है जिसके पास मृतात्माओं के आवाहन (Seances) का क्रमबद्ध रेकर्ड (Das Leben nach dem Leben-Munich, 1974) मौजूद है। इस क्रिया में पहले सम्मोहित व्यक्ति को एक अबोध बालक की अवस्था में बदल दिया जाता है और फिर उससे अपने पूर्वजन्म के विषय में पूछा जाता है। इसप्रकार सम्मोहित व्यक्ति अपने पिछले दो या तीन जन्मों के नाम, स्थान तथा लिंग आदि के विषय में ठीक-ठीक बतलाता है। यहाँ तक कि अपने पिछले जन्मों की भाषाओं में भी बोलने लगता है जिसका उसे कोई ज्ञान नहीं होता।

सम्मोहन विद्या का एक दूसरा विशेषज्ञ मोरे बर्नस्टीन (Protokoll einer Wiedergeburt–Bern, 1973) सम्मोहन द्वारा श्रीमती रूथ साइमन्स को क्रमशः चार, तीन, दो तथा एक वर्ष के बच्चे की अवस्था में परिवर्त्तित कर देता था और उसे जन्म से पहले की अवस्था के सम्बन्ध में भी सोचने को बाध्य कर देता था। इस क्रिया द्वारा वह रूथ साइमन्स से ब्राइडे मर्फी का नाम धारण कर बात करने लगती थी। उन्नीसवीं सदी के मध्य में ब्राइडे मर्फी आयरलैंड में विद्यमान थीं। रूथ साइमन्स का यह विवरण टेप में रेकर्ड कर लिया गया था और जब उस विवरण की एक प्रतिलिपि बनाकर आयर-लैंड के उस स्थान का चर्च के रजिस्टर तथा गाँव के अभिलेखों से मिलान किया गया तो वह कथन अक्षरशः सही पाया गया।

डेनिकेन ने इस सन्दर्भ में आर्थर फोर्ड द्वारा लिखित पुस्तक (Life Beyond Death–New york. 1971) का उद्धरण दिया हैं जिसमें प्रसिद्ध वैज्ञानिक वर्नहर वान ब्रान को उद्धृत करते हुए कहा गया है, "विज्ञान ने इस तथ्य को प्रमाणित कर दिया है कि कोई भी वस्तु बिना किसी निशान (Trace) के लुप्त नहीं हो सकती। प्रकृति के अन्तर्गत किसी वस्तु का विनाश नहीं होता, बल्कि उसका नाम-रूप परिवर्त्तन होता है। आध्यात्मिक धारण के प्रतिकूल (आत्मा अमर है) मैं भौतिक सन्दर्भ में इस तथ्य को सम्भव समझता हूँ कि मृत व्यक्तियों की चेतन ऊर्जा (Conscious energy) को दूसरे रूप में परि-वर्त्तित कर अपने चार आयामों वाली दुनियाँ (Four dimensional world) में अनुभव किया जा सकता है। अगर दूसरे लोक की ऊर्जा अथवा शक्तियों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का हम वर्त्तमान भौतिक जीवन में अनुभव कर सकते हैं तो इसी आधार पर इसका उल्टा रूप भी अवश्य होना चाहिये। दूसरे शब्दों में वर्त्तमान शक्तियों का आभास भी हम मृत्यु के बाद दूसरे जगत में कर सकते हैं। हमारी अवचेतन अवस्था (Subconscious state) चौथे आयाम से बंधी हुई है जिससे समय का क्रम बनता है, लेकिन सम्भवतः दूसरे संसार में समय का यह बन्धन नहीं है।"

वर्नहर वान ब्रान का यह सिद्धान्त सर्वथा भ्रामक है कि चेतना ऊर्जा होती है। अगर चेतना ऊर्जा है तो उसे आइन्स्टीन के समीकरण ($E = MC^2$) के अनुसार पदार्थ या ऊर्जा ही रहना चाहिये, क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ ही ऊर्जा है और ऊर्जा ही पदार्थ, तो फिर बीच में चेतना का प्रश्न कहाँ से उपस्थित हो जाता है ? अगर कहीं चेतना होगी भी तो उसे डार्विन के क्रम-विकासवाद के अनुसार रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा से चेतना बनने में लाखों-करोड़ों वर्ष लग जायेंगे। अगर मान लिया जाय कि वह चेतन ऊर्जा (Conscious energy) मृत्यु के बाद सूक्ष्मलोक में पहुँच जाती है तो उसके पास सोचने-समझने के लिए मस्तिष्क और शरीर आदि अंग कहाँ से प्राप्त होते हैं ? इसके लिए पाश्चात्य वैज्ञानिकों को कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद का और गहन अध्ययन करना पड़ेगा। वास्तव में इस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु का एक सूक्ष्म प्रतिरूप (Counter part) होता है और उन सभी वस्तुओं से चेतनपुरुष (आत्मा) का संयोग होता है और चेतना पदार्थ से सर्वथा भिन्न (उल्टा) तत्व होती है। जबतक परस्पर विरोधी तत्व (प्रकृति और पुरुष) नहीं होंगे तब तक सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकती। आइन्स्टीन ने सिद्ध कर दिया कि प्रकाश की गति अथवा समय से परे भी चेतना (आत्मा) का अस्तित्व है और मृत्यु के बाद वही समय विहीन अवस्था (उल्टा) चेतनपुरुष को प्राप्त होती है। अतः पदार्थ या ऊर्जा की मृत्यु (गीता के अनुसार वस्त्र परिवर्त्तन) होती है, सूक्ष्मशरीर और उस शरीर में स्थित चेतनपुरुष की नहीं। अगर वर्नहर वान ब्रान आइन्स्टीन के सापेक्षवाद को मानते हैं तो उन्हें यह भी मानना पड़ेगा कि चेतना अथवा आत्मा एक नित्य, शाश्वत और अविनाशी तत्व है, क्योंकि तभी स्थिर और अस्थिर (चेतना और पदार्थ) तत्वों के संयोग से सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) आगे बढ़ सकेगी। वास्तव में प्रकृति का सम्पूर्ण क्रम-विकास चेतनपुरुष के समक्ष (द्रष्टा एवं साक्षी) केवल एक प्रदर्शनी है, कण-तरंगों से बना हुआ चित्रमय प्रवाह है।

डेनिकेन ने अपने सिद्धान्त को पुष्ट आधार प्रदान करने के लिए विश्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विख्यात फ्रांसीसी दूरदर्शक (Clairvoyant) बेलाइन (Belline) का भी उद्धरण प्रस्तुत किया है। इस दूरदर्शक का बीसवर्षीय एकमात्र पुत्र १९६९ ई० में एक कार दुर्घटना में मारा गया। बेलाइन टेलीपेथी द्वारा अपने पुत्र माइकेल से लगभग बीस महीनों तक सम्पर्क स्थापित करने का असफल प्रयत्न करता रहा और अचानक एक दिन उसे अपने पुत्र का अदृश्य आभास मिला। पहले तो इसे उसने भ्रम समझा, लेकिन वाद में अपने पुत्र से वार्त्तालाप को टेप कर लिया जो १९७३ ई० में एक पुस्तक (Das dritte ohr, ein Dialog mit dem Jenseits–Bonn, 1973) के रूप में प्रकाशित हुई। इस प्रयोग के सम्बन्ध में ९० विशिष्ट व्यक्तियों की राय भी संचित की गई हैं जो कला और विज्ञान के क्षेत्र में माने हुए व्यक्ति हैं। इन तथ्यों द्वारा प्रमाणित हुआ कि मृत्यु के बाद पारलौकिक जगत में समय का अस्तित्व नहीं है।

८ अप्रैल १९७१ को ८ बजे सुबह पिता और मृत पुत्र के बीच वार्त्तालाप को इसप्रकार रेकर्ड किया गया—"जब वेलाइन ने पूछा कि वह दूसरा संसार कैसा है? इसपर उसके मृत पुत्र माइकेल ने उत्तर दिया—यह एक दूसरा संसार है, स्वप्न के समान जिसका शब्दों द्वारा वर्णन नहीं हो सकता·······गतिशीलता (Movement), पारदर्शिता (Transparency), विचार (Thoughts)। यहाँ भौतिक जीवन की भाँति पाप-पुण्य अथवा भला-बुरा का कोई अस्तित्व नहीं है। यह सब कुछ एक गृहविहीन अवस्था (Homelessness) जैसी है, एक तरह का ऐसा स्वप्न जिसमें असंख्य आयाम और कम्पन (dimensions and Vibrations) हों······यहाँ समय जिसे पृथ्वी पर क्षणों के रूप में अनुभव किया जाता है, एक हास्यास्पद सी चीज है। बस इतना ही मैं कह सकता हूँ।"

डेनिकेन का विचार है कि अगर भौतिकजगत और सूक्ष्मजगत में सम्पर्क स्थापित हो गया तो हम भूत और भविष्य के तथ्यों को सूक्ष्म संसार के लोगों द्वारा जान सकेंगे, क्योंकि वे लोग सयमविहीन आयाम में निवास करते हैं। अधुनातन भौतिकशास्त्र के सिद्धान्त तथा अनुसन्धान इसप्रकार की सम्भावनाओं के प्रतिकूल नहीं हैं। ऊर्जा के सभी नाम-रूप परस्पर परिवर्त्तनीय हैं। उदाहरण के लिए न्यूट्रोन कण प्रोटोन में तथा इलेक्ट्रान कण न्यूट्रिनों आदि कणों में बदलते रहते हैं। इन कणों का जीवन काल (Life spans) भी एक दूसरे से भिन्न होता है। कुछ का समय तो इतना कम होता है कि वस्तुतः उन्हें होना ही नहीं चाहिये। एक पोजीट्रोन (Positron) का अस्तित्व एक सेकन्ड के महासंखवें (Trillionth) समय के बराबर होता है। इसीप्रकार अन्य कणों की भी भिन्न-भिन्न स्थिति है। इस समय को भला हम किस मापदण्ड द्वारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देख सकेंगे ? इस सन्दर्भ में डेनिकेन ने जेराल्ड फेनबर्ग के सिद्धान्त का भी उल्लेख किया हैं। यद्यपि डेनिकेन परा-भौतिकवाद में विश्वास करते हैं, लेकिन कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अन्तर्गत अभी वे भौतिक विज्ञान की सीमाओं को पूरी तरह नहीं समझ पाये हैं। इसीलिए उनका ख्याल है कि सूक्ष्मजगत (Astral world) भी कणों का ही बना हुआ है, जबकि वह त्रिगुणात्मक तरंगों का बना हुआ है। कण केवल भौतिकजगत तक ही सीमित रहते हैं और मृत्यु के बाद सूक्ष्मशरीर (Astral body) तरंगों के रूप में भौतिक शरीर से पृथक हो जाता है। इसके अतिरिक्त चेतन पुरुष में ही सभी कुछ प्रतिबिम्बित होता है।

कभी-कभी मानसिक शक्ति का चमत्कार अनायास लोगों को प्राप्त हो जाता है। इसका कारण पूर्वजन्म का संस्कार हो सकता है। यह सभी कुछ ईश्वर की देन है। आधुनिक स्वीडन में एक महिला हैं श्रीमती गिलमर्क जिनका दावा है कि वह मृतात्माओं को प्रत्यक्ष देख सकती हैं और उनसे बातचीत भी कर सकती हैं। पाश्चात्य देशों में अनेक वैज्ञानिकों तथा विशेषज्ञों ने सावधानीपूर्वक गिलमर्क का परीक्षण किया और उसे सही पाया। यह महिला अजनवी लोगों को भी उनके सम्बन्धी मृतात्माओं के विषय में बताती है तथा उन मृतात्माओं के अनजान चेहरे, पहनावा, रंग-रूप, नाम, वातावरण एवं अन्य विस्तृत जानकारी भी देती है। इस विषय में श्रीमती गिलमर्क का कहना है कि उसका मस्तिष्क एक टेलीविजन या राडार यन्त्र की भाँति कार्य करता है, जो सूक्ष्मजगत की तरंगों को ग्रहण कर छायाचित्रों के रूप में परिवर्तित कर देता है। लेकिन कभी-कभी वे छायाचित्र बिलकुल स्पष्ट दिखाई देते हैं और कभी-कभी अस्पष्ट से होते हैं। यह सब कुछ दोनों ओर के प्रभाव पर निर्भर करता है। अपने इन सूक्ष्म दर्शनों तथा अनुभवों को श्रीमती गिलमर्क ने अपनी पुस्तक 'I know' (Jag Vet) में व्यक्त की है। इस पुस्तक का अनेक योरोपीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। गिलमर्क ने यह प्रमाणित किया है कि मृत्यु के बाद भी जीवन होता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हम अपने इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर सूक्ष्मजगत (Astral world) की आवाजों को पकड़ लेते हैं, क्योंकि चुम्बकीय-तरंगों की गति प्रकाश की गति के बराबर होती है और सापेक्षवाद के अनुसार उस अन्तिम भौतिक गति पर भौतिक सन्दर्भ में मनुष्य की मृत्यु हो जाती है (क्योंकि समय स्थिर हो जाता है)। लेकिन मनुष्यरूपी इलेक्ट्रानिक यन्त्र तथा मानव निर्मित इलेक्ट्रानिक यन्त्र में बहुत अन्तर होता है। हम समझते हैं कि मृत्यु के बाद जीव का अस्तित्व सर्वदा के लिए समाप्त हो जाता है, लेकिन यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमारा मानसिक भ्रम है, यूक्लिडीयन विज्ञान का भौतिकवादी प्रभाव है। सभी ज्ञान हम इन्द्रियों द्वारा ही मापने की चेष्टा करते हैं। वास्तव में अविनाशी चेतनपुरुष (आत्मा) कभी नहीं मरता, कण-तरंगों के रूप में केवल पदार्थ मरता है, उसका वस्त्र परिवर्त्तन होता है, त्रिविध गुण-विकारों में हेर-फेर होता है और भ्रमवश हम उसी को यथार्थ मान लेते हैं, सत्य के दर्शन का झूठा दावा करते हैं। यही परम पवित्र ग्रन्थ गीता का अमर सन्देश है और इसी को सनातन धर्म भी कहते हैं।

फ्रेडरिक जरगेन्सन स्वीडन के एक विश्वविख्यात फिल्म निर्माता हैं। सन् १९५९ ई० में उन्हें एक अविस्मरणीय अनुभव हुआ। अपनी फिल्म के एक दृश्य में उन्हें पार्श्व-संगीत के साथ पक्षियों की चहचहाहट भी सुनानी थी और योजना के अनुसार उस दृश्य को टेप किया गया। लेकिन उस टेप में निर्दिष्ट आवाजों के अतिरिक्त कुछ विचित्र आवाजें भी सुनाई देती थीं। उन विचित्र आवाजों में एक आवाज उनकी मृत माँ की भी थी। जब यह गोरखधन्धा उनकी समझ में नहीं आया तो उन्होंने उस टेप को इलेक्ट्रानिक्स विशेषज्ञों को सौंप दिया। फ्रेडरिक जरगेन्सन ने यह दावा किया कि उसने माइक्रोफोन तथा टेप की सहायता से मृत व्यक्तियों की आवाजें पकड़ने में सफलता प्राप्त कर ली है और उन्होंने एक पुस्तक (Voices from the space) में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस महत्वपूर्ण खोज से १९६४ ई० में लेटविया के एक प्रख्यात वैज्ञानिक डा० कान्स्टेन्टीन रादिवे अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्होंने लगभग चार वर्षों तक इस पर अनुसन्धान किया। अनेक सूक्ष्म यन्त्रों के माध्यम से खोजकर रादिवे ने १९६८ ई० में अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की। डा० रादिवे का अनुसन्धान पूर्णतया वैज्ञानिक ढंग से था जिसे सैकड़ों वैज्ञानिकों तथा विशेषज्ञों ने प्रामाणिक स्वीकार किया। रादिवे ने इसप्रकार ७२,००० मृतात्माओं की आवाजों को टेप किया और उन आवाजों में चर्चिल तथा मुसोलिनी की भी आवाजें हैं जिन्हें कभी टेप नहीं किया गया था। कहा जाता है कि एक टेप में स्टालिन लटावी भाषा में किसी से कहते हैं, "मैं स्टालिन हूँ, जल्दी करो बहुत गर्मी है। एक आश्चर्यजनक टेप यह भी है जिसमें कहा गया है, ओ! पृथ्वी-लोक के रादिवे, ब्रह्माण्ड में अनेक लोक हैं और हम तुम्हें ऐसे ही एक लोक से पुकार रहे हैं।

स्वीटजरलैण्ड में भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर एलेक्स स्नीडर ने इसकी उपयोगिता को स्वीकार करते हुए कहा कि इस खोज द्वारा विद्युत् चुम्बकीय विकिरण के हमारे ज्ञान में और वृद्धि होगी। स्वीटजरलैण्ड की परा-मनोविज्ञान संस्था के अध्यक्ष डा० डैन्स नायगेल का विश्वास है कि मृतात्माएँ इसप्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

टेपों में अपनी आवाजें टेप कराती रहती हैं। डा० रादिवे भी इस विचार से सहमत हैं। आयरलैण्ड के मनोविज्ञान संस्थान के निदेशक डा० ब्रेण्डन मैकनाग ने भी जंगल में सैकड़ों टेप-प्रयोगों के बाद यह विचार व्यक्त किया है कि निःसन्देह ज्ञात-अज्ञात मृत व्यक्तियों के स्वर टेप में अंकित हो जाते हैं, पर क्यों और कैसे, यह अभी जानना शेष है। डा० रादिवे अपने जटिल इलेक्ट्रानिक यन्त्रों तथा लगभग चार सौ सहयोगियों की मदद से अपने अनुसन्धान में जुटे हुए हैं। इस सम्बन्ध में रादिवे सैकड़ों प्रयोग कर चुके हैं। अगर भविष्य में पूर्ण सफलता प्राप्त हो जाती है तो हम मृतात्माओं से सरलतापूर्वक सम्पर्क स्थापित कर सकेंगे और यूक्लिडीयन विज्ञान द्वारा खींची गई लक्ष्मण रेखा से बाहर हो जायेंगे। कोई भी व्यक्ति अपने घर में इस विधि द्वारा इन आवाजों को टेप में पकड़ सकता है। इस विधि के अन्तर्गत किसी शान्त कमरे में अपना टेप खोलकर मृतात्माओं का आवांहन करना चाहिए और आधे-आधे मिनट पर दुबारा आवाहन करना चाहिए। इस प्रक्रिया द्वारा अनेक भाषाओं में मिश्रित शब्दों की बाढ़ सी सुनाई देती है जिन्हें धीरे-धीरे अभ्यास द्वारा एक-दूसरे से पृथक किया जाता है। इन मिश्रित शब्दों की व्याख्या करना ही एक प्रधान समस्या है। यद्यपि यूक्लिडीयन विज्ञान यह कह सकता है कि इन प्रयोगों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त वैज्ञानिक नियमों के अन्तर्गत प्रामाणिक नहीं हैं, लेकिन कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार उसे यह प्रत्युत्तर भी दिया जा सकता है कि स्वयं उसके सभी सिद्धान्त प्रामाणिक नहीं हैं, क्योंकि वे यूक्लिड की गलत भौतिक रेखागणित, सापेक्ष भ्रम तथा इन्द्रियजनित ज्ञान पर आधारित हैं। इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर इसप्रकार के प्रयोग भी वैज्ञानिक प्रयोग हैं और इनके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष भी प्रामाणिक निष्कर्ष हैं, क्योंकि ये निष्कर्ष कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित (Circular geometry) के अनुकूल हैं। अतः यूक्लिडीयन विज्ञान को अब अपने जड़ पदार्थवादी नियमों में संशोधन कर लेना चाहिए, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण, प्रत्येक इलेक्ट्रान, परमाणु, जीन तथा कोशिका चैतन्य है, उस परम चेतनशक्ति के तेज से परिपूर्ण है, ओतप्रोत है। उसी से पदार्थ को गति मिलती है, जीवन मिलता है, स्पन्दन होता है और जगत का सभी कुछ उसी के शुद्ध प्रकाश से प्रकाशित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)।

मानव जीवन में कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी आकस्मिक दुर्घटना में जब मृत्यु सामने मुँह बाये खड़ी होती है तो अचानक कुछ क्षणों के लिए उस व्यक्ति का सूक्ष्मशरीर (Astral body) अपने स्थूलशरीर (Physical body) से पृथक हो जाता है और उसका बाल भी बांका नहीं होता। ऐसा योगी नियं-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित रूप से अभ्यास द्वारा अपनी चेतन अवस्था (Conscious state) में कर सकते हैं, जबकि सामान्य मनुष्यों में यह क्रिया परिस्थितवश अचानक कुछ समय के लिए अवचेतन अवस्था (Subconscious state) में भी हो सकती हैं। अगर ऐसा होता है तो उस व्यक्ति पर देश-काल एवं गुरुत्वाकर्षण आदि भौतिक शक्तियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता, क्योंकि कपिल के सापेक्षवाद के अनुसार जब कुछ समय के लिए कारण (सूक्ष्मशरीर) पृथक हो जाता है तो उतने समय के लिए वह भौतिक कार्य (Effect) भी नहीं हो सकता है। इसीप्रकार की एक आकस्मिक घटना उन्तीसवर्षीय वाब हाल के साथ भी घटित हुई। उसका वायुयान लगभग तीन हजार फीट की ऊँचाई पर उड़ रहा था और जहाज से नीचे कूदने पर उसके दोनों पैरासूट बेकार हो गये—वह मृत्यु के मुँह में तेजी से जमीन की ओर आने लगा। लेकिन ईश्वर का कुछ ऐसा चमत्कार हुआ कि मामूली चोट के अतिरिक्त उसका और कुछ नहीं हुआ (उस यौगिक प्रक्रिया में कुछ त्रुटि रह गई इसलिए वह मामूली चोट आ सकी)। पत्रकारों से उस घटना का विवरण देते हुए वाब हाल का कहना था कि तेजी से जमीन की ओर अपने को गिरता हुआ देखकर हवा में मैं बड़ी जोर से चिल्लाया (प्रार्थनापूर्ण यौगिक प्रक्रिया) और उसी समय मेरी आँखों में मेरा सारा जीवन बिलकुल सजीव हो उठा—मुझे अपनी माँ का मुखड़ा दिखाई दिया, अपने बचपन में पढ़ने का कमरा दिखाई दिया और सैन्य अकादमी में सहपाठियों का चेहरा मेरे सामने से गुजर गया—क्या बताऊँ ! बड़ा बिचित्र रोमांचक अनुभव था मरण से पहले का (समयविहीन अवस्था में यह सभी कुछ अल्प समय में ही गुजर गया)। इस घटना का विवरण देते समय वहाँ विश्वविख्यात मनोवैज्ञानिक रसेल नोयस भी उपस्थित थे। स्वीट्जरलैंड के मनोवैज्ञानिक एलवर्ट हेम द्वारा सन् १८९२ ई० में लिखित मृत्यु के पूर्व की अनुभूतियों के विशद संकलन का रसेल नोयस ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है। इस पुस्तक में अनेक दुर्घटनाओं और आत्महत्याओं का विवरण है कि मरने के पूर्व मनुष्य की मानसिक स्थिति कैसी हो जाती है।

इस सम्बन्ध में रसेल नोयस का निष्कर्ष है कि मृत्यु से पहले व्यक्ति तीन अवस्थाओं से गुजरता है—पहली अवस्था में व्यक्ति उपस्थित खतरे से जूझने की कोशिश करता है। दूसरी अवस्था में कोई विकल्प न देखकर वह अपने को मृत्यु के समक्ष समर्पित कर देता है। इसी अवस्था में उसका सारा विगत जीवन चित्रपट के रील की तरह घूमने लगता है (क्योंकि समय के योग से कण-तरंगों का बना हुआ मानव शरीर एवं वातावरण केवल चित्रमय प्रवाह हैं जो अन्तिम अवस्था में उल्टा घूमने लगते हैं और उन चित्रों से अनुभव प्राप्त कर चेतन पुरुष सूक्ष्मजगत में अपना अगला जीवन शुरू करता है)। नोयस के विचार से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

टेपों में अपनी आवाजें टेप कराती रहती हैं। डा० रादिवे भी इस विचार से सहमत हैं। आयरलैण्ड के मनोविज्ञान संस्थान के निदेशक डा० ब्रेण्डन मैकनाग ने भी जंगल में सैकड़ों टेप-प्रयोगों के बाद यह विचार व्यक्त किया है कि निःसन्देह ज्ञात-अज्ञात मृत व्यक्तियों के स्वर टेप में अंकित हो जाते हैं, पर क्यों और कैसे, यह अभी जानना शेष है। डा० रादिवे अपने जटिल इलेक्ट्रानिक यन्त्रों तथा लगभग चार सौ सहयोगियों की मदद से अपने अनुसन्धान में जुटे हुए हैं। इस सम्बन्ध में रादिवे सैकड़ों प्रयोग कर चुके हैं। अगर भविष्य में पूर्ण सफलता प्राप्त हो जाती है तो हम मृतात्माओं से सरलतापूर्वक सम्पर्क स्थापित कर सकेंगे और यूक्लिडीयन विज्ञान द्वारा खींची गई लक्ष्मण रेखा से बाहर हो जायेंगे। कोई भी व्यक्ति अपने घर में इस विधि द्वारा इन आवाजों को टेप में पकड़ सकता है। इस विधि के अन्तर्गत किसी शान्त कमरे में अपना टेप खोलकर मृतात्माओं का आवाहन करना चाहिए और आधे-आधे मिनट पर दुबारा आवाहन करना चाहिए। इस प्रक्रिया द्वारा अनेक भाषाओं में मिश्रित शब्दों की बाढ़ सी सुनाई देती है जिन्हें धीरे-धीरे अभ्यास द्वारा एक-दूसरे से पृथक किया जाता है। इन मिश्रित शब्दों की व्याख्या करना ही एक प्रधान समस्या है। यद्यपि यूक्लिडीयन विज्ञान यह कह सकता है कि इन प्रयोगों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त वैज्ञानिक नियमों के अन्तर्गत प्रामाणिक नहीं हैं, लेकिन कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार उसे यह प्रत्युत्तर भी दिया जा सकता है कि स्वयं उसके सभी सिद्धान्त प्रामाणिक नहीं हैं, क्योंकि वे यूक्लिड की गलत भौतिक रेखागणित, सापेक्ष भ्रम तथा इन्द्रियजनित ज्ञान पर आधारित हैं। इलेक्ट्रानिक यन्त्रों पर इसप्रकार के प्रयोग भी वैज्ञानिक प्रयोग हैं और इनके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष भी प्रामाणिक निष्कर्ष हैं, क्योंकि ये निष्कर्ष कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित(Circular geometry) के अनुकूल हैं। अतः यूक्लिडीयन विज्ञान को अब अपने जड़ पदार्थवादी नियमों में संशोधन कर लेना चाहिए, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण, प्रत्येक इलेक्ट्रान, परमाणु, जीन तथा कोशिका चैतन्य है, उस परम चेतनशक्ति के तेज से परिपूर्ण है, ओतप्रोत है। उसी से पदार्थ को गति मिलती है, जीवन मिलता है, स्पन्दन होता है और जगत का सभी कुछ उसी के शुद्ध प्रकाश से प्रकाशित होता है (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)।

मानव जीवन में कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी आकस्मिक दुर्घटना में जब मृत्यु सामने मुँह बाये खड़ी होती है तो अचानक कुछ क्षणों के लिए उस व्यक्ति का सूक्ष्मशरीर (Astral body) अपने स्थूलशरीर (Physical body) से पृथक हो जाता है और उसका बाल भी बांका नहीं होता। ऐसा योगी नियम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मित रूप से अभ्यास द्वारा अपनी चेतन अवस्था (Conscious state) में कर सकते हैं, जबकि सामान्य मनुष्यों में यह क्रिया परिस्थितवश अचानक कुछ समय के लिए अवचेतन अवस्था (Subconscious state) में भी हो सकती हैं। अगर ऐसा होता है तो उस व्यक्ति पर देश-काल एवं गुरुत्वाकर्षण आदि भौतिक शक्तियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता, क्योंकि कपिल के सापेक्षवाद के अनुसार जब कुछ समय के लिए कारण (सूक्ष्मशरीर) पृथक हो जाता है तो उतने समय के लिए वह भौतिक कार्य (Effect) भी नहीं हो सकता है। इसीप्रकार की एक आकस्मिक घटना उन्तीसवर्षीय बाब हाल के साथ भी घटित हुई। उसका वायुयान लगभग तीन हजार फीट की ऊँचाई पर उड़ रहा था और जहाज से नीचे कूदने पर उसके दोनों पैरासूट बेकार हो गये—वह मृत्यु के मुँह में तेजी से जमीन की ओर आने लगा। लेकिन ईश्वर का कुछ ऐसा चमत्कार हुआ कि मामूली चोट के अतिरिक्त उसका और कुछ नहीं हुआ (उस यौगिक प्रक्रिया में कुछ त्रुटि रह गई इसलिए वह मामूली चोट आ सकी)। पत्रकारों से उस घटना का विवरण देते हुए बाब हाल का कहना था कि तेजी से जमीन की ओर अपने को गिरता हुआ देखकर हवा में मैं बड़ी जोर से चिल्लाया (प्रार्थनापूर्ण यौगिक प्रक्रिया) और उसी समय मेरी आँखों में मेरा सारा जीवन बिलकुल सजीव हो उठा—मुझे अपनी माँ का मुखड़ा दिखाई दिया, अपने बचपन में पढ़ने का कमरा दिखाई दिया और सैन्य अकादमी में सहपाठियों का चेहरा मेरे सामने से गुजर गया—क्या बताऊँ ! बड़ा विचित्र रोमांचक अनुभव था मरण से पहले का (समयविहीन अवस्था में यह सभी कुछ अल्प समय में ही गुजर गया)। इस घटना का विवरण देते समय वहाँ विश्वविख्यात मनोवैज्ञानिक रसेल नोयस भी उपस्थित थे। स्वीट्जरलैंड के मनोवैज्ञानिक एलबर्ट हेम द्वारा सन् १८९२ ई० में लिखित मृत्यु के पूर्व की अनुभूतियों के विशद संकलन का रसेल नोयस ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है। इस पुस्तक में अनेक दुर्घटनाओं और आत्महत्याओं का विवरण है कि मरने के पूर्व मनुष्य की मानसिक स्थिति कैसी हो जाती है।

इस सम्बन्ध में रसेल नोयस का निष्कर्ष है कि मृत्यु से पहले व्यक्ति तीन अवस्थाओं से गुजरता है—पहली अवस्था में व्यक्ति उपस्थित खतरे से जूझने की कोशिश करता है। दूसरी अवस्था में कोई विकल्प न देखकर वह अपने को मृत्यु के समक्ष समर्पित कर देता है। इसी अवस्था में उसका सारा विगत जीवन चित्रपट के रील की तरह घूमने लगता है (क्योंकि समय के योग से कण-तरंगों का बना हुआ मानव शरीर एवं वातावरण केवल चित्रमय प्रवाह हैं जो अन्तिम अवस्था में उल्टा घूमने लगते हैं और उन चित्रों से अनुभव प्राप्त कर चेतन पुरुष सूक्ष्मजगत में अपना अगला जीवन शुरू करता है)। नोयस के विचार से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीसरी अवस्था अत्यधिक मोहक और सुखदायी होती है, क्योंकि उस समय मृत्यु के सम्बन्ध में उसका निराधार भय समाप्त हो जाता है। एक नई दुनियाँ के प्रति उसका आकर्षण एवं अनुराग बढ़ जाता है। परन्तु नोयस का यह भी कहना है कि कभी-कभी मृत्यु के समय भौतिकजगत की चिन्ता एवं विषाद भी साथ लग जाते हैं।

रसेल नोयस के विचार योगदर्शन के अनुकूल हैं। भौतिकजगत से सूक्ष्म-जगत का यह परिवर्त्तन मानवीय चेतन-स्तर पर निर्भर करता है, उस व्यक्ति के त्रिगुणात्मक सामंजस्य पर निर्भर करता है और उस स्तर के अनुरूप ही उसे उच्च अथवा निम्नलोक प्राप्त होता है। चूँकि सापेक्षवाद के अनुसार कारण और कार्य अभिन्न हैं, इसलिए हमारा भौतिकजगत का कार्य मृत्यु के बाद भावी जीवन के लिए कारण बन जाता है और उसी भावनात्मक स्तर के अनुरूप सूक्ष्म-जगत में हमारा जीवन होता है। वास्तव मे यह भावनात्मक स्तर (त्रिविध गुण-विकारों का सन्तुलन) ही कारण और कार्य (Cause and effect) की श्रृंखला को आगे बढ़ता रहता है और फिर यही भावनात्मक स्तर उस श्रृंखला को तोड़ देता है। भौतिकजीवन में यह भावनात्मक स्तर जिस यन्त्र में संचित होता है उसी यन्त्र को मन कहते हैं और मृत्यु के बाद वही स्तर सूक्ष्म यन्त्र (Astral mind) में चला जाता है। वेदान्त में इसो चक्र को 'कर्मविधान' कहते हैं। जो जैसा करेगा उसके अनुकूल ही उसे फल प्राप्त होगा, क्योंकि सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में हमारा जीवन केवल भौतिकजगत तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वह कारण और कार्य की श्रृंखला द्वारा बंधा हुआ है जिसमें कारण ही कार्य होता है तथा कार्य ही कारण। इसीलिए योगी सदाचार(सात्विक गुण)तथा इच्छावृत्तियों के निरोध पर बल देते हैं। अगर हम भौतिकजगत में वीर और निश्चिन्त हैं तो सूक्ष्मजगत में भी वीर और निश्चिन्त रहेंगे, लेकिन यदि यहाँ डरपोक और चिन्तित हैं तो परलोक में भी वही रहेंगे। इसका परिष्कार और पारिमार्जन कर्मों द्वारा ही होता है।

पुराणों, धर्मग्रन्थों तथा योगदर्शन में सूक्ष्मलोकों (Astral planes) का विशद विवेचन मिलता है जिन्हें हम प्रायः गल्पकथा समझते हैं। चूँकि हमारा दृष्टिकोण यूक्लिडीयन होता है, इसलिए हम उन कथाओं को काल्पनिक समझते हैं। उदाहरण के लिए इस ब्रह्माण्ड में असंख्य नक्षत्र-पिण्ड होने के बावजूद हम अपनी पृथ्वी को ही जीव-सम्पन्न पिण्ड समझते हैं, क्योंकि वे पिण्ड हमारी इन्द्रियों द्वारा प्रकाश-विन्दु सा दिखाई देते हैं और उसी इन्द्रियों द्वारा आधुनिक विज्ञान भी उन्हें प्रामाणिक नहीं मानता। इस सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान ही हमारा धर्मगुरु बन जाता है। अगर उसने दिन को रात कह दिया तो हमें मानना पड़ेगा कि वह रात है। तो फिर भगवान ने सबको मस्तिष्क और आँखें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्यों दी हैं ! वास्तव में अहंकार सबको अन्धा बना देता है और दूसरों को भी अन्धा बनाने मे मदद पहुँचाता है। नहीं तो क्या कारण है कि हम विज्ञान के सिद्धान्तों को ब्रह्मवाक्य समझ लेते हैं और अपने प्राचीन ऋषि-मुनियों के परा-इन्द्रियज्ञान (Transcendental knowledge) को कपोल-कल्पना ? क्या पाँच सौ वर्ष पहले जब आधुनिक विज्ञान नहीं था तो यह दुनियाँ नहीं चलती थी ? वास्तव में इसका कारण विज्ञान नहीं, बल्कि स्वयं अपना अहंज्ञान है। हम दूसरों के अहंज्ञान की प्रतिष्ठा करते हैं और स्वयं अपने अहंज्ञान की प्रतिष्ठा करवाना चाहते हैं। सभी रोगों की जड़ अहंज्ञान है। रामकृष्ण परमहंस के शब्दों में अहंकार ही माया है। प्राचीन युग में यह अहंज्ञान नहीं था। गुरु जो कहता था शिष्य उसे वेदवाक्य समझ कर मान लिया करते थे, क्योंकि वे जानते थे कि वह पराइन्द्रियों द्वारा प्राप्त निष्कर्ष है जिसमें तर्क-वितर्क के लिए कोई स्थान नहीं। इसीलिए वेदान्त में त्याग और आत्मसमर्पण के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। जिन प्राचीन ऋषि-मुनियों ने पुराणों तथा अन्य धर्मग्रन्थों की रचना की है वे कपिल के सापेक्षवाद से पूर्णतया परिचित थे जिसके अनुसार स्थूल और सूक्ष्म एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वे जिसप्रकार स्थूल जगत को देखते थे उसीप्रकार सूक्ष्मजगत को भी देखते थे। उनके लिए दोनों में कोई भेद नहीं था, किन्तु हमारा यूक्लिडीयन विज्ञान उनमें भेद कर देता है। पुराणों की रचना स्थूल और सूक्ष्म दोनों जगत को लेकर की गई है, कारण और कार्य को एक समझ कर की गई है। उनकी सूक्ष्मदृष्टि (Astral sight) आधुनिक वैज्ञानिकों की दृष्टि से असंख्य गुना अधिक थी और हम कह सकते हैं कि उस परा-दृष्टि पर आधारित परा-ज्ञान ही प्रामाणिक ज्ञान है, यथार्थ और अनुकरणीय आदर्श है।

आधुनिक युग में भी पुनर्जन्म तथा परलोक सम्बन्धी विषयों पर अनेक प्रकार के प्रयोग चल रहे हैं, हजारों लोगों का परीक्षण कर सैकड़ों पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं और प्रतिवर्ष लिखी जा रही हैं। लेकिन अन्तिम निष्कर्ष कुछ नहीं निकला, क्योंकि सभी रहस्यों एवं समस्याओं का समाधान हम यूक्लिडीयन विज्ञान के अन्तर्गत चाहते हैं। यह कैसे हो सकता हैं कि परलोक की बातें विज्ञान की लक्ष्मण रेखा के भीतर घुस जायँ ? यह तो तभी हो सकता है कि स्वयं विज्ञान ही लक्ष्मण रेखा से बाहर आ जाय। आधुनिक विज्ञान के इतिहास में केवल एक ही महापुरुष ऐसा हुआ जो उस लक्ष्मण रेखा से बाहर आ सका और उस व्यक्ति का नाम है—डॉ० अलबर्ट आइन्स्टीन। इस व्यक्ति ने भौतिक-विज्ञान के अहंज्ञान पर इतनी जबरजस्त चोट की कि वह अभी तक तिलमिला रहा है। लेकिन उनसे भी एक बहुत बड़ी भूल हो ही गई अथवा यह कहिये कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे मोहमाया के चक्कर में पड़ ही गये। उन्होंने परम चेतनशक्ति को एक निरपेक्ष शक्ति (Absolute power) न मानकर भौतिक सिद्धान्तों की व्याख्या के लिए प्रकाश की गति को ही एक निरपेक्ष शक्ति मान लिया। यही कारण है कि उनका विश्लेषण सांख्य, वेदान्त और योगदर्शन की भाँति भौतिक परिधि से परे नहीं हो सका। इस सन्दर्भ में आइन्स्टीन का सापेक्षवाद एक सीमित सापेक्षवाद हो जाता है, जबकि कपिल का सापेक्षवाद एक असीम सापेक्षवाद है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

इस मोहमाया से कोई बच नहीं सका। देवी-देवता भी इसके चक्कर में पड़ जाते हैं। सती और नारद भी इसके अपवाद नहीं थे। देवताओं के राजा इन्द्र तो कई बार इसके चक्कर में पड़ गये। जब अहंज्ञान होता है तो महामाया (काली) का कुठाराघात भी होता है। रामकृष्ण परमहंस के अनुसार, "इस भुवनमोहिनी माया में सभी मुग्ध हो रहें हैं। ईश्वर जब देह धारण करते हैं, तो वे भी मुग्ध हो जाते हैं। सीता के लिए राम कितना रोये थे। पंचभूत के पिंजड़े में पड़कर ब्रह्म को रोना पड़ता है, किन्तु ईश्वरकोटि (अवतार) के महापुरुष जब चाहें तब मुक्त हो सकते हैं।"

हा गुनखानि जानकी सीता। रूप सील व्रत नेम पुनीता॥
लछिमन समुझाए बहु भाँती। पूछत चले लता तरु पाँती॥
हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी॥
खंजन सुक कपोत मृग मीना। मधुप निकर कोकिला प्रबीना॥
कुंद कली दाड़िम दामिनी। कमल सरद ससि अहिभामिनी॥
बरून पास मनोज धनु हंसा। गज केहरि निज सुनत प्रसंसा॥
श्रीफल कनक कदलि हरषाहीं। नेकु न संक सकुच मन माहीं॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू। हरषे सकल पाइ जनु राजू॥
किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं। प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं॥
एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी। मनहुँ महा बिरही अति कामी॥

श्रीराम के इस विलाप पर शिव पत्नी सती को भी सन्देह और सापेक्ष भ्रम हो गया, महामाया ने उनको भी नहीं छोड़ा, लेकिन उनका यह सापेक्ष भ्रम भी जल्द ही दूर हो गया।

जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू। पिता समेत लीन्ह निज नामू॥
कहेउ बहोरि कहाँ बृषकेतू। बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू॥
राम बचन मृदु गूढ़ सुनि उपजा अति संकोचु।
सती सभीत महेस पहिं चलीं हृदय बड़ सोचु॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उस परम चेतनशक्ति ने सती को यह दिखला दिया कि मैं कौन हूँ और किसलिए इस भौतिकशरीर में प्रकट हुआ हूँ। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जिस सीता की खोज कर रहे थे, उनके लिए विलाप कर रहे थे, वह कोई सर्वसाधारण सीता नहीं थी, बल्कि वह सात्विक गुणों की खान सीता थी, साक्षात् माँ काली अथवा भगवतीस्वरूपा सीता थी। वह सीता महामुनि कपिल की प्रकृतिरूपी वह सीता थी जिसका संयोग परमपुरुष से आदिकाल में ही हो चुका था और उस संयोग से ही असंख्य नक्षत्र-पिण्ड, जीव-जन्तु तथा असंख्य सभ्यताओं का क्रमविकास हुआ। वह आदि पुरुष और आदि स्त्री ही इस सृष्टि का आधार-स्तम्भ हैं, उस संयोग से ही सभी उत्पन्न होते हैं और अन्त में सभी उसी में समाहित हो जाते हैं। अगर राम और सीता हमें सामान्य प्रतीत होते हैं, तो यह हमारा अहंज्ञान है, सापेक्ष भ्रम है, यूक्लिडीयन रेखागणित का प्रभाव है। जब यह सापेक्ष भ्रम दूर होगा तभी हम उस परमपुरुष और स्त्री को पहचान सकेंगे, प्रकृति और पुरुष के रहस्य को समझ सकेंगे। वास्तव में यह अन्तर शरीर या आकार-प्रकार में नहीं होता, बल्कि चेतन-स्तर में होता है जिसके फल-स्वरूप एक ब्रह्म होता है और दूसरा सामान्य जीव, एक देवता होता है और दूसरा पशु, एक सत होता है और दूसरा असत्, एक चेतन होता है और दूसरा जड़।

आधुनिक विज्ञान के महाद्रष्टा डॉ० अलबर्ट आइन्स्टीन उस लक्ष्मण रेखा से तो निकल गये, लेकिन तत्काल सोने की लंका में पहुँच गये। अब उस मायापुरी से निकलना तो असम्भव सा हो गया, क्योंकि लक्ष्मण रेखा से तो अपने-आप निकला जा सकता है, लेकिन सोने की लंका अथवा मायापुरी में तो मनुष्य सर्वदा के लिए कैद हो जाता है। वहाँ से उद्धार होना तो बड़ा मुश्किल है, क्योंकि रावण से तो देवता लोग भी थर-थर काँपते थे। लेकिन मानव इतिहास में केवल एक ही महापुरुष ऐसा हुआ है जो सोने की उस लंका से किसी मनुष्य को मुक्त कर सकता है और वह हैं—मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम। योगी अथवा साधु पुरुष यह जानते हैं कि परब्रह्म परमेश्वर धर्म की स्थापना के लिए इस पृथ्वी पर कब प्रकट होने वाला है।

यद्यपि आइन्स्टीन महामाया के चक्कर में पड़ गये, लेकिन उन्होंने जो लिख दिया है वह अमिट हो गया है, इस भौतिकवादी जगत के लिए आदर्श बन गया है। उन्होंने जो रास्ता दिखा दिया है वह एक राजमार्ग है, वेद-वेदान्त का एक अनुकरणीय पथ है। उनकी रेखागणित एक मुग्धकारी रेखागणित है, क्योंकि उस रेखागणित में वह शाश्वत सन्देश छिपा हुआ है जो आज से हजारों वर्ष पहले भारत की पवित्र भूमि पर दिया गया था—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यह्म।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

आइन्स्टीन का भौतिक शरीर भले ही मायापुरी में कैद हो सकता है, लेकिन उनकी अमरवाणी कभी कैंद नहीं हो सकती, उस शाश्वत सन्देश को कभी भी बन्धनग्रस्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि सत्य सर्वदा सत्य ही रहेगा, उसे अहं-ज्ञान एवं बुद्धिवादी कौशल द्वारा दबाया नहीं जा सकता। सत्य पर पड़ा हुआ पर्दा स्वयं उसी के तेज से एक दिन भस्म हो जाता है। इतिहास साक्षी है कि सत्य एक न एक दिन प्रकट होकर ही रहता है। यद्यपि प्रकृति एक महाशक्ति जरूर है, तो भी उसका अस्तित्व सापेक्ष है और चेतनपुरुष बुद्ध और रामकृष्ण की तरह निरपेक्ष ज्ञान प्राप्त कर॰एक दिन प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो ही जाते हैं।

कपिल और आइन्स्टीन के सापेक्षवाद से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे ब्रह्माण्ड का एक प्रतिरूप (Counterpart) सूक्ष्मब्रह्माण्ड (Astral universe) भी है जहाँ मृत्यु के बाद मानव-चेतना उसीप्रकार देखती-सुनती और अनुभव करती है जिसप्रकार हम अपने भौतिक जीवन में करते हैं। उस सूक्ष्म ब्रह्माण्ड में भी उसीप्रकार असंख्य नक्षत्र-पिण्ड, असंख्य सभ्यतायें एवं असंख्य लोक भरे पड़े हैं। जब तक आधुनिक विज्ञान अपनी लक्ष्मण रेखा से बाहर नहीं आता तब तक उस सूक्ष्म ब्रह्माण्ड की भनक तक उसे नहीं मिल सकती। लेकिन उस सूक्ष्म ब्रह्माण्ड में यह भौतिक शरीर (Physical body) नहीं काम देता, बल्कि उसके लिए सूक्ष्मशरीर (Astral body) चेतन पुरुष के पास होता है। रामकृष्ण परमहंस कहते हैं, "वेदों, पुराणों, तन्त्रों और शास्त्रों का मुख से उच्चारण करने के कारण वे सब जूठे हो गये हैं ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई अभी तक मुख से नहीं कर सका। इसलिए ब्रह्म अभी तक जूठे नहीं हुए। सच्चिदानन्द के साथ क्रीड़ा और रमण कितने आनन्दपूर्ण हैं, यह मुख से नहीं कहा जा सकता। जिसे यह सौभाग्य मिला है, वही जानता है। पंचभूत को लेकर जो शरीर है वही भौतिक शरीर है। मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त को लेकर सूक्ष्मशरीर है। जिस शरीर से ईश्वर का आनन्द मिलता है और ईश्वर से सम्भोग किया जाता है वह 'कारण शरीर' है। तन्त्रों में उसे 'भगवती तनु' कहा है। सबसे अतीत है 'महाकारण' (तुरीय), यह मुख से नहीं कहा जा सकता। इस संसार में बालू और शक्कर एक साथ मिले हुए हैं। चींटी की तरह बालू का त्याग करके चीनी को निकाल लेना चाहिये (त्रिगुणात्मक सामंजस्य के फ़लस्वरूप)। ज़ो चीनी निकाल सकता है, वही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चतुर है। ईश्वर के लिए प्राणों के छटपटाते रहने पर समझना चाहिये कि अब दर्शन में देर नहीं है। अरुणोदय होने पर, पूर्व में लाली छा जाने पर समझ पड़ता है कि अब सूर्योदय होगा।" यह परा-दर्शन यूक्लिडीयन विज्ञान के समझ में नहीं आ सकता, क्योंकि यह परा-इन्द्रिय ज्ञान है। यह दर्शन फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर में नहीं होता है, बल्कि उस दिव्य लोक में होता है जहाँ परमसुख और शान्ति विराजमान है।

उस दिव्य लोक की एक छोटी सी झाँकी हमें एक प्रसिद्ध पुस्तक (The Autobiography of a Yogi) में मिलती है जिसके लेखक विख्यात योगी परमहंस योगानन्द हैं। इनके गुरु श्री युक्तेश्वर गिरि मृत्यु के बाद योगानन्द को प्रत्यक्ष दर्शन देकर सूक्ष्मलोक का चित्रण इन शब्दों में किया है, "मैं हिरण्य लोक में स्थित होकर उच्च आत्माओं को सूक्ष्मलोक के कर्मों तथा जन्मों से मुक्त होने में सहायता प्रदान करता हूँ। हिरण्य लोक के निवासी आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यन्त विकसित होते हैं। इस लोक में कोई भी मनुष्य तब तक प्रवेश नहीं कर सकता जब तक उसे सविकल्प या निर्विकल्प समाधि का अनुभव न हो। यह एक सूक्ष्म प्राणी अपनी चेतना से कार्य करता है। गिरि के अनुसार सूक्ष्मलोक अनेक प्रकार के होते हैं जहाँ सूक्ष्म प्राणी रहते हैं। यहाँ के लोग एक ग्रह से दूसरे ग्रह पर जाने के लिए सूक्ष्मवाहन या प्रकाश पुंज का प्रयोग करते हैं। इन वाहनों की गति विद्युत अथवा रेडियोधर्मी शक्तियों से भी अधिक तीव्र होती है। सूक्ष्म ब्रह्माण्ड अति सूक्ष्म प्रकाश-तरंगों द्वारा निर्मित होता है जो भौतिक ब्रह्माण्ड से सैकड़ों गुना बड़ा होता है। जिसप्रकार भौतिक ब्रह्माण्ड में अनेक सूर्य एवं तारे होते हैं उसीप्रकार यहाँ असंख्य सूर्य एवं तारामण्डल हैं जो भौतिक ब्रह्माण्ड से अत्यधिक दिव्य हैं। पृथ्वी की अपेक्षा यहाँ दिन और रात भी बड़े होते हैं। सूक्ष्म ब्रह्माण्ड अत्यन्त मोहक, स्वच्छ, पवित्र और व्यवस्थित होता है, यहाँ कीड़े-मकोड़े आदि का कोई अस्तित्व नहीं होता। इस जगत में वसन्त की तरह सदा-बहार मौसम होता है, कभी-कभी धवल एवं बहुरंगी प्रकाश की वर्षा होती है। सूक्ष्मजगत में दुधिया झीलों, जगमगाते समुद्र तथा धनुष-रंगी नदियों की बहुलता है। सामान्य सूक्ष्मजगत लाखों सूक्ष्मप्राणियों से भरा होता है, यहाँ सैकड़ों प्रकार की परियाँ, मत्स्यागंना, मछलियाँ, जीव-जन्तु, भूत-पिशाच, बौना, उप-देवता तथा जीवात्माएँ अपने कर्मों के अनुसार विभिन्न सूक्ष्म ग्रहों पर निवास करती हैं। यद्यपि उच्च स्तर की जीवात्माएँ स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण करती हैं, लेकिन पतित एवं दुष्ट आत्माओं का क्षेत्र सीमित होता है। जिसप्रकार मनुष्य पृथ्वी पर चलता है, कीड़े-मकोड़े जमीन के अन्दर, मछलियाँ पानी में और चिड़ियाँ हवा में तैरती हैं उसीप्रकार विभिन्न स्तरों की जीवात्माएँ उपयुक्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लोकों तथा उपलोकों में विचरण करती हैं। पतित आत्माओं में परस्पर संघर्ष तथा भीषण युद्ध भी होता रहता है। अतः गिरि के अनुसार सूक्ष्म ब्रह्माण्ड दैवी इच्छा और योजना के अधिक अनुकूल है। सूक्ष्मलोक में पदार्थ एवं वस्तुएँ इच्छानुसार परिवर्तित हो जाती हैं। यहाँ के लोग अपने रूप को इच्छानुसार बदल सकते हैं तथा पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि को भी इच्छानुसार बदला जा सकता है। सूक्ष्मशरीर में सर्दी-गर्मी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यहाँ सभी लोग युवा प्रतीत होते हैं। परन्तु सभी सूक्ष्म लोकों में मानसिक पीड़ा की अनुभूति होती हैं। उच्च लोकों में आध्यात्मिक प्रगति ही प्रमुख उद्देश्य होता है। इन लोकों में अपने कर्मों के अनुसार पाँच सौ से दो हजार वर्षों तक लोग निवास करते हैं। सूक्ष्म संसार के लोग अनचाही मौत, रोग, वृद्धावस्था आदि भौतिक विकारों से मुक्त होते हैं। गिरि का कहना है किं कारण संसार (Causal world) इतना सूक्ष्म होता है कि उसका वर्णन शब्दों द्वारा नहीं हो सकता। यहाँ कल्पना और यथार्थ में कोई अन्तर नहीं है। इस लोक के वासी सूर्य-नक्षत्र-ताराओं पर स्वच्छन्दतापूर्वक विचरण कर सकते हैं। 'कारण जगत' में जन्म और मरण विचार में ही होता है। अनेक लोग इस सूक्ष्मजगत में हजारों वर्ष तक रहते हैं।"

बीसवीं सदी के आरम्भ में सुप्रसिद्ध योगी रामाचारक द्वारा अमेरिका में योगविज्ञान पर दिये गये वक्तव्य एवं लेख-मालाओं का संग्रह अनेक पुस्तकों के रूप में 'योगी पब्लिकेशन सोसाइटी' द्वारा प्रकाशित किया गया है। उन्हीं पुस्तकों में से एक पुस्तक (Fourteen Lessons in yogi philosophy and Oriental occultism) में योगी और जिज्ञासु का रूपक देते हुए योगी रामाचारक कहते हैं, "ध्यानावस्था के बाद योगी और जिज्ञासु दोनों अपने सूक्ष्म शरीर (Astral body) में प्रकट हो उठते हैं, जिज्ञासु का स्थूलशरीर कोच पर लेटा हुआ दिखाई देता है जो सूक्ष्मशरीर से रूपहली डोर (Silver cord) में बंधा हुआ है। गुरु और शिष्य दोनों अपने सूक्ष्मशरीर में पारदर्शी वस्तुओं एवं दीवारों को पार करते हुए बादलों की तरह नगर के ऊपर तैरने लगते हैं। अनजान शिष्य को डर लगता है कि कहीं नीचे न गिर पड़ूँ और जैसे ही उसके अन्दर यह विचार आता है वैसे ही वह अपने को गिरता हुआ सा महसूस करता हैं। लेकिन गुरु उसे सहारा देते हुए आदेश देता है कि जब तक तुम्हारे अन्दर भय का विचार नहीं उत्पन्न होगा तब तक तुम गिर नहीं सकते, इसलिए यह विचार दृढ़ रखो कि मैं स्वाभाविक रूप से तैर रहा हूँ और वस्तुतः तुम्हारी स्थिति वैसी ही बन जायेगी। आगे बढ़ने पर शिष्य पाता है कि नगर के ऊपर विचारों के बादल (Thought clouds) धुआँ की तरह इधर-उधर तैर रहे हैं। उन बादलों में कई प्रकार के रंग-रूप तथा विद्युत् की भांति तरंगें भी उठ रहीं हैं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो गुरु के अनुसार विचार-तरंगों का सम्प्रेषण (Telepathy) हो रहा है। नीचे उतरने पर शिष्य को दिखाई देता है कि सभी व्यक्तियों में अण्डे के आकार का एक प्रभामण्डल (Aura) है जिसमें उस व्यक्ति की विचार-तरंगों एवं मानसिक अवस्था का आभास मिल रहा है। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में वे प्रभामण्डल भिन्न-भिन्न रंग-रूप में दिखाई दे रहे हैं। लेकिन शिष्य को यह अनुभव होता है कि इन दृश्यों को देखने के लिए उसे अपनी जगह बदलने की आवश्यकता नहीं पड़ती, बल्कि सभी दृश्य पर्दे पर छायाचित्रों की भाँति अपने-आप बदल रहे हैं—यह सब कुछ एक अदभुत संसार की तरह दिखाई दे रहा है। शिष्य को चारों ओर सूक्ष्मशरीर के खोल तैरते हुए नजर आते हैं, जो गुरु के अनुसार गुजरी हुई जीवात्माओं के हैं। गुरु कहता है कि यह वास्तविक सूक्ष्मजगत नहीं है।

इसके पश्चात दोनों उस लोक के दूसरे खण्ड की ओर बढ़ते हैं। परन्तु इस खण्ड की विचित्र बात यह है कि लोग उस शरीर को भी उसीप्रकार आसानी से उतार फेंकते हैं जिसप्रकार कोई लबादा उतार कर अलग कर देता है। इसप्रकार शिष्य को यह प्रतीत होता है कि जैसे-जैसे वह उच्च लोक (Higher Planes) की ओर बढ़ता है वैसे-वैसे शरीर भी सूक्ष्म होता जाता है। गुरु स्पष्टीकरण देता है कि अनेक लोक तथा उनके खंडों का निर्धारण आध्यात्मिक प्रगति पर निर्भर करता हैं, जो अनेक जन्मों के पुरुषार्थ द्वारा प्राप्त होता है और कोई भी मनुष्य अपनी सीमा से ऊपर के लोकों में नहीं पहुँच सकता। लेकिन उच्च लोक की जीवात्माएँ निम्न लोक में आती हैं तथा अन्य जीवात्माओं को शिक्षा प्रदान करती हैं। यह सब कुछ स्वेच्छापूर्वक नहीं होता, बल्कि निश्चित प्राकृतिक नियमों द्वारा होता है। सूक्ष्मजगत के सबसे निचले खण्ड में पशुवत जीवात्माओं का निवास होता है, जो भौतिकजगत की भाँति आमोद-प्रमोद में ही लिप्त रहती हैं, यहाँ पर सब कुछ पृथ्वी की तरह दृष्टिगोचर होता है। प्रायः वे जीवात्माएँ पृथ्वी के भौतिक जीवन को देखती हैं, किन्तु स्थूल शरीर न होने से कुछ विशेष अवस्थाओं को छोड़कर उनमें सक्रिय रूप से हिस्सा लेने में असमर्थ होती हैं। जब उनकी भावनाओं के अनुकूल पृथ्वी पर कोई माध्यम प्राप्त हो जाता है तो वे उन्हें प्रभावित कर लेती हैं। वहाँ की जीवात्माएँ भौतिक जीवन की ओर इतना आकर्षित होती हैं कि उस प्रभाव से उन्हें जल्द पुनर्जन्म प्राप्त हो जाता है (फोटोन और इलेक्ट्रान प्रक्रिया द्वारा)। इसके विपरीत उच्चलोक की जीवात्माएँ जिन्हें भौतिक जीवन के प्रति कम आकर्षण होता है लम्बे समय तक उन लोकों में निवास करती हैं और उन लोकों में वर्त्तमान उत्तम साधनों द्वारा निरन्तर प्रगति की ओर बढ़ती रहती हैं। लेकिन जल्द या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देर से एक ऐसी भी अवस्था आती है जब उच्चलोक की जीवात्मा वहाँ की शिक्षा में निपुण होकर और आगे प्रगति के लिए अपनी इच्छा या स्वभाव के अनुसार उसे पृथ्वी पर पुनर्जन्म लेना पड़ता है, क्योंकि इस कर्मक्षेत्र से होकर ही वह अत्यन्त उच्चलोकों को प्राप्त होती है। इसप्रकार उस सूक्ष्मलोक में भी उसकी पुनः मृत्यु होती है और वह जीवात्मा पृथ्वी पर स्थूलशरीर धारण करता है।

योगी गुरु कहता है कि पुनर्जन्म की इस प्रक्रिया में जीवात्मा लगभग निद्रावस्था (Drowsy) में होता है और यह अवस्था पृथ्वी पर जन्म के बाद भी कुछ समय तक बनी रहती है। गुरु, शिष्य से कहता है कि तुम्हें तो निम्न लोक के एक खण्ड का ही दर्शन प्राप्त हुआ है, क्योंकि तुम्हारी वही सीमा थी, लेकिन एक के ऊपर एक असंख्य जगत् हैं और उनके भी असंख्य लोक हैं जिनकी मनुष्य द्वारा कल्पना भी नहीं हो सकती, उन्हें शब्दों या चित्रों में उतारना सम्भव नहीं है। जब शिष्य पूछता है कि हमलोग पृथ्वी से कितने लाख मील दूर गये थे तथा कितने समय तक विचरण किये ? गुरु उत्तर देता है कि तुमने कभी पृथ्वी छोड़ा ही नहीं, और तुम्हारा स्थूल शरीर केवल एक क्षण के लिए पड़ा रहा—सूक्ष्मजगत में समय और दूरी (Time and space) नाम की कोई वस्तु नहीं है। यहाँ योगी का तात्पर्य यह है कि सब कुछ स्वचेतना में ही प्रतिबिम्बित होता है और चेतना (आत्मा) से पृथक इस ब्रह्माण्ड का कोई अस्तित्व नहीं है। यही आइन्स्टीन ने भी प्रमाणित किया।

गीता में मृत्यु की अवस्था में शरीर-परिवर्त्तन को वस्त्रपरिवर्त्तन कहा गया है, क्योंकि समय एवं कण-तरंगों के संयोजन से मन द्वारा जिस भौतिक शरीर का निर्माण होता है उसका अस्तित्व चित्रपट के रील की भाँति होता है और मृत्यु के समय जब समय का विघटन (Disintegration) होता है तो उन कण-तरंगों तथा उस रील का भी कुछ क्षणों में ही विघटन हो जाता है। उसी अवस्था में सूक्ष्मशरीर (Astral body) स्थूल शरीर से पृथक हो जाता है, जो चेतन पुरुष के लिए 'देश-काल' विहीन अवस्था होती है। इसीलिए इस अवस्था को योगदर्शन में महासमाधि कहा गया है, क्योंकि जो अवस्था योगी अभ्यास द्वारा प्राप्त करते हैं वह अवस्था प्रकृति द्वारा स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाती है। लेकिन योगी और सामान्य मनुष्य के चेतन-स्तर में भिन्नता होती है, इसलिए मृत्यु के बाद उन्हें लोक भी भिन्न-भिन्न प्राप्त होता है, क्योंकि चेतन-स्तर के अनुरूप ही लोक भी प्राप्त होता है। इसका कारण यह है कि उच्च चेतन-स्तर में अहंज्ञान और सापेक्षभ्रम दूर हो जाता हैं, जबकि सामान्य मनुष्यों का अहंज्ञान और सापेक्षभ्रम उसीप्रकार बना रहता है। इसीलिए उन्हें उच्च चेतन-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्तर प्राप्त करने के लिए आकर्षण और विकर्षण नियमों के अनुसार इस पृथ्वी पर बार-बार जन्म लेना पड़ता है, क्योंकि उन्हें स्थूल लोक और सूक्ष्म लोक में कोई अन्तर नहीं मालूम पड़ता।

इसी पुस्तक के दूसरे अध्याय में योगी रामाचारक कहते हैं कि जब जीवात्मा (Ego) स्थूल शरीर छोड़ता है तो शरीर के असंख्य परमाणु जो जीवनकाल में केन्द्रीय शक्ति मन द्वारा संगठित रूप से कार्य करते रहते हैं, उन परमाणुओं में विघटन आरम्भ हो जाता है, स्वाधीन होने के लिए उनमें होड़ सी मच जाती है (समय के विघटन द्वारा), धक्का-मुक्की होने लगती है, देश-काल का अस्तित्व लुप्त होने लगता है। मृत्यु के समय सूक्ष्मशरीर चमकीले भाप के बादलों के समान स्थूलशरीर से पृथक होने लगता है, रूपहली डोर (Silver Cord) टूट जाती है और अपना भौतिकशरीर अलग पड़ा हुआ स्पष्ट दिखाई देने लगता है। इसी अवस्था में जन्म से लेकर मृत्युतक सम्पूर्ण जीवन-वृत्तान्त तीव्र गति से छायाचित्रों के रूप में गुजरने लगता है (क्योंकि मानव जीवन एक रील के समान है)। इस चित्रमय प्रवाह को देखकर जीवात्मा अपने गुण-दोषों का मूल्यांकन करता है। जीवात्मा पर इस चित्रमय प्रवाह का गहरा प्रभाव पड़ता है। जीवात्मा के सगे-सम्बन्धी रोते-बिलखते दिखाई देते हैं, उनके दुख से द्रवित होकर वह जीवात्मा फिर उनसे सम्पर्क स्थापित करना चाहता है जिससे कि उन्हें यथार्थ स्थिति का बोध हो सके। परन्तु वह ऐसा करने में असमर्थ होता है। जो लोग किसी दुर्घटना का शिकार होकर मृत्यु को प्राप्त होते हैं उन्हें सहसा अपनी मृत्यु का विश्वास नहीं होता। उन्हें अपने चारों ओर भौतिक वातावरण ही दिखाई देता है, किन्तु उन हलचलों से वे अपने को पृथक पाते हैं। इसी बीच सूक्ष्मलोक के सहायक तथा मृत्यु को प्राप्त हुए सगे सम्बन्धी भी पहुँच जाते हैं, जो उसे यथार्थ स्थिति का बोध कराते हैं। इस प्रकार जीवात्मा स्थूल शरीर से पृथक होकर एक अर्ध-चेतन (योगी पूर्ण चेतन अवस्था में होते हैं) अवस्था को प्राप्त होता है और उस अवस्था में वह हल्कापन एवं विश्रान्ति का अनुभव करता है। इसप्रकार धीरे-धीरे वहाँ के जीवन में घुल-मिल जाता है।

मैडम एच० पी० ब्लेवाट्स्की अपनी पुस्तक (Key to theosophy) में कहती हैं कि मृत्यु के पुनीत क्षणों में प्रत्येक मनुष्य अपने विगत जीवन को अपने सभी पहलुओं में चलचित्र की भाँति स्पष्ट देखता है और उन क्षणों में सम्पूर्ण जीवन सर्वज्ञ आत्मा से एक हो जाता है। लेकिन वह एक क्षण ही जीवात्मा के विगत जीवन से सम्बद्ध 'कारण-कार्य' श्रृंखला को स्पष्ट कर देने के लिए यथेष्ट होता है। उस अवस्था में वह अपना खुला रूप देखता है, अपने जीवन तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उस विगत कर्मक्षेत्र का एक दर्शक की भाँति अध्ययन करता है।

इस विषय के आध्यात्मिक पहलू का विश्लेषण करते हुए मैडम ब्लेवाट्स्की अपनी एक दूसरी पुस्तक (The Secret Doctrine, Vol. I) में कहती हैं कि सभी पदार्थों के भौतिक एवं रासायनिक तत्व समान पाये गये हैं और रसायन-विज्ञान यह कह सकता है कि एक मनुष्य तथा जन्तु जिन पदार्थों द्वारा निर्मित हैं उनमें कोई अन्तर नहीं है। परन्तु अध्यात्मविद्या (Occult Doctrine) कहीं इससे भी बहुत अधिक स्पष्ट है। इस विद्या के अनुसार सिर्फ रासायनिक यौगिक (Compounds) ही एक नहीं हैं, बल्कि अति सूक्ष्म जीवाणु तथा परमाणु जिनसे पहाड़, गुलबहार, मनुष्य, चींटी, हाँथी तथा वृक्ष आदि निर्मित होते हैं, वे सभी एक हैं (एक ही चेतनशक्ति)। प्रत्येक कण—चाहे उसे सजीव कहो या निर्जीव—एक जीवन है।

प्रसिद्ध थियोसोफी विचारक डा० एनीबेसेन्ट अपनी पुस्तक (Death and after) में कहती हैं कि चमकदार फीता (Cord) टूट जाने पर जब सूक्ष्म शरीर (Etheric double) स्थूलशरीर से पृथक होता है तो वह कहीं दूर नहीं जाता, बल्कि सामान्यतः उसी पर मंडराता रहता है और जबतक कोलाहल एवं तीव्र मानसिक उद्वेग न हो तबतक चेतन अवस्था स्वप्नवत तथा शान्तपूर्ण बनी रहती है। इसी समय जीवात्मा का सम्पूर्ण जीवन-वृत्तान्त तेजी से प्रदर्शित होता है और वासना-तरंगें उभर जाती हैं जो सुप्त गुण-विकारों के रूप में अगले जन्म का कारण बनती हैं। एक ही जीवात्मा के दो जीवन का यह सन्तुलन तथा भूतकालीन कर्म-संस्कारों का चित्रमय परीक्षण अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं पुनीत होता है और इस समय मित्रों एवं सम्बन्धियों का रोना-चिल्लाना बहुत दुखद होता है। कभी-कभी वह सूक्ष्म शरीर कुछ विशेष मानसिक अवस्थाओं में मृतात्मा के मित्रों या सम्बन्धियों द्वारा प्रत्यक्ष देख भी लिया जाता है और उस अवस्था में वह शान्त एवं अव्यक्त प्रतीत होता है। इस सम्बन्ध में डा० हार्टमैन की पुस्तक (Magic, white and Black) से उद्धरण प्रस्तुत करते हुए डा० बेसेन्ट का कहना है कि शव को कुछ समय के लिए पुनर्जीवित भी किया जा सकता है, लेकिन यह क्रिया उस मृतक की कब्र के पास ही हो सकती है। परन्तु बेसेन्ट मानती हैं कि इस प्रक्रिया का सम्बन्ध काला जादू (Black Magic) से है और पूर्णतया पापकर्म है।

एक अन्य थियोसोफी विचारक विशप सी० डब्ल्यू लीडबीटर अपनी पुस्तक (Astral Plane) में कहते हैं कि सूक्ष्मजगत का पदार्थ इतना पारदर्शी होता है कि बाहर-भीतर एक साथ दिखाई देता है जिससे सामान्य लोगों को वस्तुएँ भ्रमपूर्ण दृष्टिगोचर होती हैं। यहाँ के दृश्यों को भौतिक जगत की भाषा में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्त करना अत्यन्त कठिन हैं। यहाँ प्रभामण्डल (Aura) की तरगों से लोगों की वासनाओं का पता चलता है। अपनी एक दूसरी पुस्तक (The Life after death) में लीडबीटर का कहना है कि मृत्यु के समय मनुष्य में बिलकुल स्वाभाविक परिवर्तन होता है और उसकी अवस्था ठीक वही होती है जो मृत्यु के पहले थी। सूक्ष्मजगत हमारे भौतिकजगत का ही एक विस्तार होता है। दोनों जगत को पृथक करने वाली शक्ति हमारी सीमित चेतना है। मृतात्मा को यह भ्रम होता है कि कहीं वह स्वप्न तो नहीं देख रहा है, लेकिन क्रमशः अपने को अभ्यस्त कर लेता है। वहाँ उसे ज्ञात होता है कि सबका मूल उसकी वासना-तरंगें हैं। लीडबीटर का दावा है कि यह विवरण उनकी प्रत्यक्ष अनुभूतियों पर आधारित हैं।

आज पाश्चात्य भौतिकवादी देशों में भी पुनर्जन्म पर गहन अनुसन्धान चल रहे हैं। यद्यपि ईसाई समाज पुनर्जन्म में विश्वास नहीं करता, लेकिन आज का वैज्ञानिक समाज सत्य की खोज में ऐसी किसी मर्यादा को स्वीकार नहीं करता। वास्तव में पुनर्जन्म होता भी हैं और नहीं भी होता हैं। यह सब कुछ ईश्वर का एक चमत्कार है। अगर हम अद्वैतवादी दृष्टिकोण (अहम् ब्रह्मास्मि) से देखेंगे तो कोई पुनर्जन्म नहीं होता है, क्योंकि जब मनुष्य नित्य, शाश्वत और अविनाशी आत्मा हैं तो पुनर्जन्म का कोई प्रश्न ही नहीं होता। लेकिन यदि हम सापेक्षवाद के दृष्टिकोण (प्रकृति और पुरुष संयोग) से देखेंगे तो पुनर्जन्म होता है, क्योंकि जबतक हमारा सापेक्ष भ्रम नहीं समाप्त होगा तब तक हमें पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानना पड़ेगा। इसी प्रश्न में ज्ञान और अज्ञान का रहस्य छिपा हुआ है, क्योंकि निरपेक्ष दृष्टिकोण से पुनर्जन्म नहीं होता है। एक ही जीवात्मा वृत्तात्मक रेखागणित में चित्रमय प्रवाह को देखता रहता है। इसके विपरीत सापेक्ष दृष्टिकोण से पुनर्जन्म होता है, क्योंकि हमारी स्वचेतना त्रिगुणात्मक पदार्थ से सम्बद्ध (Attached) हो जाती है जिसे अहंकारवश हम यथार्थ समझ कर पुनर्जन्म मान लेते हैं, जबकि पदार्थ का वह परिवर्त्तन केवल वस्त्र परिवर्त्तन के समान होता है। दूसरे शब्दों में पुनर्जन्म त्रिगुणात्मक पदार्थ का होता है जिससे अहंकार (Ego) संयुक्त होता है, न कि निर्गुण और निराकार आत्मा का। इसप्रकार हमें नकली एवं अशुद्ध आत्मा (Ego) और असली तथा शुद्ध आत्मा (Soul) में फर्क करना चाहिये। जो इस रहस्य को जानता है वही योगी है।

आज अमेरिकी डाक्टरों ने भी अपने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि मृत्यु के बाद भी जीवन होता है। यह सिद्धान्त यूक्लिडीयन एवं भौतिकवादी विज्ञान पर एक प्रत्यक्ष प्रहार है। यद्यपि विज्ञान कह सकता है कि यह प्रयोग प्रामाणिक नहीं है, लेकिन स्वयं उसके द्वारा निर्धारित प्रमाण का माप-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दण्ड ही प्रामाणिक नहीं है, क्योंकि परा-भौतिक ज्ञान के लिए इन्द्रियजनित ज्ञान कभी प्रामाणिक नहीं हो सकता। यही कारण है कि आज कपिल और आइन्स्टीन का सापेक्षवाद यूक्लिडीयन विज्ञान की समझ से परे है। उस विज्ञान ने सभी ज्ञान को अपनी सीमाओं में ही बांध रखा है, जो अहंज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। जब यह अहंज्ञान दूर होगा तो वह लक्ष्मण रेखा टूट जायेगी।

डा० रेमन्ड ए० मूडी जूनियर ने अपनी पुस्तक (Life After Life–Newyork, 1975) में लगभग सौ से अधिक व्यक्तियों का अनुभव संचित किया है, जो डाक्टरों द्वारा मृत घोषित कर दिये जाने के बाद भी किसी अलौकिक प्रेरणा से पुनर्जीवित हो उठे। डाक्टर के अनुसार उन सभी व्यक्तियों के अलग-अलग अनुभवों में भिन्नता होते हुए भी कुछ इसप्रकार की मूलभूत समानता एवं सादृश्यता है जिन्हें कुछ शब्दों में चित्रित किया जा सकता है। डाक्टर ने उन सभी सौ से अधिक व्यक्तियों के अनुभवों को एक व्यक्ति के अनुभव में पिरो कर संक्षेप में इसप्रकार चित्रित किया है, "एक मनुष्य मृत्यु की ओर बढ़ रहा है और जैसे ही वह शारीरिक वेदना की चरम सीमा पर पहुँचता है वैसे ही वह डाक्टर द्वारा मृत घोषित कर दिया जाता है। तभी उसे एक बिचित्र कष्टदायक सी आवाज सुनाई देती है, जैसे तेज घण्टियों की आवाज हो रही हो अथवा मधुमक्खियाँ भनभना रही हों और साथ ही साथ उसे आभास होता है कि वह एक लम्बी अंधेरी सुरंग में तेजी से गुजर रहा है। इसके पश्चात् वह अचानक अपने को भौतिक शरीर से बाहर पाता है, लेकिन फिर भी अपने चारों ओर वही भौतिक वातावरण देखता है, और कुछ दूरी से वह अपने स्थूल शरीर को पड़ा हुआ पाता है, मानो वह कोई दर्शक हो। वह इस पुनर्जीवन क्रिया को अस्वाभाविक ढंग से गौर करता है और इस समय वह एक मानसिक उद्वेग की अवस्था में होता है। कुछ समय के बाद वह अपने को आश्वस्त करता है तथा उस बिचित्र स्थिति का अभ्यस्त बन जाता है। उसे ज्ञात होता है कि इस समय भी यद्यपि उसके पास एक शरीर है (सूक्ष्म शरीर), लेकिन वह शरीर उसके पुराने स्थूल शरीर से सर्वथा भिन्न है तथा उसकी शक्ति भी पुराने शरीर से बिलकुल भिन्न है। इसके तुरन्त बाद दूसरे घटनाचित्र आरम्भ हो जाते हैं। उस सूक्ष्म लोक के वासी उससे मिलने तथा उसकी सहायता करने आ जाते हैं। इस क्रम में उसे अपने मृत सम्बन्धियों तथा मित्रों की एक झलक मिलती है और प्यार एवं ममता से परिपूर्ण एक अपूर्व आत्मा तेजपुंज (Being of light) के रूप में मेरे सामने प्रकट होता है। उस दिव्य आत्मा की प्रेरणा से विगत जीवन की प्रमुख घटनाएँ एक क्षण में चलचित्र की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाँति घूम जाती हैं। एक दूसरे स्थल पर वह अपने को एक तरह की सीमारेखा अथवा अवरोध की ओर बढ़ता हुआ पाता है, जो स्पतष्टतः भौतिक जीवन और पारलौकिक जीवन का द्योतक है। यहाँ आकर वोध होता है कि अब उसे पृथ्वी की ओर लौट जाना चाहिये, क्योंकि उसकी मृत्यु का समय अभी नहीं आया है। इस सीमा पर वह प्रतिकार करता है, क्योंकि इस नये जीवन से वह अत्यधिक प्रभावित हो उठा है और अब पृथ्वी की ओर लौटना नहीं चाहता। वह हर्ष, प्रेम और शान्ति से अभिभूत हो उठा है। इस दृष्टिकोण के बावजूद वह अपने भौतिकशरीर से किसीप्रकार फिर जुड़ जाता है और पृथ्वी पर जीवित हो उठता है। बाद में वह दूसरों से कहने का प्रयत्न करता है, किन्तु उसे कठिनाई होती है। सर्वप्रथम इस सन्दर्भ में ऐसे मानवीय शब्द नहीं हैं जो पारलौकिक जीवन का यथेष्ट चित्रण कर सकें। इसके अतिरिक्त दूसरे लोग हंसी उड़ाते हैं इसलिए वह दूसरों से नहीं कहता। परन्तु फिर भी इस अपूर्व अनुभव का गम्भीर प्रभाव उसके जीवन पर पड़ा है, विशेषतौर से मृत्यु सम्बन्धित उसके पूर्व दृष्टिकोण में तथा जीवन से उसके सन्बन्ध के विषय में।" लेखक के अनुसार उपरोक्त विवरण किसी एक व्यक्ति का नहीं है बल्कि अनेक लोगों के अनुभवों का सारतत्व है। यद्यपि उनमें कुछ भिन्नता है, तो भी एकरूपता है। इसके आगे पुस्तक में भिन्न-भिन्न लोगों के मरणोपरान्त अनुभवों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

इसीप्रकार एलिजावेथ क्यूबलर रास अपने बीस वर्षों के अनुसन्धान द्वारा उपलब्ध आकड़ों के आधार पर अपनी पुस्तक (Death, the final stage of growth–1975) में इसी से मिलता-जुलता चित्रण प्रस्तुत करती हैं। लेकिन दो अन्य अमेरिकी डाक्टरों–कार्लिस ओसिस तथा अरलेंडर हेराल्डसन द्वारा प्रकाशित शोध-पुस्तक (At the Hour of death–1977) में इससे व्यापक आधार पर हजारों मरणासन्न व्यक्तियों के अनुभव लिपिबद्ध किये गये हैं। इन डाक्टरों ने अपने बीस वर्षों के अनुसन्धान के लिए अमेरिका जैसे ईसाई-प्रधान देश के अतिरिक्त भारत जैसे वैदिक-प्रधान देश को भी चुना है और दोनों का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि ईसाई तथा हिन्दू व्यक्तियों के प्रारम्भिक दर्शन में कुछ मूलभूत भिन्नता है, क्योंकि दोनों समाज के धार्मिक आधार एवं विश्वास में कुछ मौलिक भिन्नता है। इससे स्पष्ट है कि अपने विश्वास के अनुरूप ही मनुष्य को दर्शन होता है। उदाहरण के लिए अगर एक ईसाई की मृत्यु के बाद उसे ईसामसीह अथवा देवी मेरी के दिव्य व्यक्तित्व की झलक मिलती है, तो एक हिन्दू को यमराज, देवदूत, श्रीकृष्ण अथवा किसी अन्य देवता का आभास होता है। लेकिन सिर्फ डा० मूडी ने ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसे दिव्य प्रकाशपुंज के रूप में चित्रित किया है। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य का जैसा विश्वास होता है, उसके लौकिक जीवन का जैसा आधार होता है, मृत्यु के बाद उसके अनुरूप ही पारलौकिक जगत का वातावरण प्राप्त होता है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार कारण ही कार्य है और कार्य ही कारण। इस नियम के अनुसार शरीर परिवर्त्तन के बाद भौतिकजगत ही कारण बन जाता है, जो सूक्ष्म-जगत के भावी जीवन के रूप में प्रतिबिम्बित होता हैं। यह सब कुछ कारण और कार्य श्रृंखला में सापेक्षवाद कीं वृत्तात्मक रेखागणित (आवागमन चक्र) के फल-स्वरूप घटित होता है। जो इस चक्र से बाहर हो जाता है वह मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

इन वैज्ञानिक अनुसन्धानों से हट कर पश्चिमी जगत में एक ऐसी रोचक पुस्तक (Asoul's Journey–1972) भी प्रकाशित हुई है जो भारतीय योगदर्शन से मिलती-जुलती एक सिद्ध योगी और जिज्ञासु की शैली में लिखी गई है। इस पुस्तक में सूक्ष्मजगत (Astral world) का जो चित्रण किया गया है वह सापेक्षवाद के नियमों के अनुकूल है तथा पढ़ने पर पाठक को ऐसा प्रतीत होगा, मानो वह स्वयं सूक्ष्मजगत में पहुँच कर वहाँ का अवलोकन कर रहा हो। इसमें सूक्ष्मजगत का व्यापक चित्रण किया गया है जो प्रशंसनीय है। इस पुस्तक के लेखक पीटर रिचलू को ७ जुलाई १९४१ को लन्दन युद्ध-विभाग से यह सूचना मिली कि उसका प्रिय नौजवान भाई चार्ल्स एक हवाई युद्ध में मारा गया। इस दुखद समाचार से पीटर को बड़ा आघात पहुँचा। वह कई दिनों तक इसी उधेड़-बुन में पड़ा रहा कि जगत का मालिक ईश्वर है या नहीं ? अगर है तो वह न्याय करता है अथवा अन्याय इत्यादि प्रश्न उसे वेधते रहे। कई दिन स्वप्ना-वस्था में वह अपने भाई चार्ल्स से वार्त्तालाप भी करता रहा। इसी बीच एक दिन सुबह एक सिद्ध भारतीय योगी अचानक प्रकट हुआ और पीटर के अनेक गुप्त रहस्यों को खोलते हुए तथा ईसा मसीह का उद्धरण देते हुए कहा कि मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए भेजा गया हूँ। पीटर उससे कुछ प्रभावित होकर राजी हो गया। इसप्रकार वह अज्ञात योगी पीटर को कुछ दिनों तक आध्यात्मिक शिक्षा देता रहा और विदा होते समय मृतात्मा की तरह लुप्त हो जाता था। एक दिन पीटर योगी की बताई हुई विधियों का पालन कर अपने स्थूल शरीर से पृथक हो गया। इस प्रक्रिया द्वारा पीटर सूक्ष्मलोक में प्रवेश कर गया जहाँ नीला-भूरापन लिए हुए दिन की तरह प्रकाश विद्यमान था। अचानक पीछे मुड़ने पर उसके भाई चार्ल्स का मुस्कराता चेहरा दिखाई दिया, उसका स्पर्श वास्तविक प्रतीत हुआ। उस भारतीय योगी ने कहा कि यह एक वास्त-विकता है, क्योंकि इस समय तुम जिस शरीर का प्रयोग कर रहे हो तुम्हारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाई चार्ल्स भी उसी शरीर का प्रयोग कर रहा है। यही कारण है कि जितना तुम उसके लिए यथार्थ हो उतना ही वह तुम्हारे लिए यथार्थ है। यद्यपि बाह्य-रूप से चार्ल्स का सूक्ष्म शरीर बिलकुल भौतिक शरीर की तरह था, तां भी वह किसी तरह भौतिक नहीं था; क्योंकि उसमें मांस, हड्डी एवं तन्तु नहीं थे। जब हम दरवाजे की ओर बढ़े तो उसे बिना खोले हुए पार कर गये और गुरुत्वाकर्षण के अभाव में सीढ़ियों पर तैरते हुए चल रहे थे।

हमलोगों ने समुद्र से लगभग दस गज ऊपर चलते हुए बन्दरगाह को पार किया, पीछे कोलम्बो शहर की बत्तियाँ मद्धिम सी दिखाई देने लगीं। हम इतनी तेजी से आगे बढ़ रहे थे कि भिन्न-भिन्न स्थानों मे भेद करना कठिन था, क्योंकि सुदूर अन्तरिक्ष में वे स्थान जैसे ही दिखाई देते थे लगभग उसी समय हम उन स्थानों को पार कर जाते थे। इस असीम गति पर भौतिकजगत की भाँति हवा में कोई घर्षण भी उत्पन्न नहीं हो रहा था जिसके फलस्वरूप किसी अवरोध का बोध नहीं होता था। कुछ क्षणों में हम कोलम्बों से इंगलैंड के हाइड पार्क के ऊपर पहुँच गये। जब हम कोलम्बों से चले थे तो उस समय वहाँ रात्रि के १० बजे थे, जबकि इंगलैड में उस समय शाम ५½ बजे का वक्त था। लेकिन सूक्ष्म-लोक का प्रकाश यहाँ लन्दन में भी वही था जैसाकि वह कोलम्बों में रात्रि के समय था। इसका कारण पूछने पर मुझे बताया गया कि चूँकि सूक्ष्मशरीर (Astral body) को कभी विश्राम की आवश्यकता नहीं पड़ती, इसलिए न तो यहाँ रात्रि होती है और न ही दिन। अव हम आक्सफोर्ड स्ट्रीट की ओर बढ़े जहाँ अत्यधिक भीड़ थी, लेकिन इससे हमलोगों की गति में कोई अन्तर नहीं आया, क्योंकि वस्तुतः हमलोग भीड़ में व्यक्तियों के स्थूल शरीर को पार करते हुए चल रहे थे। भीड़ को पार करने में ऐसा प्रतीत होता था, मानो हम किसी धुन्ध के बादल (Cloud of mist) से गुजर रहे हों। इससे कुछ रुकावट नहीं होती थी, पर कुछ महसूस जरूर होता था। इसप्रकार घूमते हुए हमलोग एक पुस्तक की दुकान (Selfridges) में घुस गये और मैं आलमारी से एक पुस्तक उठाकर उलटने लगा। लेकिन मुझे दिखाई दिया कि आलमारी से पुस्तक उठाने पर भी वहाँ कोई खाली जगह नहीं हुई। इसका कारण पूछने पर ज्ञात हुआ कि जो पुस्तक हमारे हाथ में थी वह केवल एक विचार-शृंखला मात्र (Thought-form) थी और आलमारी में पड़ी हुई स्थूल पुस्तक वस्तुतः वहाँ से निकाली ही नहीं गई।

पिकाडली सर्कस पहुँच कर हम बड़े प्रसन्न हुए, वहाँ का वातावरण बड़ा सुहावना था, बसें और टैक्सियाँ उसीप्रकार चल रही थीं। जब हम डिनर के लिए ट्रोकेड्रो ग्रिल में अन्दर घुसे तो लगभग ७ बजे का समय था और वहाँ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमारे भारतीय मित्र ने कुछ समय के लिए विदा ले ली। यहाँ हमारे भाई चार्ल्स ने भौतिक जगत और सूक्ष्म जगत के बीच एक बड़े भेद की बात यह बताई कि जब स्थूल जगत में स्थित किसी वास्तविक होटल से भोजन करना हो तो वहाँ कोई खाली सीट देखकर नहीं बैठ जाना चाहिये, क्योंकि इसी बीच अगर कोई भौतिक प्राणी खाली सीट देखकर बैठ जाय तो हमें बड़ी असुविधा होगी, जो लन्दन की भीड़ में धुन्ध के बादलों के बीच गुजरने पर हुई थी। ऐसी स्थिति में हमें विचार-शृंखला(Thought form)द्वारा एक सूक्ष्म टेबुल किसी खाली जगह में स्थापित कर लेना चाहिये। मेरे भाई ने इसी प्रक्रिया द्वारा एक कृत्रिम टेबुल और वेयरा का भी निर्माण कर लिया, जो वहाँ बैठे हुए भौतिक प्राणियों के लिए अदृश्य था। आर्डर के अनुसार सूखा शेरी, व्हिस्की तथा सोडा उपस्थित हो गया। मुझे उन खाद्य-पदार्थों में वैसा ही स्वाद प्रतीत हुआ जैसा भौतिक जगत में होता है। मुझे यह बताया गया कि अगर तुम भौतिक जगत में इनका स्वाद कभी नहीं चखे होते तो तुम्हें सूक्ष्म जगत में भी ऐसा स्वाद नहीं प्रतीत हुआ होता। चार्ल्स ने बताया यही नियम धूम्रपान पर भी लागू होता है। हम खाते-पीते हुए लोगों की ओर देख रहे थे, उनकी धीमी-धीमी बातचीत भी सुनाई दे रही थी। इससे यह निष्कर्ष निकलता था कि प्रत्येक भौतिक ध्वनि (Physical sound) का एक सूक्ष्म प्रतिरूप (Astral counterpart) भी होता है, जो सूक्ष्म प्राणियों को प्रतिध्वनित होता है (यहाँ कपिल का सापेक्षवाद स्पष्ट होता है)। वहाँ का वातावरण देखने से यह नहीं प्रतीत होता था कि इंग्लैंड में युद्ध की स्थिति है, क्योंकि सभी लोग हँसी-मजाक एवं आमोद-प्रमोद में लीन थे। इसी बीच चार्ल्स का एक दोस्त रॉय चैपमैन अपनी सैनिक वर्दी में वहाँ आ पहुँचा जिसकी मृत्यु पिछले हवाई-युद्ध में हो गई थी। उसने बताया कि सूक्ष्म-जगत में पहले तो यह सब अच्छा लगता है कि कोई भी वस्तु बिना कीमत अदा किये हुए मिल जाती है, परन्तु बाद में नवीनता समाप्त हो जाती है। खेलों के विषय में चैपमैन ने बताया कि यहाँ प्रतिद्वन्द्विता नाम की कोई चीज नहीं है, बल्कि अपने प्रतिस्पर्धी को हराने के लिए केवल अपने अन्दर विचार-तरंग लानी पड़ती है और वह वैसा ही हो जाता है। यही कारण है कि यहाँ सम्भावना तत्व (Element of chance) का अभाव है जिससे उस खेल में रुचि नहीं उत्पन्न होती। अतः हमारे भारतीय मित्र का यह कथन सही प्रतीत हुआ कि सूक्ष्मलोक में उनका जीवन दुखदायी होता है जिनकी रुचि केवल भौतिक जगत की अवस्थाओं (देश-काल आयाम) पर निर्भर करती है। चार्ल्स ने मुझे यह भी बताया कि यहाँ सूक्ष्मलोक में खाद्य-पदार्थ विचार-प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न हो जाते हैं, चाहे उनका भौतिक प्रतिरूप स्थूल जगत में हो अथवा न हो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी बीच मेरा एक पुराना मित्र दूसरे लोगों के साथ बैठा हुआ दिखाई दिया, वहाँ पहुँच कर मैंने उसके कंधों को थपथपाते हुए जब समाचार पूछा तो उसने मुझ पर कोई ध्यान नहीं दिया, जैसे वे लोग मुझे देख ही नहीं रहे थे—मैं झल्ला कर वापस लौट आया और इस बात पर चार्ल्स बड़ा आनन्दित हुआ। मैंने पूछा वह असली है या नकली ? चार्ल्स ने उत्तर दिया कि वे लोग इस सूक्ष्मजगत में स्थित नहीं हैं। इसका कारण यह है कि सूक्ष्मलोक के स्थायी निवासियों का शारीरिक ढ़ाँचा स्पष्ट होता है, जबकि स्थूल जगत के प्राणियों का सूक्ष्मशरीर चूँकि भौतिक शरीर से संयुक्त होता है और रुपहली-डोर (Silver cord) भी जुड़ी होती है, इसलिए सूक्ष्म लोक में उन भौतिक प्राणियों का शारीरिक ढ़ाँचा उतना स्पष्ट नहीं होता। उदाहरण के लिए भोजनकक्ष में बैठे हुए रॉय चैपमैन तथा अन्य दूसरे लोगों को देख कर तुम इस अन्तर को समझ सकते हो। थोड़ी देर में अर्धनग्न युवतियों द्वारा केबरे डान्स शुरु हो गया, वे युवतियाँ चारों ओर घूम-घूम कर नाच रही थीं—यहाँ तक कि हमारे टेबुल पर से भी गुजर जाती थीं और इससे मेरे अन्दर धुन्ध की भाँति सुरसुरी सी होने लगती थी (इन्द्रियों के प्रतिरूप के कारण)। इसके पश्चात हमलोग सोहो के पास एक रात्रि-क्लब (Night club) में भी गये और वहाँ भी विचार-तरंगों की वही प्रक्रिया अपनाई गई। रात्रि के दस बजे जब भीड़ भरे क्लब में लोग आनन्द मना रहे थे उसी वक्त अचानक युद्ध का साइरेन बज उठा—एक भगदड़ सी मच गई और लोग सुरक्षा के लिए गुप्त स्थानों में खिसक गये। हमलोग क्लब से निकल कर पिकाडली की ओर चले। यद्यपि लन्दन में उस समय रात्रि थी, लेकिन हमलोगों के लिए वही नीला-भूरापन लिए प्रकाश विद्यमान था, जो लङ्का से चलते वक्त भी दिखाई दिया था। इस दौरान हमलोग हवाई आक्रमण का तूफानी शोर तथा बमवर्षा की गर्जना भी सुन रहे थे—जमीन से विमानवेधी तोपों की आवाजें भी सुनाई दे रही थीं। इसी बीच हमारा भारतीय मित्र भी हमसे आ मिला और हम लन्दन के ऊपर पहुँच कर नजदीक से युद्ध का दृश्य देखने लगे। लेकिन इसी बीच चार्ल्स हमें छोड़कर कहीं लुप्त हो गया। मेरा दोस्त एक लड़ाकू विमान के पीछे लग गया, जैसे उसे ज्ञात हो कि इस विमान का आगे क्या होनेवाला है। हम जहाज की गति से आगे बढ़ रहे थे—कुछ सेकन्ड के अन्दर गोली लगी और जहाज में आग लग गई, वह लुढ़कता हुआ नीचे आ गिरा—उसका चालक मलवे के ढ़ेर में समा गया। मेरे भारतीय मित्र ने कहा, देखा ! जिसको ज्ञान होता है वह मृतात्माओं की कैसे सहायता करता है। यद्यपि वह पाइलट बुरी तरह जल चुका था, लेकिन पास ही उसका सूक्ष्म शरीर खड़ा था, जो डरा हुआ तथा अत्यन्त दयनीय दिखाई दे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहा था। जब कुछ सेकन्ड के बाद उसके सूक्ष्मशरीर की प्रक्रिया पूर्ण हुई तो हमारे गाइड ने उसे सान्त्वना प्रदान की।

हमने अपने भारतीय मित्र के साथ समुद्र के भीतर भी सैर की। समुद्र की लहरों का हम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था, तापमान का भी कोई फर्क नहीं मालूम होता था, यद्यपि जल के भीतर का अनुभव जमीन के अनुभव से थोड़ा भिन्न था। मुझे यह देखकर खुशी हुई कि जल के भीतर भी वही प्रकाश था जो बाहर दिखाई देता था (इससे स्पष्ट है कि वहाँ परमाणुओं की हलचल नहीं होती जिससे तापमान का सन्तुलन स्थापित होता है)। समुद्र के अन्दर जल-जन्तु इधर-उधर विचरण कर रहे थे, उसमें अनेक प्रकार की चट्टानें दिखाई दे रही थीं। यह आश्चर्यजनक बात है कि समुद्र के तल पर चारों ओर बाग-बगीचे थे, रंग-विरंगे फूल एवं झाड़ियाँ थीं, वहाँ विभिन्न रंग-रूप वाली चट्टानें थीं, इधर-उधर अनेक गुफाएँ भी थीं। जब हमलोग एक गुफा के भीतर घुसे तो वहाँ एक हाथी-शक्ल जैसा जन्तु दिखाई दिया जिसकी आँखें बहुत चमकीली और चुम्वकीय तरंगों से युक्त थीं। मुझे बताया गया कि वह उस जन्तु का सूक्ष्म-शरीर था (कपिल के अनुसार प्रत्येक वस्तु का एक सूक्ष्म प्रतिरूप होता है)। जब हम आगे बढ़े तो करीब बीस विचित्र जन्तुओं का समूह नजर आया जिनका सिर मनुष्यों की तरह था, लेकिन शरीर समुद्री वनस्पति में बड़े सुन्दर ढंग से लिपटा हुआ था। वे जीव संगीत की धुन में आगे बढ़ रहे थे। मुझसे कहा गया कि वे जीव समुद्री आत्माएँ हैं। चूँकि हमारी यात्रा का समय अब समाप्त हो चुका था, इसलिए समुद्र से बाहर आकर हम आकाश मार्ग से एकक्षण में फिर कोलम्बो लौट आये। हमारा सूक्ष्मशरीर विस्तर पर पड़े स्थूलशरीर से फिर संयुक्त हो गया। अपनी यात्रा के सम्बन्ध में मैंने तुरन्त एक नोट तैयार कर लिया।

यह भी ईश्वर का ही विधान है कि जहाँ असत्य होता है, वहीं सत्य भी होता है, जहाँ अंधकार होता है, वहीं प्रकाश भी होता है। सापेक्षवाद के अनुसार एक के बिना दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं है। इसी नियम के अनुसार उस मायापुरी में एक ऐसा लोक भी है जहाँ से सत्य की किरणें फूटती हैं और उस आलोक से साधु पुरुषों में आत्मविश्वास का संचार होता है। यह वैसा ही है जैसे रावण-राज्य में विभीषण का एक सत्यलोक भी था। प्रायः ऐसा होता है कि सत्य की चिनगारी कूड़ा-करकट में दबी रहती है और जब तूफानी वेग उठता है तो सब कुछ जलकर राख हो जाता है। वह चिनगारी सबको दिखाई नहीं देती, क्योंकि अहंकार का पर्दा पड़ा रहता है। अहंकार एक धधकता हुआ ज्वालामुखी है, जो कभी-कभी सम्पूर्ण रचनात्मक जगत को भी निगल जाता है, सभी को भस्मीभूत कर देता है। रावण और दुर्योधन जैसे प्रतापी राजा भी इस आग से जलकर भस्म हो गये। आज एटम और हाइड्रोजन बमों का अम्बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अहंकार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जो एक चिनगारी पड़ने पर अपने विस्फोट से समस्त संसार को जलाकर राख कर देगा। इसका प्रतिकार प्रकृति की सात्विक शक्तियों द्वारा ही होता है जिसका सन्देश इस जगत को बुद्ध, रामकृष्ण और गांधी दे गये हैं। सारा वेदान्त—प्रेम, दया, त्याग और आत्म-समर्पण पर आधारित है, क्योंकि हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि इन सात्विक गुणों द्वारा ही इस पृथ्वी पर रामराज्य स्थापित हो सकता है और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने इस आदर्श को प्रत्यक्ष करके दिखला दिया।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती॥

आधुनिक विज्ञान ने हमें भौतिक सुख दिया हैं, लेकिन इस सुख में अहंकार का विष भी मिला हुआ है जिसके फलस्वरूप आज सर्वत्र सन्देह, भ्रम, कटुता, खींच-तान और संघर्ष दिखाई दे रहा है। उस सुख के साथ दुख भी मिला हुआ है, क्योंकि सापेक्षवाद के अनुसार जहाँ सुख रहेगा वहीं दुख भी रहेगा, जहाँ स्वार्थ रहेगा वहीं संघर्ष भी रहेगा। इन त्रिविध गुण-विकारों के सापेक्ष प्रभाव से बचने के लिए संसार में रहते हुए केवल एक ही उपाय है—निष्काम कर्म-योग। इस पृथ्वीवासियों के लिए यही वह अमर सन्देश है जो भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया था। इस जगत में रहते हुए निरासक्त होकर कर्म करो और तब त्रिगुणात्मक प्रकृति तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती, तुम जगत में लिप्त रहते हुए भी कमल-पत्र के समान उससे मुक्त रहोगे, सारे संसार का वध करके भी तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा, क्योंकि गीता के अनुसार त्रिविध गुण-विकारों का ही परस्पर समन्वय हो रहा है, कारणजगत ही कार्यजगत में बदल रहा है और विज्ञान के अनुसार पदार्थ ही ऊर्जा हो रहा है तथा ऊर्जा ही पदार्थ के भिन्न-भिन्न नाम-रूपों में साकार हो रही है।

यस्य नाहंकृतो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥

इस जगत में कर्म करो और फल की चिन्ता मत करो, आसक्ति को त्याग कर समत्व भाव से (सुख-दुख को समान समझ कर) सभी वस्तुओं को ग्रहण करो और अपनी स्वचेतना को पदार्थ से पृथक रखो। इस यौगिक प्रक्रिया द्वारा त्रिविध गुण-विकार तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। अगर फल की चिन्ता करते हो, तो स्वार्थ, कामना एवं आसक्ति उत्पन्न होंगी जिससे त्रिविध गुण-विकार तुम पर हावी हो जायेंगे, अहंकार को बल प्राप्त होगा और फिर तुम जगत के द्वन्द्वात्मक संघर्ष से बच नहीं सकते, क्योंकि अहंकार (Ego) ही कारण और कार्य की शृंखला को चलाने वाली शक्ति है। इसलिए कर्म करो, फल की चिन्ता मत करो।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।।

लेकिन यह समत्व भाव तभी आ सकता है जबकि बुद्धि स्थिर हो, भाव सात्विक हों, विचार सन्तुलित हों। यह समत्व भाव तभी प्राप्त होता है अथवा बुद्धि तभी स्थिर होती है जब अहंकार दूर होकर बुद्धि सत्यस्वरूप आत्मा या परमात्मा में स्थिर हो जाती है (समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि)।

अहंकारवश हम समझते हैं कि जो कर रहे हैं वह ठीक है, लेकिन हम नहीं जानते कि हम मन के हाँथों खेल रहे हैं और मन आसानी से स्थिर नहीं होता है। हम समझते हैं कि स्वतन्त्र हैं, लेकिन वस्तुतः हम उस महाशक्ति के हाँथों खिलौनामात्र हैं। जब तक हम खिलौना बने रहेंगे तबतक मन हमें कठपुतली की तरह नचाता रहेगा, कारण और कार्य की श्रृंखला से बाँधे रहेगा और जैसे ही हम अपने वास्तविक स्वरूप (आत्मस्वरूप) को पहचान जायेंगे वैसे ही मन ढ़ीला पड़ कर धीरे-धीरे लुप्त हो जायेगा। इसी को गीता में आत्मस्थित अवस्था कहा गया है। आधुनिक विज्ञान हमें गीता का यह परमतत्व नहीं प्रदान कर सकता, क्योंकि उसे तो आत्मा के नाम से भी नफरत है। वह तो केवल परमाणुओं का द्वन्द्वात्मक संघर्ष देखता है और उस संघर्ष को ही जगत में आरोपित करता है, तो भला उसे समत्वभाव और आत्मस्थित अवस्था का ज्ञान कैसे प्राप्त हो सकता है? आज हमारा उसमें अन्धविश्वास हो गया है, हम आँख मूंदकर उसके सिद्धान्तों को मान लेते हैं, लेकिन हम नहीं जानते कि वह जहाँ तक देखता है वहाँ केवल द्वन्द्वात्मक संघर्ष है, कण-तरंगों का समन्वय हैं, केवल छायाचित्रों का प्रदर्शन है। परमसत्य तो उसकी कल्पना से भी अत्यन्त परे है, क्वोंकि वह बुद्धि-वादी कौशल का प्रयोग करता है, अपने इन्द्रियज्ञान को ही यथार्थ समझ जाता है और अहंकारवश अपने को कर्त्ता एवं स्वाधीन मान लेता है। अगर अन्ध-विश्वास करना है तो सर्वशक्तिमान परमात्मा में करना चाहिये, भक्तों की तरह उसकी असंख्य विभूतियों में करना चाहिये। इस अन्धभक्ति से मनुष्य परमात्मा-स्वरूप हो जाता है, प्रकृति के बन्धन से मुक्त हो जाता है। इसी को आत्मसमर्पण का सिद्धान्त कहते हैं और इसका मूर्त्तिमान रूप हैं—रामकृष्ण परमहंस।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पत्थर-पूजा और वृक्ष-पूजा को हम अन्धविश्वास मान लेते हैं, लेकिन उसके अन्तस्थल में विराजमान उस चेतन शक्ति के विषय में हम कुछ भी नहीं जानते। कपिल और आइन्स्टीन कहते हैं कि बिना उस चेतनशक्ति के न तो कोई पत्थर है और न वृक्ष। तो भला बुद्धिवादी कौशल द्वारा अथवा अपने अहंकार द्वारा हम पत्थर या वृक्ष को उस चेतनशक्ति से पृथक कैसे रह सकते हैं? अगर ऐसा करते हैं तो उस पर यूक्लिड और न्यूटन का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महाभूत सवार हो जायेगा। इससे स्पष्ट हैं कि आज के युग में वस्तुतः अन्ध-विश्वासी कौन है। हम जिसे जड़ समझते हैं वस्तुतः वह चेतन हैं। जगदीशचन्द्र बोस, वेक्सटर, सार्विन और हाशीमोतो ने भी ऐसा ही प्रमाणित किया है, सापेक्षवाद से भी यही सिद्ध होता है। चाहे विश्वास हो या अविश्वास, ज्ञान हो या अज्ञान उसका सम्बन्ध मन से है। जब भाव और विचार शुद्ध और सात्विक होता है तो यान्त्रिक शक्ति मन भी शुद्ध और सात्विक होता है, वह सत्यस्वरूप आत्मा या परमात्मा में स्थिर हो जाता हैं। मन की यह स्थिरता ही मन का शुद्धीकरण है, उसका त्याग है, आत्मस्थित अवस्था है, क्योंकि चंचल मन सामान्यतः कभी स्थिर नहीं होता है। मन का त्याग ही सर्वोच्च त्याग है, क्योंकि कारणस्वरूप इस त्याग से शरीर, जगत एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का त्याग हो जाता है। रामकृष्ण और रमण ने भी कहा है, "शुद्ध मन, शुद्धबुद्धि और आत्मा एक ही वस्तु है, क्योंकि आत्मा से ही प्रकृति की सभी शक्तियाँ तरंगित होती हैं, (तस्य भासा सर्वमिदं विभाति)। आज इस जगत को मन के शुद्धीकरण की परम आवश्यकता हैं, इसी पर इस जगत का सुख और शान्ति निर्भर है। जब यह अवस्था प्राप्त हो जायेगी तो एटम और हाइड्रोजन बम भी शान्तिदूत बन जायेंगे, तम और रज भी सात्विक गुणों में परिवर्त्तित हो जायेंगे, कटुता और द्वन्द्वात्मक संघर्ष भी समाप्त हो जायेंगे। लेकिन सापेक्षवाद के अनुसार इसका अर्थ यह नहीं कि जगत से संघर्ष लुप्त हो जायेगा, किन्तु वह संघर्ष नैतिक संघर्ष होगा, धर्मयुद्ध होगा, जैसाकि प्राचीन भारत में हुआ करता था।

पाप और पुण्य भी मन में ही हैं। जब मन शुद्ध होगा तो सभी कुछ शुद्ध हो जायेगा, कारण और कार्य की शृंखला भी टूट जायेगी, चारों तरफ स्वर्ग का साम्राज्य स्थापित हो जायेगा, लोग सर्वस्व त्याग को ही अपना आदर्श मान लेंगे और वही मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का रामराज्य होगा। कुछ लोग कहते हैं कि फिर इस जगत का क्या होगा? जहाज, मोटर और राकेट कहाँ जायेंगे? ऐसे लोगों को जगत की चिन्ता छोड़कर, फल की आशा त्याग कर पहले अपनी चिन्ता करनी चाहिये, अपना शुद्धीकरण करना चाहिये। इस क्रिया द्वारा जहाज, मोटर और राकेट का भी शुद्धीकरण हो जायेगा। जिसे हम राकेट समझते हैं वह राकेट के रूप में वस्तुतः अहंकार है और अहंकार का क्या परिणाम होता हैं इससे इतिहास के पन्ने रंगे पड़े हुए हैं। हम राकेट नहीं, बल्कि अहंकार को उड़ा रहे हैं, अपने चंचल मन को उड़ा रहे हैं। उड़ता हुआ मन कभी कल्याणकारी नहीं होता, बल्कि स्थिर और एकाग्र मन ही आत्मस्थित होकर कल्याणकारी होता है। जब मन स्थिर और एकाग्र होता है तो वह बुद्धि में परिवर्त्तित हो जाता है और इसी बुद्धि (Intellect) द्वारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आज विज्ञान ने भी इतनी सफलता प्राप्त की है। लेकिन स्वार्थ और अहंज्ञान के वशीभूत राजनेता विज्ञान की इस सफलता का दुरुपयोग करते हैं, सारे संसार में सन्देह, भ्रम और अविश्वास का वातावरण पैदा करते हैं, उन्माद, जेहाद और राष्ट्रीयता के नाम पर दूसरे देशों का शोषण करते हैं, विश्वयुद्ध का बीजारोपण करते हैं, एटम और हाइड्रोजन बम बनाने पर जोर देते हैं। हिटलर, मुसोलिनी और तोजो ने ऐसा ही किया और उसका कितना भयंकर परिणाम हुआ? आज भी वही हो रहा है, बल्कि उससे भी बुरा हो रहा है। जगत और विज्ञान के चमत्कारों की चिन्ता करने वाले तथाकथित शान्तिदूत इसकी चिन्ता क्यों नहीं करते? अपनी शक्ति और विवेक को इस ओर क्यों नहीं लगाते? वे साफ-साफ यह क्यों नहीं कहते कि उन्हें शान्ति से कुछ लेना-देना नहीं, बल्कि अपनी स्वार्थवादी राजनीति से मतलब है, अपने अहंज्ञान की प्रतिष्ठा से तात्पर्य है। क्या जहाज, मोटर, राकेट और एटम बम का यही सदुपयोग है? क्या इसीलिए हम विज्ञान के चमत्कारों की दुहाई देते हैं। यह चमत्कार नहीं बल्कि अपने विनाश का साधन है, इस जगत में मन और अहंकार का खेल है। अगर इस खेल को ही चमत्कार कहते हैं तो यह भी अहंकार का ही एक दूसरा नामरूप है।

परमात्मा न किसी का बनाता है और न किसी का बिगाड़ता है, सब कुछ अपने शुभ और अशुभ कर्मों द्वारा ही होता है, पूर्व संस्कारों द्वारा ही संचालित होता है, क्योंकि सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित में त्रिविध गुण-विकारों के सामंजस्य से जो चेतन-स्तर निर्मित होता है उसी से भावनात्मक तरंगें उठती हैं, इच्छावृत्तियों (whirlpools) का अम्बार लगता है और उस अम्बार से ही यान्त्रिक शक्ति मन सक्रिय हो उठता है। इसीलिए जब विचार शुद्ध और सन्तुलित होता है तो मन भी शुद्ध और सन्तुलित होकर बुद्धि का रूप ग्रहण कर लेता है और उस बुद्धि से ही विवेक का जन्म होता है जो कल्याणमार्ग की ओर ले जाता है। अतः इच्छावृत्तियाँ अथवा वासना तरंगें ही कारण और कार्य की श्रृंखला हैं, सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित हैं, आवागमन का चक्र हैं। जब हम कारण को नियन्त्रित करेंगे तो कार्य भी स्वतः नियन्त्रित हो जायेगा, मन भी बुद्धि में परिवर्तित हो जायेगा, विवेक का प्रकाश दिखाई देने लगेगा और तभी भगवान की कृपा होती है, सब कुछ मंगलमय हो जाता है। हमारा (चेतनपुरुष) परम उद्देश्य इस जगत का भोगविलास करना नहीं है, बल्कि त्याग और आत्मसमर्पण द्वारा जल्द से जल्द मुक्ति प्राप्त कर लेना है, आवागमन के चक्र से छुटकारा पा लेना है। यह जगत तो केवल एक प्रदर्शनी है, टेलीविजन की भाँति सिर्फ छायचित्रों का प्रदर्शन है जिन्हें अहंकारवश हम सत्य मान लेते हैं, यथार्थ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समझकर उसी में लिप्त हो जाते हैं और वह आसक्ति ही कारण और कार्य की श्रृंखला को टूटने नहीं देती। तो फिर इस जगत की चिन्ता कैसी ? इसकी चिन्ता तो अतृप्त कामिनी प्रकृति करेगी जिसने यह प्रदर्शनी लगाई है, यह इन्द्र-जाल बुना है। हम इसकी चिन्ता क्यों करें ! हम प्रकृति नहीं हैं, मन-बुद्धि और अहंकार नहीं हैं। हम तो नित्य, शाश्वत और अविनाशी आत्मा हैं (अहम् ब्रह्मास्मि), जिसका न कोई आदि है और न अन्त। अगर हम यह मोहक प्रदर्शनी देखना ही चाहते हैं तो कमल-पत्र के समान निर्लिप्त होकर देखें, निरासक्त भाव से परखें, रामकृष्ण के शब्दों में इस जगत में एक दाई की भाँति रहें जो बच्चों को प्यार तो करती है, लेकिन घर छोड़ देने पर सब कुछ भूल जाती है। जब यह प्रदर्शनी है तो हम इसकी चिन्ता क्यों करें ? यह तो प्रदर्शनी लगाने वाला जाने। हम तो दर्शक हैं और इस प्रदर्शनी में केवल दर्शक की तरह बने रहेंगे। यही अद्वैत वेदान्त का अमर सन्देश है और इसी को सनातन धर्म भी कहते हैं।

यह कैसी शिक्षा है, जो लोग इस प्रदर्शनी को ही सत्य मान लेते हैं, इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान को ही यथार्थ समझ लेते हैं। उसी का प्रचार करते हैं और भ्रमवश अपने को ही आत्मदर्शी समझ लेते हैं। यह आधुनिक शिक्षा हमें कहाँ ले जा रही है ? विज्ञान का चमत्कार हमें किस लक्ष्य की ओर ले जा रहा है ? उसका तो अन्तिम सिद्धान्त है—"पदार्थ ही उर्जा है और उर्जा ही पदार्थ।" तो क्या हमारा अन्तिम उद्देश्य ऊर्जा बन जाना है अथवा उर्जा से पदार्थ हो जाना है ? क्या इसी को मुक्ति समझ लिया जाय ? यह प्रक्रिया तो उस प्रदर्शनी का साधन है जो प्रकृति के हाँथ में है, हमारे हाँथ में नहीं। हम इस प्रक्रिया को रोकने में समर्थ नहीं हैं। लेकिन इस प्रक्रिया से मुक्त होने के लिए हम स्वाधीन हैं और यही हमारा चरम लक्ष्य है। हमें न उस साधन से मतलब है और न उस प्रदर्शनी से। यही वेदान्त की परम शिक्षा है जो अन्तस्थल की प्रयोगशाला में प्रमाणित है, अपरिवर्त्तनीय है, मानव इतिहास का अन्तिम निष्कर्ष है। अगर लोग इसे अन्धविश्वास समझते हैं, तो उस समझ पर भी तरस आती है।

यह तथ्य है कि परमात्मा को अहंज्ञान द्वारा कभी नहीं समझा जा सकता। वह अहंज्ञान से बहुत दूर है। जब हम मन्दिर, मस्जिद तथा गिरजाघर में सर नवाते हैं, मौन हो जाते हैं, कुछ क्षणों के लिए भौतिक संसार से पृथक हो जाते हैं तो उसका यही अर्थ है कि बिना त्याग (सर्वस्व) और आत्मसमर्पण के हम उसका दर्शन नहीं प्राप्त कर सकते। वहाँ से बाहर होकर हम फिर उस पाठ को भूल जाते हैं, अहंकार फिर सर उठा लेता है, मन फिर अकाश में उड़ने लगता है और फिर भौतिकदर्शन को ही, फोटोन और इलेक्ट्रान कणों की टक्कर को ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सत्य समझ लेते हैं। इसी को अन्धविश्वास कहते हैं, पत्थर पर सर पटकना कहते हैं। हम केवल पदार्थ के बाह्यरूप को देखते हैं, उसकी चमक-दमक को देखते हैं। हम उस पदार्थ के अन्तस्थल तक नहीं पहुँच पाते, उस अदृश्य परम चेतन-शक्ति पर अपना विश्वास दृढ़ नहीं कर पाते और यह अभाव ही हमें फिर भौतिक आकर्षण की ओर खींच लेता है। दृढ़ इच्छाशक्ति अथवा प्रबल चुम्बकीय शक्ति से ही हम अपने उद्देश्य में सफल हो सकेंगे। इसका मूर्तिमान रूप हैं—रामकृष्ण परमहंस, जिन्होंने पत्थर को भी मां काली के दिव्यस्वरूप में परिवर्तित कर दिया, जड़ को भी चेतन बना दिया। वास्तव में जो सत्य की खोज करना चाहते हैं उनके लिए आदर्श पुरुष हैं—परमभक्त रामकृष्ण परमहंस।

हम कारणस्वरूप सूक्ष्मजगत और कार्य स्वरूप स्थूलजगत से जुड़े हुए हैं, एक प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्मजीवन समाप्त होकर भौतिक जीवन प्राप्त होता है और दूसरी प्रक्रिया द्वारा भौतिक जीवन समाप्त होकर सूक्ष्म जीवन प्राप्त होता है। यही सापेक्षवाद की वृत्तात्मक प्रक्रिया है जो दो परस्पर विरोधी शक्तियों के सन्तुलन पर निर्भर है। लेकिन अद्वैत वेदान्त के अनुसार दोनों एक ही परम चेतनशक्ति (ब्रह्म) के दो अंग हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अहंज्ञान एवं सापेक्षभ्रम के फलस्वरूप दो दिखाई दे रहे हैं, उनमें भेद प्रतीत हो रहा है। कुछ लोग धर्म और विज्ञान के समन्वय की बात करते हैं, लेकिन यहाँ भी वह भेद हमारे अहंज्ञान द्वारा ही उत्पन्न होता है। जिस चेतन पुरुष की दृष्टि में प्रकृति का विभिन्नत्व एकत्व में परिवर्तित हो जाता है वही सर्वोत्कृष्ट दर्शन है, आत्मसाक्षात्कार है। आखिर हम क्यों चिन्ता करते हैं कि अगर विज्ञान नहीं रहेगा तो यह जगत कैसे चलेगा ? इस भावना के पीछे हमारी भौतिक आसक्ति बोलती है, हमारा सापेक्षभ्रम और अज्ञान बोलता है। जब कुछ भी नहीं रहेगा तो नित्य, शाश्वत और अविनाशी आत्मा बच रहेगा। एकमात्र वही परमतत्व है, सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, बाकी सब कुछ छायाचित्र हैं, मायारूप हैं। जड़पदार्थ कभी स्थिर नहीं रह सकता, शाश्वत और अविनाशी नहीं बन सकता। पदार्थ की कण-तरंगें एक यान्त्रिक प्रक्रिया द्वारा तो केवल उस भव्य प्रदर्शनी को सजाने के लिए आगे बढ़ रही हैं, उनके समन्वय से तरह-तरह के रबड़ के खिलौने अथवा रामकृष्ण के शब्दों में मोम के पुतले उस मोहक प्रदर्शनी के ही भिन्न-भिन्न अंग हैं। यह चेतन पुरुष के मानसिक स्तर पर निर्भर है कि वह इस प्रदर्शनी को वास्तविक समझ कर उसी में लिप्त हो जाय अथवा उसे मायारूप समझ कर उसका परित्याग कर दे। एक मार्ग को प्रवृत्ति कहते हैं और दूसरे निवृत्ति, एक में आसक्ति की प्रधानता होती है और दूसरे में निरासक्ति। गीता के अनुसार आसक्ति ही बन्धन है, आवागमन का चक्र है, कारण और कार्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की शृंखला को आगे बढ़ाने वाली शक्ति है, जबकि निरासक्ति ही मुक्ति है, उस शृंखला को तोड़ने वाली शक्ति है। अगर आधुनिक विज्ञान इस उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होता है तो वही हमारे लिए धर्म है। लेकिन अफसोस कि आज का विज्ञान हमारी आसक्ति को बढ़ाने वाला एक विज्ञान बन गया है, हमारी इच्छा-वृत्तियों एवं वासना-तरंगां को उत्तेजित करनेवाला एक शास्त्र बन गया है, हमारे अहंकार को अपनी चरम सीमा पर पहुँचाने वाला एक प्रधान साधन बन गया है। आज विज्ञान में उसी संशोधन की आवश्यकता है जिससे वह जड़ पदार्थवाद से चेतना की ओर उन्मुख हो सके, यथार्थवाद से आदर्शवाद की ओर अग्रसर हो सके, अहंवाद से आत्मवाद में समाहित हो सके।

यह समझना गलत होगा कि यथार्थवाद और आदर्शवाद दो अलग-अलग चरमविन्दु हैं, स्वयं अपने में स्वतन्त्र मार्ग हैं, क्योंकि इस ब्रह्माण्ड में चरम-विन्दु अथवा स्वतन्त्र शक्ति केवल एक ही हो सकती है। वास्तव में यथार्थवाद के भीतर ही आदर्शवाद छिपा हुआ है, पदार्थ के अन्दर ही आत्मा का वास है। हम केवल जड़पदार्थ के बाह्यरूप को देखते हैं और उसके भीतर चेतनशक्ति हमारी आँखों से ओझल रहती है। यह सीमा-अवरोध ही हमारे सापेक्षभ्रम और अज्ञान का कारण है। प्रश्न होता है कि वह यथार्थवाद अथवा आदर्शवाद किसके लिए है ? वह निश्चय ही सांख्यदर्शन के चेतनपुरुष के लिए है और अगर चेतन पुरुष के लिए है तो चेतना निश्चय ही पदार्थ से भिन्न होगी, जैसाकि आइन्स्टीन के सापेक्षवाद द्वारा भी प्रमाणित होता है। मनुष्य की सबसे बड़ी भूल यह है कि वह अपनी चेतना को भी पदार्थ समझ लेता है और इसीलिए वह बन्धन में पड़ जाता है, आवागमन के चक्र में भटकता रहता है। सापेक्षवाद की वृत्तात्मक प्रक्रिया में चेतनपुरुष की आँखों पर एक ऐसा रंगीन चश्मा चढ़ा दिया जाता है जिसमें से होकर सभी कुछ भौतिकवादी नजर आता है, लेकिन जब वह चश्मा उतार दिया जाता है तो सभी कुछ चैतन्य दिखाई देने लगता है। इसका कारण स्वयं चेतना नहीं है, बल्कि चेतना पर पड़ा हुआ त्रिगुणात्मक पदार्थ का आवरण है जो कर्मविधान के नियमों के अनुसार निश्चित होता है। जब सत्वगुण प्रधान होता है तो वह आवरण भी ढीला पड़ जाता है और तब ज्ञान का शुद्ध प्रकाश स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। सांख्य दर्शन के अनुसार प्रकृति की सभी प्रक्रियाओं का सम्बन्ध असंख्य चेतन पुरुषों की इच्छा-वासनाओं से ही जुड़ा हुआ है और उन तरंगों के अनुरूप ही सापेक्षवाद की वृत्तात्मक रेखागणित बनती-बिगड़ती रहती है, आवागमन का चक्र चलता रहता है। जीव का सबसे बड़ा पुरुषार्थ इसी में है कि वह इस चक्र को तोड़ दे।

वह सच्चिदानन्दघन परब्रह्म परमेश्वर सर्वदा सभी ओर से परिपूर्ण ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता है, उसमें से कुछ भी घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता। बृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है—

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

इस ब्रह्माण्ड की सभी (जड़ और चेतन) वस्तुओं में ईश्वर व्याप्त है और निरासक्त भाव से इस जगत का भोग-विलास करना चाहिये। इसीलिए ईशावास्योपनिषद् कहता है—

ॐ ईशा वास्यामिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

ब्रह्म और जगत के एकत्व का निरूपण करते हुए जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं (विवेक-चूडामणि) कि यह सम्पूर्ण विश्व, जो अज्ञानवश असंख्य नाम-रूपों में प्रतिभासित हो रहा है, निर्विकल्प ब्रह्म ही है। वह परब्रह्म सत्, अद्वितीय, शुद्ध, विज्ञानघन, निर्मल, शान्त, आदि-अन्तरहित, अक्रिय और अखण्ड आनन्दरसस्वरूप है।

यदिदं सकलं विश्वं नानारूपं प्रतीतमज्ञानात्।
तत्सर्वं ब्रह्मैव प्रत्यस्ताशेषभावनादोषम्॥

अतः परं ब्रह्म सदद्वितीयं
विशुद्धविज्ञानघनं निरंजनम्।
प्रशान्तमाद्यन्तविहीनमक्रियं
निरन्तरानन्दरसस्वरूपम्॥

रामकृष्ण परमहंस कहते हैं कि ब्रह्म ही वस्तु है और बाकी सब कुछ अवस्तु। इस भाव से ही ज्ञान का संचार होता है। उस ब्रह्म के शुद्ध प्रकाश से ही सब कुछ प्रकाशित होता है। इसीलिए श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा गया है—

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं
नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥

भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता (७।७) में कहा है, "हे अर्जुन! मुझसे पृथक किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। सभी कुछ सूत्र में मणियों के समान मुझमें गुंथा हुआ है।"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनंजय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥

तो फिर विज्ञान ओर वेदान्त के निष्कर्ष में इतना अन्तर क्यों है ? क्योंकि विज्ञान का निष्कर्ष इन्द्रियजनित ज्ञान पर आधारित है, बुद्धिवादी कौशल द्वारा रचित एवं सापेक्ष भ्रम पर आधारित एक भौतिकवादी सिद्धान्त है। इसके विपरीत वेदान्त का निष्कर्ष परा-इन्द्रियज्ञान पर आधारित है, आत्मस्थित अवस्था में प्राप्त शुद्धज्ञान पर आधारित एक परा-भौतिकवादी सिद्धान्त है। यद्यपि अपनी-अपनी जगह पर दोनों सही हैं, किन्तु दोनों में जमीन और आसमान का अन्तर है।

अब मायापुरी में घूमते हुए बहुत समय गुजर चुका है। इस प्रदर्शनी में तरह-तरह की वस्तुएँ सजाकर रखी हुई हैं जिन्हें देखकर मन मुग्ध हो जाता है, आसक्ति बढ़ जाती है, उस तिलस्म का जादुई प्रभाव रेडियोधर्मी पदार्थ की तरह अदृश्य रूप से शरीर से चिपक जाता है, उसीमें घुल-मिल जाता है। उस प्रभाव से शरीर और मन में जलन सी महसूस होती है, उत्तेजना बढ़ जाती है, खून का दौरा तीव्र गति से होने लगता है। तब आक्सीजन के लिए शीघ्रता [illegible] बाहर निकलता हूँ, शुद्ध हवा का एक झोंका लगता है, मन कुछ शान्त होता [illegible]। अपने गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस का यह मूलमंत्र याद आ जाता है—प्रभु की [म]र्जी है, मैं यन्त्र हूँ, वह यन्त्री हैं; मैं रथ हूँ, वह रथी है" इस मन्त्र का [ब]ारबार जाप करने लगता हूँ और तिलस्म का वह जादुई प्रभाव कपूर की तरह [उ]ड़ने लगता है, शरीर और मन में आनन्दपूर्ण शान्ति का आभास होता है, [प्र]काश की किरण दिखाई देती है, संत-महात्माओं की अमर वाणी कानों में गूंजने [ल]गती है—सब घटि मेरा सांइयाँ....अविगति-गति कछु कहत न आवै....हरि [अ]नंत हरि कथा अनंता ..नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्व-[रू]प। जब दोनों अवस्थाओं पर विचार करता हूं तो हमारी स्थिति समुद्र के उस [प]क्षी की भाँति हो जाती है जिसे समुद्र का कोई ओर-छोर नहीं दिखाई देता, [स]ब कुछ अथाह और असीम नजर आता है। ऐसी स्थिति में भला मन और [ब]ुद्धि का प्रयोग कहाँ तक किया जा सकता है ! आखिर उसका भी तो कोई अन्त [ह]ोना चाहिये ! जब अपने कुछ पदार्थ-मिश्रित शब्दों पर विचार करता हूँ तो वे [स]मुद्र की एक बूँद के बराबर भी नहीं दिखाई देते, लेकिन सर्वशक्तिमान पर-[म]ात्मा से यह प्रार्थना करता हूँ कि अगले जन्म में वह कम से कम उन्हें एक बूँद [क]ा दर्जा प्रदान कर दे। सभीप्रकार से विचार कर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता [हूँ] कि उसे जानने के लिए त्याग और आत्मसमर्पण के अतिरिक्त और कोई [र]ास्ता नहीं है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहंत्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

अतः अब परम सुख और शान्ति के लिए समुद्र के उस पक्षी की भाँति प्रभु की शरण में ही चलते हैं। लेकिन जाते-जाते एक महान् सन्देश अवश्य दे देना चाहते हैं कि ज्ञानरूपी सीता का उद्धार करने के लिए मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम तेजी से लंका की ओर बढ़ रहे हैं।

●

मुद्रक

RājGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.